Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्म पुराण

S.3

[प्रथम खण्ड]

[सरल हिन्दी भाष्य सहित जनोपयोगी संस्करण]

सम्पादक :
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम जी शर्मा आचार्य

चारों वेद, १०८ उपनिषद्, षट् दर्शन, २० स्मृतियों, १८ पुराणों, योग वासिष्ठ, गृह्य सूत्र संग्रह, बृहदारण्यकोपनिषद् आदि के प्रसिद्ध भाष्यकार और हिन्दी के लगभग १५० ग्रन्थों के रचयिता।

प्रकाशक :
संस्कृति संस्थान
ख्वाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली-२४३००१ (उ० प्र०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

पद्म पुराण

(प्रथम खण्ड)

(सरल भाषानुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण)

सम्पादक :

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

चारों वेद, १०८ उपनिषद्, षट् दर्शन, योग वासिष्ठ
२० स्मृतियों और १८ पुराणों के
प्रसिद्ध भाष्यकार

12 PI/8


महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी...........
पु०सं०..........
भारती पुस्तकालय

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, (वेदनगर), बरेली-२४३००१(उ० प्र०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

प्रकाशक :

डॉ० चमन लाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, (वेदनगर)

बरेली-२४३००१ (उ०प्र०)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सम्पादक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य



सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन



द्वितीय जनोपयोगी संस्करण
१९७७



मुद्रक :

शैलेन्द्र वी. माहेश्वरी

नव ज्योति, प्रेस

भीकचन्द मार्ग, मथुरा

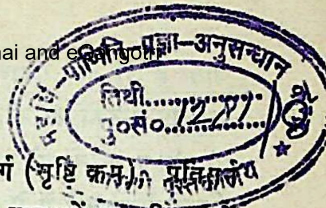


मूल्य :

ग्यारह रुपये मात्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भूमिका

पुराणों की कई श्रेणियाँ हैं। सामान्यतः सर्ग (सृष्टि क्रम), प्रतिसर्ग (प्रलय), मनवन्तर और देव-ऋषि-राजवंश तथा राजाओं का इतिहास-ये पाँच विषय पुराणों के बतलाये गये हैं। पर सब पुराणों में इनका समान रूप से वर्णन नहीं किया गया है। केवल दो-एक पुराणों में ही, जिनमें मुख्य रूप से 'वायु-पुराण' का नाम लिया जा सकता है. ये पाँचों विषय यथोचित रूप से वर्णन किये गये हैं। अन्य पुराणों में से कुछ का उद्देश्य तो किसी विशेष देवता या अवतार की प्रधानता का प्रतिपादन करना होता है, जैसे 'शिव-पुराण' लिङ्ग-पुराण' 'ब्रह्म वैवर्त' 'देवी भागवत' 'कालिका-पुराण' 'आदि-पुराण' इत्यादि। कुछ पुराणों में तीर्थ और व्रतों का वर्णन हीमुख्य रूप से दिया गया है जैसे स्कन्द-पुराण, मत्स्य-पुराण आदि। कुछ पुराणों का उद्देश्य विविध प्रकार की विद्याओं, कलाओं और विभिन्न विषयों की जानकारी का परिचय देना भी है। एक लेखक ने इनका नामकरण 'विश्वकोषात्मक पुराण' किया है। अग्नि-पुराण, गरुण पुराण, नारद-पुराण, की इनमें गिनती की जा सकती है। एक श्रेणी उन पुराणों की भी प्रथक मानी जा सकती है जिनका उद्देश्य कुछ विशेष उपाख्यानों का वर्णन करना ही होता है। जैसे 'मार्कण्डेय-पुराण' में 'हरिश्चन्द्र' और 'मदालसा' का उपाख्यान विस्तारपूर्वक दिया गया और अन्तिम अंश में कई राजाओं की कथाएँ और देवी का उपाख्यान ही विशेष रूप से दिये गए हैं। पुराणों के आरम्भिक दो-तीन विषयों का कहीं सूक्ष्म रूप में उल्लेख कर दिया गया है।

'पद्म-पुराण' को भी हम इसी श्रेणी का मानते हैं। यद्यपि यह एक विशाल पुराण है और समग्र पुराण-साहित्य में श्लोकसंख्या की दृष्टिसे इसका दर्जा दूसरा है। केवल 'स्कन्द-पुराण' ही, जिसकी श्लोक संख्या ८१ हजार है, इससे बड़ा है। इसलिए इसमें सभी विषयों का वर्णन तो स्थान-स्थान पर आगया है, पर प्रधानता उपाख्यानों तथा कथानकों की ही है। पर इसके उपाख्यान केवल तीर्थ और व्रत सम्बन्धी ही नहीं हैं वरन् पौराणिक पुरुषों, राजाओं आदि की तथा अन्य प्रकार की भी ऐसी-ऐसी कथाऐं इसमें पाई

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जाती हैं जो अन्य पुराणों से बहुत भिन्न या नये रूप में वर्णित की गई हैं। इसलिए पाठकों का कौतूहल का भाव बहुत बढ़ जाता है। जो लोग सभी पौराणिक वर्णनों को यथातथ्य समझते हैं वे इस चक्कर में पड़ जाते हैं कि दोनों वर्णनों में से सही कौन-सा है ? उदाहरण के लिए हिरनाकुश और प्रहलाद की कथा को ही देखिये। सामान्यतः यह प्रसिद्ध है कि राम-नाम लेने के कारण हिरनाकुश ने अपने पुत्र प्रहलाद को मारने के लिए बड़े २ अत्याचार किये, पर भगवान् हर सङ्कट में उसकी सहायता करते गये और अन्त में उन्होंने खम्भ में से प्रकट होकर हिरनाकुश का पेट फाड़ डाला। पर पद्मपुराण तथा दो—एक पुराणों में यह वर्णन है कि जब देवताओं ने जाकर भगवान विष्णु से हिरनाकुश के अन्याय अत्याचारों की शिकायत की तो वे नरसिंह रूप धारण करके हिरनाकुश के दरबार में चले आये। प्रहलाद उस समय उनको द्वार पर खड़ा हुआ मिला जिसने इस अभिनव रूप को देखकर आश्चर्य भी प्रकट किया। वे सीधे भीतर चले गये और हिरनाकुश को मार दिया। इसी प्रकार की भिन्नता और भी अनेक कथाओं में हैं जिनका वर्णन अन्यत्र किया गया है।

इस प्रकार उपाख्यानों की बहुलता और विधिधता पद्म-पुराण' की एक बड़ी विशेषता है जिनमें से अनेक बड़े विस्तार के साथ लिखे गये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस कारण उनकी रोचकता बढ़ गई है और पाठकों को नवीनता का भी अनुभव होता है। 'नन्दावेनु-व्याघ्र कथा' इक्ष्वाकु-शूकरयुद्ध' 'गणेश द्वारा त्रैपुरि वध' वेन वेन का जैन:धर्म ग्रहण' 'विद्युन्माली और शत्रुघ्न का संग्राम' 'अर्जुन और नारद का स्त्री बन जाना' शनिश्चर पर महाराज दशरथ की चढ़ाई' आदि सभी कथायें ऐसी हैं जो इसके सिवाय और कहीं नहीं मिलती। इसके साम्प्रदायिक वर्णन भी बहुत कुछ भिन्नता रखने वाले हैं।

'पद्म-पुराण' सात खण्डों में विभाजित है-सृष्टिखण्ड, भूमिखण्ड, स्वर्गखन्ड,ब्रह्मखण्ड,पातालखण्ड,उत्तरखण्ड, क्रियायोगसागर खण्ड। पर 'नारद-पुराण'में पद्म-पुराण' की जो विषय-सूची दी गई है, उसमें पाँच ही खण्ड बतलाये गये हैं। 'ब्रह्मखण्ड' और' क्रियायोगसार' का उसमें उल्लेख नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उसका अनुसरण करके भारती धार्मिक साहित्य का विवेचन करने वाले कई आधुनिक ग्रन्थों में पाँच ही खण्ड बतलाये हैं, जब पाठकों को हमारे इस संस्करण में सातों खण्ड मिलेंगे।

यह एक प्रसिद्ध वैष्णव-पुराण है, और इसके मतानुसार विष्णु की उपासना का प्रतिपादन करने वाले पुराण ही 'सात्विक' है जिनमें 'विष्णु' 'नारद', 'भागवत', 'गरुण', 'बराह' और और 'पद्म' की गिनती की गई है। 'ब्रह्माण्ड', 'ब्रह्मवैवर्त','मार्कण्डेय','भविष्य' तथा 'वामन पुराण' 'राजस' श्रेणी में रखे गये हैं। 'शिव' 'लिंग' 'कूर्म' 'मत्स्य' 'स्कन्द' और 'अग्नि-पुराण को शिव की प्रधानता प्रतिपादन करने के कारण 'तामस' श्रेणी में रखा है। पर 'पद्म-पुराण के उपाख्यान में शिवजी का वर्णन उत्कृष्ट रूप में ही किया गया है, यद्यपि शैव-पुराणों की तरह उनको त्रिदेव में सर्वोच्च नहीं माना गया है।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय ... संख्या 12281 8

'नन्दाधेनु-उपाख्यान' में सत्य की महिमा :—

प्रभंजन नामक राजा को मृगया का बहुत अधिक व्यसन था। एक दिन उसने बच्चे को दूध पिलाती हुई हिरनी को बाण से मार दिया। अपने छोटे बच्चे के मोह से हिरनी को इस प्रकार मरते हुए बड़ा मानसिक-संताप हुआ और उसने राजा को सिंह बनकर वन के जीवों को खाते रहने का शाप दे डाला। जब अपना अपराध स्वीकार करके राजा ने बहुत क्षमा प्राथंना की तो हिरनी ने कहा कि 'सौ वर्ष के पश्चात् नन्दाधेनु यहाँ आयेगी, उसी के द्वारा तुम फिर मनुष्य योनि को प्राप्त हो जाओगे।"

सौ वर्ष तक वह राजा केवल जङ्गल के जीवों को खाकर अपना घृणित जीवन व्यतीत करता रहा। तब उस जङ्गल के समीप कुछ ग्वालों ने अपनी बहुसंख्यक गायों को लेकर पड़ाव डाला और उन्ही मे स 'नन्दा' नाम की गाय वन में भटक जाने से उस व्याघ्र के पास पहुँच ई। जब व्याघ्र उसे मारकर खा जाने को प्रस्तुत हुआ तो नन्दा ने उससे प्रार्थना की कि वह उसे कुछ घण्टे की छुट्टी दे, जिससे वह पड़ाव में जाकर अपने छोटे बच्चे को देख आये और उसे पालन-पोषण के लिए अपनी सखियों अन्य गायों के सुपूर्द कर आवे। सिंह ने कहाकि इस बात का क्या भरोसा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि तू वहाँ जाकर फिर वापस आ जायेगी। इस पर गाय ने बहुत प्रकार की शपथ खाते हुए कहा—

'अगर मैं अपने वचन की रक्षार्थ फिर वापस न आऊँ तो मुझे वही पाप हो जो पवित्र ब्राह्मण और माता-पिता का वध करने से होता है। जो पाप महालोभी, म्लेच्छ और विष देने वालों को लगता है वही मुझे लगे अगर मैं फिर वापिस न आऊँ। जो एकबार किसी कन्या का दान करके फिर स्वार्थ-वश उसे किसी दूसरे को देने की इच्छा करता है, उसे जो पाप होता है मैं भी उसी की भागी होऊँ। जो निर्बल बैलों से बल-पूर्वक परिश्रम कराता है और पुण्य-कथा में बाधा डालता है उन्हीं का पाप मुझे भी लगे जो मैं प्रतिज्ञा का पालन न करूँ।'

जब व्याघ्र से छुट्टी पाकर नन्दाधेनु अपने 'गोकुल में आई और उसने यह दुःखद सम्वाद अपनी सखियों को सुनाया तो वे सब शोकमग्न होगईं और नन्दा को सलाह देने लगीं कि जब वह व्याघ्र से किसी प्रकार छुटकारा पाकर घर आ गई तो अब फिर उसके पास जाना अनावश्यक है। इसमें झूंठ बोलने का दोष लग सकता है पर शास्त्रों ने भी यह सम्मति दी है कि जब प्राण-रक्षा की समस्या उत्पन्न हो जाय तो असत्य-भाषण क्षम्य होता है। इसलिए अब तुम अपने छोटे बच्चे के पालन-पोषण के निमित्त 'गोकुल' में ही ठहरी रहो। यहाँ वह दुष्ट व्याघ्र तुम्हारा किसी प्रकार अहित नहीं कर सकेगा ?

पर नन्दाधेनु की श्रद्धा 'सत्य' में सुदृढ़ थी। वह इस प्रकार के तर्कों से प्रभावित नहीं हुई और उसने अपनी सखियों के प्रेम के प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करते हुए कहा-'यदि किसी अन्य प्राणी की प्राण-रक्षा का प्रश्न होता तो मैं असत्य भाषण को क्षम्य मान सकती थी, पर अपने निजी जीवन को बचाने के लिए मैं सत्य का त्याग कभी नहीं कर सकती, क्योंकि प्रत्येक प्राणी को अपने शुभ-अशुभ कर्मों का प्रतिफल जन्म-जन्मान्तर में स्वयम् ही भोगना पड़ता है। उसने सत्य की महिमा का बखान करते हुए कहा—

'ये समस्त लोक 'सत्य' में ही प्रतिष्ठित हैं और धर्म का आधार भी सत्य ही है। यह विशाल सागर अपने सत्य-वाक्यों के कारण ही मर्यादा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उल्लंघन नहीं करता । जब भगवान विष्णु वामन का रूप धारण करके असुरों के सम्राट बलि को छलने आये तो उसने केवल अपनी सत्य-प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए समस्त वैभव सहित तीनों लोकों का राज्य त्याग दिया, पर वह असत्य व्यवहार करने के लिए तैयार न हुआ विन्ध्याचल अपनी सैकड़ों चोटियों को ऊँचा करके आकाश को छूने लगा था, फिर अगस्त्य ऋषि से प्रतिज्ञा कर लेने पर वह नीचे पड़ा ही रह गया । ये स्वर्ग अपवर्ग और नरक सभी सत्य-वचन से ही तो स्थित हैं । जिसने अपने कहे हुए वचनों का लोप कर दिया उसने मानों सभी कुछ लोप कर दिया । जो अपने आपको 'अन्यथा' बना लेता है वह 'अन्यथा' को ही प्राप्त हुआ करता है ।''

नन्दा अपनी प्रतिज्ञानुसार यथा समय व्याघ्र के समीप पहुँच गई । इस 'सत्य' से प्रभावित होकर उस हिंसक जन्तु ने उसको अभयदान ही नहीं दिया वरन् सदा के लिए किसी प्राणी का अनिष्ट न करने का निश्चय कर लिया । एक प्राणी के सत्यव्रत-पालक ने न जाने कितने अन्य लोगों को सत्य-रक्षा की प्रेरणा दी और उसकी परम्परा को आगे बढ़ाया ।

12.81

राजा बलि का सत्य-पालन —

वामन भगवान् और राजा बलि की कथा भी सत्य-प्रतिज्ञा के पालन का एक उत्कृष्ट उपाख्यान है । यद्यपि परिस्थितियों की विषमता के कारण बलि की सत्य रक्षा के लिए किया गया त्रिलोकी का 'महादान' राजा हरिश्चन्द्र के अयोध्या के राज्यदान के समान विशेष प्रसिद्ध न हो सका, फिर भी पौराणिक लेखकों ने उसको कम महत्व नहीं दिया है । हरिश्चन्द्र का उपाख्यान केवल 'मार्कण्डेय पुराण' में ही विस्तार पूर्वक दिया गया है, अन्यत्र केवल उसके नाम का उल्लेख ही मिलता है या कहीं-कहीं अत्यन्त संक्षिप्त चर्चा देखने में आती है । पर बलि-वामन का उपाख्यान 'दशावतार' का एक मुख्य अंश है और प्रत्येक पुराण में उसका न्यूनाधिक वर्णन अनिवार्य रूप से किया गया है ।

'पद्म-पुराण' के अनुसार इन्द्र स्वयं ही वामन-भगवान को साथ लेकर बलि के पास पहुँचा और उससे कहा कि इस ब्राह्मण ने मुझसे तीन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैर भूमि की याचना की है। पर इस समय मेरे पास तो कुछ भी शेष नहीं है क्योंकि मेरा समस्त राज्य आप अपनी शक्ति द्वारा विजित कर चुके हैं। इसलिए अगर आप मेरी तरफ से इसे तीन पैंड भूमि दे सकें तो बड़ी कृपा होगी। राजा बलि ने इसे एक बहुत छोटी याचना मानकर तुरन्त स्वीकार कर लिया और तीन पैर भूमि की स्वीकृति दे दी। जब उसके गुरु शुक्राचार्य को इस बात का पता चला तो उसने बहुत कुछ समझाया कि इन्द्र और वामन के रूप में विष्णु तुमको छलने के लिए आये हैं और ये तुम्हारा अपहरण कर लेंगे। पर बलि ने यही उत्तर दिया कि 'जब इतने बड़े लोग याचक बनकर मेरे सामने आये और मैंने भी उनको भूमिदान का वचन दे दिया, तो अब मैं उससे पीछे नहीं हट सकता। उसने शुक्राचार्य की चेतावनी का उत्तर देते हुए कहा—

गुरुजी ! मैंने धर्मोपार्जन की दृष्टि से इसको दान देने की प्रतिज्ञा कर दी है। जो प्रतिज्ञा की जाय उसका पालन करना सत्पुरुषों का सनातन धर्म है। यदि यह वामन वास्तव में विष्णु ही है, तो भी मैं अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहूँगा, क्योंकि यह तो मेरे लिए और भी अधिक गौरव का विषय है कि साक्षात् भगवान मेरे यहाँ याचक होकर आये।'

बलि और वामन की कथा समाज-कल्याण का एक बड़ा तथ्य निहित है। समाज के सब सदस्यों को पारस्परिक व्यवहार में सत्य का पालन करना अनिवार्य है। यद्यपि सांसारिक कारणों से विभिन्न लोगों में मतभेद, विवाद, कलह का होना आश्चर्यजनक नहीं है, पर इन कारणों से सत्य का त्याग धोखा-धड़ी और झूंठ का व्यवहार न तो उचित कहा जा सकता है और न उससे किसी का स्थायी हित-साधन हो सकता है। बेईमानी या छल-कपट के व्यवहार से मनुष्य चाहे थोड़ी देर के लिए सफलता प्राप्त कर ले थोड़ा बहुत धन कमा सके, पर अन्तिम परिणाम पतन और नाश ही होता है। सत्य का पालनकर्ता चाहे विपत्तिग्रस्त होजाए उसे आर्थिक हानि उठानी पड़े, पर अन्त मे उसकी विजय ही होती है। राजा बलि को यद्यपि अपने राज्य से आथ धोना पड़ा, पर पुराण के मतानुसार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने भगवान को पूर्णतया अपना अनुगत बना लिया और पाताल में आज भी वे बलि के द्वार पर ही स्थित रहते हैं।

तुलाधार का सत्य व्रत :—

तुलाधार का चरित्र पौराणिक साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है और अनेक स्थानों पर उसका वर्णन मिलता है। सम्भवतः वह एक पूर्ण काल्पनिक कथा है, जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने नियमित सांसारिक कर्तव्य का पालन करते रहने और उसी को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानने की शिक्षा देता है। कहा गया है कि नरोत्तम नाम वाला तपस्वी ब्राह्मण युवावस्था में ही अपने घर और माता-पिता को छोडकर जङ्गल में कठिन तपस्या करने लगा। कुछ समय पश्चात् उसे विशेष शक्ति प्राप्त हो गई। एक दिन पेड़ के ऊपर बैठी हुई एक चिड़िया की बीट उसके ऊपर गिर गई। उसने क्रोध करके जो ऊपर की तरफ देखा तो वह चिड़िया मरकर नीचे गिर गई। इस घटना से उस नरोत्तम ब्राह्मण के हृदय में अहङ्कार की भावना उत्पन्न हो गई और उसी धुन में वह समीप के एक गांव में जा पहुँचा। वहाँ जाकर उसने एक गृहस्थी के द्वार पर भिक्षा के लिए आवाज लगाई। घर में रहने वाली स्त्री उस समय अपने पति की सेवा में लगी हुई थी, इसलिए भिक्षा लेकर आने में उसे कुछ देर लग गई। जब तपस्वी उसकी तरफ क्रोधयुक्त दृष्टि से देखने लगा, तो स्त्री ने कहा—'महाराज ! मैं चिड़िया नहीं हूँ जो भस्म हो जाउंगी।' यह सुनकर तपस्वी को बड़ा आश्चर्य हुआ कि उस एकान्त स्थान में होने वाली घटना का पता इस स्त्री को कैसे लग गया ? पूछने पर उस स्त्री ने बतलाया कि मैं पति-सेवा को सबसे बड़ा धर्म समझती हूँ और उसी को पूरी निष्ठा के साथ पालन करती हूँ। उसी का प्रभाव है कि मुझे जङ्गल की घटना का पता लग गया।

जब नरोत्तम ने उससे धर्म-तत्त्व के सम्बन्ध में कुछ अधिक जानने की जिज्ञासा की तो स्त्री ने उसे काशी नगरी में तुलाधार वैश्य के पास जाने की सम्मति दी। काशी में जब उसने तुलाधार का पता लगाया तो देखा कि वह एक सामान्य दुकानदार है और अधिकांश समय उसी कार्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में व्यस्त रहता है। तपस्वी को देखते ही तुलाधार ने कहा कि "क्या आपको अमुक ग्राम की स्त्री ने धर्म-चर्चा करने को यहाँ भेजा है?" उसकी इस चमत्कारी शक्ति को देखकर तपस्वी और अधिक चकित हुआ और ऐसी शक्ति किस प्रकार प्राप्त हो सकी यह प्रश्न किया। तुलाधार ने बतलाया कि वह किसी प्रकार का साधन या तप नहीं जानता, केवल अपनी दुकान का कार्य पूरी मेहनत और ईमानदारी के साथ करता रहता है। वह सब ग्राहकों से ठीक दाम लेकर उत्तम चीज देता है और तोलने में पूरी सचाई का ध्यान रखता है। उसने जन्म भर कभी कम तोलने का विचार नहीं किया और इसी सत्य व्यवहार के प्रभाव से उसे दूरवर्ती और अज्ञात विषयों को जानने की शक्ति प्राप्त हो गई है।

आगे चलकर इस उपाख्यान में और भी कई प्रसङ्ग धर्म-तत्व के सम्बन्ध में वर्णन किये हैं और यह निष्कर्ष निकाला है कि धर्म और पुण्य ऐसी वस्तु नहीं हैं जिनके लिए मनुष्य को घरबार और अपने सांसारिक कर्तव्यों का त्याग करके एकान्त स्थानों में भजन-साधन करना आवश्यक हो। इसके विपरीत प्रत्येक साधारण मनुष्य इन पाँच कर्त्तव्यों का पालन करके ही सर्वोच्च गति और आध्यात्मिक शक्ति को प्राप्त कर सकता है— (१) अपने माता-पिता की परम भक्तिभाव से सेवा। २) अपने पति की अर्चना। (३) समस्त प्राणियों के साथ आत्मीयता का प्रेम युक्त व्यवहार करना। (४) मित्रों के साथ कभी द्रोह-कपट न करना। (५) भगवान के चरणों में अनन्य निष्काम भक्ति रखना। जो व्यक्ति जैसी साँसारिक स्थिति में हो वह तदनुसार इनमें से किसी एक कर्त्तव्य का पालन करके ही कृतकृत्य हो सकता है और उस सद्गति को प्राप्त कर सकता है जो वर्षों तक जङ्गल में तपस्या करने वालों को भी प्राप्त नहीं होती।

कथाकार का आशय यही है कि जिस प्रकार अनेक अनुभवहीन व्यक्तियों का विचार हो जाया करता है कि धर्म-साधन तथा स्वर्ग-मोक्ष आदि श्रेष्ठ गति की प्राप्ति के लिए कठिन तपस्या, योग-साधन या बड़े यज्ञ-यागादि करना अनिवार्य है और यह सोचकर वे अपने साँसारिक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्त्तव्यों की अवहेलना करके 'त्यागी-तपस्वी' बनने के उद्देश्य से गृह-त्यागी हो जाते हैं, तो यह रास्ता बिल्कुल गलत है। पर जो मनुष्य अपने सामान्य उत्तरदायित्वों का अच्छी तरह पालन नहीं कर सकता, वरन् उनसे भागकर एकान्त सेवन द्वारा 'धर्म' को प्राप्त करना चाहता है, उसे अकर्मण्य और भ्रमग्रस्त ही समझना चाहिए। अगर मनुष्य अपने सांसारिक जीवन को ही पूर्ण सत्य व्यवहार द्वारा आदर्श बना सके तो उसे सहज ही वास्तविक धर्म की प्राप्ति हो सकती है। सत्य की महिमा इतनी अधिक है कि वह पारसमणि की तरह लोहे को सोना बना सकता है। इस सम्बन्ध में उपाख्यान में कहा गया है—

सत्य भावना और लोभ का त्याग करके तथा किसी प्राणि के प्रति मत्सरता रहित होकर जो व्यवहार और उपकार किया जाता है उसका फल इतना अधिक होता है, मानों सौ यज्ञ पूरे कर लिये। सत्य के प्रभाव से ही सूर्य उदित होता है, वायु चलती है, समुद्र मर्यादा में रहता है और कूर्म भगवान् पृथ्वी को अपनी पीठ पर धारण करते हैं। सत्य की शक्ति से ही सब लोक और पर्वत अपने स्थान पर स्थित रहते हैं। जो सत्य से भ्रष्ट हो जाता है उसका निश्चित रूप से अधःपतन हो जाता है। जो पुरुष सदैव सत्य वचन में प्रीति रखने वाला है, किसी दशा में मिथ्या वचन नहीं बोलता न कभी कोई असत् कार्य करता है, वह इस जन्म में स्वर्ग जाकर अच्युतता को प्राप्त कर लेता है। सत्य क प्रभाव से ही ऋषि-मुनि भगवान् का सान्निध्य प्राप्त करते हैं। सत्य का पालन करने से ही युधिष्ठिर सशरीर स्वर्ग में जा सके, राजा बलि भगवान् को स्ववश कर सका और राजा हरिश्चन्द्र अपने समस्त प्रजा-जनों क साथ सत्य लोक में जाकर विराजमान हुआ। इसी सत्य भाषण के प्रभाव से तुलाधार भी बड़े-बड़े त्यागी तपस्वियों से अधिक उच्च स्थिति को प्राप्त हो सका। जिस समय सत्य को तराजू पर रखकर तोला गया तो वह सहस्र अश्वमेध यज्ञों से भी अधिक भारी और गौरवशाली सिद्ध हुआ। सत्य-पालन में ऐसी अद्भुत शक्ति है कि उससे सभी कुछ साध्य हो जाया करता है। जो लोग सत्य का पालन करते हैं वे सदा उसके द्वारा सुरक्षित रहते हैं,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर मिथ्या का आचरण नष्ट कर देने वाला होता है। जो लोग तोलने-नापने में, सस्ता या मँहगा मूल्य बतलाने में, न्यायालय के सम्मुख साक्षी देने में सदैव सत्य-पालन का ध्यान रखते हैं, वे उसी के बल से अक्षय स्वर्ग के अधिकारी बन जाते हैं।"

इस प्रकार के कितने ही उपाख्यानों द्वारा पुराणकार ने सत्य की महिमा प्रतिपादित की है और उसे अन्य समस्त कर्मकाण्ड और धार्मिक अनुष्ठानों से बढ़कर बतलाया है। यह ऐसा धर्म है जिसके पालन करने में किसी अन्य साधन की अपेक्षा नहीं रहती। सर्वथा अकिञ्चन (निर्धन) व्यक्ति भी इसका पालन कर सकता है। वास्तव में यह आत्मा का धर्म है और जो लाभ बहुत धन से सम्पन्न होने वाले यज्ञ-यज्ञादि से नहीं हो सकता वह इसके द्वारा उपलब्ध हो जाता है। तुलाधार के प्रकरण में ही कथाकार ने एक ऐसे शूद्र का उदाहरण दिया है जो खेतों से अन्न के दाने बीनकर पेट भरता था और जिसके पास दो फटे-पुराने कपड़ों के सिवाय और कुछ पहिनने को भी न था। भगवान् ने उसकी परीक्षा के लिए दो उत्तम वस्त्र मार्ग में गिरा दिये, पर वह उनको किसी अन्य का समझकर अपने रास्ते चला गया। फिर उन्होंने उसके सम्मुख ऐसे गूलर बिखर दिये जिनमें सोना भरा था, पर उसने इस प्रकार के धन को हराम का माल समझकर हाथ नहीं लगाया। भगवान् ने सन्यासी का रूप धारण करके उसे वह स्वर्ण लेने के लिए बहुत समझाया पर वह यही कहता रहा कि मुझे परिश्रम से जो दाने मिल जाते हैं वे ही मेरे लिए अमृत स्वरूप हैं। अन्त में वह अपने सत्यव्रत के प्रभाव से बड़े-बड़े ऋषि मुनियों के लिए दुर्लभ 'सत्यलोक' का अधिकारी बना।

सत्य व्रत केवल धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, वरन् समाज की प्रगति और कल्याण का बहुत कुछ आधार भी उसी पर है। यदि कोई राष्ट्र भौतिक दृष्टि से उन्नति कर ले और धन-वैभव में दूसरों से आगे बढ़ जाय, तो भी सत्य का आश्रय लिये बिना उसकी वृद्धि स्थायी नहीं हो सकती। यदि वहां के निवासियों को एक दूसरे की नीयत पर सन्देह बना रहा और वे परस्पर धोखाधड़ी का व्यवहार करके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दूसरों के अधिकारों का अपहरण करना चाहे, तो उसका प्रतिफल अन्त में समस्त समाज के लिए अनिष्टकारी सिद्ध होगा। यह एक ऐसा शाश्वत सिद्धान्त है जिसके सामने अनादि काल से प्रत्येक अन्यायी, अत्याचारी अहङ्कारी को अन्ततः अपना सिर नीचा करना पड़ा। 'पद्म-पुराण के रचयिता ने विविध उपाख्यानों द्वारा इसी कल्याणकारी तथ्य को पाठकों को हृदयगम कराने का प्रयत्न किया है।

चरित्र का महत्व—

सत्य के समान ही चरित्र का शुद्ध और निष्कलंक होना मानव-जीवन की सार्थकता के लिए अनिवार्य है। यदि यह कहा जाय कि आदर्श जीवन अथवा धर्ममय-जीवन के दो पहिए सत्य और चरित्र हैं तो इसमें कोई अनुपयुक्त बात नहीं है। यद्यपि संसार में जाकर इहलोक और परलोक दोनों को सुधारने के लिए और भी अनेक गुणों की आवश्यकता होती है, पर जिन व्यक्तियों को व्रत पालन और चरित्र रक्षा का ध्यान रहेगा उनमें अन्य गुणों का समावेश अधिकांश में स्वभावतः ही हो जाएगा। इन दो गुणों से युक्त मनुष्य अपना समय किसी प्रकार के दूषित कर्मों अथवा व्यसनों में नहीं लगा सकता इसलिए वह सद्प्रवृत्तियों में ही संलग्न रहेगा और उसके संसर्ग से गुणों की वृद्धि होती ही रहेगी। जैसे जुआ, चोरी, मद्यपान, व्यभिचार आदि किसी एक दुर्व्यसन के लग जाने पर धीरे-धीरे अन्य दुर्व्यसन भी न्यूनाधिक मात्रा में आ ही जाते हैं, उसी प्रकार किसी एक मूल सद्गुण को ग्रहण कर लेने पर अन्य सद्गुणों की ओर प्रवृत्ति स्वयमेव होने लग जाती है। इस तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर 'पद्म पुराण' ने 'सदाचार' पर भी बहुत बल दिया है। यद्यपि सदाचार सम्बन्ध बहुत कुछ आंतरिक मनोभावों से है, पर बाह्य आचारों का भी मनुष्य की मनोवृत्ति पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए 'पद्म-पुराण' में इस सम्बन्ध में आचार पर विशेष जोर दिया गया है। उसका मत है कि आचारवान् पुरुष स्वयमेव दुर्व्यसनों से दूर रहेगा और इस प्रकार उसके चरित्र शुद्ध बने रहने में बहुत दूर तक सहायता मिलेगी। पुराणकार कहते हैं—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आचार की बहुत बड़ी महिमा है। आचार से मनुष्य की आयु की वृद्धि होती है, आचार से सुख की प्राप्ति होती है और यदि मनुष्य उस पर दृढ़तापूर्वक अन्त तक आरूढ़ रहे तो वह स्वर्ग और मोक्ष को भी पा सकता है। जो पुरुष आचार से हीन होता है वह लोक में निन्दित हो जाता है। आचार शून्य पुरुष को सदैव दुःख ही भोगने पड़ते हैं, वह रोगी और अल्प आयु वाला भी हो जाता है। जो व्यक्ति आचार से भ्रष्ट होता है, परलोक में भी उसकी दुर्गति ही होती है। आचार का सर्व प्रथम अङ्ग शुद्धि और शुचिता है। घर को सदैव मिट्टी, गोमय, जल आदि द्वारा शुद्ध और स्वच्छ रखना चाहिए। प्रतिदिन प्रातः शौच, दन्तधावन, स्नान नियम पूर्वक करना आवश्यक है। मल का त्याग नदियों के तट, समुद्र-तीर, उपयोगी वृक्षों की जड़ के समीप, बगीचे के भीतर, पुष्प-वाटिका में, जल के भीतर, पुष्प-वाटिका में जल के भीतर किसी रम्य स्थान और राजपथ (सार्वजनिक सड़क) पर कभी नहीं करना चाहिए। किसी भी विद्वान, देवस्थान, गुरु, राजा तपस्वी, पागल, अन्धा और स्त्री का धन अपहरण करना घोर असदाचार है। मार्ग में कोईरोग ग्रस्त व्यक्ति, बोझा लादकर ले जाने वाला, गर्भिणी स्त्री और अशक्त दुर्बल पुरुष आ जायं तो पहिले उनको गमन करने के लिए रास्ता छोड़ देना चाहिए। जो स्त्री दुष्ट-प्रकृति, असत् चरित्र अपवाद (बदनामी) वाली सदा कलह करने वाली, प्रमादयुक्त, लज्जारहित, वाह्यचारिणी हो, उससे किसी प्रकार सम्पर्क नहीं रखना चाहिए। क्योंकि ऐसी स्त्री के सम्बन्ध से सदाचार पालन में वाधा होती है। इसी प्रकार असत् आचरण वाले पुरुष का संग भी कभी नहीं करना चाहिए और न उसके साथ कहीं आना-जाना चाहिए।"

"जो पुरुष स्पर्श योग्य न हो तथा जो पतित एवं कुपित हो उनके साथ कभी बात-चीत न करे। ऐसे पुरुषों से सम्भाषण करने वाला कुपरिणाम का भागी होता है गुरुजनों के सम्मुख आने पर उनका पदवी के अनुसार विनय पूर्वक अभिवादन करे। पर कई अवसरों पर उनका अभिवादन न करना भी उचित होता है। जैसे कोई गुरुजन तेल की मालिश, कर रहा हो, उच्छिष्ट दशा में हो, गीले वस्त्र पहिने हुए हो, रोग से ग्रस्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हो किसी चिन्ता से उद्विग्न हो, तो ऐसी अवस्थाओं में नियमानुसार अभिवादन नहीं करना चाहिए। जब वे शुद्ध अवस्था में हो जाए, तभी अभिवादन करना सदाचार का नियम है। इसी प्रकार जो यज्ञ अथवा ऐसे ही किसी कर्मकाण्ड में संलग्न हो, स्त्रियों के साथ विनोद कर रहा हो, बच्चों के साथ क्रीड़ा कर रहा हो, पुष्प या कुशा ला रहा हो तो उसका अभिवादन करना भी उचित नहीं। इस जीवलोक में स्वर्गीय-स्वभाव वाले व्यक्तियों में चार गुण पाये जाते हैं, प्रशस्त दान, मधुर वाणी देवताओं की भक्ति और विद्वानों का सम्मान। इसी प्रकार नारकीय-स्वभाव वालों के लक्षण ये बतलाये गए हैं—कृपणता का व्यवहार, स्वजनों की निन्दा, बुरे अथवा गन्दे वस्त्र धारण करना, नीच वृत्ति के मनुष्यों का सम्मान करना, अत्यधिक क्रोध, कड़वी और कठोर वाणी आदि। जो व्यक्ति धर्मबीज से प्रसूत हुए हैं उनकी वाणी मक्खन के समान कोमल अत्यन्त प्रिय, करुणा से पूर्ण होती है। पाप-बीज में उत्पन्न व्यक्तियों के लक्षण इससे विपरीत होते हैं।'

यद्यपि सदाचार की मीमांसा प्राचीन, धार्मिक भावों के अनुसार की गई है, पर तत्व की दृष्टि से विचार किया जाय तो आज भी ये नियम उसी प्रकार उपयोगी हैं, जैसा उनको हजार दो हजार वर्ष पहले माना गया। इसमें सबसे प्रथम स्थान शारीरिक शुद्धि को दिया गया है, जो बिल्कुल उचित और बुद्धिसङ्गत है। जो व्यक्ति अपने शरीर को ठीक अवस्था में नहीं रख सकता उससे मानसिक और आत्मिक दशा को ठीक रख सकने की आशा करना निरर्थक है। आत्म-निर्माण का कार्य केवल बातों से पूरा नहीं हो सकता। उसके लिए व्यवहारिक रूप से एक नियमित कार्यक्रम की पूर्ति करना आवश्यक होता है। उसमें सफलता प्राप्त करने के लिए शम, दम, नियम, संयम आदि दैवीं गुणों की आवश्यकता होती है। हमको शारीरिक, मानसिक अथवा आत्मिक कोई भी सुधार करना हो, उसके लिए अपनी प्रवृत्तियों को शुद्ध और पवित्र बनना अनिवार्य है और यह कार्य सबसे पहले अपने शरीर को शुद्ध और पवित्र बनाने से आरम्भ होता है। पुराणकार ने कहा है कि शुद्ध आचार का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहला लाभ यह होता है कि मनुष्य रोग से बचा रहता है और उसकी आयु बढ़ जाती है। ये दोनों बातें जिस प्रकार भौतिक सफलता की दृष्टि से आवश्यक हैं उसी प्रकार धर्मसाधन भी इसके बिना नहीं हो सकता।

शुद्धता और पवित्रता केवल व्यक्तिगत दृष्टि से ही नहीं की जानी चाहिए वरन् उसमें सामाजिकता को सम्मिलित करना आवश्यक है। हमारे देश की अधिकांश जनता में सामाजिक हित की भावना का बहुत कम ख्याल है और इस सम्बन्ध में प्राचीन काल में जो नियम स्थिर किए गये थे उनको भी लोगों ने अपनी अकर्मण्यता और प्रमाद की भावना से निरर्थक कर दिया है। इसलिए जब हम 'पद्म-पुराण' में यह आदेश पाते हैं कि 'नदी तथा समुद्र के निकारे, बाग बगीचों में भ्रमण के उपयुक्त रम्य स्थानों में तथा सार्वजनिक मार्ग के निकट मल त्याग नहीं करना चाहिए तो हमको उस समय की नागरिकता और सामाजिकता की भावना का एक प्रमाण मिलता है। वर्तमान समय में सभ्यता की लम्बी चौड़ी बातें करने वालों में से भी अनेक व्यक्ति इसके विपरीत आचरण करते देखे जाते हैं।

इसमें रोगग्रस्त, अशक्त, बोझा ले जाने वाला, गर्भिणी स्त्री आदि के लिए मार्ग छोड़ देने की जो सूचना दी गई है वह भी सामाजिकता और मनुष्यता की परिचायक है। आज हम सभ्य कहलाते हुए भी मोटर रेल आदि सवारियों में चढ़ते समय इस भावना की जरा भी परवाह नहीं करते और दुर्बलों को ढकेल कर सबसे पहिले अपना अधिकार जमाने में ही कुशलता और चतुराई का प्रमाण मानते हैं। जब अधिक भीड़भाड़ में ऐसे दृश्य दिखलाई पड़ते हैं तो हर्गिज यह अनुमान नहीं होता कि ये किसी सभ्य और सुसंस्कृत जाति के लोग हैं इसके विपरीत इंग्लैंड, अमरीका आदि के भौतिक कहलाने वाले इस विषय में हमारी अपेक्षा दस गुना श्रेष्ठ व्यवहार करते हैं। हमको केवल पुराणों की पूजा-उपासना की बातों को पढ़कर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए वरन् इस प्रकार की उपयोगी शिक्षाओं पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सज्जन और दुर्जन के लक्षण :

सृष्टि के आदि में प्रकट होने वाले महर्षि कश्यप के दो पत्नियाँ अदिति और दिति बतलाई गई हैं। अदिति से देवताओं (दैवी शक्तियों की) और दिति से दैत्य-दानवों (आसुरी शक्तियों) की उत्पत्ति कही गई हैं। देवता सद्गुण सम्पन्न और धर्म-मार्ग के अनुयायी थे और दैत्य-दानव पाशविक शक्ति तथा भोग-विलास में जीवन को सफलता मानने वाले थे। इस कारण इन दोनों दलों में संघर्ष होना स्वाभाविक ही था। चूँकि दैत्यगण मुख्यतः अनियन्त्रित शक्ति में ही विश्वास रखने वाले थे और युद्ध में सब प्रकार के छल-कपट दाव-पेच से काम लेते थे, इसलिए वे प्रायः देवगण को परास्त करके उनके स्वत्व का अपहरण कर लेते थे। ऐसे अवसर पर देवता भगवान की शरण में जाते थे और वे कोई न कोई मार्ग ढूँढ़ कर दैत्यों का विनाश कर डालते थे और देवगण को पुनः अपने स्थान पर प्रतिष्ठित कर देते थे।

ऐसे ही एक अवसर पर जब कश्यप-पत्नी दिति ने अपने पुत्रों के निमित्त बहुत शोक किया और स्वयम् भी मरने की भावना प्रदर्शित की तो महर्षि कश्यप ने उसको मनुष्य शरीर की क्षणभंगुरता का उपदेश दिया और साथ ही यह भी समझाया कि जो कोई अधर्म के मार्ग को ग्रहण करेगा—संसार में अन्य प्राणियों के साथ दुर्जनता का व्यवहार करेगा, उसका कल्याण कभी नहीं हो सकता। यह बात ईश्वरीय न्याय के विरुद्ध है कि कोई भी व्यक्ति अथवा राष्ट्र दूसरों के साथ बुराई—अन्याय का व्यवहार करके स्वयं स्थायी और वास्तविक सुख पा सके। ऐसे व्यक्ति यदि अजेय भी बन जायें, तो भी उनके 'कर्म' स्वयं उन्हीं में आन्तरिक विग्रह करके उनको नष्ट कर डालते हैं। पुराणों में वर्णित "सुन्द-उपसुन्द नामक दैत्यों, द्वारिका के यादवकुल तथा मोहिनी" की कथाएँ इसी भाव की प्रदर्शक हैं। इन तथ्यों का वर्णन करते हुये अन्त में महर्षि ने समझाया—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"संसार के प्रपंचों को त्यागकर आत्म-कल्याण की दृष्टि से धर्म का पालन करना ही देवताओं (सज्जनों)का मार्ग है। सदैव धर्म की ही चिंतन करना चाहिए और धर्म-पालन केलिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना चाहिए। जो इस प्रकार धर्म का पालन करता है, भगवान् विष्णु सदा उसके ऊपर कृपायुक्त रहते हैं। धर्म' ही भगवान विष्णु की काया है और 'सत्य' ही उनका हृदय है। जो कोई इन धर्म और सत्यदोनों का पालन करता रहता है उस पर भगवान् अत्यन्त प्रसन्न हो जाते हैं। इसके विपरीत जो अधर्म के मार्ग पर चलकर 'धर्म' और 'सत्य' को दूषित करते है उनसे भगवान् घोर रुष्ट होते हैं और उनका नाश कर देते हैं। तप और सत्य में स्थिति रहने वाले 'वैष्णव' धर्म का पालन करते हैं इसलिए भगवान् सदा उनकी रक्षा को सन्नद्ध रहते हैं। पर तुम्हारे (दिति के) पुत्र दैत्य दनु के पुत्र दानव, सिंहिका के पुत्र सिंहिकेय—ये सब पाप-चित्त वाले थे और अधर्म तथा पाप का ही पालन करते थे इसलिए भगवान् वासुदेव ने उनको युद्ध क्षेत्र में दण्डित किया।"

यद्यपि पौराणिक वर्णनों में धर्म और अधर्म के स्वरूप को समझाने के लिए तरह-तरह की देव और दैत्य-दानवों की कथाएँ सुनाई गई हैं जिससे सामान्य जनता भी उनसे कुछ शिक्षा ग्रहण कर सके, पर हमको निश्चित रूप से यह समझ लेना चाहिए कि उनका आशय सज्जनता तथा दुर्जनता का व्यवहार करने वालों से ही है। सम्भव है कि किसी समय में 'दानव' और 'दैत्य' नामधारी पाशविक शक्ति के अनुयायिओं के बड़े-बड़े सङ्गठन बन गये हों, और आज जिस प्रकार कितने ही भौतिक शक्ति में विश्वास रखने वाले राष्ट्र 'एटम बम' (अणु अस्त्र) बनाकर संसार को आतंकित कर रहे हैं, उसीं प्रकार प्राचीन युग में भी किन्हीं जातियों ने ऐसा प्रयत्न किया हो, पर वास्तव में वे सब 'धर्म' 'सत्य' 'न्याय' के विरोधी दुर्जन स्वभाव वाले व्यक्ति ही थे। ऐसे लोग सदा से संसार के लिए कंटक स्वरूप होते आये हैं, और जब निरीह जनता, सज्जन स्वभाव के व्यक्ति उनके स्वार्थयुक्त व्यवहार और अन्यायों से दुःखित होकर भग-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न् का स्मरण करने लगते हैं तो उनके ऊपर दैवी शक्ति का चक्र चलता है और वे किसी न किसी प्रकार नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। संयोग की बात है कि आज हम अपने नेत्रों से इस 'दैत्य-दानव-विनाश' के नाटक की पुनरावृत्ति होती देख रहे हैं। आज भी अन्याय पर आश्रित अनियंत्रित शक्ति से मदान्ध व्यक्ति गर्जन-तर्जन कर रहेहैं और सरल प्रकृति के सज्जन दबे हुए आतंक और निराशा का अनुभव कर रहे हैं। पर दैवी-सत्ता ऐसे विपरीत-प्रकृति विरुद्ध वातावरण कोअधिक समय तक स्थिर नहीं रहने दे सकती। सूक्ष्म-जगत् में भगवान् का चक्र घूमने लग गयाहै. और शीघ्रही हम भगवद् शक्ति के उस चमत्कार को देखने की आशा रख सकते हैं जिसकी चर्चा इन पौराणिक कथाओं में बार-बार की गई है।

"वैष्णव" के लक्षण और महिमा :—

सत् और असत् पुरुषों के विवेचन की दृष्टि से पद्म-पुराणान्तर्गत "ब्रह्मखण्ड" के आरम्भ में जो "वैष्णव" जनों के लक्षण और कर्त्तव्यों का वर्णन किया गया है वह भी ध्यान देने योग्य है। आज-कल के बाह्याचार प्रधान समय में यद्यपि वैष्णव की पहिचान बड़े-बड़े रामानन्दी तिलक और तुलसी की मोटी माला ही रह गई है, पर यह उसका वास्तविक स्वरूप नहीं है। 'वैष्णव' अथवा 'विष्णुभक्त का सबसे पहला लक्षण परोपकार और प्राणीमात्र की सेवा है। उसका मन्तव्य है कि जब विष्णु भगवान् ही समस्त जगत् में व्याप्त हो रहे हैं और चींटी से हाथी तक में उन्हीं की आत्मशक्ति प्रकट होरही है,तो किसी को पराया,विरोधी अथवा शत्रु कैसे समझा जा सकता है! सभी प्राणी अपने आत्म-स्वरूप हैं और उनके साथ 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के सिद्धान्तानुसार व्यवहार करना ही सच्चा धर्म है। इसकी व्याख्या करते हुये पुराणकार ने 'वैष्णव' के मुख्य लक्षण इस प्रकार बतलाये हैं—

"जो पुरुष हिंसा, दम्भ, काम और क्रोध से रहित होते हैं और लोभ तथा मोह को जो त्याग देते हैं, उनको ही वैष्णव समझना चाहिए।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पिता आदि गुरुजनों के भक्त होते हैं, दयावान् होते हैं, सब प्राणियों के प्रति हित-भावना रखते हैं, जिनके हृदय में किसी के प्रति ईर्षा-द्वेष के भाव नहीं होते और सदैव सत्य व्यवहार करते हैं उनको ही वैष्णव जानना चाहिए ।"

यह भी कहा गया है कि "जिस कुल में ऐसा कोई एक भी वैष्णव हो जाता है तो उस कुल के सभी व्यक्तिपापों से छुटकारा पाकर सद्गति के अधिकारी हो जाते हैं। जो व्यक्ति ऐसे वैष्णव का चरणोदक अपने मस्तक पर धारण करता है तो फिर उसे किसी अन्य तीर्थ में स्नान करने की आवश्यकता नहीं होती। ऐसे महात्मा वैष्णव का दो-चार क्षण का सत्संग भी मनुष्य को भवसागर से तार देता है।"

आगे चलकर पुराणकार ने तुलसी और शालिग्राम की उपासना. एकादशी व्रत, भगवान् कृष्ण और राधा की भक्ति और उपासना आदि वाह्याचार को भी आवश्यक बतलाया है,क्योंकि इसके विना सामान्य जनों को ऐसे महात्माओं को जानने तथा लाभ उठाने काअन्य कोई उपाय नहीं होता। पर इसी परिस्थिति में अनधिकारी अथवा वंचक लोगों को दिखावटी वेष बनाकर लोगों को भ्रम में डालने का अवसर भी मिल जाता है। कुछ भी हो "वैष्णव" का आदर्श बहुत ऊँचा है और जो वास्तव में उसके आचरण का प्रयत्न करते हैं, वे निस्सन्देह पूजनीय हैं। वर्तमान काल के 'युग-पुरुष' महात्मा गाँधी भी 'वैष्णव-आदर्श' को ही अपना लक्ष्य मानते थे और उसका पालन करके वे भारतवर्ष के ही नहीं समस्त संसार के मार्ग दर्शक बन गये। वे अपनी प्रार्थना में नित्यप्रति एक भजन गाया करते थे जिसका कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

अर्थात् "वैष्णव कहलाने का अधिकारी तो वही हो सकता है जो दूसरे के दुःख को समझे अनुभव करे, उसे दूर करने का प्रयत्न करे, पर मन में किसी प्रकार का अहङ्कार का भाव न लाये। संसार में प्रत्येक प्राणी को भगवत्-स्वरूप मानकर उसकी वन्दना करे, किसी की निन्दा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भाव मन में न लाये, अपनी वाणी, शरीर और मन को शुद्ध, पवित्र और स्थिर रखे। सब को समदृष्टि से देखे, ममता का त्याग कर दे, पराई स्त्री को माता के समान माने, जिह्वा से कभी असत्यभाषण न करे और न दूसरे के धन को हाथ लगाये। यही वैष्णव के लक्षण हैं और ऐसे व्यक्ति को जो माता उत्पन्न करती है वह भी धन्य है।

मनुष्य किसी भी धर्म अथवा सम्प्रदाय का अनुयायी क्यों न हो, परोपकार, सेवा, सत्यपरायणता आदि सद्गुणों के बिना उसे धार्मिक नहीं माना जा सकता। वैसे प्रत्येक धर्म ने इन गुणों को महत्व दिया है और किसी न किसी रूप में अपने धर्म-नियमों में इनको शामिल भी किया है पर हम कह सकते हैं कि 'वैष्णव-सिद्धान्त'' में इनको जितनी परिपूर्णता तक पहुँचा दिया गया, उसकी तुलना शायद ही एकाध अन्य सम्प्रदाय या मजहब कर सके। पर इतना ऊँचा आदर्श स्वीकार करके चलने में खतरा अवश्य रहता है कि मनुष्य के व्यवहार और आचार में दम्भ का प्रवेश न हो जाय। कारण यह होता है कि पहिले तो परम्परा या प्रशंसा के भाव से मनुष्य इस आदर्श को अंगीकर कर लेता है। पर बाद में उसका यथार्थ रूपमें पालन करना कठिन जान पड़ता है। इस प्रकार अपनी मान-मर्यादा को अक्षुण्ण रखने के लिए वह दिखावे के ढंग पर इन नियमों का अनुसरण तो करते रहतेहैं, पर उनकी मानसिक स्थिति और अपरोक्ष कार्य इसके अनुकूल नहीं होते। यह दुरङ्गी स्थिति और भी शोचनीय होती है और मनुष्य न इधर का रहता है, न उधर का। इसलिए सचाइ और बुद्धिमानी का मार्ग यही है कि मनुष्य अपने नियमित धर्म-विधान का पालन करते हुए उपरोक्त सद्गुणों के पालन करने का निरन्तर प्रयास करता रहे। वास्तव में इन गुणों को 'वैष्णव' या 'शैव' सम्प्रदाय के नियम समझ लेना गलत है, ये तो मानवता के लक्षण हैं। इसलिए जब कभी और जिस प्रकार से इनका ज्ञान हो जाय तभी से उनको अपनी शक्ति के अनुसार ग्रहण करता चला जाय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मण गुणों से ही पूज्य होता है—

पुराणों में ब्राह्मणों की मान्यता पर बहुत जोर दिय गया है। उनको चारों वर्णों में सर्वश्रेष्ठ और समाज का अगुआ बतलाया गया है, और घोषित किया है गया कि अपराध करने पर भी ब्राह्मण को अन्य वर्ग वालों की अपेक्षा अल्प दण्ड दिया जाय। यह विधान पक्षपातपूर्ण तथा न्याय के विपरीत जान पड़ता है, पर जैसे वर्तमान समय में भी अनेक व्यक्तियों को किसी बड़ी सार्वजनिक सेवा अथवा आत्म-त्याग के लिए विशेष सम्मान और विशेष अधिकारोंसे पुरस्कृत किया जाताहै उसीप्रकार उस युग में उन ब्राह्मणों को ये विशेषाधिकार दिये गये थे, जो अपनी बहुमूल्य विद्या बुद्धि को निःस्वार्थ भाव से जनता-जनार्दन के हित के लिये अर्पण कर देते थे। कुछ लोगों का ख्याल है कि ब्राह्मणों ने ये लाभदायक अधिकार स्वयम् ही अपने लिए लिख डाले हैं। पर जब हम 'पद्म-पुराण में वर्णित ब्राह्मणों के लक्षण और उनके कर्तव्यों का विवरण पढते हैं तो हमको यही प्रतीत होता है कि 'ब्राह्मण' की पदवी को गुणों के आधार पर प्राप्त करना सहज न था। पहले तो उन शर्तों पर ध्यान देना चाहिये जिनका पालन करने से ब्राह्मण श्रेष्ठता का दर्जा पा सकता था—

"जन्म से अर्थात् ब्राह्मण के घर में उत्पन्न होने से तो कोई व्यक्ति 'ब्राह्मण' मात्र कहा जा सकता है। वह 'द्विज' तभी होता है जब उसके समुचित सस्कार किये जाते हैं। जब वह सम्पूर्ण विद्या प्राप्त करलेता है तब वह 'विप्र' बनता है और श्रोत्रिय वेदज्ञ की पदवी का अधिकारी हो सकता है—

वेद-विद्या, मन्त्र-जप और तीर्थों के स्नान से पवित्र और आत्म-ज्ञान सम्पन्न होनेपर ही विप्र वास्तविक पूजनीय माना जा सकता है। ऐसा ब्राह्मण सदैव नारायण के चरणों मे भक्ति रखने वाला, शुद्ध अन्तःकरण वाला, इन्द्रियों को जीतकर उन्हें वश में रखने वाला, क्रोध को जीत लेने वाला और सब मनुष्यों को समान दृष्टि से देखने वाला होना चाहिए। माता-पिता की सेवा का सदा ध्यान रखने वाला, समस्त गुरुजनों और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिथियों का उचित सम्मान करने वाला, पराई स्त्री की ओर कभी न ताकने वाला ब्राह्मण ही पूजनीय माना जाता है।"

पुराणकार ने बहुत स्पष्ट रूप से धर्म का यह सिद्धान्त बतलाया है कि पूजा गुणों की ही होनी चाहिए। केवल किसी ब्राह्मण-दम्पति के घर में जन्म ले लेने से कोई व्यक्ति सार्वजनिक सम्मान और विशेष अधिकारों का पात्र नहीं माना जा सकता। ब्राह्मण का मुख्य लक्षण विद्या और ज्ञान सम्पन्न होने के साथ ही 'सर्वजन हिताय' की भावना रखना भी है। जो अपनी विद्या को केवल पेट भरने का साधन बना लेता है, वह भी अन्य लोगोंका श्रद्धाभाजन औरविशेष आदर-सम्मानका अधिकारी नहीं मानाजा सकता। पूजनीय वही है जो अपनी शक्तियोंको स्वार्थ के बजाय परमार्थमें लगताहै। स्वयं कष्ट सहकर दूसरों को विपत्ति से छुड़ाता है। जिसे समाज के उत्थान का ध्यान रहताहै और इसकेलिए अपने भौतिक सुखोंको तिलांजलि देकर ऐसा आदर्श और उदाहरण उपस्थित करता है जिससे अन्य लोगों को भी समाज की निस्वार्थ सेवा करने की प्रेरणा मिले और लोग आपाधापीकी हीन मनोवृत्तिको त्यागकर परोपकार का उच्च जीवनव्यतीत करने की स्पृहा करने लगें। 'पद्म-पुराण' ने यहभी स्पष्ट कर दिया हैकि इस प्रकार की महान् पदवी प्राप्त कर सकता केवल ब्राह्मणों तक ही सीमित नहीं है, वरन् जो कोई इन सद्गुणों का धारण करके अपना जीवन परमार्थ के हेतु समर्पित कर देता है वही सच्चा पूजनीय विप्र' माना जा सकता है। इसके लिए उच्च कुल, प्रसिद्ध वंश अथवा सांसारिक वैभव आदि की कोई आवश्यकता नहीं है। नारदजी के यह प्रश्न करने पर कि क्या असत् (हीन) कुल में जन्म लेने वाला व्यक्ति भी पूज्य श्रोत्रिय बन सकता है? श्री ब्रह्माजी ने उत्तर दिया—

"कोई व्यक्ति चाहे उत्तम श्रोत्रिय ब्राह्मण के घर में उत्पन्न हुआ हो पर यदि वह ब्रह्म-कर्तव्यों को पालन नहीं करता तो कदापि पूज्य नहीं माना जा सकता। पर श्रेष्ठ कर्तव्यों को व्यवहार रूपमें पूरा करके असत् कुल और असत् क्षेत्र(नीच जाति की स्त्री से उत्पन्न)व्यक्ति भी परम पूज

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन जाता है । जिस प्रकार समस्त ऋषि-मुनियों के सम्मानास्पद व्यासजी मल्लाह की पुत्री सत्यवती से उत्पन्न हुए थे । ऐसी ही स्थिति वैभाण्डक ऋषि की थी । विश्वामित्र का जन्म क्षत्रिय माता-पिता से हुआ था । पर वे सार्वजनिक हितके लिए जीवन समर्पण करदेने से 'ब्रह्मर्षि' और भगवान के सदृश्य सम्माननीय बन गये । वसिष्ठजी,जिनके चरणों में श्रीरामचन्द्रजी जैसे ईश्वरावतार भी निरन्तर गिरते रहते थे,वेश्या के पुत्र थे। इसी तरह और भी अनेक सिद्ध ऋषि-मुनियों के विषय में कहा जा सकता है ।"

जिन लोगों को पुराणों में केवल ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देनेकी बात ही दिखलाई देती है उनको इन श्लोकों पर भी ध्यान देना चाहिए । हम जानते हैं कि जितने ही पुराण-लेखकों ने ब्राह्मणों में अन्ध-श्रद्धा और भक्ति रखने को ही बड़ा महत्व दे डाला है, पर उनकी ही बात को सत्य मान लेना कहाँ की बुद्धिमानी है । 'पद्म-पुराण' तथा और भी समस्त पुराणों मे स्थान स्थान पर आदर्श ब्राह्मण के ये लक्षण बतलाये गए हैं । तो भी जो लोग उनकी उपेक्षा करके केवल ब्राह्मणों का दान-दक्षिणा और विशेष अधिकारों वाले वाक्यों का ही उल्लेख किया करते हैं, उनको हम 'कुतर्की' या 'पक्षपाती' के सिवाय और कुछ नहीं कह सकते हैं । निष्पक्ष व्यक्ति किसी की त्रुटियों के साथ उसके गुणों को भी स्वीकार करता है । जैसा हम आरम्भ में लिख चुके हैं पुराणों की कितनी ही श्रेणियाँ है । उनमें घटिया-बढ़िया-कई प्रकार की रचनायें पाई जाती हैं और सिद्धान्त विवेचन की दृष्टि से भी काफी अन्तर देखने में आता है । अगर हीनता की बातों की उपेक्षा करके उच्च आदर्श की बातों को ही पाठकों के सामने रखें तो उनसे उनका अवश्य न्यूनाधिक लाभ हो सकता है । सज्जनों को 'कुतर्क' के बजाय यही जनहितकारी नीति अपनानी चाहिए ।

भगवन्नाम कीर्तन का सच्चा स्वरूप--

वर्तमान समय में देश के कितने ही भागों में' कीर्तन का विशेष प्रचार हो गया है और उसके पक्ष-विपक्ष में अनेक प्रकार की बातें सुनने में आया करती हैं । कुछ लोग उसे मोक्ष का सर्वश्रेष्ठ मार्ग बतलाते हैं और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दूसरे लोग कहते हैं कि केवल जिह्वा से नामोच्चारण करने से कोई लाभ नहीं हो सकता। कुछ लोग ऐसे 'कीर्तन प्रेमियों' के उदाहरण देते हैं जो इस क्षेत्र में बड़े प्रसिद्ध हो चुके हैं, पर जिनका चरित्र और आचरण निन्दनीय है। कुछ लोग यह आक्षेप भी करते हैं कि 'कीर्तन' की आड़में स्त्री-पुरुष अपनी असद्वृत्तियों की पूर्ति किया करते हैं।

वर्तमान दशा का भली प्रकार निरीक्षण करने पर हम कुछ अंशों में इन आक्षेपों की सचाई स्वीकार करते हैं, पर साथ ही हमारा यह भी मत है कि इनके कारण 'कीर्तन'को न तो निन्दनीय सिद्ध किया जा सकता है और न उसे त्यागने की सम्मति दी जा सकती है। कीर्तन का आशय यही नहीं है कि बहुत बड़ा जन-समूह एकत्रित होकर ढोल, बाजा गाजा के साथ स्त्री-पुरुष सम्मिलित होकर नामोच्चारण करें। इस प्रकार के सामूहिक-कीर्तन की प्रणाली श्रीचैतन्य महाप्रभु ने प्रचलित की थी और उसके द्वारा मुसलमानी शासनकाल में निस्संदेह हिन्दू धर्म की रक्षा में बड़ी सहायता प्राप्त हुई थी। पहले यह विशेष रूप से बङ्गाल में ही प्रचलित थी, इधर तीस-चालीस वर्ष से उत्तर प्रदेश और अन्य हिन्दी— प्रान्तों में भी यह लोकप्रिय हो गया है।

"पद्म-पुराण" के अनुसार कीर्तन, समाज या व्यक्ति में उत्पन्न हो जाने वाला धर्म विरोधी या बाधा डालने वाली प्रवृत्तियों के नाश-करण के लिए विशेष उपयोगी और सहायक है। यह एक ऐसी सीधी साधी और साथ ही प्रभावशाली उपासना-पद्धति है जो कहीं भी और सभी अवस्थाओं में प्रयुक्त की जा सकती है। पर इसमें मन और भावों की शुद्धता का ध्यान रखना अनिवार्य है। केवल अच्छे सुर में और भक्ति भाव का अभिनय करते हुए कीर्तन व्यर्थ होता है। अन्यथा यदि शुद्ध हृदय से तन्मयतापूर्वक किया जाय तो इससे बहुत शीघ्र परमात्मा की भक्तिका विकास होता है। "पद्म-पुराण" में और भी कई ऐसे दोष बतलाये हैं, जिनका कीर्तन में त्याग देना अत्यावश्यक है। इस सम्बन्ध में सनत्कुमार के मुख से कहलाया गया है—
CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"प्रथम तो नामोच्चारण करने वाले पुरुष का यही अपराध हो सकता है कि वह किसी सत्पुरुष की निन्दा करने लग जाय। दूसरा अपराध यह होता है कि अनेक व्यक्ति भक्ति करते हुए भी राम, कृष्ण शिव आदि के नामों में भेद बुद्धि रखते हैं—

शिवस्य श्रीविष्णोर्यं इह गुण नामादि सकल।
धिया भिन्न पश्येत्स खलु हरिनामाहित करः॥

तीसरा अपराध अपने गुरु की किसी भी प्रकार अवज्ञा कर देना होता है। चौथा अपराध श्रुति एवं शास्त्रों की निंदा करना है। पाँचवाँ यह कि हरिनाम का जो माहात्म्य बतलाया जाय उसे अर्थवाद (बनावटी या प्रसंशात्मक) समझा जाय। जो व्यक्ति सदैव "मैं और मेरा" यही ध्यान करता रहता है वह भी नाम-अपराधी होता है। जो व्यक्ति इन अपराधों को जान-बूझकर पाप बुद्धि से करता है उसका उद्धार कभी नहीं होता। इस जीवन में वह उसी प्रकार दुःखी रहता है जैसे माता से रुष्ट होकर भोजन न करने वाला बालक। इसप्रकार दसप्रकार के नामापराध होते हैं, इनको त्याग कर नाम का जप करने से मनुष्य का पूर्ण कल्याण होता है।

इससे विदित होता है कि नाम कीर्तन' तभी कल्याणकारी होता है जब उसे हार्दिक श्रद्धा से किया जाता है और अपना आचरण भी पवित्र और परमार्थ की भावना से समन्वित रखा जाय। वर्तमान समय में लोगों में जो झूँठी साम्प्रदायिकता बढ़ गई है उसके कारण अनेक व्यक्ति केवल किसी एक नाम को लेने का ही आग्रह करते हैं। इस प्रकार की भेद बुद्धि कभी सच्ची धार्मिकता का लक्षण नहीं हो सकती। जो धर्म और अध्यात्म का थोड़ा भी मर्म समझता हैं वह केवल 'राम' और 'शिव' के नामों को ही समान श्रद्धास्पद नहीं मानता वरन् बोद्ध, पारसी, ईसाई, मुसलमान आदि किसी भी मजहब में प्रयुक्त होने वाले भगवान् के नाम को आदर के भाव से ही उच्चारण करेगा। भाषा का भेद होने से भगवान् नहीं बदल जाता। इसलिए सच्चा धार्मिक वही है जो धर्म-समन्वय और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहिष्णुता का भाव रखे। 'धर्म' को द्वेष और कलह का करण बना लेना उसे बदनाम और कलंकित करना है।

सामान्य धर्म-क्रियाओं का महान फल—

पुराणों की एक परिपाटी यह भी है जि उनमें जहाँ जिस चीज की उपासना या पूजा का प्रतिपादन किया है वहाँ उसे एकदम आकाश पर चढ़ा दिया जाता है। चाहे वह एक सामान्य फूल या पत्ती का भगवान् पर चढ़ाना हो, या किसी मूर्ति का दर्शन करना हो, या किसी तीर्थ में एक दिन का उपवास आदिकरना हो, तो भी पुराणकारउसकी तारीफों के पुल बांध देते हैं। 'पद्म-पुराण' में ही जहाँ धात्री (आमला) और तुलसी की पूजा का जिक्र आया है, अथवा गङ्गा स्नान का महात्म्य बतलाया गया है या एकादशी व्रत का तहत्व दिखलाया है, वहाँ इनमें से प्रत्येक को अपार पुण्य प्रदायक, घोर से घोर पापों का उपशमन करने वाला कहा गया है। प्रत्येक केलिए यही प्रदर्शित किया गया है कि इसका अनुष्ठान करने से मनुष्य विना किसी शंका के स्वर्ग और मोक्ष का अधिकारी बन जाता है।

धात्री (आमला) का फल वास्तव में स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ा उपयोगी है . पर अनेक व्यक्ति उसके स्वाद में कषैलापन अधिक होने से उसका व्यवहार कम करते हैं। इसके लिए आयुर्वेद के ज्ञाताओं ने उससे 'च्यवनप्राश अवलेह' बनाया जो स्वादिष्ट और रोग निवारण दोनों गुण रखता है। पुराणकार ने सर्वसाधारण का ध्यान इस तरफ आकर्षित करने के लिये उसका धार्मिक महत्व भी खूब बढ़ा-चढ़ा कर दिया है—

"धात्रीफल की पवित्रता तथा श्रेष्ठता सर्वविदित है। जो पुरुष या स्त्री उसका पौधा लगाते हैं वे जन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा पा जाते हैं। जहाँ धात्रीफल रहता है वहाँ भगवान् केशव ब्रह्माजी और लक्ष्मी जी सदैव विद्यमान रहते हैं।

उदाहरणार्थ तुलसी को तो सभी वैष्णव पुराणों में विष्णु भगवान की अत्यन्त प्रिय बतलाया गया है। 'ब्रह्मवैवर्त पुराणों में उ। [illegible]

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्ण के गोलोक की एक शापग्रस्थ गोपी का प्रतीक बतलाया गया है। इसी प्रकार आमले को इन्द्र के अमृत-पात्र से गिरी हुई बूदों द्वारा उत्पन्न कहा गया है। गङ्गाजी की उत्पत्ति वामन-भगवान के रूप में कही गई है। एकादशी-व्रत को तो निश्चित रूप में यमराज के पाश से छूटकारा पाने सर्वश्रेष्ठ साधन घोषित कर दिया गया है—

एकादश्यास्तु माहात्म्यं किमह वच्मि साम्प्रतम्।
श्रुत्वा चैकादशी नाम यमदूताश्च शङ्किता।

इस प्रकार के वर्णनों को कई पाठक अतिशयोक्तिपूर्ण समझकर अश्रद्धा की दृष्टि से देखने लग जाते हैं। हम भी इसके लिए उनको अधिक दोषी नहीं कह सकते, क्योंकि पौराणिक लेखकों और पौराणिक श्रोताओं को मनोवृत्ति से वे अनजान होते हैं। विशेषतः जहां साम्प्रदायिकता की भावना बलवती हो जाती है, वहाँ स्वमत का प्रतिपादन करने में वे कितनी भी बड़ी अतिशयोक्ति करने में संकोच नहीं करते। तुलसी की कथा का तथा उससे मिलने वाले पुण्य का अनेक पुराणों में इतना अधिक विस्तार किया गया है कि उसे एक स्थान पर एकत्र कर दिया जाय तो एक बड़ा ग्रन्थ बन सकता है इसी प्रकार गङ्गा की महिमा का भी वारा-पार नहीं है जिसके एक बार के स्थान अथवा निकट जाकर दर्शन कर लेने मात्र से समस्त पाप नष्ट होकर स्वर्ग और मुक्ति की प्राप्ति निश्चित कह दी गई है—

गंगेति स्मरणादेव क्षयं याति च पातकम्।
कीर्तनादतिपापानि दर्शनाद् गुरुकल्मषम्॥

इस तरह की अति-प्रशंशा आज हमको अरुचिकर प्रतीत होती है, पर प्राचीन समय में जब शिक्षा का व्यापक प्रचार नहीं हुआ था और लोग तर्क तथा प्रत्यक्ष प्रमाणों के बजाय हार्दिक श्रद्धा द्वारा ही अधिकांश में प्रेरित होते थे, उस समय ऐसे वर्णन सर्वसाधारण में 'पुण्य कर्मों की अभिरुचि उत्पन्न करने वाले माने जाते हैं और इस दृष्टि से विद्वान लोग भी उनको बुरा नहीं कहते थे। अब समय बदल गया है। समझदार पाठक इस प्रकार की वनस्पतियों और उपवास,स्नान आदि धर्म क्रियाओं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उनसे होने वाले वास्तविक लाभ की दृष्टि से ही देखा करते हैं। इसलिऐ वे प्रचीन श्रद्धावादी श्रोताओं की परिस्थिति का अनुमान नहीं कर सकते और ऐसे वर्णनों का विरोध करने लग जाते हैं।

तो भी इतना मानना पड़ेगा पुराण लेखकों ने जिन तुलसी, गंगा आदि जैसी वस्तुओं की जो अति-प्रशंसा कर दी है और उनसे प्राप्त होने वाले 'पुण्य' की महिमा अपरम्पार वतलाई है, वे वास्तव में बहुत लाभ-कारी हैं। उनकी कथाओं को आप मानें चाहें न मानें पर वैज्ञानिक प्रणाली से खोज करने पर भी उनकी उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है और उनका प्रयोग स्वास्थ्य रक्षा और अनेक व्याधियों से छुटकार पानेके लिए प्रभावशाली माना गया हैं। प्राचीन ग्रन्थों ने जहाँ तुलसी के 'विष्णु प्रिया' होने की मनोरंजक कथायें लिखी हैं वहाँ कहीं-कहीं उनके गुणों पर भी प्रकाश डाला गया है—

अर्थात् "हे गरुड़ जी! जो व्यक्ति नियमपूर्वक प्रतिदिन तीनों समय तुलसी पात्र का सेवन करता रहता है उसका शरीर ऐसा शुद्ध हो जाता है जैसा अनेक चान्द्रायण व्रतों द्वारा सम्भव होता है। इसी प्रकार तुलसी की गन्ध को लेकर वायु जहाँ बहती है, वह ग्राम और वहाँ की दिशायें पवित्र और दोष रहित हो जाती है।"

तुलसी के जो गुण धर्म-शास्त्र में बतलाये गये हैं वे यथार्थ हैं और अब भी समय पड़ने पर उनकी सचाई प्रकट हो सकती है। एक सामयिक पत्र में तुलसी की स्वाथ्य सम्बन्धी उपयोगता का वर्णन करते हुए यह घटना लिखी थी—

"बम्बई में जव 'विक्टोरिया गार्डन' और 'अलवर्ट म्यूजियम' (अजायबघर) का निर्माण हो रहा था वहाँ काम करने वाले मजदूर मच्छरों में ऐसे काटे गए कि सबके सब मलेरिया बुखार के शिकार हो गये और निर्माण कार्य में बड़ी वाधा उपस्थित हो गई। तब एक चतुर हिन्दू ठेकेदार ने यह सुझाव दिया कि बाग की सीमा के किनारे-किनारे चारों तरफ तुलसी के पौधे लगा दिये जावें। ऐसा करने से उस क्षेत्र में मलेरिया का प्रकोप बहुम शीघ्र गायब हो गया और मजदूर तथा अन्य कार्यकर्त्ता स्वस्थ रहकर अपना कार्य ठीक तरह करते रहे।"

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी प्रकार आमला के विषय में वैद्यक ग्रन्थों में 'धात्री फल प्रा पथ्यम्' आमला हर तरह से स्वास्थ्यप्रद है लिख दिया गया है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने आमला को 'विटामिन सी' का भण्डार बतलाया है, जिससे अनेक बीमारियां दूर होती रहती हैं। गंगा-जल की कीटाणु नाशक शक्ति प्रसिद्ध है और वही एकमात्र ऐसा जल है, जो महीनों तक रखा रहने पर भी दूषित नहीं होता। इस दृष्टि से अकबर बादशाह और उसके उत्तराधिकारी गङ्गा में किसी प्रकार की धार्मिक श्रद्धा न रखते हुए भी सदा हरिद्वार से मँगाया हुआ गंगाजल पिया करते थे। एकादशीको यदि वास्तव में ठोस ढग से उपवास किया जाय तो वह स्वास्थ्य रक्षा में बहुत अधिक सहायक हो सकता है, इसमें सन्देह करने का कोई कारण ही नहीं है।

इस प्रकार विविध प्रकारके उपाख्यानों द्वारा पाठकों में शारीरिक मानसिक, आत्मिक उन्नति के उपायों का प्रचार और प्रसार करना पद्म-पुराण' की एक विशेषता है। यदि कथा सुनते-सुनते पाठक,चाहे श्रद्धा की भावना से और चाहे प्रत्यक्ष लाभ के विचार से,यदि कुछ उपयोगी शिक्षा ग्रहण करता है तो इस 'प्रणाली' को अनुचित नहीं कहा जा सकता। वैसे तो यह 'महा-ग्रन्थ' सैकड़ों ही नहीं हजारों 'धर्म कथाओं' का संग्रह है, जिनमें सभी रुचि और प्रकृतियों के पाठकों को मन लग सकता है और वे अपनी परिस्थिति के अनुसार न्यूनाधिक लाभ भी उठा सकते हैं। वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायियों के लिए तो यहविशेष रूपसे सग्रह किया ही गया है और वे इसमें अवश्य ही बहुतसी काम की बातें पासकेंगे। हमे प्रसन्नता है कि हम इतने बड़े पुराण का, जिसका वृहदाकार और विस्तार देखकर सामान्य पाठक उसको हाथ लगाने का साहस भी कठिनता से करते हैं, सारतत्व ऐसे सर्वोपयोगी रूप में उपस्थित कर सकने में सफल हो सके। यदि पाठकों ने इसका पारायण करके धर्म के वास्तविक तत्व के विषय में कुछ प्रेरणा ग्रहण की तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे।

— श्रीराम शर्मा आचार्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्म-पुराण (प्रथम खण्ड) की
विषय-सूची

विषय पृष्ठ संख्या

॥ सृष्टि खण्ड ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ भूमि खण्ड ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्म पुराण

(सृष्टि खण्ड)

※ मङ्गलाचरण ※

नारायणं नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीञ्चैव ततो जयमुदीरयेत् ।।
ॐ स्वच्छ चन्द्रावदातं करिकरमकरक्षोभसञ्जातफेनं,
ब्रह्मोदभूतिप्रसक्तैर्व्रतनियमपरैः सेवित विप्रमुख्यैः ।
ओङ्कारालंकृतेन त्रिभुवनगुरुणा ब्राह्मणा दृष्टिपूतं,
सम्भोगाभोगरम्यं जलमशुभहरं पौष्करं व पुनातु ।।१
सूतमेकान्तमासीनं व्यासशिष्यो महामतिः ।
लोमहर्षणनामा वा उग्रश्रवसमाह तत् ।।२
ऋषीणामाश्रमांस्तात गत्वा धर्मान् समासतः ।
पृच्छतां विस्तराद् ब्रूहि यन्मत्त श्रुतवानसि ।।३
वेदव्यासान्मया पुत्र पुराणान्यखिलानि च ।
तवाख्यातानि प्राप्तानि मुनिभ्योवदविस्तरात् ।।४
प्रयागे मुनिवर्य्येश्च यथा पृष्टः स्वयं प्रभुः ।
पृष्टेन चानुशिष्टास्ते मुनया धर्मकाङ्क्षिणः ।।५
देशं पुण्यमभीप्सन्तो विभुना च हितैषिणा ।
सुनाभ दिव्यरूपञ्च सत्यग शुभविक्रमम् ।।६
अनौपम्यमिदं चक्रं वर्त्तमानमतन्द्रिताः ।
पृष्ठतो यात नियमात् पदं प्राप्स्यथ यद्धितम् ।।७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गच्छतो धर्मचक्रस्य यत्र नेमिर्विशीर्यते ।
पुण्यः स देशो मन्तव्य इत्युवाच स्वयम्प्रभुः ॥८

पद्म पुराण पुरुष भगवान् नारायण तथा नरों में सर्वश्रेष्ठ नर एवम् विद्या बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी भगवती सरस्वती को नमस्कार करके फिर जय शव्द का उच्चारण करना चाहिए । परम निर्मल चन्द्रमा के समान, शुभ्र वर्ण से युक्त, हाथियों की सूँड़ और मकरों के निरन्तर संचालन से समुत्पन्न फेनों वाला ब्रह्म की उत्पत्ति में संलग्न चित्त वाले, व्रत और नियमों के परिपालन करने में तत्पर, प्रमुख विप्र वृन्दों के द्वारा भली-भांति सेवन किया हुआ ओङ्कार से सविभूषित,तीनों भुवनों के गुरु अर्थात् जनक तथा ज्ञानोपदेष्टा ब्रह्मा जी की दृष्टि के पात से परम पुनीत सम्भोग एवं आभोग के करने से सुरस्थ और अमङ्गल के हरण करने वाला पौष्कर अर्थात् पद्म सम्बन्धी जल आपको पवित्र करे ।१।नितान्त एकान्त में बैठे हुए सूतजी से महान् मति वाले व्यास जी के शिष्य अथबा लोम हर्शण नाम वाले उग्रश्रवा यह बोलो ॥२॥ हे तात ! ऋषिगण के आश्रमों में जाकर संक्षेप से धर्म के विषय में पूछने वालों को जो मुझसे आपने श्रवण किया है उसे अब विस्तारपूर्वक बतलाओ ॥३॥ हे पुत्र ! आपके द्वारा कहे हुए समस्त पुराण मैंने वेद व्यासजी से प्राप्त किये हैं । अब मुनियों से विस्तार के साथ कहो ॥४॥ प्रयाग में मुनियों में श्रेष्ठ समुदायः के द्वारा प्रभु आपसे स्वय पूछा गया था । पूछे जाने पर आपने धर्म के ज्ञान की आकांक्षा रखने वाले मुनिगण को अनुशिष्ट किया था अर्थात् उको भली-भांति उपदेश देकर शासित किया था ॥५॥ सर्वत्र व्यापक और हित के चाहने वाले आपके द्वारा परम पुण्य देश के जानने की इच्छा रखतृ वाले ऋषियों से सुनाभ,दिव्य रूप वाला, सत्य पर गमन करने वाला,शुभ विक्रमशील, उपमा से रहित यह वर्तमान चक्र है । इस पर निस्तन्द्र अर्थात् परम सावधान होकर पीछे चले जाओ तो जो हितकर पद है उसे अवश्य ही प्राप्त कर लोगे ॥६-७॥इस गमन करने वाले धर्म चक्र की जहाँ पर नेमि विशीर्ण हो जावे वही परमपुण्यमय देश है-ऐसा आपने स्वयं ही कहा था।८।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उक्त्वा चैवमृषीन् सर्वानदृश्यत्वमगात् पुनः ।
गङ्गावर्तसमाहारो नेमिर्यत्र व्यशीर्यत ॥९
ईजिरे दीर्घसत्रेण ऋषयो नैमिषे तदा ।
तत्र गत्वा तु तान् ब्रूहि पृच्छतो धर्मसंशयान् ॥१०
उग्रश्रवास्ततो गत्वा ज्ञानविन्मुनिपुङ्गवान् ।
अभिगम्योपसंगृह्य नमस्कृत्वा कृताञ्जलिः ॥११
तोषयामास मेधावी प्रणिपातेन तानृषीन् ।
ते चापि सत्रिणः प्रीताः ससदस्या महात्मने ॥१२
तस्मै समेत्य पूजाञ्च यथावत् प्रतिपेदिरे ॥१३
कुतस्त्वमागतः सूत कस्माद्देशादिहाद्यतः ।
कारणञ्चागमे ब्रूहि वृन्दारकसमद्युते ॥१४

इस प्रकार से उन समस्त ऋषिगणों से कहकर फिर आप अदृश्यता को प्राप्त होगये थे अर्थात् छिप गये थे। जहाँ पर गंगा के आवर्त्त का समाहार है वहाँ नेमि विशीर्ण होगई थी। उस समय उस नैमिषक्षेत्र में ऋषियों ने दीर्घ सूत्र के द्वारा यजन किया था। वहाँ जाकर धर्म के विषयमें समुत्थित अनेकशंसयों को पूछने वालों को वे सब बतलाओ।९-१०। इसके अनन्तर ज्ञान से परम वेत्ता उग्रश्रवा वहां जाकर पहुँचे और उन श्रेष्ठ मुनिगण के समीप जाकर हाथ जोड़कर उन एकत्रित सबको सादर प्रणाम किया।११। परम मेधा सम्पन्न उनने प्रणिपात की विधि से समस्त ऋषियों को सन्तुष्ट किया था। सत्र करने वाले वे सब भी सदस्यों के सहित परम प्रसन्न हुए और वे सब उन महान् आत्मा वालेके समीप आकर यथारीति उनकी सबने पूजार्चना की थी।१२। ऋषियों ने कहा-हें सूतजी! आप तो देवोंके समान तेज वाले हैं। इस समय मे आपका यहाँ पर किस कारण से आगमन हुआ है और किस देश से उसे बतलाने की कृपा करें आपके यहाँ पधार कर आने का जो भी कारण हो आपने यहाँ पदार्पण किया है? ॥१३-१४॥

पित्राऽहन्तु समादिष्टो व्यासशिष्येण धीमता ।
शुश्रूषस्व मुनीन् गत्वा यत्ते पृच्छन्ति तद्वद ॥१५
वदन्तु भगवन्तो मां कथयामि कथान्तु याम् ।
पुराणञ्चेतिहासं वा धर्मानथ पृथग्विधान् ॥१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

तां गिरं मधुरां तस्त्र शुश्रुवुर्ऋषिसत्तमाः ।
अथ तेषां पुराणस्य शुश्रूषा समुपद्यत ॥१७
दृष्ट्वा तमतिविश्वस्तं विद्वांसं लोमहर्षणिम् ।
तस्मिन् सत्रे कुलपतिः सर्वशास्त्रविशारदः ॥१८
शौनको नाम मेधावी विज्ञानारण्यके गुरुः ।
इत्थं मद्भावमालव्यं धर्मान् शुश्रूषुराह तम् ॥१९
त्वया सूत महाबुद्धे भगवान् ब्रह्मवित्तमः ।
इतिहासपुराणार्थं व्यासः सम्यमुपासितः ॥२०
दुदोहिथ मतिं तस्य त्वं पुराणाश्रयां शुभाम् ।
अमीषा विप्रमुख्याणां पुराणं प्रतिसम्प्रति ॥२१
शुश्रूषास्ते महाबुद्धे तच्छ्रावयितुमर्हसि ।
सर्वे हीमे महात्मानो नानागोत्राः समागमताः ॥२२

ऋषियों के इस प्रश्न का सूत जी ने उत्तर दिया—परम बुद्धिमान्, व्यास महर्षि के शिष्य पिताजीके द्वारा मुझे आज्ञा हुई है कि मुनिगण की जाकर सेवा करो और वे जो भी कुछ धर्म के विषय में पूछें उसे भली-भांति उन्हें बतलाओ ॥१५॥ अतएक अब आप लोग मुझे बतायें जिस कथा को में आपके समक्ष में कहूं, मैं आपको पुराण इतिहास सुनाऊँ या पृथक् पृथक् प्रकार के धर्मों को श्रवण कराऊँ ॥१६॥ उन परम श्रेष्ठ ऋषिवृन्द ने सूत जी की उस अतिशय मधुर वाणी को सुना और इसके अनन्तर सन सबकी पुराणों के श्रवण करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी ॥१७॥ महान् विद्वान् अत्यन्त विश्वस्त लोमहर्षणि को देखकर उस सत्र में समस्त शास्त्रों के महामनीषी जो कुलपति थे ॥१८॥ वे महर्षि शौनक थे जो बड़े ही मेधावी थे और विज्ञानारण्यक में गुरु थे, उनने इस से उनके भाव को प्राप्त कर धर्म के विषय में श्रवथ करने की इच्छा वाले ने सूत जी से कहा ॥१९॥ हे सूतजी ! आप तो महान् बुद्धिमान् हैं ब्रह्मवेत्ताओं में परमश्रेष्ठ भगवान् व्यासजी की उपासना आपने इतिहास पुराणों के ज्ञानार्जन के लिए भली-भांति की है ॥२०॥ आपने पुराणों के आश्रय रखने वाली उस शुभ उनकी मति का दोहन किया है। अब इन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विप्रों में प्रमुख इन सबको पुराणों के प्रति श्रवण करने की इच्छा उत्पन्न हुई है सो हे महा बुद्धिमान ! अब आप वही श्रवण कराने योग्य हैं। ये श्रवण कराने वाले भी सब महान् आत्मा वाले पुरुष हैं। ये विभिन्न गोत्रों वाले यहां पर श्रवणेच्छा से ही सब आये हैं ॥२१॥२२॥

स्वान् स्वानंशान् पुराणोक्तान् शृण्वन्तु ब्रह्मवादिनः ।
सम्पूर्ण शीर्घसत्रेऽस्मिस्तांस्त्वं श्रावय वै मुनीन् ॥२३
पाद्मं पुराण सर्वेषां कथयस्व महामते
कथं पद्मं समद्भूतं ब्रह्मा तत्र कथन्वभूत् ॥२४
प्रोद्भूतेन कथं सृष्टिः कृता तान्तु तथा वद ।
एवं पृष्टस्ततस्तांस्तु प्रत्युवाच शुभांगिरम् ॥२५
सूक्ष्मञ्च न्यायसंयुक्तं प्राब्रवीदौमहर्षणिः ।
प्रीतोऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि भवद्भिरिहचोदनात् ॥२६
पुराणार्थपुराणज्ञैः सर्वधर्मपरायणैः ।
यथा श्रुतं सुविख्यात तत्सर्वं कथयामि वः ॥२७
धर्म एष तु सूतस्य सद्भिर्दृष्ट सनातनः ।
देवतानामृषीणाञ्च राज्ञां चामिततेजसाम् ॥२८

ब्रह्म के विषय में वाद करने वाले पुरुष पुराणों में कथित अपने-अपने अंशों का श्रवण करें। इस सम्पूर्ण दीर्घसूत्र मे मुनिगणों को आप उन्हीं स्थलों का श्रवण करावें ॥२३॥ हे महान् मति वाले ! अन्यसम्पूर्ण पुराणों में प्रथम पद्म-पुराण का वर्णन करें और यह कृपाकर स्पष्ट रूप से बतावें कि पद्म किस प्रकारसे समुत्पन्न हुआ और उस पद्म मे ब्रह्मा की समुत्पत्ति कैसे हुई थी ।२४। उस कमल से उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा ने सृष्टि किस प्रकारसे सृजित की थी इन समस्त घटित घटनाओं का वर्णन कीजिए, इस प्रकारसे पूछे गये सूतजी ने उन सबके प्रति परम शुभ वाणी में उत्तर दिया था ॥२५॥ रोम हर्षणके पुत्र सूत जी ने न्यायसे संयुत यह परम सूक्ष्म विषय उनसे कहा था। उन्होंने कहा—आप लोगों की इस प्रबल प्रेरणा से मैं अत्यन्त प्रसन्न एवं अनुग्रहीत हुआ हूं ॥२६॥ समस्त धर्म मैं तत्पर रहने वाले और पुराणों के तत्वार्थ के ज्ञाता महापुरुषों से मैंने जिस तरह से श्रवण किया है और जो परम विख्यात है उस सबको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप लोगों को बतलाता हूँ ।।२७।। सत्पुरुषों ने देवगणों का ऋषिगणों का और अपरिमित तेज से समन्वित राजाओं का यह सनातन सूत का धर्म देखा है ।।२८।।

वंशानां धारणं कार्यं स्तुतीनाञ्च महात्मनाम् ।
इतिहासपुराणेषु दृष्टा मे ब्रह्मवादिनः ।।२६
न हि वेदेष्वधिकारः कश्चित् सूतस्य दृश्यते ।
वैन्यस्य हि पृथोर्यज्ञे वर्त्तमाने महात्मनः ।।३०
मागधश्चैव सूतश्च तमस्तौतां नरेश्वरम् ।
तुष्टेनाथ तयोर्दत्तो वरो राज्ञा महात्मना ।।३१
सूताय सूतविषयो मगधो मागधाय च ।
यत्र सूत्यां समुत्पन्नः सूतो नामेह जायते ।।३२
ऐन्द्रे सत्रे प्रवृत्ते तु ग्रहयुक्ते बृहस्पतौ ।
तमेवेन्द्रं बार्हस्पत्ये तत्र सूतो व्यजायत ।।३३
शिष्यहस्तेन यत् पृक्तमभिभूतं गुरोर्हविः ।
अधरोत्तरधारेण जज्ञे तद्वर्णसङ्करम् ।।३४
येऽत्र क्षत्रात् समभवन् ब्राह्मण्यादचैव योनितः ।
पूर्वेणैव तु साधर्म्याद्वै धर्मास्ते प्रकीर्तिताः ।।३५
मध्यमो ह्येष सूतस्य धर्मः क्षेत्रोपजीविनः ।
पुराणेष्वधिकारो मे विहितो ब्राह्मणैरिह ।।३६

इतिहास-पुराणों में जो ब्रह्मवादी गण देखे गये हैं उनके वंशों का धारण करना तथा महात्माओं की स्तुतियों को धारण करने का कार्य है ।२९। वेदों में सूतजी का कोई भी अधिकार नहीं दिखलाई देता है । वेन राजा के पुत्र पृथु जो एक महान् आत्मा वाले थे, उनके वर्तमान यज्ञ में मागध और सूत ने उस नृपति का स्तवन किया था । उस स्तुति से परम सन्तुष्ट महात्मा राजा ने उन दोनों को वरदान किया था ।३०-३१। सूतका विषय सूत के लिए और मागध के लिए मगध दिया था। उस समय मे सूति में समुत्पन्न होने से यहां 'सूत'—यह नाम इनका हो जाता है ।।३२।। ऐन्द्र सत्र में अर्थात् इन्द्र के द्वारा किये गये सत्र में समस्त ग्रहों से युक्त बृहस्पति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के प्रवृत्त होने पर उस वाहस्पत्य में उसी इन्द्र के मूत उत्पन्न हुए थे।३ ।
शिष्य के हाथ से पृक्त एवं अभिभूत जो गुरु का हविथा उसको अवरोन्तर धारण करने से यह वर्ण-शंकर की उत्पत्ति हुई थी ।।३४।। जो यहां पर ब्राह्मणी की योनि से क्षत्रिय के द्वारा समुत्पन्न हुए पूर्व के ही साधर्म्य से वैधर्म प्रकीर्त्तित हुए हैं ।।३५।। क्षेत्रों से अपनी जीविका चलाने वाले सूत का यह मध्यम धर्म है । मैंनेयहां पर ब्राह्मणों के साथ उनका केवलपुराणों में ही अधिकार दिया था ।।३६।।

दृष्ट्वा धर्ममह पृष्टो भवद्भिर्ब्रह्मवादिभिः ।
त मात् सम्यग् भुवि ब्रूयां पुराणमृषिपूजितम् ।।३७
पितॄणां मानसी कन्या वासव समपद्यत ।
अपध्याता च पितृभिमत्स्यगर्भे बभूव सा ।।३८
अरणीव हुताशस्य निमित्तं पुण्यजन्मनः ।
तस्यां बभूव पूतात्मा महर्षिस्तु पराशरात् ।।२६
तस्मै भगवते कृत्वा नमः सत्याय वेधसे ।
पुरुषाय पुराणाय ब्रह्मवाक्यानुवर्त्तिने ।।
मानवच्छद्मरूपाय विष्णवे शसितात्मने ।
जातमात्रश्च यं वेद उपतस्थे ससंग्रहः ।।४०
मतिमन्थानमाविध्य येनासौ श्रुतिसागहात ।
यकाशो जनितो लोके महाभारतचन्द्रमाः ।।४१
भारतं भानुमान् विष्णुर्यदि न स्युरमी त्रयः ।
ततोऽज्ञानतमोन्धस्य कावस्था जगतोभवेत् ।।४२

ब्रह्म के बाद करने वाले, अथर्ववेदों की चर्चा करने वाले आप लोगों ने धर्म को देखकर ही मुझसे पूछा है। इसलिए मैं उस भू-मण्डलमें ऋषियों के द्वारा सम्पूजित पुराण को मीं भली-भाँति कहता हूँ ।।३७।।पितृगण को मानसी कन्या वासन अर्थात् इन्द्र के हुई थी। वह पितृगण के द्वारा अपध्यात होती हुई मत्स्य के गर्भ से हुई थी ।।३८।। जिस तरह अरणी में अग्नि का निवास रहता है उसी भांति पूर्व जन्मा का निमित्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप उसमें पराशर से पवित्र आत्मा वाले महर्षि समुत्पन्न हुए थे ।।३९।। ब्रह्म वाक्य का अनुवर्त्तन करने वाले, सत्य, वेधा, पुराण, पुरुष, मानव, का छद्म स्वरूप धारण करने वाले प्रशंसनीय आत्मा भगवान्-विष्णु के लिए प्रणाम किया था जिनको कि उत्पन्न होतेही संग्रह सहित समस्त वेद उपस्थित था ।।४०।। जिसने इस अतिगहन श्रुति स्वरूप सागर से अपनी मति रूपिणी मथनिय से अच्छी तरह मन्थन करके इस लोकमें महाभारत रूपी चन्द्रमा का प्रकाश समुत्पन्न किया था ।।४१।। इस जगत में भारत अर्थात् महाभारत ग्रन्थ सूर्यदेव और भगवान् विष्णु ये तीन न होते तो अज्ञान के अन्धकार से युक्त इस जगत् की न मालूम क्या दशा हुई होती ? ।।४२।।

कृष्णद्वैपायनं व्यासं विद्धि नारायणं प्रभुम् ।
को ह्यन्यः पुण्डरीकाक्षान्महाभारतकृद्भवेत् ।।४३
तस्मादहमुपाश्रौषं पुराणं ब्रह्मवादिनः ।
सर्वज्ञात् सर्वलोकेषु पूजितादद्दीप्ततेजसः ।।४४
पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणास्मृतम् ।
उत्तमं सर्वलोकानां सर्वज्ञानापपादकम् ।।४५
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम् ।
निःशेषेषु च लोकेषु वाजिरूपेण केशवः ।।४६
ब्रह्मणस्तु समादेशाद्वेदानाहृतवानसौ ।
अङ्गानि चतुरो वेदान् पुराणन्यायविस्तरम् ।।४७
असुरेणाखिलं शास्त्रमपहृत्यात्मसात्कृतम् ।
मत्स्यरूपेणाजहार कल्पादावुदकार्णवे ।।४८
अशेषमेतदवददुदकान्तर्गतो विभुः ।
श्रुत्वा जगाद च मुनीन् प्रति वेदांश्चतुर्मुखः ।।४९

कृष्ण द्वैपायन महर्षि व्यास जी को साक्षात प्रभु नारायण ही समझना चाहिए । भगवान् पुण्डरीकाक्ष नारायण के अतिरिक्त अन्य कौन हो सकता है जो महाभात जैसे उत्तम ग्रन्थ की रचना कर सके ।।४३।। उन्ही परम ब्रह्मवादी, सब कुछ के ज्ञाता, सम्पूर्ण लोगों में पूजित, दीप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तेज वाले महर्षि व्यासदेव से मैंने पुराणों का श्रवण किया है ।।४४।। ब्रह्माजी ने समस्त शास्त्रों का सार पुराण को सर्व प्रथम बताया है । यह सब लोकों में उत्तम है और सभी प्रकार के ज्ञान का उप पादक है ।४५। यह त्रिवर्ग का साधन, परम पुण्यमय और शतकोटि विस्तार वाला है । शेष लोकों में केशव भगवान् ने वाजि रूप से ब्रह्मा के आदेश से वेदों का समाहरण किया था । चारों वेद, उनके अङ्ग शास्त्र, पुराण एवं न्याय विस्तार सम्पूर्ण शास्त्रों को असुर ने अपहरण करके आत्मसात् कर लिया था । कल्प के आदि काल में उदकार्णव में मत्स्य रूप धारण कर सबका उद्धार किया था ।।४६।।४७।।४८।। जल के ही अन्दर स्थित होते हुए विभु ने यह सम्पूर्ण बतलाया था । चतुर्मुख ब्रह्माजी ने उसका श्रवणकर सम्पूर्ण वेदों को मुनियों को बतलाया था ।।४९।।

प्रवृत्तिः सर्वशास्त्राणाँ पुराणस्या भवत्तदा ।
कालेनाग्रहणं दृष्टवा पुराणस्य तदा विभुः ।।५०
व्यासरूपस्तदा ब्रह्मा संग्रहार्थं युये युगे ।
चतुर्लक्षप्रमाणेन द्वापरे द्वापरे जगौ ।।५१
तदाष्टादशधा कृत्वा भूलोकेऽस्मिन् प्रकाशितम् ।
अद्य पि देवलोकेषु शतकोटिप्रविस्तरम् ।।५२
तदेवात्र चतुर्लक्षं संक्षेपेण निवेशितम् ।
प्रवक्ष्यामि महापुण्यं पुराणं पाद्मसज्ञितम् ।।५३
तत्रादौ सृष्टिखण्डं स्वाद्भूमिखण्डतत् परम् ।
स्वर्गखण्ड ततः पश्चात्ततः पातालखण्डकम् ।
पञ्चमञ्च ततः ख्यातमुत्तरं खण्डमुत्तमम् ।।५४
एतदेव महापद्ममुद्भूत यन्मयं जगत् ।
तद्वृत्तान्तश्रयं यस्मात् पाद्ममिच्यते ततः ।।५५

उस समय में समस्त शास्त्रों की तथा पुराणों की प्रवृत्ति हुई थी फिर कुछ ऐसा आया कि पुराणों को श्रवणादि ग्रहण करना कम हो गया था । उस समय में विभु स्वयं व्यास रूप में अवतीर्ण हुये थे ।।५०।। इस तरह व्यास के स्वरूप में स्थित ब्रह्माजी ने युग-युग में सग्रह किया था और द्वापर-द्वापर में चार लाख प्रमाण वाले पुराणों का बतलाया था ।५१।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे अठारह होकर इस भू-मण्डल में प्रकाशित हुए हैं किन्तु देवलोकों में आज भी शतकोटि प्रकृष्ट विस्तारयुक्त हैं।५२।वह ही वहा पर संक्षेप से चार लाख निवेशित किया गया है। अब हम महान् पुण्यमय पाद्म संज्ञा वाले महा पुराण को बतलाते हैं ॥५३॥ इस पाद्म पुराण के आदि में सृष्टिखण्ड है और इसके आगे भू-मण्डल है। फिर उसके पीछे स्वर्ग खण्ड और इसके आगे इसमें पाताल खण्ड है। इसके अनन्तर पांचवां सबसे उत्तम उत्तर खण्ड के नाम से प्रख्यात है।।५४।यह ही महापद्म उद्भूत हुआ था जिससे पूर्ण यह जगत् है। उसके सम्पूर्ण वृत्तान्त का यह आश्रय है इसी कारण से इस महा पुराथ का पाद्म यह नाम कहा जाता है।५५।

ततत् पुराणममलं विष्णुमाहात्म्यनिर्मलम् ।
देवदेवो हरिर्यद्वै ब्रह्मणे प्रोक्तवान् पुरा ॥५६
ब्रह्मणाभिहितं पूर्वं यान्मात्रं मरीचये ।
एतदेव च वै ब्रह्मा पाद्मं लोके जगाद वै ॥५७
पञ्चभिः पर्वभिः प्रोक्तं संक्षेपाद्व्यासकारितात् ।
पौष्करं प्रथमं पर्व यत्रोत्पन्नः स्वयं विराट् ॥५८
द्वितीयं तीर्थपर्व स्यात् सर्वग्रहगणाश्रयम् ।
तृतीयपर्वग्रहणा राजानो भूरिदक्षिणाः ॥५९
वशानुचरितश्चैव चतुर्थं परिकीर्तितम् ।
पञ्चमं मोक्षतत्वञ्च सर्वतत्वं निगद्यते ॥६०
पौष्करे नवधा सृष्टिः सर्वेषां ब्रह्मकारिता ।
देवतानां मुनीनाञ्च पितृसर्गस्तथापरः ॥६१
द्वितीये पर्वताञ्चैव द्वीपाः सप्त ससागराः ।
तृतीये ‧द्रसर्गस्तु दक्षशापस्तथैव च ॥६२
चतुर्थे सम्भवो राज्ञां सर्ववंशानुकीनर्त्तनम् ।
अन्त्येऽपवर्गस्थानं मोक्षशास्त्रानुकीर्त्तनम् ॥६३
सर्वमेतत् पुराणेऽस्मिन् कथयिष्यामि वो द्विजाः ॥६४
इदं पवित्रं यशसो निधानमिदं पितृणामतिवल्लभं स्यात् ।
इदञ्चदेवस्य शुखाय नित्यमिदं महापातकभिच्च पुसाम्॥६५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह महापुराण मल से रहित और भगवान् विष्णु के माहात्म्य के होने के कारण अत्यन्त निर्मल है। देवों के भीं देव श्रीहरि ने पहले इसे ब्रह्माजी से कहा था।५६।इसके अनन्तर पहले ब्रह्मा ने जितना भाग मरीचि ऋषि से कहा था, इसी को ब्रह्मा ने लोक में इसको पद्म इस नाम से कहकर बताया था।५७।यह पाँच पर्वों से युक्त संक्षेप में महर्षि वेद व्यास के द्वारा कहा गया था। उन पाँच पर्वों में प्रथम पौष्कर नाम वाला पर्व है जिसमें विराट पुरुष स्वयं समुत्पन्न हुए थे।५८।दूसरा तीर्थ पर्व है जिसमें समस्त ग्रह गण का वर्णन किया गया है तृतीय पर्व में बहुत दक्षिणा देने वाले राजाओं का वर्णन है। चतुर्थ पर्व में वंशानुचरित का परिकीर्तन किया गया है। पाँचवें पर्व में मोक्षतत्व एव सर्वतत्व कहा जाता है।५९-६०। सर्व प्रथम पौष्कर पर्व में नौ प्रकार की सृष्टिका वर्णन है और सबका सृजन ब्रह्माजी के द्वारा किया गया है। उसमें देवों का मुनियों का और पितृगण का सर्ग बताया गया है। दूसरे में पर्वत, द्वीप सात सागरों के सृजन का वर्णन किया गया है। तीसरा रुद्रसर्ग है जिसमें प्रजापति दक्ष के शापआदि का वर्णन है।६१-६२। चतुर्थ सर्ग में राजाओं की समुत्पत्ति का वर्णन है और सबके वंशों का अनुकीर्तन किया गया है। अन्तिम में अपवर्ग के संस्थान का कथन है और मोक्ष शास्त्र का वर्णन किया गया है।६३। हे द्विजगण ! इस पाद्म महापुराण में यह सभी विषय वर्णित किया गया है। वह हम सभी आपको बतायेंगे ॥६४॥ यह महापुराण परम पवित्र है और यश को प्रदान करने वाला निधान है। यह पितगण का अत्यन्त प्रिय है। यह महा पुराण देवताओं को सुख देने वाला है और मनुष्यों के समस्त पातकों का नित्य नाश करने वाला है॥६५॥

कालपरिमाण वर्णन

निर्गुणस्याप्रमेयस्य शुद्धस्याथ महात्मनः।
कथ सर्गादिकर्तृत्वं ब्रह्मणो ह्युपपद्यते ॥१
शक्तत: सवभावानामचिन्त्याचरा:। ज्ञानगो
यत्ततो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भावशक्तय: ॥२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्नः प्रोच्यते विद्वान्नित्य एवोपचारत ।
निजेन तस्य मानेन आयुर्वर्षशतं स्मृतम् ॥३
तत्पराख्यं परार्द्धञ्च तदर्द्धं परिकीर्तितम् ।
काष्ठा पञ्चदशाख्याता निमेषो नृपसत्तम् ॥४
काष्ठास्त्रिंशत्कलास्त्रिंशत्कला मौहूर्तिको विधिः ।
तावत्सख्यैरहोरात्र मुहूर्तैर्मानुषंस्मृतम् ॥५
अहोरात्राणि तावन्ति मासः पक्षद्वयात्मकः ।
तैः षड्भिरयनं वर्षमयने दक्षिणोत्तरे ॥६
अयनं दक्षिणं रात्रिर्देवानामुत्तरं दिनम् ।
दिव्यैर्वर्षसहस्रैस्तु कृमत्रेतादिसञ्ज्ञितम् ॥७

भीष्म पितामह ने पुलस्त्य ऋषि से कहा—हे ऋषिवर ! ब्रह्म तो परम विशुद्ध महान् आत्मा वाला है वह निर्गुण एवम् अप्रमेय है अर्थात प्रमा नाम वाली बुद्धि का विषय नहीं है, ऐसे ब्रह्मा को इस समस्त सर्ग आदि का कर्त्ता होना किस प्रकार से संगत हो सकता में ?पुलस्त्य ऋषि ने कहा समस्त भावों की शक्तियाँ अचिन्त्य अर्थात् चिन्तन करने के योग्य नहीं हैं वे तो केवल ज्ञान के द्वारा ही गोचर होतीं हैं। इस कारण से ब्रह्मा की सर्वादि भाव शक्तियां होती हैं। यद्यपि वह नित्य है तो भी उपचार से उसे उत्पन्न हुआ—ऐसा विद्वान् कहते हैं। उसके अपने मान से सौ वर्ष की उसकी आयु कही गई है। उसका परभाग का नाम परार्द्ध है जो उसका अर्ध भाग कहा गया है। हे नृपसत्तम ! पन्द्रह काष्ठा बताई गई हैं। जो निमेष होता हैं ॥१-४॥ तीस कला हैं और कला ही विधि का मुहूर्त होता है। उतनी ही संख्या वाले मुहूर्तों से मनुष्य का अहोरात्र(दिन और रात) होता है-ऐसा कहा गया है।५।उतने अहोरात्र होते हैं और दो पक्षों का एक मास (महीना) होता है। छै मासों का एक अयन होता है। एक वर्ष में दक्षिणायन तथा उत्तरायण दो अयन हुआ करते हैं।५।दक्षिण अयन देवों की रात्रि होती है और उत्तरायण उनका दिन होता है। इस तरह दिव्य एक सहस्र वर्षों के सतयुग-त्रेता आदि चारों युग हुआ करते हैं ॥७॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्युगं द्वादशभिस्तद्विभागं निबोध मे ।
चत्वारि त्रीणि द्वे चैक कृतादिषु यथाक्रमम् ॥८
दिव्याब्दानां सहस्त्राणि युगेष्वाहुः पुराविदः ।
तत्प्रमाणैः शतैः सन्ध्या पूर्वातत्राभिधीयते ॥९
संन्ध्यांशकश्च तत्तल्यो युगस्यानन्तरो हिय: ।
सन्ध्या सन्ध्यांशयोरन्तः कालो यो नृपसत्तम् ॥१०
युगाख्यः स तु विज्ञेयः कृतत्रेतादिसंज्ञितः ।
कृत त्रेता द्वापरश्च कलिश्चैव चतुर्युगम् ॥११
प्रोच्यते तत्सहस्रन्तु ब्रह्मणो दिवस नृप ।
प्रह्मणो दिवसे राजन् मनवश्च चतुदश ॥१२
भवन्ति परिमाणञ्च तेषां कालकृतं शृणु ।
सप्तर्षयः सुराः शक्रो मनुस्तत्सूनवोनृप ॥१३
एककाले हि सृज्यन्ते संह्रियन्ते स्वपूर्ववत् ।
चतुर्युगानांसख्यातासाधिकाह्येकसप्ततिः ॥१४

बारह वर्षों का चतुर्युग होता है, उसका विभाग आप लोग मुझसे भली-भांति समझ लेवें । चार-तीन-दो और एक कृतादि में यथाक्रम हुआ करते हैं ॥८॥ पुरावेत्ता पुरुषों ने युगों में दिव्य सहस्र वर्ष बतलाये हैं । उतने ही प्रमाण वाले सौ वर्षों की पूर्वासन्ध्या उसमें कही जाती है । । युग के अनन्तर में होने वाला सन्ध्यांश भी उसी के तुल्य होता है ।हे नृपों में परम श्रेष्ठ !सन्ध्याओं का जो मध्य का समय होता है वह सन्ध्या कही जाती है ॥१०॥ कृतयुग–त्रेता–द्वापर–कलियुग नाम वाले जो हैं उनकी ही युग इस नाम से कहा जाता है। सतयुग, त्रेता आदि ये चार युग होते हैं ॥११॥ हे नृप ! इस प्रकार से चारों युगों की एक सहस्र चौकड़ी जब समाप्त हो जाती है तो ब्रह्मा का एक दिन होता है । हे राजन् ! ब्रह्म के एक दिन में चोहद मनु हो जाते हैं।१२। अब उनका काल के द्वारा किया गया परिणाम का श्रवण करो । सप्तर्षिगण,सुर, इन्द्र,मनु और उनके पुत्र एक काल में स्व पूर्ववत् सृज्यमान और से ह्रियमान हुआ करते हैं । चतुंयुगों की साधिक एक सप्तति(इकहत्तर)संख्या बताई गई हैं।१३-१४।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्वन्तरं मनोः कालः सुरादीनाञ्च पार्थिव ।
अष्टौ शतसहस्राणिदिव्यया संख्ययास्मृतः ॥१५
द्विपञ्चाशत्तथान्यानिसहस्राण्यधिकानि च ।
त्रिशत्कोटचस्तुसम्पूर्णाः संख्याताः सख्यया नृप ॥१६
सप्तषष्टिस्तथान्यानि नियुतानि महामते ।
विंशतिश्च सहस्राणि कालोऽयतमधिक बिना ॥१७
मन्वंतरस्य सख्येयं मानुषैरिह वत्सरैः ।
चतुदश गुणो ह्येषः कालो ब्राह्ममहःस्मृतम् ॥१८
ब्राह्मो नैमित्तिको नाम तस्यान्ते प्रतिसंचरः ।
तदा हि दह्यते सर्वं त्रैलोक्ये भूर्भुवादिकम् ॥१९
जनप्रयान्ति तापार्त्ता महर्लोकनिवासिनः ।
एकार्णवे तु त्रैलोक्ये ब्रह्मा ब्रह्माविदांवर ॥२०
भोगिशय्यागतः शेतेत्रैलोक्याग्रासबृंहितः ।
जनस्थैर्योगिभिर्देवश्चिन्त्यमानो जगदविभु ॥२१

हे पार्थिव ! मनु और सुर आदि का काल मन्वन्तर होता है जो कि दिव्य संख्या से आठ सौ सहस्र कही गई है ॥१५॥हे नृप ! अन्य वामन सहस्र अधिक हैं । इस प्रकार संख्या से सम्पूर्ण तीस करोड़ संख्याहुई अर्थात् गिनी गई है।१६।हे महामते! अन्य सड़सठ नियुक्त हैं और अधिक के बिना बीस सहस्रकाल होता है ॥१७॥ यह मन्वन्तर की संख्या यहाँ पर मानुष वर्षों से की गई है । यह समय जब ब्रह्माजी के दिन से होता है तो चोदह गुना काल बताया गया है ॥१८॥ ब्राह्म नैमित्तिक नाम है उसके अन्त में प्रत्येक सञ्चार के उस समय में यह सम्पूर्ण भूर्भुवादिक त्रैलोक्य दग्ध हो जाता है ॥१९॥ महर्लोक के निवास करने वाले जन भी ताप से अत्यन्त आर्त होजाते हैं । ब्रह्म के वेत्ताओंमें परमश्रेष्ठ ब्रह्मा उस समय में जबकि सम्पर्ण त्रैलोक्य केवल समुद्रमय हो जाता है, इस त्रिभुवन का ग्रास कर वृंहित होता हुआ शेष नाग की शैया में संस्थित होकर शयन किया करता है । जनलोक में स्थित योगीजनों के द्वारा उस जगत् में व्यापक त्रिभुदेव का ध्यान एवं चिन्तन किया जाता है ॥२०-२१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्प्रमाथां हि तां रात्रि तदन्ते सृजते पुनः ।
एवन्तु ब्रह्मणो वर्षमेवं वर्षशतं च तत् ॥२२
शतं हि तस्य वर्षाणां परमायुर्महात्मनः ।
एकमस्त व्यतीत तु परार्द्धं ब्रह्मणोऽनघ ॥२३
तस्यान्तऽभून्महाकल्पः पाद्म इत्यविभिश्रुतः ।
द्वितीयस्य परार्द्धस्य वर्तमानस्य वै नृप ।
वाराहइति कल्पोऽयं प्रथमः परिकल्पितः ॥२४
ब्रह्मा नारायणाख्यंयोऽसौ कल्पादौ भगवान् यथा ।
ससर्ज सर्वभूतानि तदाचक्ष्व महामुने ॥२५
प्रजा ससर्ज भगवाननादिः सर्वसम्भवः ।
अतीतकल्पावसाने निशासुप्तोत्थितः प्रभुः ॥२६
सत्वोद्दक्तस्तथा ब्रह्मा शून्यं लोकउवैक्षत ।
तोयान्तःसमहोज्ञात्वा निमग्नां वारिसंप्लये ॥२७
प्रविचिन्त्य तदुद्धारं कर्तुकामः प्रजापतिः ॥२८

जितने प्रमाण वाला दिन बताया गया है उतने ही प्रमाण की उस दिन की रात होती है । उस रात्रि के समाप्त हो जाने पर पुनः इस जगत का सृजन होता है । इस प्रकार से ब्रह्मा का वर्ष होता है और ऐसे ही सौ वर्ष होते हैं जोकि उसकी अवस्था बतायी गई है॥२२॥ उस महान आत्मा वाले की सौ वर्षों की परमायु होती है । हे अनघ ! इसका एक वर्ष व्यतीत हुआ है और अब ब्रह्मा का परार्द्ध है ॥२३॥ इसके अन्त में महा-कल्प हुआ है जोकि पाद्म—इस नाम से प्रख्यात है । हे नृप ! यह जो वर्त्तमान दूसरा परार्द्ध है यह प्रथम वाराह कल्प परिकल्पित किया गया है ॥२४॥ भीष्मदेव ने कहा—हे महामुने ! नारायण नाम धारी यही ब्रह्मा कल्प के आदि में भगवान् की भाँति समस्त भूतों का सृजन किया करता था इसे अब बतलाइये।२५।पुलस्त्य ऋषि ने कहा—बीते हुए कल्प के अन्त में निशा के समय में सोकर उठे हुए प्रभु ने प्रजा का सृजन किया था जो कि आदि भगवान् हैं और जिनसे सभी की उत्पत्ति हुआ करती हैं ।२६। उस समय में सत्व से उद्वृक्त ब्रह्मा ने इस लोक को शून्य देखा था । इस भूमि को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल के मध्य में मग्न तथा जल की बाढ़ में एकदम डूबी हुई समझकर चिन्तन किया और प्रजापति ने इस मही के उद्धार करने की इच्छा की थी।२७-२८।

विष्णुरूपंतदाज्ञात्वापृथ्वीं वोढुं स्वतेजसा ।
मत्स्यकूर्मादिकाश्चान्यांवाराहींतनुमाविशत् ।।२९
वेदयज्ञमयं रूपमाश्रित्य जगतः स्थितौ ।
स्थितः स्थिरात्मा सर्वात्मा परमात्माप्रजापतिः ।।३०
प्रविवेश तदा तोयं तोयाधारे त्तराधरः ।।३१
निरीक्ष्य त तदा देवी पातालतलमागतम् ।
तुष्टाव प्रणता भूत्वा भक्तिनम्रा वसुन्धरा ।।
नमस्त सर्वभूताय नमस्ते परमात्मने ।।३२
मामुद्धरास्मादद्यत्व त्वत्तोऽहं पूर्वमुत्थिता ।
परमात्मन् मनस्तेऽस्तु पुरुषात्मन्नमोस्तुते ।।३३
प्रधानव्यक्तरूपाय कालभूताय ते नमः ।
त्व कर्त्तासवभूतानां त्वं पाता त्वं विनाशकृन् ।।३४
सर्गादौ यः परो ब्रह्मा विष्णुरुद्रात्मरूपधक् ।
भक्षयित्वा च सकलं जगत्येकार्णवीकृते ।।३५

उस समय में भगवान विष्णु का रूप यह जानकर अपने तेज से पृथ्वी को वहन करने के लिए, मत्स्य, कूर्म आदि तथा अन्य बाराह के शरीर में प्रवेश कर गया था ।।२९।। सबके आत्मा, स्थिर आत्मा वाले परमात्मा प्रजापति इस जगत की स्थिति में वेद यज्ञमय रूप का समाश्रय ग्रहण करके स्थित हुए थे।।३०।।उस समय में धरा को धारण करने वाले तोयाधार जल में प्रविष्ट हो गये थे ।।३१।। उस क्षण में वसुन्धरा देवी ने पाताल के तल में आये हुए उनका दर्शन करके भक्तिभाव से अतिशय विनम्र और प्रणत होकर उनकी स्तुति की थी । पृथ्वी ने कहा—समस्त भूत स्वरूप परमश्रेष्ठ आत्मा वाले आपके लिए बारम्बार नमस्कार है।३२। हे प्रभो ! आप अब मेरा इससे उद्धार कीजिए । आपके द्वारा मैं पहले भी उठाई गई हूँ । हे परमात्मन् ! आपके लिए मेरा नमस्कार है,हे पुरुषात्मन् । आपको मेरा प्रणाम है ।।३३।। प्रधान व्यक्त रूप वाले कालभूत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् काल स्वरूप आपके लिए नमस्कार है। हे भगवन्! समस्त भूतों के आप ही बनाने अर्थात् सृजन करने वाले हैं तथा आप ही इन सम्पूर्ण भूतों के पालन कर्त्ता हैं और इनका विनाश भी आप ही किया करते हैं ॥३४॥ सर्ग के आदि काल में सृजन कार्य करने के लिये आप ही ब्रह्म होते है, जगत् के पालन करने के लिये आप विष्णु स्वरूप हैं और विनाश करने के वास्ते आप ही की आत्मा रुद्रदेव का स्वरूप धारण किया करते हैं जो एक केवल जलमय इस इस जगत् में सबका भक्षण करके स्थित रहा करता हैं ॥३५॥

शेषे त्वमेव गोविन्द चिन्त्यमानो मनीषिभिः।
भवतो यत्परं रूपं तन्नजानाति कश्चन ॥३६
अवतारेषु यद्रूपं तदर्चन्ति दिवौकसः।
त्वामाराध्य पर ब्रह्म यातामुक्ति मुमुक्षवः ॥३७
वासुदेवमनाराध्य को हि मोक्षमवाप्स्यति।
यद्रूपं मनसा ग्राह्यं यद्ग्राह्यं चक्षुरादिभिः ॥३८
बुद्धया च यत्परिच्छेद्यं तद्रूपमखिलं तव।
त्वन्मय्यहंत्वदाधात्वत्सृष्टा त्वामुपाश्रिता ॥३९
माधवीमिति लोकोऽयमभिधत्ते ततोहिमाम्।
एवं संस्तूयमानस्तु पृणिव्या पृथिवी धरा।
सामस्वरध्यनिः श्रीमान् जगर्जं परिघरम् ॥४०

ततः समुत्क्षिप्य धरां स्वदंष्ट्रया महावराहः स्फुटपद्मलोचनः।
रसातलादुत्पलपत्रसन्निभिः समुत्थितो नील इवाचलो महान् ॥४१
उत्तिष्ठता तेन मुखानिलाहत तदाप्लवाम्भो जनलोकसश्रयान्।
सनन्दनादीनपकल्मषान्मुनीश्चकार भुयोऽपिपवित्रतास्यदम् ॥४२
प्रयान्ति तोयानि खुराग्रवीक्षते रसातलेऽधः कृतशब्दसन्ततिः।
वलाहकानाञ्च ततिस्तुतस्य श्वासानिलास्तेपरितः प्रयान्ति ॥४३
उत्तिष्ठतस्तस्य जलार्द्रकुक्षेर्महावराहस्य महीं विदार्य।
विधुन्वतो वेदमयं शरीर रोमान्तरस्था मुनयवो जुषन्ति ॥४४

हे गोविन्द! बड़े-बड़े मनीषियों के द्वारा चिन्तन किये जाने वाले आप ही शेष की शय्या पर शयन किया करते हैं। आपका जो पर स्वरूप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उसे कोई भी नहीं जानता है ॥२६॥ जब आप कोई अवतार धारण किया करते हैं और उस रूप को ग्रहण करके प्रकट होते हैं तो उसी आपके स्वरूप की देवगण अर्चना किया करते हैं। परब्रह्म आपकी आराधना करके मुक्ति की इच्छा रखने वाले लोग मोक्ष की प्राप्ति किया करते हैं ॥२७॥ भगवान् वासुदेव की आराधना न करके ऐसा कौन है जो मोक्ष की प्राप्ति करेगा ? जो आपका रूप मन से ग्रहण करने के योग्य है और जिस स्वरूप को चक्षु आदि इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण किया जाता है तथा जो बुद्धि से परिच्छेद्य रूप है वह सम्पूर्ण आपका ही स्वरूप है। आप मुझ में अर्थात् मेरे स्वरूप में हैं और मैं आपके ही समाश्रय वाली हूँ, आपके द्वारा मेरा सृजन हुआ और आपके ही उपाश्रित भी हूँ, समस्त लोक इसी कारण से मेरा नाम माधवी कहा करता है। इस प्रकारसे पृथ्वी के धारण करने वाले पृथ्वी के द्वारा स्तुत हुए थे।फिर श्रीमान् प्रभु साम स्वर ध्वनि वालेहोकर परिवर्धर रूप में गर्जना करने वाले हो गये थे। इस तरह घरघराहट पूर्वक गर्जना करके उसके पश्चात् विकसित कमकके समान नेत्रों वाले महान् वराह रूपधारी भगवान् ने अपनी एक दाढ़ से भूमि को ऊपर उठालिया था और रसातल से महान् नील पर्वत के तुल्य कमल दलकी भांति समुत्थित होगये थे।३८-४१-।ऊपर की ओर उठते हुए वराह भगवान् के मुखसे वायु निकला था उससे उस समय में जल ने ऊपर को एकदम ऊँची उछाल मारी थी और उसने जनलोक में निवास करने वाले कल्मष से रहित सनकनादि मुनिगणको विशेष रूप से पवित्रता का स्थान बना दिया था अर्थात् जो पहले ही परम पवित्र थे उनको भी फिर विशेष उस जल के स्पर्श से पुनीत कर दिया था।४२।खुरों के अग्रभाग से आहतजल लगातार ध्वनि करता हुआ नीचे रसातला मे जा रहा था और बलाहकों की पंक्ति के द्वारा स्तुति कियेगये वराह भगवान् के श्वास वायु चारों ओर फैलकर जारही थी।४३।मही का विदारण कर ऊपर को उटते हुए तथा जल से आर्द्र कुक्षि वाले एवं वेदमय शरीर को कम्पायमान करने वाले महा वराह भगवान् के शरीर की रोमान्तरों में स्थित मुनिगण सेवा करते हैं ॥४४॥

अर्वाक्स्रोतास्तुकथितो भवतायस्तु मानुषः।
ब्रह्मन्विस्तरतोब्र हि ब्रह्मातमसृजद्यथा ॥४५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा सवर्णानसृजद् गुणांश्च स महामुने ।
यच्चतेतांस्मृतंकर्म विप्रादीनां तदुच्यताम् ।।४६
सत्वाभिव्यायिनः पूर्वं सिसृक्षोर्ब्रह्मणः प्रजाः ।
अजायन्तकुरुश्रेष्ठसत्वोद्रिक्तामुखात्प्रजा ।।४७
वक्षसो रजसौद्रिक्तास्तथान्याब्रह्मणोऽभवन् ।
रजसस्तमसश्चैव समुद्रिक्तास्तथोरुतः ।।४८
पद्भ्यामन्याः प्रजा ब्रह्मा संसर्ज कुरुसत्तम ।
तमःप्रधानास्ताः जर्वाश्चातुर्वण्यमिदं ततः ।।४९

भीष्म ने कहा—आपने प्रथम स्रोत जोकि मानुष है उसका वर्णन तो कर दिया है ।अब हे ब्रह्मन् ! ब्रह्माजी ने जिस प्रकार से उसका सृजन किया था उसका विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।४५।हेमहामुने ! जिस रीति से वर्णों सहित उनकी रचना कीथी और उनके गुणों का सृजन किया था तथा विप्र आदि चारों वर्णों के जो कर्म बतलाये थे वह सब बतलाने की कृपा करिये।४६।पुलस्त्य महर्षि ने कहा-सर्व प्रथम सत्व गुण के अभिध्यान करने वाले सृजन करने के इच्छुक ब्रह्माजी की जो प्रजा उत्पन्न हुई थी हे कुरु श्रेष्ठ ! वह समस्त प्रजा सत्वोद्रिक्त मुख से ही समुत्पन्न हुई थी।४७। इसके अनन्तर रजोगुण की प्रधानता रखने वाले वक्षःस्थल से ब्रह्माजी की अन्य प्रजा की समुत्पत्ति हुई थी । इसके पश्चात् रजोगुण और तमोगुण दोनों से उद्रिक्त कुरु प्रदेश से प्रजा उत्पन्न की थी ।।४८।। हे कुरुओं में परम श्रेष्ठ ! अन्त में ब्रह्माजी ने अपने पैरों से प्रजा कासृजन किया था । यह प्रजा तमोगुण की प्रधानता वाली हुई थी । इस प्रकार से ये चारों वर्णों का सृजन हुआ था ।।४९।।

ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च नृपसत्तमः ।
पादोरुवक्षस्थलतो मुखतश्च समुद्गताः ।।५०
यज्ञनिष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकारह ।
चातुर्वर्ण्यं महाराज यज्ञसाधनमुत्तमम् ।।५१
यज्ञनाप्यायिता देवा वृष्ट्युत्सर्गेण मानसा ।
आप्यायन्ते धर्मयज्ञा यतः कल्याणहेतवः ।।५२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्पद्यन्ते नरस्ते तु सुकर्मनिग्तैः सदा ।
विरुद्धाचरणापेत सद्भिः सन्मार्गगामिभिः ।।५३
स्वर्गापवर्गमानुष्यात् प्राप्नुबन्ति नरा नृप ।
यच्चाभिरुचितस्थानंतद्यान्ति मनुजाविभो ।।५४
प्रजास्ता ब्रह्मणासृष्टाश्चातुर्वंण्यव्यवस्थितौ ।
सम्यक् शुद्धाः समाचाराचरणा नृपसत्तम् ।।५५
यथेच्जावासनिरताः सर्वंवाधात्रिवर्जिताः ।
शुद्धान्तकरणाः शुद्धाधर्मानुष्ठाननिर्मलाः ।।५६

हे नृप श्रेष्ठ ! ब्रह्माजी के मुख-वक्षःस्थल ऊरुप्रदेश और पदों से ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य एवं शूद्र ये चार वर्ण उत्पन्न हुए हैं।२०।हे महाराज ब्रह्मा जी ने यज्ञ की निष्पत्ति करने के लिये ही इन चारों वर्णों की सृष्टि कीथा क्योंकि ये चारों ही वर्ण यज्ञात्रि की सिद्धि के परम श्रेष्ठ साधन होते हैं ।।५१।। देवगण यज्ञ के परम तृप्त होते हैं, मानव मृष्टि के उत्सर्ग होने से आप्यायित हुआ करते हैं क्योंकि जो धर्म यज्ञ होते हैं वे पूर्णतया कल्याण करने के हेतु भूत हुआ करते हैं ।।५२।। सदा अच्छे कर्मों के करने में संलग्न रहने वाचे विरुद्ध आचरणों से रहित, सन्मार्ग के गमन करने वाले सत्पुरुषों के द्वारा वे यज्ञादि निष्पन्न किये जाते है।।५२।।हे नृप ! मनुष्य इस अपने मानव-जीवन से ही स्वर्ग तथा अपवर्ग की प्राप्ति किया करते हैं । मनुष्यों को जो भी स्थान रुचिकर प्रतीत होता है उसी पद को वे प्राप्त किया करते हैं।५४।इन चारों वर्णों की व्यवस्था का पालने करने वाली वह प्रजा ब्रह्माजी ने ऐसे उत्तम विधान से मृजित की थी सभी लोग पूर्णतया शुद्ध और अच्छे आचरण करने वाले थे।५५।जो भी अपनी इच्छा से जहाँ निवास करना चाहते थे उसी में निरत रहते थे और सब तरह की विघ्न-बाधाओं से रहित होते थे । सभी परम शुद्ध अन्तःकरण वाले एवं अपने विशुद्ध धर्म के अनुष्ठान करने के कारण निर्मल होते थे ।।५५।।

ततः कालात्मकोयीऽसौ विरिचावास उच्यते ;
ससारपातमत्यर्थं घोरमल्पाल्पसारवत् ।।५८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्धे च तासां मनसि शुद्धान्तः संस्थिते हरौ।
शुद्धज्ञानं पयश्यन्ति ब्रह्माख्यंयेनतन्पतम् ।।५७
अधमवीजभूतं तत्तमोलोभसमुद्गतम् ।
प्रजासु तासु राजेन्द्र रागादिक्रमसाधनम् ।।५९
ततः सा सहजा सिद्धिस्तेषां नातीव जायते ।
राजन् वश्यादयश्चान्या सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति याः ।।६०
तासु क्षीणाश्वशेषासु वर्द्धमाने च पातके ।
द्वन्द्वाभिभवदुःभार्त्तास्ता भवन्ति ततः प्रजा ।।६१
ततोदुर्गाणि ताश्चक्रुर्वार्क्षं पार्वतमौदकम् ।
धान्वनच तथा दुर्गं पुरखार्बटकादियत् ।।६२
गुहाणि च यथान्यायं तेषुचक्रुः पुरानिषु ।
शीततापादिबाधाप्तां प्रशमाय महामते ।६३

उन समस्त रचित प्रजा के जनों का जब मन विशुद्ध होता था तो भगवान् हरि उस शुद्धान्त-करण में स्वयं आकर निवास किया करते थे क्योंकि प्रभु तो सर्वदा पद्म निर्मल अन्तःकरण में ही रहा करते हैं। जब उनके विशुद्ध मन में हरि का निवास होता है तो उस मन में शुद्ध ज्ञान उत्पन्न होता है जिसके होने से ब्रह्माख्य पद को देख लेते हैं अर्थात् ब्रह्म पद की प्राप्ति कर लिया करते हैं ।।५७।। यह विरञ्चि लोक का आवास कुछ सीमित समय वाला ही कहा जाता है और अति स्वल्प सा[illegible] वाले परम घोर संसार में पुनः पतन होता है ।।५८।। अधर्म बीजभूत लोभ से समुत्पन्न वह तमोगुण उन प्रजाओं में क्रम से राग आदि का साधन हो जाया करता है ।५९। इसी कारण से इन मनुष्यों को अतीव सहज सिद्धि नहीं हुआ करती हैं। हे राजन् ! अन्य वशित्व आदि जो सिद्धियाँ हैं वे कुल आठ होती हैं।६०। इन आठों (अणिमा-महिमा-लघिमा-लघिमा-प्राप्ति-प्राकाम्य-ईशत्व-वशित्व) सिद्धियों की प्राप्ति करने पर भी ऐसा समय आता है कि वे सब क्षीण हो जाती हैं क्योंकि सर्वदा ये सिद्धि नहीं रहा करता हैं। फिर पातकों की वृद्धि होने पर यह प्रजा सुख-दुःखादि द्वन्द्वो से अभिभूत होकर अत्यंन्त आर्त होजाती है।६१।फिर प्रजा के दुःखादि के द्वन्द्वों से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचने के लिये उन्होंने बड़े २ विशाल एवं सुदृढ़ वार्क्ष, पार्वत, धान्वन एवं औदक दुर्गों की रचना कीं थी तथा पुर खार्वट आदि का भी निर्माण किया था। उन नगर–पुर और दुर्गों में यथारीति गृहों की रचना की थी कि जिनमें निवास करने से शीत एवं ताप आदि की बाधाओं का शमन हो जावे ॥६२-६३

प्रतिहारमिमंकृत्वा शीतादेस्ताः प्रजाः पुनः ।
वार्त्तोपायंततःश्चक्रुर्हस्तासिद्धिचकर्मजाम् ॥६४
व्रीहयश्च यवाश्चैव गोधूमा अणवस्तिलाः ।
प्रिथंगूकोविदाराश्च कोरदूषाः सचीनकाः ॥६५
माषा मुद्गा मसूराश्च निष्पावाः सकुलुत्थकाः ।
अढकाश्चैव शणाः सप्तदश स्मृताः ॥६६
इत्येता ओषधीनान्तु ग्राम्याणां जातयो नृप ।
ओषध्यो यज्ञियाश्चैवग्राम्यावन्याश्चतुर्दश ॥६७
व्रीहयः सयवा माषा गोधूमा अणवस्तिलाः ।
प्रियंगू सप्तमाह्येता अष्टमास्तुकुलुत्थकाः ॥६८
श्यामाकस्त्वथ नीवारो वर्तुलः सगवेधुकः ।
अथ वेणुयवा प्रोक्ता स्तद्वन्मर्कटकानृप ॥६९
ग्राम्या वन्या स्मृताः ह्येता औषध्यश्च चतुर्दशः ।
यज्ञनिष्पत्तये तद्वत्तथासां हेतुरुत्तमः ॥७०

प्रजानन के द्वारा इस प्रकार से इन नगरों एवं दुर्गों की रचना हुईथी जिनसे शीतादि के दुःखों का प्रतिकार होजावे । आसनों की रचना करने के पश्चात् प्रजानन ने अपने जीवनके निर्वाह के लिए कर्म से उत्पन्न हाथों की सिद्धि के उपाय किये थे ॥६४॥ व्रीहि, यव, गोधूम, अणु तिल, प्रियंगु, कोविदाह, कोरदूष, चीनक, माष, मुद्ग, मसूर, निष्पाव, कुलुत्थ, अढ़क, चणक और शण इन सत्रह धांयादिक की उत्पत्ति की थी।५५-६६। हे नृप ! ये सब जो ऊपर में बताये गये हैं वे ग्राम्य औषधियों की जातियाँ हैं । जो यज्ञीय और ग्राम्य औषधियाँ हैं वे अन्य और चौदह होती है।६७। व्रीहि, यव, माष, गोधूम, अणु, तिल, सातवाँ प्रियंगु और आठवां कुलुत्थ,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्यामाक, नीवार, वर्त्तुल, गवेधुक,वेणुयव,मर्कटक हे नृप! ये चौदह औषधियाँ ग्राम्य अर्थात् गाँवों में पैदा होने वाली और वन्य अर्थात् जगलों में उत्पन्न होने वाली कुछ चौदह हैं। यज्ञों की सिद्धि के लिए इनकी समुत्पत्ति हुई थी और इन सबके उत्पन्न होने का उत्तम हेतु है ॥६८-७०॥

एताश्च सहयज्ञेन प्रजानां कारण परम् ।
परापरविद प्राज्ञास्ततो यज्ञान् वितन्वरे ॥७१
अहन्यहन्यनुष्ठान यज्ञानां पार्थिवोत्तम ।
उपकारकरं पुंसां क्रियमाणं फलर्थिनाम् ॥७२
येषाञ्च कालसृष्टौऽसौपपाविन्दुर्महामते ।
मर्यादां स्थापयामास यथास्थानं यथागुणम् ॥७३
वर्णानामाश्रमानाञ्च धर्मान् धर्मभृतांवर ।
लोकांश्चसर्ववर्णानां सम्यग्धर्मानुपालिनाम् ।७४
प्राजापत्यं बाह्मणानां स्मृतस्थानन्तु पार्थिव ।
स्थानमंन्द्रं क्षत्रियाणांसंग्रामेष्वनिवर्त्तिनाम् ॥७५
वैश्यानां मारुतस्थान स्वर्ममनुदत्तिनाम् ।
गान्धर्वं शूद्रजातीनां परिचर्यासु वर्त्ति नाम् ॥७६

ये औषधियाँ यज्ञ के साथ प्रजाओं का परम कारण हैं। इसके अनन्तर परापर के वेत्ता प्राज्ञ पुरुष यज्ञों का विस्तार करते हैं ॥७१॥ हे पार्थिवोत्तम। दिन प्रतिदिन यज्ञों का अनुष्ठान फलों के चाहने वाले पुरुषों को किया हुना अत्यन्त उपकार करने वाला होता है ॥७ ॥ हे महामति वाले ! जिन यज्ञों के फल को काल की सृष्टि में पूरा चन्द्रमा ने पान कर लिया था। यथा स्थान और गुणों के अनुसार मर्यादा की स्थापना की थी ॥७३।- हे धर्म के धारण करने वालों में परम श्रेष्ठ ! सब वर्णों और आश्रमों के धर्मों का और भली-भांति धर्म के अनुपालन करने व ले समस्त वर्णों के लोकों का तथा ब्राह्मणों का प्राजापत्य का स्थान बताया गया है संग्रामोंमें निर्वतित न होने वाले क्षत्रियों का ऐन्द्र स्थान कहा गया है।७३-४। अपने उचित धर्म के पालन करने वाले वैश्यों का मारुत स्थान है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो शूद्र वर्ण वाले पुरुष हैं और परिचर्या करने के अपने समुचित धर्म में वर्तमान रहते हैं उनका गान्धर्व स्थान बताया गया है।।७४-७६।।

अथान्यान्मानसान् पुत्रान् सदृशानात्यनोऽसृजत् ।
भृगुं मांपुलहञ्चैवक्रतुमङ्गिरसं तथा ।।७७
मरीचिं दक्षमत्रिञ्च वसिष्ठञ्चैव मानसान् ।
नव ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः ।।७८
मनन्दनादयो ये च पूर्वं सृष्टास्तु वेधसा ।
न ते लोकेष्वसज्जन्त निरपेक्षाः प्रजासु ते ।।७९
सर्वे ह्यागतविज्ञाना वीतरागा विमत्सराः ।
तेष्वेव निरपेक्षेषु लोकसृष्टौ महात्मनः ।।८०
ब्रह्मणोऽभून्महान् क्रोधस्त्रैलोक्यदहनक्षमः ।
तस्य क्रोधात् समुद्भूतजालामालावदीपितं ।।८१
ब्रह्मणस्तु तदा ज्योति त्रैलोक्यमखिलंदहत् ।
भ्रकुटीकुटिलातस्यललाटात्क्रोधदीपितात् ।।८२
समुत्पन्नस्तदा रुद्रो मध्याह्नर्कसमप्रभः ।
अर्द्धनारींनरवपु प्रचण्डोऽति शरीरवान् ।।८३
विभजात्मानमित्युक्त्वातंब्रह्मान्तद्दधेततः ।
तथोक्तोऽसौद्विधास्त्रीत्वंपुरुषत्वं तथाकरोत् ।।८४

इसके अनन्तर ब्रह्माजी ने अपने ही सदृश मानस पुत्रों का सृजन किया था। वे मानस पुत्र जो कि मन से ही समुत्पन्न हुए थे भृगु-पुलह-क्रतु-अङ्गिरा-मरीचि-दक्ष-अत्रि और वसिष्ठ नाम वाले थे। पुराण में निश्चय को प्राप्त हुए येनौ ब्रह्मा ही थे।७७-७८।ब्रह्मा ने जो इनसे पहिले सनक-सनन्दन आदि का सृजन किया था उन्होने लोकों के सृजन करने का कार्य नहीं किया था क्योंकि वे सब प्रजा की वृद्धि करने के कार्य की अपेक्षा ही नहीं रखते थे।७९।ये सभी विज्ञान को प्राप्त करने वाले, वीतराग और मात्सर्य से रहित थे। इस प्रकार से महात्मा ब्रह्मा के द्वारा लोकों की सृष्टि के कार्य में इन सबके निरपेक्ष हो जाने पर ब्रह्मा जी को इस त्रिलोकी को दग्ध कर देने में समर्थ महान् क्रोध उत्पन्न हुआ था और उनके क्रोध से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाल-माला को अवदीपित करने वाली ज्योति समुत्पन्न हुई थी।८०-८१। उस समय में समस्त त्रैलोक्ल को दग्ध करने वाली ज्योति ब्रह्मा के क्रोध से अविभूंत हुई थी और क्रोध से दीपित उनके ललाट से भृकुटी टेढ़ी हो गई।८०।उसी अवसर में मध्याह्न के सूर्य के समान प्रभा वाले रुद्र समुत्पन्न हुए थे। जिनका वपु अर्धनारी और नर के स्वरूप वाला था वह परम प्रचण्ड शरीर धारी थे।८३। उनसे शरीर का विभाजन करो—ऐसा कह करके फिर ब्रह्मा उसी में अन्तर्हित हो गये थे। ऐसा कहे जाने पर इतने स्त्रीत्व और पुरुषत्व ये दो भाग कर दिये थे ॥८४॥

विभेद पुरुषत्वञ्च दशधा चैकधा च सा ।
सौभ्यासौम्यंस्तथारूपे शान्तैः स्त्रींत्वंचसप्रभुः ॥८५
विभेद बहुधा चैव स्वरूपैरसितैः सितैः ।
ततो ब्रह्मा स्वयम्भूतं पूर्वं स्वायम्भुवंप्रभुम् ॥८६
आत्मानमेव कृतवान् प्राजापत्येमनुं नृप ।
शतरूपाञ्च तां नारींतपीनिधूंतकलमषाम् ॥८७
स्वायम्भुवो मनुर्नाम पत्नीवे जगृहे प्रभुः ।
तस्माच्च पुरुषाद्देवी शतरूपा व्यजातय ॥८८
प्रियव्रतोत्तानपादप्रसूत्याकूतिसंज्ञितम् ।
ददौ प्रसूर्ति दक्षाय आकृति रुचयेपुरा ॥८९
प्रजापतिः स जग्राह तयोर्जज्ञे स दक्षिणः ।
पुत्रो यज्ञो महाभाग दम्पत्योर्मिथुन ततः ॥९०
यज्ञस्य दक्षिणायान्तु पुत्रा द्वाद्वश जज्ञिरे ।
यामाइतिसमाख्यातादेवाः स्वायम्भुवेमनौ ॥९१

वह पुरुषत्व का जो स्वरूप था उसको दक्ष भागों में विभक्त करा दिया था तथा स्त्रीत्व के स्वरूप का एक ही भाग रहा था किन्तु उप प्रभु ने स्त्रीत्व का बहुत से रूपों में विभेद बाला किया था। सौम्यों के साथ परम सौम्य, शांत रूप वालों के साथ अति शान्त,इस तरह से असित और स्वरूपों में भेद किया गया था। इसके अनन्तर ब्रह्मा स्वयं स्वायम्भुव मनु प्रभु के स्वरूप में हुए।८५-८६।हे नृप ! ब्रह्मा ने प्राजापत्य में अपने आपको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही मनु किया था और तपश्चर्या से निर्धूत कल्मषों वाली उस नारी को शतरूपा बनाया था ।।८७।।प्रभु स्वायम्भुव मनु ने उस शतरूपा को पत्नी के रूप से ग्रहण किया । देवी शतरूपा ने उस स्वायम्भुव नामक पुरुष से प्रियव्रत, उत्तानपाद, प्रसूति और आकूति नामों वाली सन्तति को जन्म ग्रहण कराया था । दक्ष प्रजापति के लिए प्रसूति को दिया था और रुचि को आकूति देदी ।८८-८९। प्रजापति उसने उन दोनों में दक्षिण को जन्म दिया था । हे महाभाग ! दोनों दम्पत्ति से यज्ञ पुत्र और फिर एक मिथुन हुआ था ।९०। यज्ञ के दक्षिणा में बारह पुत्र समुत्पन्न हुए थे । स्वायम्भुव मनु के समय में देवगण 'यामा'—इस नाम से हुए थे ।।९१।।

समुद्र मन्थन प्रस्ताव तथा दुर्वासा का इन्द्र को शाप

क्षीराब्धौ तु तथा लक्ष्मीः किलोत्पन्ना मया श्रुता ।
ख्यात्यां भृगोः समुत्पन्ना एतदाह कथं भवान् ।।१
कथचदक्षदुहितादेहत्यक्तवतोशुभा ।
मेनायांगभसंभूतिमुमायाजन्मएवच ।।२
किमर्थंदेवदेवेनपत्नीहेमवतीकृता ।
विरोधचाथदक्षेणभर्गवांस्तुब्रवीतुमे ।।३
इदं च श्रृणुभूपालयत्पृष्टोऽहमिहत्वया ।
श्रीसंबंधोमयाप्येषश्रुतआसीत्पितामहात् ।।४
अत्रिपुत्रस्तु दुर्वासाः परिभ्राम्यन्महीमिमाम् ।
विद्याधरीकरेमालांदृष्ट्वासागंन्धकींशुभाम् ।।५
याचयामासमेदेहिजटाजूटेकरोम्यहम् ।
इतिविद्याधरीतेनपृष्टासाऋविणातथा ।।६
वदौतस्ममुदायुक्ता तां मालांसतदानृप ।
गृहीत्वासुचिरंकालं शिरोमालांबबधह ।।७

भीष्म पितामह ने कहा—मैंने ऐसा श्रवण किया है कि लक्ष्मी क्षीर सागर में समुत्पन्न हुई थीं । हे भगवन्!आपने यह कैसे कहा था कि लक्ष्मी भृगु से ख्याति में उत्पन्न हुई थीं ।।१।। परम शुभ स्वरूप वाली प्रजापति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्ष की पुत्री गौरी ने अपने देह का त्याग क्यों किया था और फिर उसी ने मेनार के उदर में गर्भ स्थित होकर उमा के स्वरूप में जन्म ग्रहण क्यों किया था ? ।२। देवों के भी देव शिव ने हेमवती को पुनः किसलिये पत्नी के स्वरूप में स्वीकार किया था। प्रजापति दक्ष के साथ शिव का वरोध किस कारण से हुआ था ? आप कृपाकर यह सब मुझे वतलाइये ।।३।। पुलस्त्य मुनि ने कहा—हे भूपाल ! आपने जो कुछ इस समय मुझसे पूछा है उसका उत्तर अब आप श्रवण कीजिए। मैंने भी यह श्री का सम्बन्ध पितामह से सुना था ।।४।। महर्षि अत्रि के पुत्र दुर्वासा ऋषि इसी मही मण्डल में भ्रमण कर रहे थे उस समय में परम सुगन्धित और अत्यन्त सुन्दर माला को विद्याधरी के हाथ में देखकर उन्होंने विद्याधरी से याचना की थी कि इस माला को मुझको देदो,मैं इसको अपना जटाजूट में धारण करूँगा। इस प्रकार से उस ऋषि के द्वारा वह विद्याधरी पूछी गई थी ।।५।।६।। हे नृप ! उस विद्याधरी ने परम प्रसन्नता के साथ उस माला को ऋषि के लिये दे दिया था और उसे ग्रहण कर ऋषि ने बहुत समय तक अपने शिर में बाँध लिया था ।।७।।

उन्मत्तप्रेतवद्विप्रः शोभमानोऽब्रवीदिदम् ।
इय विद्याधरीकस्या पीनोन्नतपयोधरा ।८
शोभालंकार-सोभाग्यैर्युक्ताद्दृष्टाततोमनः ।
क्षोभमायातिमेचाद्यनाहंकामेविचक्षणः ।।९
व्रजामितावदन्यत्रसौभाग्यं स्वप्रदर्शयन् ।
एवमुक्त्वासराजेंद्रपरिबभ्राममेदिनीम् ।।१०
ऐरावतसमारूढराजानत्रिदिवोकसाम् ।
त्रैलोक्याधिपतिंशक्रंभ्राजमनंशचीपतिम् ।।११
तामात्मशिरसोमालांभ्रमदुन्मत्ताषट्पदाम् ।
आदायामरराजायचिक्षेपोन्मत्तवन्मुनिः ।।१२
गृहीत्वादेवराजेनमालासागजमूर्द्धनि ।
मुक्तारराजसामालाकैलासे गाह्नवीय था ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदांधकारितांक्षोऽक्षोगंधाघ्राणेनवारण: ।
करेणादायचिक्षेपतांमालांपृथिवीतले ।।१४

उस अत्यन्त सुगन्ध सम्पन्न माला को अपने शिर की जटाओं में बांधकर वह ब्राह्मण परम शोभित होता हुआ एक उन्मत्त प्रेत की भाँति यह बोला करता था कि यह विद्याधरी कन्या पीन (परिपुष्ट) और ऊँचे स्तनों वाली है। ८।। यह कति शोभा और सौभाग्य से संयुक्त है। मैंने इसको देखा है और तभी से मेरा मन मोक्ष को प्राप्त हो गया है तथा मैं काम कला में परम विचक्षण हूं ।।९।। मैं अब अपने सौभाग्य का स्वयं प्रदर्शन करता हुआ अन्य स्थान में जाता हूँ। हे राजेन्द्र! वह इस तरह से कहता हुआ इस मही मण्डल में भ्रमण किया करता था ।।१०।। एक बार देवों के राजा, त्रिलोकी के अधिपात, शची के पति भ्राजमान इन्द्र को ऐरावत नामक हाथी पर संस्थित उस ऋषि ने देखा था ।।११।। उस समय एक उन्मत्त की भाँति उस मुनि ने उस अपन शिर की जटाओं में धारण की हुई माला को, जिसमें गन्ध—प्रमत्त भौरे लिपटे हुए थे, अपने शिर से उतार कर देवराज इन्द्र के पर फेंक दिया था ।।१२।। देवराज इन्द्र ने उस ताला को लेकर हाथी के मस्तक पर डाल दी थी और ऐरावत हाथी के मस्तक पर रहने वाली मुक्ता पर पड़ी हुई उस माला की ऐसी शोभा दिखाई दे रही थी जैसी कैलाश पवत पर गङ्गा की सुषमा होती है ।।१३।। मद से अन्धकार युक्त नेत्रों वाले तथा उस माला की परम सुन्दर सुगन्ध का घ्राण करते हुए उस हाथी ने अपनी सूँड़ से उसे उतार कर पृथ्वी-तल में फेंक दिया था ।।१४।।

ततस्तुक्रोधभगवान् दुर्वासामुनिपुङ्गव: ।
राजेन्द्र देवराजानं क्रुद्धश्चेदमुवाचह ।।१५
ऐश्दर्यमेवदुष्टात्मन्नतिस्तब्धोऽसिवासव ।
श्रियोधामस्रजंयस्मान्मद्दत्तान्नाभिनंदसि ।।१६
त्रैलोक्य श्रीरतोमूढविनाशमुपयास्यति ।
मद्दत्ताभवतामालाक्षिप्तायस्मन्महीतले ।।१७
तस्मात्प्रणष्टलक्ष्मीकं त्रैलोक्यतेभविष्यति ।
यस्यसंजातकोपस्यभयमेति चराचरम् ।।१८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमांत्वमभिगर्वेणदेवराजायमन्यसे ।
महेंद्रोवार .स्कंधादवतीर्यत्वरान्वितः ॥१९
प्रसादय मासमुनिदुर्वाससमकल्मषम् ।
प्रसाद्यमांनः सतदाप्रणिपातपुरःसरम् ।।२०
नाहक्षमिष्येबहुनाकिमुक्तेनशतक्रतो ।
इत्युक्त्वाप्रययौविप्रोदेवराजोऽपितंपुनः ।।२१

हे राजेन्द्र ! उस समय में साक्षात् क्रोध के स्वरूप वाले, मुनि मण्डल में परम श्रेष्ठ भगवान् दुर्वासा ऋषि ने देवराज इन्द्र से अत्यन्त क्रुद्ध होकर यह कहा था ॥१५॥ हे इन्द्र ! तुम अपने ऐश्वर्य चे मद से उन्मद्य हो रहे हो और अत्यन्त दुष्ट आत्मा वाले तुमको अपने इस विशाल वैभव से बहुत अधिक घमण्ड हो रहा है जिसके कारण से परम शोभा श्री से सम्पन्न मेरे द्वारा प्रदान की हुई इस माला का तुभ अभिनन्दन नहीं कर रहे हो ।१६। मेरे द्वारा दी हुई इस माला को आपने तिरस्कार पूर्वक भूमि पर डाल दिया है इसी कारण से प्रतीत होता है कि इस त्रैलोक्य की श्री में तुम इतने निरत हो गये हो कि तुमको कुछ भी सूझ नहीं रहा है। हे महामूढ़ ! मेरा शाप है कि तुम शीघ्र ही विनाश को प्राप्त हो जाओगे ।।१७।। अब तेरी यह त्रैलोक्य की लक्ष्मी का सम्पूर्ण ऐश्वर्य नष्ट हो जायगा । जिसके हृदय में उत्पन्न क्रोध से समस्त चराचर भयभीत हो जाया करता है उसी मुझ दुर्वासा ऋषि को, हे देवों के राजन् ! अत्यन्त तढ़े हुए गर्व के कारण अपमानित करते हो। इस प्रकार के दुर्वासा ऋषि के क्रोध युक्त वचनों को सुनते हो देवराज इन्द्र बड़ी ही शीघ्रता से हाथी से नीचे उतर आये थे ।।१८।१९।। उस समय में कल्मष रहित मुनि को इन्द्र ने बहुत कुछ संस्तुतिकर प्रसन्न किया था । प्रणिपात पूर्वक संस्तवन करने से दुर्वासा प्रसन्न यो हो गये थे ।।२०।। किन्तु वे कहने लगे हे शतक्रतो ! तुम चाहे जितना कहो और मुझसे अब अधिक प्रार्थना करने से कुछ भी लाभ नहीं है क्योंकि मैं तुमको क्षमा नहीं करूँगा। । इतना कहकप विप्र दुर्वासा चले गये और फिर उनके पश्चात् इन्द्र भी चला गया था ।।२१।।

आरुह्य रावतनागंप्रययावमरावतीम् ।
ततः प्रभृतिनिश्रीकंसशक्रंभुवनत्रयम् ।।२२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयज्ञाः संप्रवर्त्तंतेनतपस्यंतितापसाः ।
नचदादानिदीयते नष्ठप्रायमभूज्जगत् ।।२३
एवमत्पंतनिश्रीकेत्रै लोक्येसत्त्ववर्जिते ।
देवान्प्रतिबलोद्योगंचक्रुदतेयदानवाः ।।२४
विजितास्त्रिदशादैत्यैरिंद्राद्याः शरणंययु ।
पितामहंमहाभागंहुताशनपुरोगमाः ।।२५
यथावत्कथितेदेवैर्ब्रह्माप्राहतथासुरान् ।
क्षीरोदस्योत्तरकूलजगामसहितसुरैः ।।२६
गत्वाजगादभगवान्वासुदेवंपितामहः ।
उत्तिष्ठविणोशीघ्रंत्वदेवतानांहितकुरु ।।२७
त्वयाविनादावैस्तुजिताःसर्वेपुनः ।
इत्युक्तःपुंडरीकाक्षः पुरुषःपुरुषोत्तमः ।।२८

दवराज इन्द्रअपने ऐरावत हाथी पर सवार होकर अमरावती को चले गये थे । तभी से लेकर इन्द्रके सहित तीनों भुवन श्री हीन होगगे थे ।।२२।। तमी से ऐसा होगया कि न तो कहीं पर भी कोई यज्ञादि क्रिये जाते हैं और न तापस वर्ग किसी प्रकार की तपश्चर्या ही किया करते हैं न कोई दान दिये जाते हैं ।सम्पूर्ण जगत् नष्ट प्राय सा हो गया था।२३। जब इस रीति से यह त्रैलोक्य सत्व से रहित और अत्यन्त ही श्रीहीन हो गया तो तसमें उस समय दैत्य-दानवों ने अच्छा अवसर देखा और देवगण के प्रति अपने बल का प्रयोग करने लगे थे ।।२४।। दैत्यों ने इन्द्रादि समस्त देवगण को अपने बल-पराक्रम से जीत लिया था । उस समय में इन्द्रादि देवों ने अग्नि को आगे करके महान् भाग वाले पितामह की शरण को ग्रहण किया था ।। २५ ।। देवों ने अपनी सारी गाथा ठीक ठीक सुनादी तो उस समय में ब्रह्माजी ने देवों से कहा और सुरों के सहित स्वयं क्षीर सागर के उत्तर की ओर तट पर चले गये थे ।। २६ ।। वहां पहुंच कर भगवान् पिता मह ने वासुदेव से प्रार्थना की थी कि हे विष्णुदेव ! आप अत्र शीघ्र ही शेष शय्या से उठिये और देवगण का हित–सम्पादन करिये ।।२७।। हे भगवन् ! आपकी सहायता के विना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
य समस्त देवगण वार-बार दानवों के द्वारा पराजित कर दिये गये हैं। इस तरह से ब्रह्मादि के द्वारा प्रार्थना की गई तो परम पुरुष भगवान् पुण्डरीक के सदृश नेत्रों वाले पुरुषोत्तम प्रभु ने यह श्रवण किया ।।२८।।

अपूर्वरूप संस्थानान्दृष्ट्वादेवानुवानुवाचह ।
तेजसोभवतांदेवाः करिष्याम्युम्युपबृंहणम् ।।२६
वदाम्यहंयत्क्रियतांभवद्भिस्तदिदंसुराः ।
आनीयसहितादैत्यैः क्षीराब्धौसकलौषधीः ।।३०
मंथानंमंदरंकृत्वानेत्रंकृत्वाचवासुकिम् ।
मथ्यतामम्रृतंदेवाः सहाये मय्यवस्थिते ।।३१
सामपूर्वंचदैतेयांस्तत्रसम्भाष्यकर्मणि ।
समानफलभोक्तारोयूयंचात्रभविष्यथ ।।३२
मथ्यमानेचतत्राब्धौयत्समुत्पद्यतेऽमृतम् ।
तत्पानाद्बलिनोयूयममराः संभविष्यथ ।।३३
तथैवाहंकरिष्यामियथात्रिदशविद्विषः ।
नप्राप्स्यंत्यमृतदेवाः केवलक्लेशभागिनः ।। ४
इत्युक्तादेवदेवेनसर्वंएवदतःसुराः ।
संधानमसुरैः कृत्वायत्नवन्तोऽमृतेभवन् ।।३५

उस समय में एक अपूर्व रूप और संस्थान वाले देवताओं को देख कर भगवान् विष्णु ने उन देवों से कहा—हे देवगण ! मैं आप सबको अपने तेज से उपवृंहित कर दूँगा ।।२६।। मैं इस समय जो आपको वतलाता हूँ वह आप लोग करें। आप समस्त देवगण दैत्यों को भी साथ में लेकर इस क्षीर समुद्र में सकलोसधियाँ लाओ और मन्दर पर्वत को मन्थान बनाकर तथा वासुकि सर्पराज को उसकी नेवी(मंथन करने वाली डोर) बनाकर इस सागर से मन्थन कर अमृत को प्राप्त करो। इस महान् कार्य की सफलता प्राप्त करने में मैं आपकी पूर्णतया करने वाला रहूँगा ।। ३० ।। ३१ ।। उन दैत्यों को शान्तिपूर्वक समझा दो कि इस महान् उद्योग के करने पर जो भी इसका सुफल सम्प्राप्त होगा उसको हम और आप सब समान रूप से भोगेंगे ।। ३२ ।। इस समुद्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्थन करने के कर्म के मध्य में इससे जो अमृत की उत्पत्ति होगी उसके पान करने से आप समस्त देवगण महान् बल सम्पन्न हो जाओगे ।।३३।। मैं उस अमृत-पान के अवसर पर कुछ ऐसी क्रिया कर दूंगा कि आप लोगों के विद्वेषी दैत्य उस अमृत को प्राप्त नहीं कर सकेंगे और हे देवगण ! वे समस्त दैत्य लोग सागर-मन्थन में किये जाने वाले क्लेश एवं परिश्रम के ही भागीदार रह जायेंगे ।।३४।। इस प्रकार से देवों के भी देव विष्णु भगवान् के द्वारा कहे जाने पर तभी से सब देवताओं ने आकर असुरो के साथ सलाह एवं मेल-जोल की बात-चीत करके अमृत के निकालने के प्रयत्न में सब संलग्न हो गये थे ।।३५।।

सर्वौषधीः समानीयदेवदैतेयदानवाः ।
क्षिप्त्वाक्षीराब्धिपयसिशरदभ्रामलत्विषि ।।३६
मंथानमंदरंकृत्वानेत्रं कृत्वानवासुकिम् ।
ततो तथितुमारब्धाराजेंद्रतरसाभृतम् ।।३७
विबुधाःसहिताः सर्वेयतःपुच्छततः स्थिताः ।
विष्णुनावासुके दैत्याःपूर्वकायनिवेशिताः ।।३८
तेतस्यप्राणवातेनवह्निनाचहतत्विषः ।
निस्तेजसोऽसुराःसर्वेबभुबुरमरद्युते ।।३९
तेनैवमुखनिःश्वासवायुनाधवलाहकैः ।
पुच्छप्रदेशेवर्षद्भिस्तदाप्ययिताःसुराः ।।४०
क्षीरोदमध्येभगवान्ब्रह्माबिदांवरः ।
महादेवोमहातेजाविष्णुपृष्ठनिवासिनौ ।।४१
वाहुभ्यां नंदरंगृह्यपद्मवत्सपरंतपः ।
शृङ्खलेचंतदाकृत्वागृहीत्वामंदराचलम्

समस्त देव-दैत्य और दानवी ने सर्वौषधियाँ एकत्रित की थीं और उन्हें शरद काल के आकाश के समान निर्मल कान्ति वाले क्षीर सागर के जल में डाल दिया था ।।३६।। हे राजेन्द्र ! उन सबने मन्दराचल को मन्थान बनाया और वासुकि को मन्थन करने की नेत्री बनाकर बड़े वेग और जोश के साथ सभी देव दानव अमृत प्राप्तिके लिये मन्थन करने लगे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे ।३७। हितसे युक्त समस्त देवता लोग जिधर वासुकि के पूँछ थी उधर की ओर स्थित होगये थे और भगवान् विष्णुने दैत्योंको वासुकिके पूर्वका अर्थात् मुखकी ओर खड़ा कर दिया था। ८। वे सब दैत्यगण वासुकि सर्प की अयुण्ड श्वासों से और वह्निसे क्षीण कान्ति वाले होगये थे। हेअमर द्युति वाले। वे सभी असुरगण उस समय निस्तेज हो गये थे ।३९। उस समय में वासुकि सर्प के मुख से निसृत वायु से पूँछ की ओर वर्षने वाले मेघों से सुरगण अच्छी तरह तृप्त हो रहे थे अर्थात् देवों का श्रम शान्तहो रहा था ।।४०।। उस क्षीर सागर के मध्य में ब्रह्म वेत्ताओं में परम श्रेष्ठ ब्रह्माजी थे। महान् देव और महातेज वाले विष्णु पृष्ठ निवासी थे ।४१। उस परन्तप ने दोनों बाहुओं से उस मन्दराचल को पद्म की भाँति ग्रहण कर लिया था और दोनों बाहुओं को शृखंला बनाकर मन्दर गिरि का ग्रहण किया था ।।४२।।

देवानांदानवानांचबलमध्येव्यवस्थितः ।
क्षीरोमध्येभगवान्कूर्मरूपीस्वयंहरिः ।।४३
अन्येनतेजसादेवानुपवृंहितवान्हरिः ।
मथ्यमानेततस्तस्मिन्क्षीराब्धौदेवदानवैः ।।४४
हविर्धान्यभवत्पूर्वंसुरभिः सुरपूजिता ।
जग्मुर्मुदंतदादेवादानवाश्चमहामते ।।४५
व्याक्षिप्तचेतस सर्वेबभूभुस्तिमितेक्षणाः ।
किमेतदितिसिद्धानांदिविचिंतयतांतदा ।।४६
वभूववारुणीदेबीमदाघूर्णितलोचना ।
कृतावर्त्ताततस्तस्मात्प्रस्खलतीपतेपदे ।।४७
एकवस्त्रामुक्तकेशीरक्तांतस्तब्धलोचना ।
अहंवलप्रदादेवोमांवागृह्णन्तुदातवाः ।।४८
अशुचिवारुणीं त्यात्यक्त्वतस्तदासुराः ।
जगृहुस्तांतदादैत्याग्रहणात्तसुराभवत् ।।४९

देवों और दानवों के बल के मध्य में विशेष रूप से अवस्थित क्षीर सागरके बीचमें भगवान् हरि स्वयं कूर्म रूपमें स्थित थे ।४३।इसके अनन्तर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवों और दानवोंके द्वारा उस क्षीर सागरके मन्थन किये जाने पर भगवान् हरि ने अन्य तेजसे देवों को बृंहित किया था ।४४। सुरों के द्वारा पूजित हुई सुरभि पूर्वमें हविर्धानी हुई थी । हे महामति वाले! उस समय देवगण और दानवगण सब परम प्रसन्नता को प्राप्त हुए थे ।४५। सब व्याक्षिप्त चित्त वाले और स्तिमित नेत्रों वाले होगये थे । ऐसा देखकर दिविलोकमें उस अवसर पर यह क्या कारण है—ऐसा सिद्ध पुरुष चिन्तन करने लगे थे ।४६। फिर उससे भ्रमरों से सम्पन्न तथा मद से घूर्णित नेत्रों वाली और कदम २ पर गिरती-पड़ती हुई वारुणी देवी प्रकट हुई थी ।४७। एक वस्त्र धारण करने वाली,केशों को खोलेहुए तथा रक्त और अन्दर में स्तब्ध नेत्रों वाली वह देवी यह कह रही थी कि हे दानवो! आप लोग मुझे ग्रहण करो मैं बल प्रदान करने वाली हूँ ।४८। देवगण ने उस वारुणी को अपवित्र समझकर त्याग दिया था और दैत्योंने उस अवसर पर उसको ग्रहण किया था उसके ग्रहण करते ही वह अन्त में सुरा बन गई थी ।।४९।।

मंथनेपारिजातोऽभूद्देवश्रीनन्दनोद्गमः ।
रूपौदार्य्यगुणोपेतास्ततश्चाप्सरसांगणाः ।।५०
षष्ठिकोटयस्तदाजातास्सायान्या देवदानवैः ।
सर्वास्ताःकृतपूर्वास्तुसामान्याः पुण्यकर्मणा ।।५१
ततः शीतांसुरभवद्देवानांप्रीतिदायकः ।
यथाचेशंकरोदेवोजटाभूषणकृन्मम ।।५२
भविष्यतिनसदेहोगृहीतोऽयंमयाशशी ।
अनुमेनेचतंब्रह्माभूषणायहरस्यतु ।।५३
ततोविषंसमुत्पन्नंकालकूटंभयावहम् ।
तेनचैवार्दितास्सर्वेदानवाः सहदैवतैः ।।५४
महादेवेनतत्पीतंविषंगृह्यथदृच्छया ।
तस्यपानान्नीलकंठस्तदाजातोमहेश्वरः ।।५५
पीतावशेनागास्तुक्षीराब्धेस्तुसमुत्थितम् ।
ततोधन्वंतरिजातःश्वेतांबरधनः स्वयम् ।।५६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र मंथन करने में देव श्री नन्दन द्रुम पारिजात प्रकट हुआ था इसके अनन्तर रूप और उदारता से संयुक्त अप्सराओं के समूह निकले ।५। उस समय में वे साठ करोड़ उत्पन्न हुई थी जो देव दानवों के लिए सामान्य होगई थीं। वे सब कृतपूर्वा अर्थात् पूर्वमें ही की हुई थींऔर पुण्य कर्म के द्वारा सामान्य होगई थी ।५१। इसके अनन्तर शीतांशु (चन्द्रमा) हुआ था जो कि देवगण को प्रीति के प्रदान करने वाला था। उस चन्द्र को भगवान् शङ्करदेव ने माँग लिया था कि यह मेरी जटाओं को विभूषित करने वाला भूषण बन जायगा ।५२। यह मेरे शिर को अलंकृत करने वाला होगा—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। अतएव इस चन्द्र को मैंने ग्रहण कर लिया है। यह चन्द्रमा भगवान् शिव की जटाओं का भूषण हो जावे इसका समर्थन ब्रह्माजी ने भी कर दिया था।५३। इसके पश्चात् फिर उस मन्थन किये जाने वाले समुद्र से महान् भय को देने वाला कालकूट की उत्पत्ति हुई थी। उस कालकूट महाविष से देवगण के सहित समस्त दानव भी आर्दित अर्थात् दुःखित हो गये थे ।५४। उस समय में सबको परम समुत्पीड़ित एवम् बेचैन देखकर महादेव ने उन सबकी चिन्ता एवम् व्यथा को निवारण करनेके लिए अपनी ही इच्छासे ग्रहण कर उसका पान कर लिया था। उसको पीकर कण्ठ में ही धारण किए रहने से उसी समय से महेश्वर नीले कण्ठ वाले होगये थे ।५५। शिव के पीने के समय जो कुछ थोड़ा भाग इधर-उधर रह गया था उसका पान नागों ने कर लिया था, इसके उपरान्त उस क्षीरसागर से समुत्थित स्वयं श्वेत वर्ण के वस्त्र धारण किए हुए भगवान् धन्वन्तरि हुए थे ।।५६।।

बिभ्रत्कमंडलु पूर्णममृतस्यसमुत्थितः।
ततःस्वस्थमनस्कास्तेवैद्यराजस्यदर्शनात् ।।५७
ततश्चाश्वः समुत्पन्नोनागश्चैरावतस्तथा।
ततः स्फुरत्कांत मतिविकासिकमलेस्थिता ।।५८
श्रीर्देवीपयसस्तस्मादुत्थिताधृतपंकजा।
तांतुष्टुवुर्मुदायुक्ताः श्रीसूक्तेनमहर्षयः ।।५९
विश्वावसुमुखास्तस्यगन्धर्वा पुरतोजगुः।
घृताचीप्रमुखास्तत्रननतुश्चाप्सरोगणाः ।।६०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगाद्याः सरितस्तोयैः स्नानार्थमुपतस्थिरे ।
दिग्गजाहेपपात्रस्थमादाय विमलंजलम् ।।६१
स्नापयांचक्रिरेदेवीं सर्वलोकमहेश्वरीम् ।
क्षरोदस्तु स्वयंतस्यै मालामम्लानपंकजाम् ।।६२
ददौविभूषणान्यगे विश्वकर्मांचकारह :
दिव्यमाल्यांवरधरां स्नातां भूषणभूषिताम् ।:६३

भगवान् धन्वन्तरि अमृत से भरे हुए एक कमण्डलु को हाथ में ग्रहण करते हुए ही समुद्र से उठकर प्रकट हुए थे । तव तो वहाँ सभी लागों ने भगवान् वैद्यराज का दर्शन किया था और सबके मन को स्वस्थता एव शान्ति प्राप्त हुई थी ।।५७।।इसके वाद में एक अश्व और ऐरावत हाथी प्रकट हुए थे । फिर स्फुरित कान्ति वाली तथा मति से युक्त और विकसित कमल में स्थित हाथ में कमल पुष्प धारण किये हुए उस सागर से श्रीदेवी उत्पित हुई थी । महर्षिगण ने श्रीसूक्त के द्वारा परम प्रसन्न होन हुए उस देवी का स्तवन किया था ।।५८-५६।।श्री देवी के आगे समस्त गन्धर्वों ने जिनमें वश्वावसु प्रमुखथे उसका यशोगान किया था । घृताची नाम वाली जिनकी शिरोमणि नेता थी, ऐसी सब अप्सराओंने श्रीदेवी के सामने नृत्य किया था।६०।गङ्गा आदि सरिताएँ अपने जल से देवीका स्नान कराने के लिए उपस्थित हुईं थी । दिशाओं में रहने वाले गजों ने सुवर्ण के बड़े-बड़े कलशोंमें वह परम विलम तीर्थोंका जल भरकर सम्पूर्ण लोकोंको तहेश्वरी श्रीथेवी का स्नान कराया था । क्षीरसागर ने स्वयं अम्लान अमलोंकी माला लेकर उस महालक्ष्मी देवी को समर्पित की थी । अंगों में अन्य समस्त भषणों के द्वारा विश्वकर्मा ने उस देवीको स्वलंकृत किया था । उस समय वह देवी परमोत्तम माला और अत्यन्त दिव्य वस्त्रों को धारण कर स्नान करने के पश्चात् भूषणों से विभूषित होगई थी ।।६१-६३।।

इन्द्राद्याश्चामरगणा विद्याधरमहोरगाः ।
दानवाश्चमहादैत्याराक्षसाः सहः गुह्यकैः ।।६४
कन्यामभिलषन्तिस्म ततो ब्रह्माउवाचह ।
वासुदेव त्वमेवैनामयदत्तां गृहाणवै ।।६५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवाश्च दानवाश्चैवप्रतिषिद्धामयात्विह ।
तुष्टोऽहं भवतस्त्तावदलोल्येनेहकर्मणा ।।६६
सातुश्रीर्ब्रह्माणाप्रोक्तादेविगच्छस्व केशवम् ।
मयादत्तं पतिंप्राप्यमोदस्वशाश्वतीः समाः ।।६७
इदवेगंचपरजग्मुर्दैत्याविष्णुपराङ् मुखाः ।
त्यक्तास्तुदानवाललक्ष्म्यातिप्रचित्तिपुरोगमाः ।।६८
ततस्तेजगृहुर्दैत्याधन्वन्तरिकरस्थितम ।
अमृतंतन्महावीर्यार्द्दैत्याः पापसमन्विताः ।।६९
माययालोभयित्वातु वष्णुः स्त्रीरूपस्यसंश्रयः ।
आगत्यदानवान्प्राह दीयतांमेकमंडलुः ।।७०

उस परम दिव्य स्वरूप वाली कन्या को प्राप्त करने की अभिलाषा इन्द्र आदि देवगण, विद्याधर, महोरग. दानव, महादैत्य और गुह्यकों के सहित राक्षस सभी लोग कर रहे थे ।।६४।। इसके उपरान्त ब्रह्माजी ने कहा-हे वासुदेव ! मेरे द्वारा समर्पित इस कन्या लक्ष्मीदेवी को आप ही ग्रहण कीजिए ।।६५।। मैंने सभी इन देवों और दानवों से निषेध कर दिया है अर्थात् मैं इनमें किसी को भी इसे देना नहीं चाहता हूं । मेरा मन तो आपके परम शान्त स्वभाव से परम सन्तुष्ट है । अतः इसे ग्रहण करने के लिए आप ही योग्य वर हैं ।।६६।। ब्रह्माजी ने उस श्रीदेवी से कहा—हे देवि ! तुम भगवान् केशव के समीप में जाओ । मेरे द्वारा दी हुई तुम भगवान् जैसा पति प्राप्त करके बहुत से वर्षों तक मुदित रहो ।।६७।।यह देखकर विष्णु से पराङ्मुख रहने वाले दैत्योंके हृदय में बड़ा उद्वेग उत्पन्न हुआ था । विप्रचित्ति जिनमें प्रधान था वे समस्त दानव लक्ष्मी के द्वारा परित्यक्त कर दिये गये थे ।।६८।। इसके पश्चात उन समस्त दैत्यों ने भगवान् धन्वन्तरि के हाथ में जो अमृत से परिपूर्ण कलश था उसे लेलिया था क्योंकि दैत्यगण तो महान् बलशाली थे और पाप कर्मों से युक्त भी थे ।६९। परम सुन्दरी स्त्री का स्वरूप धारण करने वाले भगवान् विष्णु ने अपनी भुवन मोहिनी माया से उन दैत्यों को प्रलोभन दिया था । मोहिनी ने वहाँ आकर उन दानवों से कहाकि आप सब लोग एक मण्डल बनाकर स्थित हो जाओ और इस अमृत के कमण्डल को मुझे दे दो ।।७०।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युष्मा कंव..गाभूस्वास्थास्या मि भवतां गृहे ।
तां दृष्ट्वा रूपसम्पन्नां नारीं त्रैलोक्यसुन्दरीम् ॥७१
प्रार्थयानास्सुवपुष लोभोपहतचेतसः ।
दत्त्वाऽमृतं तदा तस्यै ततोऽपश्यन्त तेऽग्रतः ॥७२
दानवेभ्यस्तदादाय देवेभ्यः प्रददेऽमृतम् ।
ततः वपुः सुरगणाः शक्राद्यास्तत्तदामृतम् ॥७३
उद्यतायुधनिस्त्रिंशा दैत्यांस्तांस्ते समभ्युः
पीतेऽमृते च बलिभिर्जिता दैत्यचमूस्ततः ॥७४
वध्यमाना दिशो भेजुः पातालं विविशुश्च ते ।
ततो देवा मुदा युक्ताः शङ्खचक्रगदाधरम् ॥७५
प्रणिपत्य यथापूर्वं प्रययुस्ते त्रिविष्टपम् ।
ततः प्रभृति ते भ.ष्म स्त्रीलोला दानवाभवन् ॥७६

मोहिनी ने दैत्यों से कहा—फिर मैं आप लोगों के वशीभूत होकर आपकेही घर में रह जाऊँगी । इस बात को सुनकर उस अति सुन्दरतासे सम्पन्न और त्रिलोकी में ऐसी एक ही परमोत्कृष्ट रूप वाली उस नारी को देखकर लोभ से उपहृत चित्त वाले दैत्यगण उसके सुन्दर शरीर का उपभोग करने की प्रार्थना करते हुए उस अमृत के कलशको उसे देकर उसके सामने देखने लगे थे ॥७१-७२॥ उस मोहनी ने दानवों से वह अमृत का कलश लेकर उस अमृत को देवताओं को पिला दिया था और तभी से सुरगण इन्द्र आदि सब अमर शरीर वाले होकर निस्त्रिंश एवम् आयुधों से संयुत होकर उन दैत्यों से युद्ध करने को समुद्यत होगये थे । अमृत पान करके अत्यन्त बलवान देवों ने दैत्यों की सेना पर विजय प्राप्त करली थी ॥७३-७४॥ दैत्यगण वध्यमान होकर दिशाओं में भाग गये थे और डरकर पाताल में प्रवेश कर गये थे । इसके पश्चात् देवगण ने आनन्द से युक्तहोकर शङ्ख चक्र और गदा को धारण करने वाले भगवान् विष्णु को प्रणाम किया था और फिर वे सब देवलोक (स्वर्ग) को चले गये ते । तभी से लेकर हे भीष्म ! दानवगण स्त्रियों के लिए चंचल हो गये थे ॥७५-७६॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ दक्ष यज्ञ विध्वंस कथानक ॥

कथंसतीदक्षसुतादेहत्यक्तवतीशुभा
दक्षयज्ञस्तुरुद्रेणविध्वस्तः केनहेतुना ॥१
एतन्मेकौतुकंब्रह्मन्कथंदेवोमहेश्वरः ।
जगामाथक्रोधवशंत्रिपुरारिर्महायशाः ॥२
गंगाद्वारेपुराभीष्मदक्षोयज्ञमथारभत् ।
तत्रदेवासुरगणाः पतरोऽथमह र्षयः ॥३
समाजग्मुर्मुदायुक्ताः सर्वे देवा सवासवाः ।
नागायक्षाः सुपर्णाश्चवीरुदोषधयस्तथा ॥४
कश्यपोभगवानत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
प्रचेतसोंगिराश्चैववशिष्ठश्चमहातपाः ॥५
तत्रवेमींसमांकृत्वाच तूर्होत्रंन्यवेशयत् ।
होतावसिष्ठस्तत्रासीदगिराध्वर्युसत्तमः ॥६

भीष्म पितामह ने कहा-परम शुभ दक्ष की पुत्री सती ने अपने देह का त्याग क्यों किया था ?और किस कारण से भगवान् रुद्रने दक्ष के यज्ञ का विध्वस किया था ? ॥ ॥हे ब्रह्मन् ! मेरे हृदय में इस बात का बड़ा कौतूहल है कि महान यश वाले त्रिपुरारि महेश्वर देव क्रोधसे वशीभूत हो गये थे।।२।। पुलस्त्य महर्षि ने कहा--पहिले गङ्गा के द्वार पर प्रजापति दक्ष ने यज्ञ का आरम्भ किया था । वहाँ पर सुरगण देव, पितर, महर्षि और इन्द्र के सहित समस्त देवता,नाग, यक्ष,सुर्पण, वीरुद तथा औषधियाँ सभी आनन्द से युक्त हुए आये थे ।।३-४।। कश्यप, भगवान्, अत्रि,पुलस्त्य पुलह, क्रतु प्रचेतस,अङ्गिरा और महान् तपस्वी वशिष्ठ सभी वहाँ आयेथे ।।५।। वहाँ पर वेदी समान बनाकर चातुर्होत्र को सन्निवेशित किया था । उस यज्ञ में वशिष्ठ महर्षि तो होते थे और अध्वर्युओं में श्रेष्ठ अङ्गिरा ऋषि अध्वर्यु थे ।।६।।

बृहस्पतिरथोगाताब्रह्मावैनारदस्तथा ।
यज्ञकर्मप्रवृत्तौ तु हूयमानेषु चाग्निषु ॥७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगतावसवः सर्वं आदित्याद्वादशैवतु ।
अश्विनौमरुतश्चै वमनवश्चचतुर्दशः ॥८
एवयज्ञे प्रवृत्ते तुहूयमानेषुचाग्निषु ।
विभूतितपांरांतन्त्रभक्ष्यभोज्यकृतांशुभाम् ॥९
आलोक्यसर्वनोभूमिसमंताद्दशयोजनम् ।
महावेदीकृतातत्रसर्वेस्तत्रसमन्वितैः ॥१०
सर्वान्देवानशक्रमुख्यान्यज्ञे दृष्टासतीशुभा ।
तदानुनयंवाक्यप्रजापतिमभाषत ॥११
ऐरावतसमारूढो देवराजः शतक्रतुः ।
पत्न्याशच्यासहायातः कृतावासः शतक्रतः ॥१२
पापानांयोयमयिताधर्मेणाधर्मिणांप्रभुः ।
पत्न्याधूमोर्णया सार्धमिहायातः सदृश्यते ॥१३

यज्ञ कर्म के प्रवृत्त होने पर अग्नि के हवन किये जाने में वृहस्पति ब्रह्मा और नारद उग्दाता हुए थे ॥७॥ उस यज्ञ में समस्त वसुगण और बारहों आदित्य भी आये थे । अश्विनीकुमार, मरुद्गण और चौदह मनु उपस्थित हुए थे ॥८। इस प्रकार से उस यज्ञ के प्रवृत्त होने पर अर्थात् यज्ञ के कार्यों का आरम्भ किये जाने पर तथा अग्नि में हवन किये जाने पर वहां मक्ष्य-भाज्य पदार्थों के एकत्रित होने से परम शुभ उस विभूति को देखकर और सर्व ओर दशयोजन भूमि में एक महादेवी की रचना वह समागत सबके द्वारा की गई थी और इन्द्रादि प्रधान समस्त देवगण वहां उपस्थित थे इनको देखकर वह सती देवी अपने पिता दक्ष प्रजापति से विनय पूर्वक बोली थी । सती ने कहा—यहाँ पर देवराज शतक्रतु ऐरावत पर सवार हुए अपनी पत्नी शची के साथ आयेहुए हैं औरनिवास वनाकर ठहरे हुए हैं । जो पापियों को दण्ड देने वाला है और अधर्म करने वालों को अधर्म के द्वारा शासन करने का स्वामी यमराज है वह भी धूमार्णा पत्नी के सहित यहाँ पर आये हुए दिखलाई दे रहे हैं ॥९-१३॥

पुण्याराजर्षयश्चै वपृथिव्यांयेचपार्थिवाः ।
वर्णाश्चाश्रमिण ैव ..वेंकर्मकारिणः ॥१४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किमत्रबहुनोक्तेनब्राह्मीसृष्टिरिहागता ।
भगिन्योभागिनेयाश्चभगिनीपतयस्त्विमे ॥१५
स्वभार्यासहिताः सर्वेसपुत्रास्सहबांधवाः ।
त्वयासमर्चिताः सर्वेदानपरिहैः । १६
आमंत्रणामन्त्रितानांसर्वेषांमाननाकृता ।
एक एवात्रभगवान्पतिर्मे न समागतः ॥१७
विनातेनत्विदंसर्वंशून्यवत्प्रतिभामिमे ।
मन्येचाहतु भवता पतिवे न निमंत्रितः ॥१८
विस्मृतस्ते भवेन्नूनं शसतु सर्वं शसतु मे भवान् ॥१९
तस्यास्तदुक्त वचन श्रुत्वा दक्ष प्रजापतिः ॥२०
पतिस्नेहसमायुक्तांप्राणेभ्योऽपिगरीयसीम् ।
अङ्कमारोप्यतांवालांसाध्वींपतिपरायणाम ॥२१
पतिव्रतांमहाभागांपतिप्रियहितैषिणोम् ।
प्राहगंभीरभावेन शृणुवत्ते यथातथम् ॥२२

परम पवित्र पुण्यमय राजर्षि लोग और पृथ्वी में जो पार्थिव अर्थात् राजा लोग हैं। वर्णाश्रमी और सब कर्म करनेवाले थे वहाँ यज्ञमें उपस्थित थे।१४।यहाँ पर अधिक क्या कहा जावे यहाँ तो सभी ब्राह्मी सृष्टि ही आ गई है। बहिन-भानजे,ये भगिनी के पतिगण अपनी भार्याओंके साथ आये हैं। अपने पुत्र-पौत्रादि समस्त बान्धवगण के सहित सभी लोग आये हुयेहैं और आपने इनसभी का दान-मान एव परिग्रहों के द्वारा भलीभांति स्वागत सत्कार किया।१५-१६। आमन्त्रण प्रेषित कर निमन्त्रित किये हुए सबका सम्मान आपने किया है। इस यज्ञ में सभी लोग विद्यमान हैं अगर नहींहैं तो केवल एक मेरे स्वामी भगवान् शिव ही नहीं आये हैं।१७ उसके बिना मुझे आपका यह महान् समारोह भी बिल्कुल सूना प्रतीत हो रहा है मैं ऐसा ख्याल करती हूँ कि आपनेमेरे पतिदेव कोयहाँ इस यज्ञ में निमन्त्रित ही नहीं किया है। संभव है आपको उनको निमन्त्रण देने का विस्मरण (भूल) हो गया है। आप मुझे यह सब साफ-साफ बता दीजिये। पुलस्त्य मुनि ने कहा—उस अपनी पुत्री सती देवी के इन कहे हुए वचनों का प्रजापति दक्ष ने श्रवण किया था।१ -२ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

येनाद्यकारणेनेहप्रतिन्ते न निम त्रियः ।
कपालपात्रधृक्चर्मीभस्मावृततनुस्तथा ।।२३
शूलीमुण्डीचनग्नश्चश्मशानेरमते सदा ।
विभूत्याङ्गानिसर्वाणिपरिमार्ष्टिनित्यशः ।।२४
व्याघ्रचमपरीधानोहस्ति वर्पारिच्छदः ।
व्याघ्रचर्मपरीधानोहस्तिचर्मपरिच्छदः ।
कपालमालांशिरसिखट्वागंचकरेस्थितम् ।। ५
एतदोषैर्मयावत्सेलोकानांचैवलज्ज ।
नाह्वानं युक्ततंतस्यकारणेनम यासुते ।।२६
यज्ञस्यास्यसमाप्तौतुपूजांकृत्वात्वयासह ।
आनीयतवभर्तारंत्वयासहत्रिलोचनम् ।।
त्रैलोक्यल्याधिकांपूजांकरिष्यामित्रसत्कृतैः ।
एतत्ते सर्वमाख्यातंत्र ायाःकारणमहत् ।।२७

अपने पति के स्नेह से युक्त, प्राणों से भी अधिक प्यारी पति परायण उस साध्वी बाला सतीदेवी को जो कि महापतिव्रता, पति के प्रिय हित के चाहने वाली एवम् महाशालिनी थी दक्ष ने अपनी गोद में बिठाकर बड़े ही गम्भीर भाव से कहा—हे पुत्रि ! तुम अब यथार्थ बात सुनलो।२१। जिन कारणों से तुम्हारे पति को इस यज्ञ के महोत्सवमें निमन्त्रण नहीं दिया गया है वे ये हैं कि वह नर कपाल के पात्र को धारण करने वाले व्याघ्र चर्म से सर्वदा आवृत रहते हैं और समस्त शरीरमें भस्मधारण किये रहा करते हैं ।२२।त्रिशूलधारी, मुण्डमाला को पहिनने वाले नग्न और सर्वदा श्मशान में रति रखने वाले हैं तथा नित्य ही विभूति से सब अपने अंगों का परिमार्जन किया करते हैं।२३।वाघ के चमड़े का परिधान करने वाले तथा हाथी के चर्मको ओढ़ने वाले हैं । नर कपालों की माला को मस्तकमें डाले रहा करते हैं और हाथमें खट्वा का एक भाग अर्थात् पाया रखते हैं ।२४। हे वत्से ! इन उपर्युक्त सभी दोषोंके होनेके कारण लोक-लज्जा से हे बेटी ! यही कारण है कि मैंने तुम्हारे पतिको यहाँ इस समारोहोत्सव में नहीं बुलाया है ।२५। जब यह यज्ञ का महोत्सव सानन्द समाप्त हो जायगा तो उस समय में तुम्हारे पति को यहाँ बुलवा कर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तुम्हारे साथ ही उन त्रिलोचन का समर्थन करूँगा ।२६। फिर उस अवसर पर मैं अत्यधिक सत्कार पूर्वक त्रिलोकी की भी पूजा करूँगा । यही मेरी लज्जा का सबसे बड़ा कारण है जो सब तुमको मैंने बतला दिया है ।।२७।।

यदेभिरजितंपुण्यंतस्यैंतेफलभागिनः ।
एवमुक्त्वा ततः सा तु सती भीष्म रुषान्विता ।।२८
विनिंदमातापितरक्रोधेनारुणितेक्षणा ।
एवमेतद्यथातात त्वयाचोक्तं मर्माग्रतः ।।२६
सर्वोंजनः पुण्यभागी पुण्येनलभतेश्रियम् ।
पुण्येनलभतजन्मपुण्येभोगाः प्रतिष्ठताः । ३०
तदयंजगतामीशः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ।
स्थानान्येतानिसर्वेषांदत्तान्येतेनधीमता ।। १
सत्येनतेनतेयज्ञविध्वंसयतुशकरः ।
यद्यस्तिमेतपः किंचित्कश्चिद्धर्मोऽथवा कृतः ।। ३२
तेनसत्येनतेगर्व समाप्तिमभिगच्छतु ।
इत्तुक्त्वायोगमास्थायस्वदेहस्थेनतेजसा ।।३३
निर्ददाहतदात्मानंसदेवासुरपन्नगैः ।
किंकमेतर्दितप्रोक्तेगधर्वगणगुह्यकैः । ३४
समग्रं तेयज्ञधलंमयादत्तप्रजापते ।

इन सबने जिस महान पुण्य का अर्जन किया है उसके ये सब फल भागी होते हैं । हे भीष्म! प्रजापति दक्ष के द्वारा इस प्रकार से कही जाने वाली वह देवी सती क्रोध से युक्त हो गई थी ।। ८।। क्रोधावेश मे लाल नेत्रों वाली सती अपने पिता की बुराई करती हुई कहने लगी हे पिताजी ! आपने इस प्रकार से जो यह सब मुझसे कहा है कि सभी जन पुण्य भागी हैं क्योंकि पुण्य के प्रभाव से ही श्री को प्राप्ति हुआ करती है, पुण्य से ही जन्म का लाभ होता है क्योंकि समस्त भोग पुण्य में ही प्रतिष्ठित है ।।२८-३०।। सो यह समस्त जगत् के स्वामी हैं और सभी श्रेष्ठों से भी परमश्रेष्ठ हैं । इन्हीं श्रीमान् ने सबको ये उत्तम स्थान प्रदान किये हैं । ३१।। वही भगवान् शङ्कर उसी सत्य से इस तुम्हारे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञ का विध्वंस करेंगे यदि मेरी कोई तपश्चर्या है और मैंने कोई धर्म किया है। उसी सत्य से तेरा यह गर्व ध्वस्त हो जायगा-इतना कहकर वह देवी सती अपने देह में स्थित तेज से योग में समास्थित हो गई थी। ३३। उस समय उस सती ने अपने शरीर को दग्ध कर दिया था। इसे देखकर वहाँ सब देव, असुर, पतंग गुह्यक और गन्धर्व यह कहने लगे कि यह क्या हो गया है? ।.३४।।

गंगाकूलेतदामुक्तोदेहोवक्रुद्धयातया।
शौनकनामतत्तीर्थंगंगायाः पश्चिमेतटे ।। ५
श्रुत्वारुद्रस्तुतद्वार्ता पत्न्यानाशसुदुःखितः।
हतुंयज्ञंघोर भवत्देवानामिहपश्य..म् ।।=६
गणकोटिः समादिष्टाग्रहावैनाथकास्थता।.
भूतप्रेतपिशाचाश्चदक्षयशविनाशने ।।३७
तेर्गत्वाविवुथास्सर्वेयज्ञेनिजित्यनाशितः।
हतेयज्ञेतदादक्षोनिरुत्सा ोनिद्यमः ।।३८
उपगम्याब्रवीत्त्रस्तोदेवदेवपिनाकिम्।
न ज्ञातोऽतिमयादेवदेव नांप्रभुरीश्वरः ।।३९
त्वमस्यजगतोऽध्याशः सुरास्सर्वेत्वयाजिताः।
कृपांकुरुमहेशानगणान्सर्वान्निवर्त्तय ।।४०

विशेष रूप से क्रुद्ध देवी सती ने उस समय में भागीरथी के तट पर अपने देह का त्याग किया था, वह पश्चिम तट पर गङ्गा का शौनक नाम वाला तीर्थ है ।।३५।। इस सती के देह के त्याग देने का समाचार सुनकर रुद्र देव को अपनी पत्नी के नाश हो जाने से महान् दुःख हुआ था। फिर वहाँ समस्त देवगण के देखते हुए भगवान् रुद्रके हृदय में दक्ष के उस यज्ञ का विध्वंस करने का विचार हुआ था।३६। भगवान् शिव ने तुरन्त करोड़ों अपने गणोंको,ग्रह और वैनायकों को तथा भूत-प्रेत एवम् पिशाचों को दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करने की आज्ञा दे दी थी।३७।उन सबने वहां पहुंचकर समस्त देवगणों को जीत लिया था और नष्टकर दिया था। उस यज्ञ के नष्ट हो जाने पर प्रजापति दक्ष बहुत ही उत्साहहीन और उद्यम से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहित हो गये थ ॥३८॥ इसके अनन्तर वह दक्ष अत्यन्त भ.ीत होक देवों क देव पिनाकधारी शिव के समीपमें पहुँचे और उनसे प्राथना करने लग कि हे भगवन् ! आप देवों के भी महान् देव परम प्रभु और ऐसे सामर्थ्यधारी ईश्वर हैं—यह मैं नहीं जानता था।३९।हे भगवन् !इस सम्पूर्ण जगत् के आपही अधीश्वर हैं और आपने सब देवगण को जीत लिया है। अब हे महेशान ! मेरे ऊपर आप कृपा कीजिए और इन अपने गणों को वापिस लौटा लीजिए ॥४०॥

विरूपाक्षशुभाक्षायसहस्राक्षयवै नमः ।
मुण्डायं चण्डमुण्ड वरखट् वाङ्गधारिणे ॥
कव्यरूपाय हव्याय सर्वसंहारिणे नमः ॥४१
भक्तानुकम्पिनेऽत्यर्थं रुद्रजाप्यस्तुताय च ।
विरूपायसुरूपायरूपाणांशतकारिणे ॥४२
पंचास्याशुभास्यासचन्द्रास्यायनमोनमः ।
वरदायवराहायकूर्मायच धृगायच ॥४३
लीलालकशिखंडायकमंडलुधरायच ।
विश्यनाम्नेऽथविश्वायविश्वेशायनमः ॥४४
त्रिनेत्रत्राणमस्माकत्रिपुरघ्नविधीताम् ।
वाङ् मनःकायभावैस्तुप्रपन्नस्यमहेश्वर ॥४५
एवस्तुतस्तदादेवोदक्षेणापन्नदेहिना ।
दिव्येनानेनस्तोत्रेणभृशमाराधितस्तदा ॥४६

यह निवेदन करके दक्ष ने भगवान् शिव का स्तवन किया था—हे भगवन् ! आप विरूप नेत्रों वाले, शुभ नेत्रों वाले तथा सहस्राक्ष हैं,आपके लिये मेरा नमस्कार है । चण्ड स्वरूप मुण्ड और खट्वाङ्ग के धारण करने वाले आपके लिए नमस्कार है ॥४१॥ आप विरूप हैं अर्थात् विशेष प्रकार के रूप वाले हैं, आप सुन्दर रूप वाले हैं और सैकड़ों रूपों के करदे वाले हैं । पाँच मुखों वाले, शुभ मुख से युक्त और चन्द्र मुख वाले आपके लिये बारम्बार नमस्कार है । वरदान प्रदान करने वाले, वराह स्वरूप, कूर्म रूपधारी और मृग रूप वाले आपको नमस्कार है ।४२-४३।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीला के लिए अलक शिखण्ड वाले, कमण्डलुधारी विश्व के ईश आपके लिए नमस्कार है। ४४। हे त्रिपुरासुर के नाशक ! हमारे लिए त्रिनेत्रका त्राण दीजिए। हे महेश्वर ! मैं मन-वाणी और शरीर से सब प्रकार की भावना पूरित होकर आपकी शरणागत में आया हूँ मेरी रक्षा कीजिए ।३५। इस प्रकार से आपत्ति से ग्रस्त देह वाले दक्ष प्रजापत के द्वारा उस समयमें शिवकी स्तुति की गई थी और इस उपर्युक्त स्तोत्र के द्वारा अत्यधिक आराधना की गई थी ।४६।

सर्वकामप्रसिद्धयर्थं फलंप्राप्स्यस्यनुत्तमम् ।।४७
एवमुक्तोभगवताप्रणम्याथसुरेश्वरम् ।
जगामिस्वनिकेतंतुगणानामेवपश्यताम् ।।४८
पत्न्माःशोकेनवैदेवोगंगाद्वारेतदास्थितः ।
तांसतींचितयानस्तुक्वनुसामेक्रियागता ।।४९
तस्यशोकाभिभूतस्यनारदोभवसन्निधौ ।
सातेसतीयादेवेशभार्याप्राणसमामृता ।।५०
हिमवद्ददुहितासामेनागर्भसमुद्भवा ।
जगाह देहमन्यं सा वेदवेदार्थवेदिनी ।।५१
श्रुत्वादेवस्तदाध्यानमवतीर्णामिपश्यत ।
कृतकृत्यमथात्मानंकृत्वादेवस्तदास्थितः ।।५२
संप्राप्तयौवनादेवीपुनरेवविवाहिता ।
एवंहिकथितंभीष्मयथायज्ञोहयः पुरा ।।५३

इस रीति से स्तवन करने पर परम प्रसन्न शिवने कहा-हे प्रजापते ! चाहे तेरा यज्ञ ध्वस्त होगया है किन्तु मैं तेरे इस यज्ञ का पूर्ण फल देताहूँ और तुम सम्पूर्ण कामनाओं की प्रसिद्धि के लिए परम श्रेष्ठ फल प्राप्त करोगे।४९।इस तरह शिव के द्वारा कहे जाने पर दक्ष ने सुरों के स्वामी भोलानाथ शिव को प्रणाम किया था और उनके गुणों का ही गान करते हुए अपने निवास स्थान को चले गये थे ।४८।अपनी प्रिय पत्नी सती के वियोग से शोकग्रस्त होते हुए शिव उस समय में गङ्गा के द्वार पर ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थित हो गये थे। उस सती के विषय में ही चिन्ता करते हुए रहते थे और साम में वह क्रिया न मालूम कहाँ गायब हो गई थी ।।४९।।शोक से ग्रस्त एवम् अभिभूत शिव के समीप में देवर्षि नारद आये और कहने लगे—हे देवेश ! आपके प्राणों के तुल्य वह सती भार्या थी जोकि मृत हो गई है ।५०। वही आपकी प्राणोपमा भार्या सती अब हिमवान् की पुत्री हुई है और मेना के गर्भमें उसका जन्म हुआ है वेद औरवेदों के अर्थ को जानने वाली उसने अब अन्य देह ग्रहण किया है ।५१। इस समाचार का श्रवण कर उसी समय महादेव ने ध्यान करके उसका पुनः अवतरण देख लिया था। तब देवेश्वर ने अपने आपको कृतकृत्य मानकर वहां पर ही वे स्थित होगये थे। हे भीष्म ! यौवन के प्राप्त होने पर उस देवी ने फिर शिव के साथ विवाह किया था। इस प्रकार से कह दिया गया है जिस तरह से पहिले यज्ञ का ध्वंस किया था ।।५२-५३।

।। पृथु यज्ञ कथन ।।

बहुभिर्द्धरणीभुक्ताः भूपालैः श्रूयतेपुरा ।
पार्थिवा पृथिवीयोगात्पृथिवीकस्ययोगतः ।।१
यिमर्थं च कृतासंज्ञाभूमेस्सापारिभाषिकी ।
गौरितीयञ्चसं व भुवः कस्मादुब्रवीहि मे ।।२
पुराकृतयुगस्थासीदंगानाम् प्रजापतिः ।
मृत्योस्तुदुहितातेनपरिणीतातिदुर्मुखी ।।३
सुनीथानामतस्यावेनोनामसुतः पुरा ।
अधर्मनिरतः कामीबलवान्वसुधाधिपः ।।४
लोकस्याधर्मकृच्चापिपरभार्यापहारकः ।
अथतस्यप्रसिद्धयर्थं जगदर्थं महर्षिभिः ।।५
अनुनीतोऽपिनददावशुद्धात्माऽभयततः ।
शापेनमारयित्वैनमराजकभयार्दिता ।।६
ममथुर्ब्राह्मणास्तस्य बलाद्देहमकल्मषा ।
तत्कायान्मथ्यमानात्तु जनिता म्लेच्छजातय ।।७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीरेमातुरंशेन कृष्णांजनसमप्रभाः ।
पितुरंशस्यसगेन धार्मिकोधर्मकारकः ।।८
उत्पन्नोदक्षिणाद्धस्तात्सधनु सशोरोगदी ।
दिव्यतेजोमयः पुत्रस्सरत्नकवचांगदः ।।९
पृरेवाभवन्नाम्नासचविष्णुरजायत ।
सविप्रैरभिषिक्तः संस्तपः कृत्वामुदुष्करम् ।।१०

भीष्म ने कहा—ऐसा सुना जाता है कि पहिले बहुत से राजाओं के द्वारा इस धरणी का भोग किया था। जो राजा लोग पार्थिव—इस नाम से कहे जाते हैं वे तो पृथिवी के स्वामी होने के कारणही पार्थिव कहे गये हैं, किन्तु इस धरणी को जो पृथ्वी इस नाम से पुकारा जाता है वह नाम इसका किस योग ने पड़ा है।१।इस भूमि की यह पारिवामिकी संज्ञा किस कारण से हुई है। इस भूमि का नाम 'गौ'—यह भी कहा जाता है। हे भगवन्! इसका यह नाम किस कारण से हुआ? कृपाकर यह मुझे बतलाइये।२।इस भीष्म के प्रश्न को सुनकर पुलस्त्य ने कहा-पहिले कृतयुग के अङ्ग नाम वाला प्रजापति था। उसने मृत्यु की पुत्री जोकि अत्यत दुर्मुखी थी उसके साथ विवाह किया था।३।उसका सुनीथा नाम था और उसका वेन नाम वाला पहिला पुत्र हुआ था जोकि सदा अधर्म के कामों में निरत रहा करता था.बहुत ही अधिक कामी और बलशाली इस भूमि का राजा हुआ था।४.वह लोकके अधर्मको करने वाला था और पराईस्त्रियों का अपहरण करता था इसको देखकर महर्षियों ने उसकी प्रसिद्धि के लिए और जगत् के कल्याणके वास्ते उसको बहुत कुछ ससझायाथा किन्तु वह इतनी अशुद्ध आत्मा वाला थाकि कभी भी अभयका प्रदान नहींकिया था। लोकमें बड़ी भारी अराजकता न फैल जावे इस भय से दुःखित होकर उसे महर्षियों ने शाप देकर मार दिया था।५-६।कल्मष रहित ऋषि एवम् ब्राह्मणोंने उसके देह का बलपूर्वक मंथन किया था। जब उसके शरीर का मथन हुआ तो उस मथित शरीर से म्लेच्छों की अनेकों जातियाँ समुत्पन्न होगईं थीं।७। ये सब शरीर में माता के अंश होनेसे काले अञ्जन के समान प्रभा वाली थी और पिता के अंश के संसर्ग से धर्म के करने वाली धार्मिका थी।८।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णोविरणसर्वस्य प्रभुत्वमगमत्प्रभुः ।
निःस्वाध्यायवषट्कारंनिर्द्धर्मंवीक्ष्यभूतलम् ॥११
वेद्धमेवोद्यतःकोपाच्छरेणामितविक्रमः ।
ततोगोरूपमास्थायं भूःपलायितुमुद्यता ॥१२
पृष्ठेत्वन्वगमत्तस्याःपृथुःसेषुसरासनः ।
ततः स्थित्वैकदेशेतुकिंकरोमीतिचाब्रवीत् ॥१३
पृथुरप्यवदद्वाक्यमीप्सितदेहिसुव्रते ।
सर्वस्यजगतःशीघ्र स्थावरस्य चरस्य च ॥१४

उसके दाहिने हाथ से एक दिव्य तेज से परिपूर्ण पुत्र उत्पन्न हुआ था जो धनुष, वाण और गदा धारण किए हुए था और रत्नों से जटित कवच एवम् अङ्गद धारण करने वाला था ।९। वह नाम से पृथु हुआ था और वह विष्णु ही उत्पन्न हुए थे । विप्रवर्ग ने उसको राज्याभिषिक्त कर दिया था उस पृथु ने परम सुदुष्कर तपस्या की थी ॥१०॥ उस तपश्चर्या के प्रभाव से उसने विष्णु से वरदान प्राप्त किया था और समस्त विश्व का स्वामी वन गया था । उसने उस समय में इस सम्पूर्ण जगत् को स्वाध्याय और वषट्कार से रहित बिना धर्म वाला देखा था ।११। अपरिमित पराक्रम वाला राजा क्रोध से शर के द्वारा वेधने के लिए उद्यत होगया था इसके अनन्तर गाय का स्वरूप धारण करके भूमि पलायन करने को उद्यत होगई थी ।१२। इसके पीछे-पीछे धनुष पर बाण चढ़ाकर राजा पृथु भी चल दियाथा । इसके पश्चात् एक स्थान पर स्थित होकर पृथ्वी न कहा मैं क्या करूँ ॥१३॥ इसके उत्तर में राजा पृथु ने कहा—सुव्रते ! हमारा जो कुछ भी अभीष्ट पदार्थ हो उसे तू दे, यह अभीष्ट इस सम्पूर्ण स्थावर और जङ्गम जगत् का होगा ॥१४॥

तथेतिचाब्रवीद्भूमिर्दुं दोहसनराधिपः ।
स्वकेपाथौपृथवत्स कृत्वास्वायभुवमनुम् ॥१५
तदन्नमभवद्दुग्धप्रजाजीवतियनतु ।
ततस्तुऋषिभिदुग्धावत्सःसोमस्तदाभवत् ॥१६
दोग्धावाचस्पतिरभूत्पात्रवेदस्तपोरसः ।
देवैश्चवसुधादुग्धा मरुद्दोग्धातदाभवत् ॥१७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्धनं निसौख्यं पृथौ राज्यं प्रशासति ।
नदारिद्र्य तथारोगी नाधनोनंचपापकृत् ।।१८
नोपसर्गानचाघातः पृथौराज्यंप्रशासति ।
नित्यंप्रमुदितालोकादुःखशोकविवर्जिताः ।।१९
धनुष्कोटया च शैलेंद्रानानुत्सार्य समहाबलः ।
भूमडलंसमचक्रे लोकानांहितकाम्यया ।।२०
नपुरग्रामदुर्गाणिनचायुधधरानराः ।
म्रियन्तेयत्रदुखंचनार्थशास्त्रस्यचादरः ।।२१

राजा पृथु के ऐसा कहने पर 'तथास्तु' अर्थात् मैं समस्त चराचर जगत् का अभीप्सित देने को प्रस्तुततहूँ—यह पृथ्वी ने उत्तर दिया था और फिर राजा ने उसका दोहन किया था । राजा पृथु ने अपने हाथ से स्वायम्भुव मनु को वत्स बनाया था ।।१५।। वह अन्न हुआ जिससे सब प्रजा जीवित रहता है । इसके अनन्तर सप्तर्षियों ने दोहन किया था, उस समय सोम वत्स हुआ ।१६। दोग्धा अर्थात् दोहन करने वाला वाचस्पति हुआ, वेद पात्र हुए और तप रस हुआ था । देवगण ने वसुधा (भूमि) का दोहन किया था उस समय मरुत दोहन करने वाला ।।१७।। राजा पृथु के शासन करने पर प्रजा में आयु, धन और सौख्य सभी थे । कहीं पर दरिद्रता नहीं थी न कोई उसके राज्य में रोगी था और न कोई भी धनहीन एवं पाप कर्म करने वाला था ।।१८।। पृथु के राज्य का शासन करने पर कोई भी उपसर्ग एवं आघात नहीं थे । सभी लोग नित्य ही परम प्रसन्नता तथा दुःख एवं शोक से रहित थे ।।१९।। उस महान् वलशाली ने लोकों के कल्याण की कामना से अपनी धनुष की कोटि से बड़े-बड़े पर्वतों को उत्सारित करके इस सम्पूर्ण भू मण्डल को सम बना दिया था ।।२०।। उस समय ग्राम-पुर और दुर्ग नहीं थे और आयुधों को धारण करने वाले मनुष्य थे जो कि दुःख से मरते हों उस अवसर में अर्थशास्त्र का भी कोई आदर नहीं था ।।२१।।

आदित्यवंशमखिलंवदब्रह्मन्यथाक्रमम् ।
सोमवंशंचतत्वज्ञयथावद्वक्तुमर्हसि ।।२२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्ठिर्घोरात्मिकालत्वेनव्यस्थिता ।
मनौर्वैवस्वतस्यापिदशपुत्रामहाबलाः ॥२३
इलस्तुप्रथमस्तेषांपुत्रेष्टयासमकल्पि यः ।
इक्ष्वाकुःकुशनाभश्चअरिष्टोधृष्टएवच ॥२४
नरिष्यतःकरूषश्चशर्यातिश्चमहावलः ।
पृषध्रश्चाथनाभागः सर्वेतेदिव्यमानुषाः ॥२५
अभिषिच्यमनुःपूर्वमिलंपुत्र सधामिकम् ।
जगामतपसेभूयःपुश्करंसतपोवनम् ॥२६
अथाजगामसिध्यर्थं तस्यब्रह्मावरप्रदः ।
वरवरयभद्रं तेमानवेयंथेप्सितं ॥२७
उवाचसतदादेवंपद्मक्षहद्मजंविभुम् ।
वशेमेधर्वैसंयुक्ताः पृथिव्यांसर्वपार्थिवाः ॥२८

भीष्म ने कहा — हे ब्रह्मन् ! आप तो पूर्णतत्व के ज्ञाता हैं अब आप सूर्य वंश को क्रमानुसार बतलाइये और सामवंश की भी यथा रीति बतलाने के आप योग्य होते हैं ॥२२॥ उस समय में घोर स्वरूप वाली विष्टि अर्थात् वरवश नरकों में ढकलने का कार्य कालत्व के कारण व्यवस्थित होगया था । वैवस्वत मनु के दश महाबलवान् पुत्र हुए थे ॥२३॥ उन सबमें इल प्रथम पुत्र था जो पुत्रेष्टि से समकल्पित हुआ था । इक्ष्वाकु, कुशनाभ, अरिष्ट घृष्ट, नरिष्यन्त, करुष, महावली शर्याति, पृषध्र ये दश पुत्रों सभी के नाम थे । ये सभी दिव्य मनुष्य थे ॥२४॥२५॥ मनु ने पहिले परम धर्म के मानने वाले इल को अभिषिक्त किया था और फिर वह पुष्कर यपोवन में तपश्चर्या करने के लिए चले गये ॥२६॥ इसके अनन्तर उसकी सिद्धि के लिए वरदान के प्रदान करते वाले ब्रह्माजी वहाँ आये थे और उन्होंने कहा—तेरा कल्याण हो और अब तुझे जो भी अभीष्ट हो वह वरदान मुझसे प्राप्त करले ॥१७॥ उस समय में उसने पद्म के समान नेत्रों वाले पद्मज विभु श्री ब्रह्माजीसे कहा इस पृथिवी में धर्म संयुक्त होकर सभी राजा मेरे वशीभूत हो जावें । हे स्वामिन् ! आपके चपण कमल के प्रसाद से अब ईश्वर हो जावें । ऐसा ही होगा—यह कहकर देवेश्वर ब्रह्मा वहां पर ही अन्तर्हित हो गये ॥२८॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवेयुरीश्वराःस्वामिन्प्रसादात्तवकंजज ।
तथेत्युक्त्वातुदेवेशस्तत्रैवांतरधीयत ॥२९
ततोऽयोध्यांसमागत्यसमतिष्ठद्यथापुरा ।
अथैकदा रथारूढ इलोनिजसुतोमनोः ॥३०
निर्जगामार्थं सिध्यर्थंमिनप्रायांमहीमिमाम् ।
भ्रमन्द्वीपानिसर्वाणिक्ष्माभृतःसंप्रसाधयन् ॥३१
जगामोपवनंशंभोरथाकृष्टःप्रतापवान् ।
कल्पद्रुमलताकीर्णंनाम्नाशरवणमहत् ॥३२
रमतेयत्रदेवेशःसोमःसोमार्द्धशेखरः ।
उमया समयस्तत्र पुरा शरवणेकृतः ॥३३
पुंनामसंज्ञर्यत्किंचिदागमिष्यतिनोवनम् ।
स्त्रीत्वमेष्यतितत्सर्वं दशयोजनमंडले ॥३४
अज्ञातसमयोराजाइलःशरवणंयतः ।
स्त्रीत्वजगामसहसावडवाश्वोऽभवत्क्षणात् ॥३५

इसके अनन्तर अयोध्या में आकर पूर्व की ही भाँति वह समास्थित होगये थे। इसके अनन्तर एक बार मनु का अपना पुत्र इल रथ पर सवार हुआ था ॥ २९–३०॥ रथारूढ़ होकर वह इस इल प्रायः भूमि पर अर्थ सिद्धि के लिए निकल पड़ा था। समस्त नृपों को सम्प्रसाधित करते हुए समस्त द्वीपों में भ्रमण किया था।३१। इसके पश्चात् वह आकर्षित होकर महान् प्रताप वाला भगवान् शम्भु के क्रीड़ा स्थल उपवन में पहुँच गया था। वह उपवन कल्पवृक्षों और कल्पलताओं से आकीण था और उस महान् उपवन का नाम शखण था।५२। जिस उपवन में देवेश्वर सोमार्द्ध-शेखर भगवान् शम्भु उमादेवी के साथ रमण करते हैं। वहाँ पर पहिले शखण में ऐसा निर्णय कर दिया गया था कि इस वन में पुरुष नामधारी कोई भी आवेगा तो इस दशयोजद के मंडल में वह स्त्री हो जायेगा॥३३-३४॥ इस समय अर्थात् शिवा देश को जो नहीं जानता था वह इल राजा उस शखण नामक उपवन में चला गया था और वह तुरन्त ही स्त्रीत्व को प्राप्त होगया और जो अश्व था वह भी वड्वा (घोड़ी) होगई थी -।३५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुषत्वेकृतंसर्वंस्त्रीकायेविस्मृतंतत: ।
इलेतिसभवन्नारीपीनोन्नतघनस्तनी ।।३६
समय शंभुदयिताकृत:शरवणेपुरा ।
य:पुमान्प्रविशेच्चात्रसनारीत्वमवाप्स्यति ।।३७
जयमश्वोऽपिनारीत्वमगाद्राज्ञासहैवनु ।
इल:पुरुषतामेतियथासौधनदोपम: ।।३८
तथैवयत्न:कर्त्तव्यआराध्यचपिनाकिनम् ।
ततस्तेमानवाजग्मुर्यत्रदेवोमहेश्वर: ।।३९
तुष्टुवुर्विविधै: स्तोत्रै:पार्वतीपरमेश्वरौ ।
तावूचतुरलंचैव समय: किनुसाम्प्रतम् ।।४०
इक्ष्वाकोरश्वमेधेनयत्फलस्यात्तदावयो: ।
दत्वाकिंपुरुषोवीर:सभविष्यत्यसंशयम् ।।४१
तथेत्युक्त्वातुतेसर्वेजग्मुर्वैवस्वतात्मजा: ।
इष्टवाश्वमेधेनतमइलाकिंपुरुषोऽभवत् ।।४२

प्राचीन समय मे यह ऐसा समय शरवण में शम्भु की पत्नी के द्वारा किया गया था कि जो कोई पुरुष जाति वाला इस उपवन में प्रवेश करेगा वह तत्क्षण ही नारीत्व को प्राप्त हो जायगा ।।३६।। यह अश्व भी राजा के साथ पुरुष जाति का होने के कारण स्त्रीत्व जाति को प्राप्त हो गया था । जिस प्रकार से कुवेर के तुल्य यह नृपति इल पुरुषत्व को प्राप्त हो जावे वैसा ही कोई उपाय एवं यत्न करना चाहिए-ऐसा विचारकर सब मनुष्यों ने पिनाकी प्रभु की आराधना की और सब वहाँ पर ही पहुँच गये थे जहां महेश्वर देव विराजमान थे ।३७-३८। सब लोगों ने अनेक स्तोत्रों के द्वारा भगवती पार्वती और परमेश्वर शिव की स्तुति की थी उन दोनों ने स्तवन समाप्त होने के पश्चात् कहा—यह तो यहाँ आने वाले के लिए ऐसा समय के अनुसार होगा ही-इसमें क्या करना चाहिए । राजा इक्ष्वाकु के अश्वमेघ से हम दोनों का जो फल होगा उसे देकर यह वीर किम्पुरुष निश्चय ही हो जायगा ।।३९-४१।। ऐसा होगा-यह कहकर वे सब वैवस्वत के पुत्र चले गये थे । फिर अश्वमेध यज्ञ का यजन करके राजा इल किम्पुरुष हो गया था ।।४२।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मासमेकंपुमान्वीरःस्त्रीत्वंमासमभूत्पुनः ।
बुधस्यभवनेतिष्ठन्निलोगर्भधरोऽभवत् ।।४३
अजीजनत्पुत्रमेकमनेकगुणसंयुतम् ।
बुध उत्पाद्य त पूर्वं सस्वर्गंमगमत्पुनः ।।४४
इलस्यनाम्नातूर्षमिलावृतमभूत्तदा ।
सोमार्कवशजोराजाइलोऽभूद्व शवर्द्धनः ।।४५
एवंपुरूरवा पूरोरभवद्व ंशवर्द्धनः ।
इक्ष्वाकुरर्कवंशस्यतथैवोक्तोनरेश्वरः ।।४६
इलःकिंपुरुषत्वेचसुद्यु म्नइतिजोच्यते ।
पुनःपुत्रत्रयमभूत्सुद्यु म्नस्यापराजितम् ।।४७
उत्कलोऽथगस्तद्वद्धरिताश्चश्चवीर्यवान् ।
उत्कलस्योत्कलानामगयस्यतुगयापुरी ।।४८
हरिताश्वस्यदिग्याभ्यासज्ञाताकुरुभिःसह ।
प्रतिष्ठानोऽभिषिच्याथसषुरूरवसमसूतम् ।।४९

वह वीर एक मास तक तो पुरुष होकर रहता था और फिर एक मास के पश्चात् एक मास पर्यन्त स्त्री होजाता था। बुधके भवन में रहकर स्त्री रूप में स्थित वह इल गर्भ धारण करने वाला होगया था ।४३। उसने अनेक गुणगण से संयुत एक पुत्र को जन्म दिया था और बुध पहिले उस पुत्र का उत्पादन कर फिर स्वर्ग को चला गया था ।।४४।। तभी से राजा इल के नाम से वह इलावृत प्रसिद्ध होगया था। राजा इल सोम तथा सूर्य के वश में उत्पन्न होने वाला था और वही इन दोनों के वंश का वर्धन करने वाला भी था ।।४५।। इसी तरह पुरूरवा पुरू के वंश का अभिवर्धन करने वाला था। राजा इक्ष्वाकु भी इसी भांति से सूर्य के वंश को वृद्धि करने वाला हुआ था ।।४६।। वह इल किम्पुरुषत्व की स्थिति में जब रहा था तब सुद्युम्न इस नाम से कहा जाता था। फिर सुद्युम्न के किसी से भी पराजित न होने वाले तीनपुत्र हुए थे।।४७.।इन तीनों के नाम उत्कल, गय और हरिताश्व थे. ये तीनों बड़े बलवान् हुए थे। उत्कल की उत्कला,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गय की गयापुरी नाम वाली पुरी थी ।।४८।। हरिताश्व की दिरयाम्या थी कुरुओं के साथ प्रतिष्ठान उसने पुरूरवा पुत्र को अभिषिक्त किया था।४६।

जगामेलावृत्तं भोक्तुं दिव्यंदषफलाशवः ।
इक्ष्वाकुर्ज्येष्ठदायादोमध्यदेशमवाप्तवान् ।।५०
तरिष्यतस्यपुत्रोऽभूच्छुकोनामहावलः ।
नाभागादबरीषस्तुधष्टस्यतुसुतत्रयम् ।।५१
धृष्टकेतुःस्वधर्माथोरणधृष्टश्चवीर्यवान् ।
आनर्तोमामशर्यातिःसूकन्याचैवदारिका ।।५२
आनर्तस्याभवत्पुत्रोरोचमानःप्रतापवान् ।
आनर्तोनामथेशोऽभून्नगरीचकुशस्थली ।।५३
रोचमानस्यरेवोऽभूद्रेवाद्रेवतएवच ।
ककुद्मीचापरंनामज्येष्ठः पुत्रशतस्यच ।।५४
रेवतोतस्यसाकन्याभार्यारामस्यविश्रुता ।
करूषाच्चैवकारूषाबहवः प्रथिताभुवि ।।५५
पृषध्रोगोवधाच्छूद्रोगुरुशापादजायत ।
इक्ष्वाकुपुत्रानाभनाथविकुक्षिनिमिदडका ।।५६

पुरूरवा का अभिषेक करके वह दिव्य वर्ष पर्यन्त फलों का आहार करने वाला इलावृत का भोग करने के लिये चला गया था । ज्येष्ठ दायाद इक्ष्वाकु ने मध्यदेश को प्राप्त किया था ।५०। नरिष्यन्त के महान् बलवान् शुक नामधारी पुत्र उत्पन्न हुआ था । नाभाग के अम्बरीष नाम वाले आत्मज ने जन्म ग्रहण किया था और धृष्ट के तीन पुत्र हुए थे ।५१। इन तीनों के धृष्टकेतु-स्वधर्मा और रणधृष्ट थे, ये सब बड़े वीर्य वाले थे । शर्याति के आनर्त्त नामक पुत्र और सुकन्या नामधारिणी पुत्री उत्पन्न हुई थी।।५२। आनर्त्त के रोचमान नाम वाला बड़ा प्रतापी पुत्र हुआ । उसके देश का नाम भी आनर्त्त था और उसकी कुशस्थली नाम वाली नारी थी।-५३।। रोचमान के रेव हुआ और रेव से रैवत पुत्र हुआ था । उसका दूसरा ककुद्मी नाम था और पुत्रशत का ज्येष्ठ था ।।५४।। उसकी रेवती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वाली कन्या थी जो बलरामजी की भार्या प्रसिद्ध हुई थी। करुषा और कारूषा बहुत-सी भू मण्डल में प्रथित थीं।५४। गोवध से पृषध्र हुआ था जो गुरु के शाप से शूद्र होगया था। इक्ष्वाकु के विकुक्षि-निमि और दण्डक नाम वाले पुत्र हुए थे।।५६।।

श्रेष्ठाःपुत्रशतस्यासन्पंचाशच्चाथतत्सुताः।
मेरोरुत्तरतस्तेतुजाताःपार्थिवसत्तमाः ।।५७
चत्वारिंशत्तथाष्टान्येशतमध्येचयेऽभवन्।
मेरोर्दक्षिणतश्चैवराजानस्तेप्रकीर्तिताः ।।५८
ज्येष्ठात्ककुत्स्थनामाभूत्सुतस्तस्यसुयोधनः।
तस्यपुत्रःपृथुर्नामविश्वस्तस्यपृथोःसुतः ।।५९
आर्द्रस्तस्यचपुत्रोऽभूद्युवनाश्वस्ततोऽभवत्।
युवनाश्वस्यपुत्रोऽभूच्छावस्तोनामवीर्यवान् ।।६०
निर्मितायेनशावस्तीह्यंगदेशेनराधिप।
शावस्ताद्बृहदश्वोऽभत्कुवलाश्वस्ततोऽभवत् ।।६१
धुंधुमारत्वमगमद्धुंधुंहत्वाऽसुरंपुरा।
तस्यपुत्रास्त्रयोजाताद्दृढाश्वोघृणिरेवच ।।६२
कपिलाश्वश्चविख्यातोधौंधुमारिःप्रतापवान्।
दृढाश्व प्रमोदस्तुहर्यश्वस्तस्यचात्मजः ।।६३

पुत्रशत के परम श्रेष्ठ पचास सुत हुए थे और वे मेरु के उत्तर की ओर उत्तम नृप हुए थे।५७।सौ के मध्य में अड़तालीस और हुए थे, वे मेरु के दक्षिण दिशा की ओर राजा बताये गये हैं।।५७।। जो ज्येष्ठ था उससे ककुत्स्थ नाम वाला हुआ और उसके सुयोधन पुत्र ने जन्म ग्रहण किया था उसका पुत्र पृथु हुआ और पृथु का सुत विश्व नाम वाला उत्पन्न हुआ था।५९। उसका पुत्र आर्द्र हुआ और आर्द्र का पुत्र युवनाश्व हुआ था। युवनाश्व के पुत्र का नाम शावस्त था जो बहुत वीर्य पराक्रम वाला था।६०। हे नराधिप ! उसने अङ्ग देश में शावस्ती की रचना की थीं। शावस्त से वृहदश्व हुआ और इसके पुत्र का नाम कुवलाश्व था।।६१।। इसने पहिले धुन्धु नामक असुर का हनन करके धुन्धुमारत्व को प्राप्त किया था। इसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन सुत हुए थे जिनके नाम दृढाश्व-घृणि और कपिलाश्व थे। कपिलाश्व बड़ा प्रताप वाला धुँधुमारि के नाम से विख्यात हुआ था। दृढ़ाश्व के प्रमोद और हर्यस्व आत्मज उत्पन्न हुआ था ॥६२-६३॥

हर्यश्वस्यनिकुंभोऽभूत्संहताश्वस्ततोभवत्।
अकृताश्वोरणाश्वश्चसंहताश्वसुतावुभौ ॥६४
युवनाश्वोरणाश्वस्यमांधाताचततोऽभवत्।
मांधातुःपुरुकुत्सोभूद्धर्मसेतुश्चपार्थिवः ॥६५
मुचुकुन्दश्चविख्यातश्शक्रमित्रःप्रतापवान्।
पुरुकुत्सुस्यपुत्रोऽभूद्दु सहोनर्मदापतिः ॥६६
सभूतिस्तस्यपुत्रोऽभूत्त्रिधन्वाचततोऽभवत्।
त्रिधन्वनःसुतोजातस्त्रय्यारुणइतिस्मृतः ॥६७
तस्यसत्यव्रतोनामतस्मात्सत्यरथः स्मृतः।
तस्यपुत्रोहरिश्चन्द्रोहरिश्चन्द्राच्चरोहितः ॥६८
रोहिताच्चवृकोजातोवृकाद्वाहुरजायत।
सगरस्तस्यपुत्रोऽभूद्राजापरमधार्मिकः ॥६९
द्वे धार्येसगरस्यापिद्रभाभानुमतीतथा।
ताभ्यामपाधितःपूर्वमौर्वाग्निःपुत्रकाम्यया ॥७०

हर्यश्व के निकुम्भ पुत्र हुआ और निकुम्भ के वीर्य से सहताश्व ने जन्म ग्रहण किया था। संहताश्व के अकृताश्व और उरणाश्व नाम वाले दो सुतों ने जन्म लिया था ॥६४॥ उरणाश्व के युवनाश्व हुआ और उसके मान्धाता उत्पन्न हुआ था। मांधाता के पुरुकुत्स नामक पुत्र हुआ था और धर्म सेतु राजा हुआ था जो इन्द्र का मित्र प्रबल प्रतापशाली मुचुकुन्द इस नाम से प्रसिद्ध हुआ था। पुरुकुत्स का पुत्र नर्मदा पति दुःसह हुआ था ॥६५-६६॥ इसके पुत्र का नाम सभूति था और इस सभूति से त्रिधन्वा की उत्पत्ति हुईथी। त्रिधन्वाका त्रय्यारुथ नामसे विख्यात होने वाला पुत्र हुआ था ॥६७॥ त्रय्यारुण का सुत सत्यव्रत हुआ और उससे फिर सत्यरथ की उत्पत्ति हुई। सत्यरथ के पुत्र का नाम हरिश्चद्र था तथा हरिचंद्र के रोहित पुत्र उत्पन्न हुआ। रोहित से वृक और वृक से बाहु समुत्पन्न

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ था । इसके पुत्र का नाम सगर था जो कि परम धार्मिक राजा हुआ था ।।६९।। राजा सगर के दो भार्या थीं एक का नाम प्रभा और दूसरी का नाम भानुमती था । इन दोनों ने पुत्र की कामना से पहिले और्वाग्नि की आराधना की थी ।।७०।-

और्वस्तुष्टस्तयोःप्रादाद्यथेष्टंवरमुत्तमम् ।
एकाषष्टिसहस्राणिसुतमेकंतथापरा ।।७१
अगृह्णाद्वंशकर्तारंप्रभाऽगृह्णाद्बहून्सुतान् ।
एकंभानुमतीपुत्रमगृह्णादसवंजसम् ।।७२
ततःषष्टिसहस्राणिसुषुवेयादवीप्रभा ।
खनतःपृथिवींदग्धाविष्णुनायेश्वमार्गणे ।।७३
असमंजस्तुततनयोह्यंशुमान्नाम विश्रुतः ।
तस्यपुत्रोदिलीपस्तुदिलीपात्तु भगीरथः ।७४
येनभागीरथीगङ्गातपःकृत्वावतारिता ।
भगींरथस्यतनयोनाभागइतिविश्रुतः ।।७५
नाभागस्यांबरीषोऽभूत्सिंधुद्वीपस्ततोऽभवत् ।
तस्यायुतायुःपुत्रोऽभूत्ऋतुपर्णस्ततोऽभवत् ।।७६
तस्यकल्माषपादस्तुसर्वकर्मा ततःस्मृतः ।
तस्यानरण्यापुत्रोऽभून्निघ्नस्तस्यसुतोभवत् ।।७७

समाराधन से सन्तुष्ट होकर और्व ने यथेष्ट वरदान दिया था । इनमें से एक ने साठ सहस्र पुत्र और दूसरी ने एक पुत्र ही वंश को चलाने वाला स्वीकार किया था । प्रभा ने बहुत से पुत्रों की प्राप्ति स्वीकार की थी। भानुमती केवल एक असमञ्जस पुत्र प्राप्त किया था ।।७१-७२।। इसके अनन्तर यादवी प्रभा ने साठ हजार पुत्रों को प्रसूत किया था जोकि विष्णु के द्वारा अश्व की खोज करने के कार्य में पृथ्वी को खोदते हुए दग्ध कर दिये गये थे ।।७३।। असमञ्जस का पुत्र अंशुमान् हुआ और इसके पुत्र का नाम दिलीप था तथा दिलीप से भागीरथ ने जन्म ग्रहण किया था ।।७२।। यह भागीरथ महान् यशस्वी राजा था जिसने भागीरथी गङ्गा का स्वर्ग से यहाँ भू-मण्डल में अवतरण कराया था । भागीरथ के पुत्र का नाम नाभाग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

हुआ था ।।७५।। राजा नाभाग के अम्बरीष हुआ और फिर उससे सिन्धु-द्वीप हुआ था। इसके पुत्र का नाम अपुतापु था और अयुतायु से ऋतुपर्ण ने जन्म ग्रहण किया था ।।७६।। इसके कल्माषपाद नाम वाला पुत्र उत्पन्न हुआ औप इसके पुत्र का नाम सर्वकर्मा था। सर्वकर्मा के अनरण्य हुआ और अनरण्य के पुत्र का नाम विघ्न था ।७७।।

निघ्नपुत्रावभौजातावनमित्ररघूत्तमौ ।
अनमित्रोवनमगादरिनाशकृतेनृप ।।७८
रघोरभत्मिलीपस्तुदिलोपाच्चाप्यजस्तथा ।
दीर्घबाहुरजाज्जातःप्रजापालस्ततोऽभवत् ।।७९
ततोदशरथोजातस्यपुत्रचतुष्टयम् ।
नारायणात्मकाःसर्वेरामस्तस्याग्रजोऽभवत् ।।८०
रावणांतकरस्तद्वद्रघूणांवंशवर्द्धनः ।
वाल्मीकिर्यंस्यचरितंचक्रेभार्गवसत्तमः ।।८१
तस्यपत्रःकुशोमामइक्ष्वाकुकुलबर्द्धनः ।
अतिथिस्तुकुशाज्जातोनिषधस्तस्यचात्मजः ।।८२
नलस्तुनिषधाज्जातोनभास्तस्मदजायत ।
नभसःपुंडरीकोऽभूत्क्षेमधत्वाततःपरम् ।।८३
तस्यपुत्रोऽभवद्वीरोदेवानीकःप्रतापवान् ।
अहीनगुस्तस्यसुतःसहस्राश्वस्ततःपरः ।।८४

राजा निघ्न के अनमित्र और रवृत्तम नाम वाले दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। हे नृप ! शत्रुओं के नाश करने पर क्षनमित्रवन में चला गया था ।७८। राजा रघु से दिलीप की उत्पत्ति हुई और दिलीप के पुत्र का नाम अज था। अज से दीर्घबाहु हुआ इसक पुत्र का नाम प्रजापाल हुआ था ।।७९।। इससे राजा दशरथ की उत्पत्ति हुई जिसके चार पुत्र रत्न समुत्पन्न हुए थे। ये सभी नारायण के स्वरूप वाले थे। उनमें सबल बड़े भाई राम हुए थे ।।८०।। यह श्रीराम लङ्का के राजा रावण के वध करने वाले और रघु के वंश की वृद्धि करने वाले हुए थे। भार्गव सत्तम

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम के चरित्र का रामायण में विस्तृत वर्णन किया है ।।८१।। श्रीराम के पुत्र का नाम कुश था जो इक्ष्वाकु के कुल को बढ़ाने वाला था । कुश से अतिथि उत्पन्न हुआ था और इसके पुत्र का नाम निषध हुआ था ।८२। निषध से नल समुत्पन्न हुआ था तथा नल से नभा समुत्पन्न हुआ था । नभा से पुण्डरीक पैदा हुआ और इससे फिर क्षेमधन्वा की उत्पत्ति हुई थी ।८३। इसके पुत्र का नाम वीर प्रतापी देवानीक था। इसके पुत्र का नाम अहीनगु था और इससे सहस्राश्व ने जन्म लिया था।८४।

।। सोमवंश वर्णन ।।

सोमवंशः कथंजातः कथयात्र विशारद ।
तद्वंशे केतु राजानोवभूवुःकीर्तिबधनाः ।।१
आदिष्टोब्रह्मणापूर्वंमत्रिःसर्गविधोपुरा ।
वनंतरंन मतपःसृष्ट्यर्थंतप्तवान्विभुः ।।२
यदानंदकरं ब्रह्म भगवन्क्लेशनाशनम् ।
ब्रह्मरुद्रेन्द्रसूर्याणामभ्यंतरमतीन्द्रियम् ।।३
शान्तिकृत्वात्ममनस दत्रि.संयमेस्थितः ।
माहात्म्यतपसोवापिपरमानदकारकम ।।४
यस्माद्वंशपतिःसार्द्धं समये तदधिष्ठितः ।
तद्दृष्ट्वाचष्टसोमेनतस्मात्सोमोऽभवद्विभुः ।।५
अथसस्रावनेत्राभ्यां जलंतत्रात्रिसंभवम् ।
द्योतयविश्वमखिलंज्यत्स्नयासचराचरम् ।।६
तद्दिदशोजगृहुस्तत्रस्त्रीरूपेणासहृच्छयाः ।
गर्भोभूत्वोदरेतासांस्थितः सोऽप्यत्रिसंभवः ।।७

भीष्म ने कहा-हे विशारद ! सोम का वंश कैसे हुआ था--इसे बतलाइये । इसके वंश में कौन-कौन कीर्ति की बुद्धि करने वाले राजा हुए थे ? ।१। पुलस्त्य ऋषि ने कहा-प्राचीन काल में जबकि इस विश्व में सर्ग की रचना का आरम्भ हुआ था सबसे पूर्व ब्रह्माजी ने अत्रि मुनि को सृजन करने की आज्ञा प्रदान की थी । इसके उपरान्त विभु ने सृष्टि की रचना

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
करने के लिए तपश्चर्या की थी ।।२२।। आनन्द के करने वाला और क्लेश का नाशक ब्रह्म है जो ब्रह्मा—रुद्र—इन्द्र और सूर्य सबको सुखद हैं वह इन्द्रियों का अगोचरहैं किन्तु सबके अन्दर स्थित है-यह विचार कर अपने मनमें शान्ति धारण कर अधिमुनि संयम में संस्थित होगये थे । तपश्चर्या की महिमा भी परम आनन्द के करने वाली है । ३–४।। जिससे वंश का पति समय पर साथ में अधिष्ठित हुआ था उसको देखकर सोम से चेष्टा की थी इसी से सोम विभु हुआ ।५। इसके अनन्तर उस समय में नेत्रों से अत्रि से समुत्पन्न जल का स्रवण हुआ था जो कि ज्योत्स्ना से इस सम्पूर्ण चराचर विश्व को प्रकाशित कर रहा था ।६। उसे असत् काम वाली दिशाओं ने स्त्री के रूप से ग्रहण किया था और वह उनके उदर में अत्रि से समुत्पन्न गर्भ होकर स्थिति हो गया था ।।७।।

आशाश्च मुमुचुगर्भमशक्ता धारणे ततः ।
समादायाथ तगर्भमेकीकृत्य चतुर्मुखः ।।८
युवानमकरोद्ब्रह्मा सर्वायुधधरं नरम् ।
स्यदनेऽथ सहस्तेन वेदशक्तिमये प्रभुः ।।९
आरोप्यलोकमनयदात्मोयंसपितामहः ।
ततोब्रह्मर्षिभिः प्रोक्तं ह्यमत्स्वामीभवत्वयम् ।।१०
ऋषिभिर्देवगंधर्वैरप्सरोभिस्तथैवच ।
स्तूयमानस्य तस्याभूदधिकं महदंतरम् ।।११
तेजावितानादभवद्भुबिदिश्यौषधोगणः ।
तद्दीप्तिर धकातस्माद्रात्रौभवतिसर्वदा ।।१२
तेनौषधीशः सोमोऽभूद् द्विजेष्वपि हि गण्वते ।
वेदधामा रसश्चायं यदिदं मंडलंशुभम् ।।१३
क्षीयते वधद चव चव शुक्लेकृष्णेचसर्वदा ।
विंशतिं च तथा सप्त दक्षः प्राचेतसो ददौ ।।१४
रूपलावण्यसयुक्तास्तस्मकन्याःसुवर्चसः ।
ततः शक्तिसहस्राणांसहस्राणिदशवतु ।।१५

दिशाएँ उस गर्भ को धारण करने मे असमर्थ होगई थीऔर उसे उन्होंने त्याग दिया था । इसके उपरान्त चारमुखों वाले ब्रह्माजीने उसगभ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
को लेकर एकत्रित किया था ।८। प्रभु ने वेद शक्ति से परिपूर्ण रथ में अपने हाथ से उसको ब्रह्माजी ने समस्त आयुधों को धारण करने वाला युवा नर कर दिया था ।।९।। उस पितामह ने उसे लोक में आरोपित करके अपना आत्मीय बना लिया था । इसके पश्चात् तभी से ब्रह्मर्षियों ने कहा था कि यह हमारा स्वामी होवे ।।१०।। समस्त ऋषि, देवगण, गन्धर्व और अप्स-राओं के द्वारा स्तुति किये गये उसका महान् और अत्यधिक अन्तर हो गया था ।।११।। तेज के वितान से भू मण्डल में दिव्य औषधें उत्पन्न हो गई थीं और उसकी दीप्ति सदा रात्रि में अत्यधिक हुआ करती है ।१२। इसी कारण से सोम औषधियों का स्वामी होगया था और उसकी द्विजों में भी गणना की जाती है । यह वेदों का धामरस है जो कि यह शुभ मण्डल दिखलाई देता है ।१३। यह चन्द्र का मण्डल कृष्ण पक्ष तथा शुक्ल पक्ष में सर्वंता क्षीण एवं क्रम से वर्द्धमान हुआ करता है । प्राचेतस दक्ष ने रूप लावण्य से संयुक्त सुन्दर वर्चस वाली सत्ताईस कन्यायें उसको दे दीं थीं । इससे उसकी सहस्रों शक्तियों की सहस्रों दशाऐं होगईं थी ।१३-१५।

तपश्चकारशीतांशुर्विष्णुध्यानैकतत्परः ।
ततस्तुष्टश्चभगवांस्तस्मै नारायणोहरिः ।।१६
वरंवृणीष्वचोवाछ परमात्मा जनार्दनः ।
ततो वव्रे वरं सोमः शक्रलोके यजाम्यहम् ।।१७
प्रत्यक्षमेव भोक्तारो भवन्तु मम मन्दिरे ।
राजसूये शुरगणाब्रह्माद्यायचतुर्विधाः ।।१८
रक्षपालःसुरोऽस्माकमास्तांशूलधरोहरः ।
तथेत्युक्तः समाजह्रे राजसूयंतुविष्णुना ।।१९
होतात्रिर्भृगुरध्वर्युरुद्गाताचचतुर्मुखः ।
ब्रह्मत्वमगमत्तस्य उपद्रष्टा हरिः स्वयम् ।।२०
सदस्याःसर्वदेवास्तुराजसयविधिस्नृतः ।
वसवोऽवर्यवस्तद्वविश्वेदेवास्तथैवच ।।२१

शीतल किरणों वाले चन्द्रने भगवान् विष्णुके ध्यानमें तत्पर होकर तप किया था । उस सोम का तपश्चर्या से भगवान् नारायण हरि परम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तुष्ट होगये थे ।१६। परमात्मा जनार्दन भगवान् ने अत्यंत प्रसन्न होकर उससे कहा—जो भी तुझे अभीष्ट हो मुझसे वरदान प्राप्त करले। इस पर सोम ने प्रार्थना की थी इन्द्रलोक में यजन करूँ-यही वरदान सोम ने उससे माँगा था ।१७। इसके अनन्तर भगवान् ने कहा जो ब्रह्मादि चार प्रकार के सुरगण हैं वे सब राजसूय यज्ञ में मेरे मन्दिर में प्रत्यक्ष रूप से ही भोक्ता होवें ।१८। उसमें राक्षसों का पालक शूलधारी देव हमारा रक्षक होगा—यह कहकर भगवान् विष्णु ने राजसूय यज्ञ किया था ।१९। उस यज्ञ में होता अत्रि मुनि, अध्वर्यु भृगु और उद्गाता चतुर्मुख हुए थे। ब्रह्मा के पद को उस यज्ञ में उपद्रष्टा हरि ने स्वयं ग्रहण किया था ।२०। उस यज्ञ के सदस्य सभी देवगण थे। इसी प्रकार से वह राजसूय यज्ञ की विधि बताई गई है। वसुगण अध्वयु थे और विश्वेदेवा भी अध्वर्यु हुए थे ॥२१॥

त्रैलोक्यंदक्षिणातेनऋत्विग्भ्य:प्रतिपादिता ।
सोम ग्राप्याथदुष्प्राप्यमैश्वर्यंसृष्टिसत्कृतम् ॥२२
सप्तलोकैकनाथत्व प्राप्तस्स्वतपसा तदा ॥२३
कदाचिदुद्यादगतामपश्यदनेकपुष्पाभरणोपशोभाम् ।
बृहन्नितंबस्तनभारखेदां पुष्पावभगेऽप्यतिदुर्बलांगीम् ।
सार्या च तां देवगुरोरनंगबाणाभिरामायतचारुनेत्राम् ॥२४
तारां म ताराधिपतिःस्मरार्त:केशेषु जग्राह विविक्तभूमौ ।
सापि स्मरार्ता सहते न रेमे तद्रूपकांत्या हृतमानसैव ॥२५
चिरं विहृत्याथ जगाम तारां विधुर्गृहीत्वा स्वगृहं ततोऽपि ।
न तृप्तिरासीत्स्वगृहेऽपि तस्य तारानुरक्तस्य सुखागमेयु ॥२६
बृहस्पतिस्तद्विरहाग्निदग्धस्तद्ध्याननिष्ठैकमना बभूव ।
शशांक शापं न च दातुमस्मै न मंत्रशस्त्राग्निविषैरनेकैः ॥२७
तस्यापकर्तुं विविधैं रुपायैर्नैवाभिचरै रपि वागथीशः ।
स याचयामास ततस्तु देवं सोमं स्वभार्यार्थमनंगतप्तः ॥२१

उस यज्ञ में इस त्रिलोकी को दक्षिणा प्रतिपादित की थी। सोमने समस्त सृष्टि के द्वारा सत्कृत दुष्प्राप्य ऐश्वर्य को प्राप्त कियाथा ।२२। उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय में अपने तप से सातों लोकों के स्वामी होजानेका वैभव उसने प्राप्त किया था ॥२३॥ किसी एक समय में सोम ने उद्यान में गई हुई, पुष्पोंके आभरणों से परम शोभा वाली, बड़े-बड़े नितम्ब तथा स्तनों के भार से खिन्न हुई पुष्पों के भङ्ग करने में भी अत्यन्त दुर्बल अगों वाली, कामदेव के बाणों से अत्यंत अभिराम, बड़े और सुन्दर नेत्रों वाली देवगुरुकी भार्या को देखा था ।२४।ऐसी परम सुन्दरी उसे जिसका नाम तारा था, देखकर ताराओं के अधिपति सोमकामदेव से अत्यन्त आर्त होकर एकान्त स्थान में उसने उसके केश पकड़ लिए थे । वह भी काम से अभिभूत हो गई थी और उसके रूप की कान्ति से उस तारा का हृदय वशीभूत हो गया था । वह वहाँ पर अपने आपको नियन्त्रित न कर सकी और वहाँ पर उसने रमण किया था ॥२५॥ चिरकाल तक वहाँ पर विहार करके फिर वहाँ से चन्द्र उसे अपने साथ ही में लेकर अपने गर को चला गया था । उस परम सुन्दरी तारा में वह सोम ऐसा अनुरक्त हो गया था कि अपने घर में उसे रखकर भी काम-क्रीड़ा के सुख में उसकी तृप्ति नहीं हुई थी।२६। देवगुरु वृहस्पति उसके विरह से आगन मग्न से होगये थे और रात-दिन उसी के ध्यान में निमग्न मन वाले होरहे थे । वह वृहस्पति मन्त्र—शस्त्र—अग्नि और अनेक प्रकार के विष आदि से इसको शाप भी न दे सके थे ।२७॥ वाणीं के स्वामी देवगुरु अनेक उपायों के द्वारा अभिचारों से उसका कोई भी अपकार नहीं करना चाहते थे किन्तु काम से अत्यन्त उत्पीड़ित पोकर उनने सोमदेव से अपनी भार्या के लौटा देने की याचना की थी ॥२८॥

सयाच्यमानोऽपि ददौ न भार्या बृहस्पतेः कामशेनमोहितः ।
महेश्वरेणाथ चतुर्मुखेन साध्यैर्मरुद्भिःसह लोकपालैः ॥
ददौ यदा तां न कथंचिदिदुस्तथा शिवःक्रोधपरो बभूव ।
यो वामदेवः प्रथितःपृथिव्यामनेकरुद्रार्चितपादपद्मः ॥३०
ततः सशिष्यो गिरिशः पिनाकी बृहस्पतेः स्नेहवंशानुबद्धः ।
धनुर्गृहित्वाजगवंपुरारिर्जगाम भूतेश्वरसिद्धजुष्टः ॥३१
युद्धाय सोमेन विशेषदीप्तृतीयनेत्रानलभीमवक्त्रः ।
सहैव जन्मुश्च गिशेश्वराणा विंशाधिका षष्टिरयोग्रमूर्तिः ॥३२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदा सुयुद्धं जगतां क्षयाय प्रवृद्धमालोक्यपितामहोऽपि ।
ततः प्रविश्याथ कथंचिदेव निवारयमास सुरैःसहैव ॥३३
अकारणंकिंक्षयकृज्जनानां सोम त्वयापीदमकार्यंकार्यम् ।
यस्मात्परस्त्रीहरणाय सोम त्वया कृतं युद्धमतीवभीमम् ॥३४
पापग्रहस्त्वं भविता जनेषु पापोऽस्यलंवह्निमुखाशिनां त्वम् ।
भार्यामिमार्पयवाक्पतेस्त्वं प्रमाणयन्नेव मदीयवाचम् ॥३५
तथेति चोवाय हिमांशुमाली युद्धदापाक्रामदतः प्रशांतः ।
बृहस्पतिस्तामथ गृह्य तारां हृष्टो जगाम स्वगृहच रुद्रः ॥३६

उस सोम से याचना किये जाने पर भी कामदेव से अत्यन्त मोहित सोम ने वृहस्पति की भार्या को वापिस नहीं लौटाया । उसे वापिस देने के लिए महेश्वर चतुर्मुख, साध्यगण, मरुद्गण और समस्त लोकपालों नेसाम से कहा था ॥२९॥ जब चन्द्र ने सबके कहने पर भी किसी भी प्रकार म उस तारा को वापिस नहीं किया तो भगवान् शिव को महान् क्रोध आगया था जो कि इस पृथ्वी में वामदेव राम से प्रसिद्ध हैं और अनेक रुद्रोंके द्वारा समर्चित चरणकमल वाले हैं ।३०। इसके अनन्तर वृहस्पति के स्नेह से अनुबद्ध होते हुए पिनाकधारी गिरीश अपने समस्त शिष्यगण के सहित धनुष ग्रहण कर भूतेश्वर और सिद्धों से सेवित होते हुए भगवान् पुरारि युद्ध के लिये प्रस्तुत होगये थे ।३१। सोम के साथ युद्ध करने केलिए जिस समयमें भगवान् शिव चले थे उस समय में उनका मुख विशेष दीप्ति वाले तीसरे नेत्र की अग्नि से महान् भीषण दिखलाई देरहा था । उनके साथ में अत्यत उग्र स्वरूप वाले अस्सी गनेश्वरी भी चल दिये थे ॥३२॥ वह ऐसा भीषण युद्ध था जिसमें जगत् का पूर्ण क्षय ही था । इसको देखकर पितामह ब्रह्मा ने देवगण के साथ वहां पहुँच कर बड़ी कठिनता से उसका निवारण किया था ॥३३॥ ब्रह्माजी ने सोम से महा–हे सोम ! बिना ही किसी कारण के सब जनों के क्षय करा देने वाला यह कुत्सित कार्य क्यों किया है जिससे पराई स्त्री के हरण करने के लिए यह भयानक युद्ध करने का विचार कर डाला है ? ॥३४॥ तुम जनों में पाप ग्रह हो जाओगे और अब भी वह्नि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुखाशियों के महान् पापी होगये हो। अब तुम इस भार्या को वृहस्पति को वापिस लौटादो और मेरे वचनको प्रमाश स्वरूप समझो।३५। ब्रह्मा·जी के ऐसा कहने पर हिमांशुमाली चन्द्रने उनके कथन को स्वीकार कर लिया था और युद्ध करने से अलग होगया था। तब से सोम प्रशान्त होगया था वृहस्पति भी अपनीं भार्या तारा को लेकर परम प्रसन्न होगये और देवगुरु तथा रुद्र दोनों अपने २ घर वापिस चले गये थे ॥३६॥

ततः संवत्सरस्यातिद्वादशादित्यसन्निभिः।
दिव्यपोताम्बरधरोदिव्याभरणभूषितः ॥३७
तारोदरविनिष्क्रन्तःकुमारस्सूर्यसन्निभः॥
सर्वार्थशास्त्रविद्विद्वान्हस्तिशास्त्रप्रवर्तकः ॥३८
तामयद्राजपुत्रोऽर्थविश्रुतोराज्ञवैद्यकः।
राज्ञःसोमस्यपुत्रत्वाद्राज पुत्रोबुधःस्मृतः ॥३९
अभिषेकं ततःकृत्वा प्रदानमकरोद्विभुः।
ग्रहमध्यं प्रदायाथ ब्रह्मा ब्रह्मर्षिभियुतः ॥४०
पश्यतां सर्वभूतानां तत्रैवांतरधीयत।
इलोदरे च धर्मिष्ठ बुधः पुत्रमजीजनत् ॥४१
अश्वमेधशतंसाग्रमकरोद्यस्स्वतेजसा।
पुरूरवाइतिख्यातःसर्वलोकनमस्कृतः ॥४२

पुलस्त्य मुनिने कहा-फिर एक वर्ष के पश्चात् बारह सूर्यों के समान तेजस्वी, दिव्य पीताम्बरधारी तथा उत्तम आभरणों से सुविभूषित सूर्य के सदृश कुमार तारा के उदर से निकला था जो कि समस्त अर्थशास्त्रों का ज्ञाता, परम विद्वान् और हस्तिशास्त्र का प्रवर्तक था॥ ७-३८। इसका नाम राजपुत्र था जो कि अर्थ से विश्रुत राज वैद्यक होता है। राजा सोम का पुत्र होने के कारण राजपुत्र बुध इस नाम से कहा गया था ॥३९॥ ब्रह्मर्षियों के सहित ब्रह्मा ने इसके अनन्तर अभिषेक करके ऐसे ग्रहों का मध्य भाग प्रदान किया था।४०। सभी मनुष्यों के देखते हुए वह वहीं पर अन्तर्ध्यान होगये थे और फिर इला के उदर में बुध ने परम धर्मिष्ठ पुत्रको जन्म ग्रहण कराया था।४१। जिसने अपने तेज से सौ अश्वमेध यज्ञ किये

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। वह समस्त लोकों के द्वारा नमस्कृत होता हुआ पुरूरवा इस नाम से प्रसिद्ध हुआ था ॥५२॥

हिमवच्छिखरेरम्येसमाराध्यपितामहम् ।
लोकैश्चर्यमगाद्राजन्सप्तद्वीपपतिस्तदा ॥४३
केशिप्रभृतयोदैत्यास्तद्भृत्यत्वसमागताः ।
उर्वशीयस्यपत्नीत्वमगभद्रूपमोहिता ॥४४
अजीजनत्सुतानष्टौनामतस्तान्निबोधमे ।
आयुर्दृढायुर्वंश्यायुबलायुर्धृतिमान्वसुः ॥४५
दिव्यजाधु शतायुश्चसर्वेदिव्यबलौजसः ।
आयुषोनहुषःपुत्रो वृद्धशर्मातथैवच ॥४६
रजिर्दडोविशाउश्चवीराः पच महारथाः ।
रजेःपुत्रशत जज्ञ राजेयाइतिविश्रुतम् ॥४७
रजिराराधयामासनाराय ग्रमकल्मषम् ।
तपसातोषियो वष्णर्वरंप्रादान्महोपतेः ॥४८
देवासुरमनुष्याणामभूत्सविजयीतदा ।
अथ वेदासुप युद्धमभूद्वर्षशतत्रयम् ॥४९

हिमवान् पर्वत राज के सुन्दर शिखर पर भगवान् पितामह की आराधना करके लोंकों के ऐश्वर्य को प्राप्त किया था और उस समय वह सातों द्वीपों का स्वामी होगया था ।४३। उसने आठ पुत्रों को उत्पन्न किया था । उनके नाम मुझसे श्रवण करो । आयु, द्रढ़ायु, दश्यायु, बलायु, घृतिमान्, वसु, दिव्यजायु और शतायु ये उन आठों के नाम थे जो कि सभी ओज एवम् बल वाले थे । आयु के नहुष और वृद्धशर्मा पुत्र हुए थे ॥४४-४५॥ रजि, दण्ड और विशाखा इस प्रकार से पाँच महारथी पुत्र उत्पन्न हुए थे । रजि के एक सौ पुत्रों की समुत्पत्ति हुई थी जो 'राजेय'-इस शुभ नाम से लोक में विश्रुत हुए थे ॥४६-४७॥ राज ने कल्मष से रहित भगवान् नारायण की आराधना की थी। तपश्चर्या से परम प्रसन्न भगवान् विष्णु ने महीपति को वर प्रदान किया था ॥४८॥ वह फिर उस समय में देव-असुर और मनुष्यों में सब पर विजयी हुआ था । इसके अनन्तर तीन सौ वर्ष तक देवासुर युद्ध हुआ था ॥४९॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रह्लादशक्रयोर्भीमं न कश्चिद्विजयी तयोः ।
ततोदेवासुरैःपृष्टःपृथग्देवश्चतुर्मुखः ।।५०
अनयोर्विजयीकिःस्याद्रजिर्यत्रे तिसोऽब्रवीत् ।
जयायप्रार्थितोराजासहायस्त्वंभस्वनः ।।५१
दैत्यैःप्राहयदिस्वामीवोभवामिततस्त्वलम् ।
नासुरैःप्रतिपन्नंतत्प्रतिपन्नसुरैस्तदा ।।५२
स्वामीभवत्वंमस्माकंबलनाशायविविषः ।
ततोविनाशिताःसर्वेयेवध्यावज्रपाणिनः ।। ३
पुत्रत्वमगमतुष्टस्तस्येंद्रःकर्मणा ततः ।
दत्त्वैंद्राय पुरा राज्यं जगाम तपसे रजिः ।।५४
रजिपुत्रस्तदाछिन्नंबलादिंद्रस्वै यदा ।
यज्ञभागश्च राज्यंत्रतपोबलगुणान्वितैः ।।५५
राज्यभ्रष्टस्ततः शक्रो रजिपुत्रनिपीडितः ।
प्राहावाचस्पतिंदीनःपीडितोऽस्मिरजेःसुतैः ।।५६

प्रह्लाद और इन्द्र इन दोनों असुर और सुर का युद्ध बड़ा भीषण हुआ था और इन दोनों में कोई भी विजयी नहीं हुआ था । तब देवासुरों ने अलग-अलग चतुर्मुख ब्रह्मजी से पूछा था ।।५०।। इन दोनों में विजयी कौन होगा ! तब ब्रह्मा ने कहा था इस युद्ध में रजिका विजय होगा उस समय में जय प्राप्त करने के लिये राजा से प्रार्थना की गई थी कि आप हमारे इस युद्ध में सहायता करने वाले बन जावें।५१। दैत्यों के द्वारा ऐसी प्रार्थना करने पर रजि ने कहा यदि मैं आपका स्वामी हो जाऊँ तो फिर पर्याप्त है। असुरों ने जो प्रतिपन्न नहीं किया है वह उस समय सुरों ने प्राप्त किया है।५२। फिर अन्यों ने कहा कि शत्रुओं के बल के नाश करने केलिए आप हमारे स्वामी हो लाइये । इससे जो दध्या वज्र हाथों में लेने वाले हैं वे सब विनशित हो जावेंगे ।।५३।। इसके अनन्तर उसके गर्म से सन्तुष्ट इन्द्र उसके पुत्रता को प्राप्त हो गया था और रजि पहिले समय में इन्द्र को अपना राज्य देकर तप करने के लिये वन में चला गया था ।१४। उस समय में रजि के पुत्रों ने बलपूर्वक इन्द्र से वह सब छिन्न कर दिया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थ जो कि यज्ञ का भाग था और राज्य था क्योंकि वे तप के बल और गुणों से युक्त थे ॥५५॥ इसके पश्चात् राज्य से परिभ्रष्ट होकर इन्द्र रजि के पुत्रों के द्वारा अत्यन्त ही उत्पीड़ित हुआ था। उसने बृहस्पति से जाकर दीनता धारण कर प्रार्थना की थी कि मुझे रजि के पुत्र न सताते हैं ॥५६॥

नयज्ञभागोराराज्यंमेपीडितस्यवृहस्पते ।
राज्यलाभायमेयत्नविधत्स्वधिषणाधिप ।५७
ततोवृहस्पतिः शक्रमकरोद्वलदर्पितम् ।
ग्रहशांतिविधानेनपौष्टिकेनचकर्मणा ॥५८
गत्वाथमोहयामासरजिपुत्रान्वृहस्पतिः ।
जिनधर्मंसमास्थायवेदबाह्यंसधर्मवित् ॥५९
वेदत्रीतीपरिभ्रष्टांश्चकारधिषणाधिपः ।
वेदबाह्यन्परिज्ञायहेतुवागसमन्वितान् ॥६०
जघानशक्रोवज्रेणसर्वान्धर्मबहिष्कृतान् ।
नहुषस्यप्रवक्ष्यामिपुत्रान्सप्तैवधार्मिकान् ॥६१
यतिर्ययातिश्शर्यातिरुत्तःपरएवच ।
अ (आ) यतिर्वियतिश्चैवसप्तैतेवंशवर्द्धनः ॥६२
यतिःकुमारभावेऽपियोगीवैखानसोऽभवत् ।
ययातिरकरोद्राज्यंधर्मैकशरणः सदाः ॥६३

इन्द्र ने वृहस्पति से कहा—हे धिषगणाधिप ! हे वृहस्पति ! मेरे पास अब न तो राज्य ही रहा है और न कोई यज्ञ का भाग ही है मैं अत्यन्त पीडित हूँ। अब आप मेरे राज्य की प्राप्ति के लिए कोई यत्न कीजिएगा ।५७। इसके अनन्तर वृहस्पति ने इन्द्र को बल से दर्पित कर दिया था और वृहस्पति ने उसके लिए ग्रहों की शान्ति का विधान तथा पौष्टिक कर्म किया था ।५८। फिर धर्म के वेत्ता वृहस्पति ने वेदबाह्य जिनके धर्म में समास्थित होकर वहाँ जाकर रजि के पुत्रों को सम्मोहित कर दिया था ।५९। धिषणा अर्थात् बुद्धि के स्वामी देवगुरु ने उन सबको वेदत्रयी से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिभ्रष्ट कर दिया था। इन्द्रने उन सबको जान लिया था कि वे सब वेदों से वहिष्कृत हैं और हेतुवाद से युक्त हो गये है ।।६०। तब इन्द्र ने उन सब धर्म से वहिष्कृतों को वज्र से मार डाला था। अब मैं राजा नहुष के सात परम धार्मिक पुत्रों के विषय में बतलाता हूँ ।।६ ।। नहुष के पुत्र यति-ययाति-शर्याति-उत्तर-पर-अयाति और नियति से सात ही हुए थे जो वंश की वृद्धि करने वाले थे।७१। यति नाम वाला जो पुत्र था वह कुमारावस्था में ही वैखानस योगी होगया था। फिर ययाति ने राज्य का शासन किया था जो कि धर्म की रक्षा करने वाला हुआ था ।।६:।।

शर्मिष्ठातस्यभार्गाभूद्दुहितावृषपर्वणः ।
भार्गवस्यात्मजाचैवदेवयानीचसुव्रता ।।६४
ययातेपचदायादास्तान्प्रक्ष्यामिनामतः ।
देवयानीयदु पुत्रतुर्वसु चाप्यजीजनत् ।। ५
तथाद्रुह्यमणं (नुं) पूरुं शर्मिष्ठाजनयत्सुतान् ।
यदुःपूरुषश्चभरतस्तेवैवंशविवर्द्धनाः ।।६६
पूरोर्वंशंप्रवक्ष्यामियत्रजातोऽसिपार्थिव ।
यदोस्तुयादवाजातायत्रतोबलकेशवौ ।।६७
भारावतारणार्थाय पांडवानां हितायच ।
यदोःपुत्रा वभूवुश्च पंचदेवसुतोपमाः ।।६८
सहस्रजित्तथाज्येष्ठः क्रोष्टानीलोञ्जिकोरघुः ।
सहस्रजितोदायादः शतजिन्नामपार्थिवः ।।६९

उस ययाति की भार्या शर्मिष्ठा नाम वाली हुई थी जो कि वृषपर्व की पुत्री थी। भार्गव की आत्मजा (पुत्री) देवयानी परम सुव्रता थी।६४। राजा ययाति के पाँच दायाद (पुत्र हुए थे। अब उनके सबके नामों का उल्लेख करके बतलाता हूँ। देवयानी ने यदु और तुर्वसु पुत्र को जन्म दिया था ।।६५।। शर्मिष्ठा ने द्रुह्यमणे और पूरु पुत्रों को समुत्पन्न किया था। यदु-पूरु और भरत ये वंश की वृद्धि करने वाले हुए थे ।।६६।। अब पूरु के वंश को बतलाता हूँ जिसमें जो-जो राजा उत्पन्न हुए थे। यदु के यादव हुए थे जिसमें बलराम और भगवान् केशव ने जन्म धारण किया था।६७।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि के भाप को उतारने के लिए और पाण्डवों का हित-सम्पादक करने के लिए यदु के पाँच देव पुत्रों के तुल्य सुत हुएथे ।।६८।। सहस्रजित् सब में ज्येष्ठ था, क्रोष्टा—नील—जिक और रघु ये पाँच पुत्र थे। सहस्रजित् का दायाद शतजित् नाम वाला राजा हुआ था ।।६९।।

शर्तजितश्चदायादास्त्रय:परमधार्मिका: ।
हैहयश्च हयश्चैव नथा तालहयश्च य: ।।७०
हैहयस्यतुदायादोधर्मनेत्र:प्रतिश्रुत: ।
धर्मनेत्रस्यकुंतिस्तुसंहतस्तस्यचात्मज: ।।७१
सह्तस्यतुदायदोमहिष्भान्नामपार्थिव: ।
आसीन्महिष्मत:पुत्रोभद्रसेन प्रतारवान् ।।७२
वाराणस्यामभूद्राकथित: पूर्वमेवहि ।
भद्रसेनस्यतुत्रस्तुदुर्दमोनामधार्मिक: ।।७३
दुर्दमस्यसुतोभीमोधनकोनामवीर्यवान् ।
धनकस्यसुताह्यासश्चत्वारोलोकविश्रुता: ।।७४
कृताग्नि कृतवीर्यश्चकृतधर्मातिथैवच ।
कृतौज श्चतुर्थोऽभूत्कृतवीर्याच्चओऽर्जन: ।।७५
जातोबाहुसहस्रेणसमद्वीपेश्चरोनृप: ।
वर्षायुततपस्तेपेदुश्चरंपृधिवीपति: ।। ६

शतजित् के पुत्र परम धार्मिक तीन हुए थे जिनके नाम हैहय-हय और तालहय थे ।७०। हैहय के दायाद का धर्म नेत्र प्रसिद्ध था। धर्मनेत्र का कुन्ति हुआ और कुन्ति का संहृत पुत्र उत्पन्न हुआ था ।७१। सहृत का पुत्र महिष्मान् नाम वाला राजा हुआ था। महिष्मान् के पुत्र का नाम भद्रसेन था जो बड़ा ही प्रतापवान् था ।।७२।। यह वाराणसी में राजा हुआ था जिसका वर्णन पहिले कर दिया गया था ।।७३।। दुर्दम का पुत्र भीम धनक नामधारी अत्यन्त वीर्य पराक्रम वाला था। धनक के चार पुत्र हुए थे जो कि लोक में प्रसिद्ध हुए थे ।।७४।। उनके नाम कृताग्नि—कृतवीर्य—कृतधर्मा—कृतौज थे। कृतवीर्य से अर्जुन अर्थात् सहस्रार्जुन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुत्पन्न हुआ था ।।७५।। यह अर्जुन सहस्र बाहुओं वाला था और सात द्वीपों का ईश्वर नृपति हुआ था। इस पृथ्वी पति ने दश सहस्र वर्ष पर्यन्त परम दुश्चर तप किया था ।।७६।।

दत्तमाराधयामासकार्त्तवीर्योऽत्रिसंभवम् ।
तस्मैदत्तोवरान्प्रादाच्चतुरः पुरुषोत्तमः ।।७७
पूर्वंबाहुसहस्रंतुसवव्रे राजसत्तमः ।
अधर्मंध्यायमानस्यभीतिश्चापिनिवारणम् ।।७८
युद्धेनपृथिवींजित्वाधर्मेणावाप्यवेवलम् ।
सग्रामेवर्तमानस्यवधश्चैवाधिकाद्भवेत् ।।७९
एष धन्वी धद्रगृह्य उत्सिक्तं पञ्चभिःशरैः ।
लंकेश मोहयित्वातु सबलं रावणं बलात् ।।८०
निर्जित्यबध्वात्वनीयमाहिष्मत्यांबवर्धतम् ।
ततागतोऽहतस्याग्रे अर्जुनंसप्रसादयन् ।।८१
मुमोचराजन्पौत्रंमेसख्यंकृत्वाचपार्थिव ।
तस्यबाहुसहस्रस्यबभूवज्यातलस्वनः ।।८२
युगांताग्नेःप्रवृत्तस्ययथाच्यातलनिःस्वनः ।
अहोबलंविधेर्वीर्यंभार्गवःसयदाच्छिनत् ।।८३
मृधे सहस्रं बाहूनांहेमतालवनयथा ।
यंदसिष्ठस्तुसक्रुद्धोह्यर्जुनंसप्तवान्विभुः । ८४
यस्माद्वनं प्रदग्धं ते विश्रुत मम हैहय ।
तस्मात्तेदुष्करंकर्मकृतमन्योहनिष्यति ।।८५

इस कार्त्तवीर्य ने अत्रिकुमार दत्तकी आराधनाकीथी। उस पुरुषों मे परम श्रेष्ठ ने उसको चार वरदान दिये थे।७७। उस राजाओं मे श्रेष्ठ ने पहला वरदान तो एक सहस्र बाहुओं का होना माँगा था। अधर्म का ध्यान करने वाले से जो भय हो उसका निवारण होजाना यह दूसरा वर प्राप्त किया था।७८। युद्ध के द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतकर धर्मके द्वारा बलकी प्राप्ति करनातथा संग्राम में वर्तमान चाहे कोई कितना भी अधिक हो उसका बध कर देना चार वरदान प्राप्त किये थे ।७९। इस कार्त्तवीर्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने धनुष ग्रहण करके पाँच शरों से ही काम लिया था और अत्यन्त बलवान् रावण को सेना के सहित बलपुर्वक मोहित कर दिया था।८०। उस लंकेश्वर को जीतकर बाँधकर ले आया और माहिष्मती में बाँध दिया था। फिर मैं वहाँ गया था और उसके आगे मैंने सहस्राजुर्न को प्रसन्न किया था ॥८१। हे पार्थिव! पुलस्त्य ने सहस्रार्जुन से कहा था कि मेरे साथ संख्य भावको करके मेरे इस पौत्र को छोड़ दो तब उसने रावण को खोल कर छोड़ दिया था। उसकी जो एक सहस्र बाहुऐं थीं उनमें धारण कीहुई धनुष की डोरी का शब्द बड़ा भयानक होता था।८२। युगान्त के समयमें प्रवृत्ति अग्नि केसमान उसकी ज्याका तल ध्वनि होती थी उसके इसप्रकार के बल का छेदन भार्गव ने किया था।८३। युद्ध में उन सहस्रों बाहुओं को हेमताल वन की भाँति परशुरामने छिन्न-भिन्नकर काट दिया था। महर्षि वशिष्ठ ने क्रोधित होकर सहस्रार्जुन को शाप दे दिया था ॥८४। महर्षि वशिष्ठ ने यह शाप दिया था कि हे हैहय ! तूने मेरा परम प्रसिद्ध वन दग्ध कर दिया है इस दुष्कृत से तुझे ऐसा परिणाम भोगना होगा कि कोई अन्य बली तेरा हनन कर देगा ॥८५॥

छित्वाबाहुसहस्रं तेप्रमथ्यतरसाबली।
तपस्वो ब्राह्मणस्त्वांवै वधिष्यतिसभार्गवः ॥८६
तस्य रामोऽथ हतासीस्मुनिशापेनधीमतः।
तस्य पुत्रशत त्वासन्पंच तत्र महारथाः ॥८७
कृत स्त्राबलिनःशूराधर्मात्मनोसहबल।
शूरसेनश्चशूरश्च धृष्टो वै कृष्ण एवच ॥८८
जयद्ध्वज.सर्वकर्ताअवन्तिश्चरसापतिः।
जयध्वजस्यपुत्रस्तुतालजघोमहाबलः ।८९
तस्यपुत्राश्शतान्येव तालजङ्घा इतिस्मृताः।
तेषां पचकुलान्यासन्हैहयानांमहात्मनाम् ॥९०
वीतिहोत्राश्चसजाताभोजाश्चावंतयस्तथा।
तुंडकेराश्चविक्रांतास्तालजंघा प्रकीर्तिताः ॥९१

तेरी इन सहस्रों बाहुओं का छेदन करके बलपूर्वक तेरा प्रथमन कर बलवान् परम तेजस्वी ब्राह्मण परशुराम तेरा वध कर देगा।८६। मुनि के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाप के कारण परशुराम उसके वध करने वाले हुए थे। उसके एक सौ पुत्र हुए थे उनमें पाँच महारथ थे ॥८७॥ ये पाँचों अस्त्रधारी, महा बलवान् शूरवीर और धर्मात्मा थे। उनके नाम शू सेन--शूर--घृष्ट-कृष्ण और जयध्वज थे ॥ ८८ ॥ जयध्वज के पुत्र का नाम तालजंघ था जो अत्यन्त बलवान् हुआ था ॥८९॥ उसके भी एक सौ पुत्र हुए थे जो तालजंघ-इस नाम से प्रसिद्ध हुए थे। उस महान् आत्मा वाले हैहयों के पाँच कुल हुए थे ॥९०॥ उन पांचों कुलों के नाम वीतिहोत्र--भोज—अवन्तिय··तुण्डकेर और विक्रान्त थे। ये सब तालजंघ के नाम से ही कीर्तित हुए थे ॥९१॥

वीतिहोत्रसुतश्चापिअनंतोनामवीर्यवान् ।
दुर्जयस्तस्यपुत्रस्सुबभूवामित्रकषणः ॥९२
सद्भावेनमहाराजःप्रजाधर्मेणपालयन् ।
कार्तवीर्थार्जुनोनामराजाबाहुसहस्त्रधृत् ॥९३
थेनसागरपर्यंताधनुषानिर्जितामही ।
यस्यतस्यकीर्तयेन्नामकल्यमुत्थायमानवः । ९४
न वस्य वित्तनाशःस्मान्नष्टंचीलभते पुनः ।
कार्तवार्यस्य यो जन्म कथयेदिह धींमतः ॥
यधा यष्टा यथा दाता स्वर्गलोके महीयते ॥९५

वीतिहोत्र के सुत का नाम अनन्त था जो बहुत वीर्य पराक्रम वाला हुआ था। उसके पुत्र का नाम दुर्जन हुआ था जो कि शत्रुओं का कर्षण करने वाला था ॥९२॥ महान् राजा कार्त्तवीर्यार्जुन एक सहस्र बाहुओं के धारण करने वाला था और अच्छे भाव से प्रजा धर्म को परिपतित करते हुए उसने शासन किया था ॥९३॥ जिसने सागर पर्यन्त सम्पूर्ण पृथ्वी को धनुष के द्वारा जीत लिया था। जो मनुष्य प्रातःकाल में उठकर उसके नाम का कीर्त्तन करता है उसके वितका कभी नाश नहीं होता है और जो नष्ट हो गया हो वह प्राप्त हो जाता है। जो कोई कार्त्तवीर्य के जन्म का गुणगान करता हैं उसका महाम् फल होता है ॥९४-९५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ क्रोष्टुवंश विस्तार वर्णन ॥

प्रजागरेततश्चेन्द्रोजयंतीमिदमब्रवीत् ।
संधिकामोऽभ्यधाद्वाक्यं स्वांकन्यांपाकशासनः ॥
एषकाव्योह्यनिदायव्रतंचरतिदारुणम् ।
तेनाहंव्याकुल- पुत्रिकृतोमतिमताद्दढम् ॥२
तैस्तैर्मनोऽनुकूलैश्चउपचारैरतंद्रिया ।
आराघयतथापुत्रियथातुष्येत स द्विजः ॥३
गच्छत्वंतस्यदत्तासिप्रयत्वंकुरुमत्कृते ।
एवमुक्ताजयतीसावच संगृह्यवैपितुः ॥४
अगच्छद्यत्रघोरंसतपोह्यारभ्यतिष्ठति ।
तंदृष्टवाचपिवन्तं सा कणधूममधोमुखम् ॥५
छक्षेणणत्यमानंचकुण्डधारेणपावनम् ।
दृष्ट्वातंयतमानंतुदेवीकाव्यमवस्थितम् ॥६
शत्रपघातेश्राम्यन्तंदुर्बलस्थितिमास्थितम् ।
पित्रायथोक्तंवाक्यंसाकाव्येकृतवतीतदा ॥७

इसके अनन्तर प्रजागरण होने पर इन्द्र ने जयंती से यह कहा था । सन्धि की कामना रखने वाले पाक शासन (इन्द्र ने अपनी कन्या से वाक्य कहा था ॥१॥ इन्द्र ने कहा—यह काव्य अनिद्रा के लिये परम दारुण व्रत का आचरण करते हैं । हे पुत्रि ! मतिमान् उसने मुझे सुदृढ़ रूप से व्याकुल कर दिया है ॥२॥ हे पुत्रि ! तू अनन्द्रित अर्थात् अच्छी तरह सावधान होती हुई उन-उन मनके अनुकूल उपचारों के द्वारा उस प्रकार से आराधना कर जिस तरह वह द्विज सन्तुष्ट होजावे ॥३॥ तू चली जा, अब उनके लिये तू दे दी गई है और मेरे लिये तू प्रयत्न कर । इस प्रकार से कही गयी उस जयन्ती ने अपने पिता के वचनों को भली-भाँति ध्यानमें धारण कर लिया था ॥४॥ फिर वह जयन्ती वहाँ चली गई थी जहाँ वह तप का आरम्भ करके स्थिति रहता था । उसने वहाँ पर उनको नीचे की ओर मुख वाला कणधूम का पान करते हुए देखा था ॥५॥ यक्ष के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा पाल्यमान कुण्डधार से पावन यत्नशील अर्वा थति उस काव्य को देव ने देखा था ।६। शत्रुके उपघातमें श्रम करते हुए और अत्यन्त दुर्बल दशा में अवस्थित उनको वहाँ देखकर उस समय में पिताके द्वारा जिस रीति-से वाक्य कहे गये थे उस देवी ने काव्य के लिए वैसा ही किया था ।..।।

गीर्भिश्चैवानुकूलाभिःस्तुवंतीवल्गुभाषिणी ।
गात्रसंवाहन कालेसेवमानात्वचःसुखैः ।।८
व्रतचर्यानुकूलाभिरुपास्यबहुलाः समा ।
पूर्णे धमव्रते तस्मिन्घोरे वर्यसहस्रके ।।६
वरेण च्छदयामास शिवः प्रतोऽभवत्तदा ।
एतद्व्रत त्वयं चीर्णं नात्येन केनचित ।।१
तस्माद्व तपसाबुद्ध्याश्रुतेनबलेनच ।
तेजसाचसुरान्सर्वांस्त्वमेकोऽभिभविष्यसि ।। १
यच्चकिंचिन्मयिब्रह्मन्विद्यतेभृगुनन्दन ।
प्रतिदास्यामितत्सर्वंत्वयावाच्यनकस्यचित् । २
किंभाषितेनबहुनाअवध्यस्त्वंभविष्यसि ।
तान्दत्वातुवरांस्तस्मभार्गवायपुनः पुनः ।। ३
प्रजेशत्व धनेशत्वमवध्यत्वंचवैददौ
एतांल्लब्ध्वावरान्काव्य. संप्रहृष्टतनूरुहः ।।१४

श्रुति प्रिय मधुर भाषणकरने वाली उसने अनुकूल वचनों केद्वारा स्तवन करते हुए उस समय में त्वचा को सुख पहुँचाने वाले गात्र संवाहनों से शरीर के दबाने से) सेवा की थी ।।८।। व्रतचर्या के अनुकूलताओं से बहुत-से वर्षों तक उपासना करके जब वह एक सहस्र वर्ष में समाप्त होने वाला धूमव्रत जो कि अत्यन्त घोर व्रत था सम्पूर्ण हो गया तो भगवान् शिव परम प्रसन्न होगये और वरदान देकर संतुष्ट कर दिया था ।।६।। भगवान् महेश्वर ने कहा—यह महान् कठिन व्रत है । इसको तूने ही पूर्ण किया है और आज तक अन्य किसी ने भी इसे नहीं कियाथा ।।१०।।इसी लिएअब तू तप—बुद्धि--श्रुत--बल और तेजसे समस्त सुरों को अकेला ही अभिभूत कर देगा ।।११।। हे ब्रह्मन् ! हे भृगुनन्दन ! और जोभी कुछमेरे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

अन्दर है वह सभी कुछ तुझे दे दूँगा अब तुमको किसी से भी कुछ कहना नहीं चाहिए ॥१२॥ बहुत कुछ कहने से क्या लाभ है इतना ही पर्याप्त है कि तू वध करने के योग्य नहीं है। इस प्रकार से भार्गव के लिए इन वरों का देकर फिर भगवान् शिव ने उसे प्रजा का ईश होना—धन का स्वामी बनना और अवध्या होने का भी वरदान प्रदान किया था। इस समस्त अत्युत्तम वरदानों को प्राप्त करके काव्य (भार्गव) प्रसन्नता पुलकित हो गये थे। ॥१४-१३॥

एवमाभाष्यदेवेशमोश्वरं नीललोहितम् ।
प्रजा न्वतस्तस्तस्मैद्राञ्जलि प्रणतोऽभवत् ॥१५
ततःसोऽन्तर्हिते देवेजयंतोमिदमब्रवीत् ।
कस्यत्व सुभगेकावादुःखितेमयिदुःखिता ॥१६
महतातपसायुक्ता किमर्थमांजिगीषसि ।
अनयासंस्थिता भक्त्याप्रश्रयेणदमेनच ॥१७
स्नेहेनचैवसुश्रोणि प्रीतोऽस्मिवरवर्णिनी ।
किमिच्छसिवरारोहेकस्तेकामः समुद्यतः ॥१८
तंतेसंपादयाम्यद्ययद्यपिस्यात्सुदुष्करम् ।
एवमुक्ताब्रवीदेनं तपसाज्ञातुमर्हसि ॥ ९
चिकीर्षितंहिमेब्रह्म स्त्वंवेवदयथातथम् ।
एवमुक्तोऽब्रवीदेनां दृष्ट्वादिव्येन चक्षुषा ॥२०
मयासहत्वंसुश्रोणिशतवर्षाणि भामिनि ।
सर्वैभूतैरदृश्यांतः संप्रयोगमिहेच्छसि ॥२१

इस प्रकार से नील लोहित देवोंके अधीश्वर भगवान् शिव से आभाषण करके प्रजा से समन्वित भार्गव हाथजोड़कर परम प्रणत होगये थे१५ इसके अनन्तर भगवान् शिव के अन्तर्ध्यान हो जाने पर भार्गव ने जयन्ती से कहा—हे सुभगे ! तू कौन है और किसकी पुत्री है ? मेरे दुःखित होने पर तू क्यों दुःखित होरहोहै? । ६। इस प्रकार की इस महान् तपश्चर्या से युक्त होकर किस प्रयोजन के लिये मेरी सेवा कर रही है ? तेरी यह ऐसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति श्रद्धा प्रश्रय और दम किस हेतु है ? ॥ १७ ॥ हे सुश्रोणि ! हे वर-वर्णिनि ! स्नेह के वशीभूत होकर मैं तुझ पर परम प्रसन्न होगया हूं । हे वराहरोहे ! तू क्या चाहती है और तेरी क्या कामना है ? ॥१८॥ जो भी तेरा कोई कार्य होगा चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो, उसे आज पूर्ण कर दूंगा । इस तरह जब उस जयन्ती से भार्गव ने कहा तो वह इनसे बोली—आप तो मेरा जो भी कार्य है उसे तपोवल से जानने के योग्य हैं ॥१९॥ जयन्त ने कहा—हे ब्रह्मन् ! जो भी मेरा कुछ चिकीर्षित (करने का अभिलाष) है उसे आप ही ठीक.ठीक वतला दीजिएगा । इस प्रकार से कहे गये भार्गव ने अपनी दिव्य चक्षु से देखकर उससे कहा ।२०। हे सुन्दर श्रोणीं भागों वाली ! हे भामिनि ! तुम मेरे साभ यहाँ पर समस्त प्राणियों से अदृश्य होती हुई सौ वर्ष तक सम्प्रयोग चाहती हो।२१।

देवि इंदोवरश्यामे वराहेंबामलोचने ।
एववृणोषिकामांस्त्वददेवैंवल्गुभाषिते ॥२२
एवंभवतुगच्छाव गृहंमेमत्तकाशिनि ।
ततः सगृहमागम्यजयंत्यायसह चोशना ॥२३
तयासहावसद्देव्याशतवर्षाणिभार्गवः ।
अदृश्यःसर्वभूतानां माययासंशितव्रतः ॥२४
कृतार्थमागतज्ञात्वा शुक्रंसर्वेदितेः सताः ॥
अभिजग्मुर्गृहतस्य मुदितास्ते दिदृक्षवः ॥२५
गतायदानपश्यति माययासंवृतंगुरुम् ।
लक्षषतस्यचाबुद्ध्वानाद्यागच्छतिनोगुरुः ॥२६
एवंतेस्वानिधिष्ण्यानिगताः सर्वेयथागताः ।
ततोदेवगणास्सर्वे गत्वां गरसमब्रुवन् ॥२७
दानवालयेतुभगवान्यत्वातत्रचतांचमूम् ।
मोहयित्वात्मवशगांक्षिप्रमेवतथाकुरु ॥२८

हे इन्दीवर श्यामे ! हे देवि ! हे वराहे ! हे सुन्दर नेत्रों वाली ! हे मृदु एवं मधुर भाषण करने वाली ! तुम इस प्रकार के वर मुझसे चाहती हो तो मैं उन्हें देता हूं ॥२२॥ अच्छा, ऐसा ही होगा हे मत्तकाशिनि !

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलो, मेरे घर में चलो। इसके अनन्तर वह भार्गव जयंती के साथ घर में आगये थे।२३।फिर भार्गव ने उस जयन्ती के साथ एक सौ वर्ष तक निवास किया। माया से संशित व्रत वाला होकर समस्त प्राणियों से अदृश्य होकर ही वास किया था।२४।।सब दिति केपुत्र दैत्यों ने अपने तप के कार्यमें सफल होकर आये हुए शुक्र को जानकर परमप्रसन्न हुए और उन्हें देखनेकी इच्छा वाले वे सब शुक्र के घरमें गये थे।२५।शुक्र के घर पर गये हुए उन दैत्यों ने जब शुक्र को नहीं देखा था जो कि माया से संवृत थे और उनके कोई लक्षण भी वे न जान पायेतो उन्होंने विचार किया कि अभी हमारे गुरुदेव शुक्र वापिस नहीं आये हैं।२६।इस तरह निराश होकर वे सब जैसे आयेथे वैसे ही अपने-अपने घरों को वापिस लौटकर चले गये थे। इसके पश्चात् समस्त देवगण आङ्गिरस के समीप में पहुँचकर उनसे कहने लगे ।।२७।।हे भगवन् आप दानवों के आलय में पहुँचकर वहाँ उनकी उस सेना को मोहित करके शीघ्रातिशीघ्र अपने वश में कर लेवें ।।२८।।

धिषणस्तान्सुरानाहएवमेवव्रजाम्यहम् ।
तेनगत्वादादानवेंद्रः प्रह्लादोवैवशीकृतः ।।२९
शुक्रोभूत्वास्थितस्तत्रपौरोहित्यंचकारसः ।
स्थितोवर्षशतंसाग्रमुशनातावदागतः ।।३०
दनुपुत्रैस्ततोदृष्टः सभायांतुवृहस्पतिः ।
उशना एक एवात्र द्वितीयःकिमिहागतः ।।३१
सुमहत्कौतुकंचात्रभविताविग्रहोऽद्भुतम् ।
किंवदिष्यतिलोकोऽयंद्वारियोऽयंव्यवस्थितः ।।३२
सभायामास्थितोवोऽयंगुरुःकिनोवदिष्यति ।
एवंप्रजल्पतांतेषांदननांकविरागतः ।।३३
स्वरूपधारिणंतत्रदृष्ट्वासीनं वृहस्पतिम् ।
उवाचवचनंक्रुद्धः किमर्थं त्वमिहागतः ।।३४
शिष्यान्मोहयसेमेत्वंयुक्तं सुरगुरोस्तव ।
मूढास्तेत्वांनजानन्तित्वन्मायामोहिताध्रुवम् ।।३५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्नयुक्त तवब्रह्मन्प्र शिष्यप्रधर्षणं र ।
व्रजत्वदेवलोकस्वं तिष्ठश्रममवाप्स्यसि ।।३६

देवताओं के द्वारा ऐसा कहने पर देवगुरु बृहस्पति ने उन देवगणों से कहा—हाँ ऐसा ही करूंगा और अबमैं वहाँ जाता हूँ । उमने वहाँ जाकर दानवों का स्वामी जो प्रहलाद था उसको अपना वशीकृत बना लिया था ।।२६।। सुरगुरु स्वय शुक्राचार्य के स्वरूप वाले बन ये और वहाँ स्थित होकर दैत्येन्द्र का जो पौरोहित्य कर्म था उसे करने लगे थे ।वह इसप्रकार सौ वष से भी अधिक ठहर गये थे कि उसी बीच में भार्गव भीआ गये थे ।३३।तब तो दनु के पुत्रों ने सभा में वृहस्पति को देखा था जो कि पुत्रके हरि स्वरूप में वहाँ पर थे । दैत्यों ने इन दोनों कोदेखकर मनमे सोचाकि शुक्र तो एक ही है यह दूसरे कैसे कहाँ से आगये हैं ? ।३१। यह एक बड़ा कौतुक है और इनमें सुदृढ़ विग्रह हो जायगा जो यह द्वार पर व्यवस्थित है इस विषयमें लोक क्या कहेगा।३२।सभामें समास्थित जो हमारे गुरुदेव हैं वह क्या कनेगे-इस प्रकारसे उन दनुओंके कहते हुए ही वहाँ पर भार्गव आगये थे।३३।अपने स्वरूप को धारण करने वाले वृहस्पति को वहाँ बैठे हुए देखकर भार्गवबहुत क्रुद्ध होते हुए यह वचन बोले-तुम यहाँ किसलिये आ गये हो।३४।हे देवगुरु ! तुम मेरे शिष्य दैत्यों को मोहित कर रहे हो, क्या यह तुम्हारा उचित कर्त्तव्य है? ये मूढ़हैं और तुम्हारी मायामे मोहित होगये है अतएव ये तुमको नहीं पहचान पा रहेहैं।।३५।। हे ब्रह्मन् ? पराये शिष्यों का इस तरह प्रधर्षण (धाका देना)करना तुम्हारा युक्त कार्य नहीं है । आप अब देवलोक में चले जाओ और वहाँ पर रहो अपने श्रम को प्राप्त करोगे ।।३६।।

शिष्योहिमेकचः पूर्वंहतोदानवपुंगवैः ।
विद्यार्थीतनयोब्रह्मंस्तवायोग्यागतिस्त्विह ।।३७
श्रुत्वातुतस्यतद्वाक्यंस्मितंकृत्व.वदद्गुरुः ।
संतिचोराः पृथिव्यांयेहरद्रव्यापहारि .: ।।३८
एवंविधानदृष्टाश्चरूपदेहापहारिणः ।
वृत्रघातेन चैंद्रस्य ब्रह्महत्य पुराभवन् ।।३९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

लोकायतिकशास्त्रेणभवतासातिरस्कृता ।
जानामित्वामांगिरसंदेवाचार्यबृहस्पतिम् ॥५१
मद्रूपधारिणंप्राप्तंसर्वैंपश्यतदानवाः ।
एषवोमोहनायालंप्राप्तोविष्णुविचेष्टितैः ॥४१
तदेनंश्रृङ्खलैर्बद्ध्वाक्षितेतलवणार्णवे ।
पुनरेव ब्रवोच्छुक्रः परोधायंदिवौकसाम् ॥४२

पहिले दानव श्रेष्ठों के द्वारा मेरा कच शिष्य मार दिया गया था। विद्यार्थी तनय है। यहाँ तुम्हारी मति अयोग्य है। ३७। भार्गव के द्वारा कहे हुए इस वाक्य को सुनकर मुस्कराते हुए देवगुरु ने कहा—पृथ्वी में जो पराये धन का अपहरण किया करते हैं ऐसे चोर हैं ॥३८॥ इस प्रकार से रूप और देह के अपहरण करने वाले विधान में देखे गये हैं। वृत्रासुर के घात करनेसे अर्थात् मार देने से पहिले इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी थी ३९। लोकायतिक शास्त्र के द्वारा आपने उसका तिरस्कार किया था। आप अङ्गिरा के बृहस्पति देवाचार्य हैं—मैं आपको भली भाँति जानता हूँ।४०। आप यहाँ मेरा रूप धारणकरके आये हैं। सब दानवो !तुम इनको अच्छी तरह देखलो। यह विष्णु की विशेष चेष्टाओं के कारण यहाँ आप सबको मोहन करने के लिए प्राप्त हुए हैं।४१। सो अब आप लोग इनको शृंखलाओं से बाँधकर खारी सागर में डाल दो। फिर शुक्राचार्य ने कहा—यह देवों के पुरोहित हैं।४२।

मोहितानूनमेतेनक्षयंयास्यथदानवाः ।
भाअहंदानवेंद्रेहवंचितोऽस्मिदुरात्मना ॥४३
किमर्थंभवतात्यक्तःकृतश्चान्यः पुरोहितः ।
देवाचार्योऽगिरः पुत्रएषएवबृहस्पतिः ॥४४
वंचितोऽसिनसन्देहोदितार्थंतुदिवौकसाम् ।
त्यजस्वैनंमहाभागशत्रुपक्षजयावहम् ॥४५
अनुशिष्यभयाद्यातः पूर्वमेवमहंप्रभो ।
जलमध्ये स्थितः पीतोमहादेवेन शम्भुना ॥४६
सदरस्थस्य मे जातं साग्रं वर्षशतंकिल ।
उदराच्छुक्ररूपेणशिश्नेनाहंविसर्जितः ॥४७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरद:प्राहमांदेवश्शुक्रेष्टंत्वंवरवृणु ।
मया वृतो वरं राजन्देवदेव:पिनाकधृत् ।।४८
मन सांचितिमाह्यर्थामानसेयेस्थितावरा: ।
भवंतुमयितेसर्वे प्रसादात्तव शङ्कर ।।४६

शुक्र ने कहा-इसके द्वारा आम सब लोग निश्चित रूप से मोह को प्राप्त हो गये हैं और अब दानव क्षय को प्राप्त हो जायेंगे । हे दानवेन्द्र! मैं इस दुरात्माके द्वारा वञ्चित हो गया हूँ।४३।आपने मुझे क्यों त्यागदिया है और अन्यको अपना पुरोहित बना लिया है । यही अङ्गिरा कापुत्र देवों का आचार्य बृहस्पति है ।४४।इसके द्वारा आप ठगे गये हैं–इसमें तनिकभी सन्देह नहीं है । यह आपकी प्रतारणा इसके देवगणके हित–सम्पादन करने के लिए ही है । हे महाभाग ! इसका शीघ्र ही त्याग कर दो, इसका यहाँ रहना शत्रु के पक्ष की विजय कराने वाला ही होगा ।४५। हेप्रभो ! पहिले ही अनुशिष्य के भय से यहांसे चला गया था और जल के मध्य में स्थित रहा तथा शम्भु महादेवके द्वारा पीत हो गया था ।४६।उदरमें स्थित मुझे सौ वर्ष बीत गये थे । फिर उदर से शिश्न के द्वारा शुक्र रूप से मैं विसर्जित हुआ हूँ ।४७। इसके पश्चात् वर देने वाले देव ने मुझसे कहाथा हे शुक्र ! तू अपना अभीष्ट वरदान मुझसे मांग ले । तब देवों के भी देव पिनाक के धारण करने वाले शिव मेने वरदान प्राप्त किया है ।४८। मैंने शिव से यही वरदान प्राप्त किया था कि हे शङ्कर ! मेरे मनके द्वारा जो भी अर्थ सोचे जावें और जो मेरे मन में स्थित मनोरथ हो वे सभी मेरे पूर्ण हों ऐसी आपकी कृपा होनी चाहिए ।।४६।।

एवमस्त्विति देवेन प्रेषितोऽस्मि तवांतिकम् ।
तावदत्राभवच्चार्यपुरोधास्ते बृहस्पति: ।।५०
दृष्ट:सत्यदानवेंद्रमयोक्तं त्वनिशामय ।
बृहस्पतिस्तदावाक्यंप्रहलादंप्रत्यभाषत ।। १
नाहमेतंप्रजानामि देव वा दानवंरनम् ।
मद्रूपधारिणंराजन्वंचनार्थं तवागतम् ।।५२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततस्तेदानवा:सर्वेसासाधुघ्विनतिवादिन: ।
पुरोधा:पौर्विकोनोऽस्तुयोन्नाकोवाभवत्विति: ।।५३
नानेनकायमस्माकंयातुह्येषयथागत: ।
सक्रोधमशपत्काव्योनवेंद्रान्समागतान् ।।५४
त्यक्तोयथाहंयुष्माभिस्तथासर्वाश्चिरादिव ।
गतश्रीकान्गतप्राणान्पश्येयंदु:खजीविकान् ।।५५
सुघोरामापदप्राप्तानचिरादेवसर्वंश: ।
एवमुक्त्वागत:काव्योयहच्छातस्तपोवनम् ।।५६

ऐसा ही होवे-यह देव ने कहकर मुझे अब तुम्हारे समीप में भेजा है। इसी बीच में तव तक यह वृहस्पति यहां आकर तुम्हार पुराहित बन गया हैं ।५०। मैंने इसे पुरोहित के रूप में अब देखा है । हे दानवेन्द्र! यह प्रह्लाद को उत्तर दिया था ।५१। मैं इसको नहीं जानता हूँ कि यह देवहै या दानवहै अथवा कोई नर है। यह मेरा-सा ही रूप धारण करके हेराजन! तुम्हें ठगने के लिए यहां आगया है ।५२। इसके पश्चात् वे समस्त दानव "साधू-साधू' अर्थात् बिल्कुल ठीक है ऐमा कहते हुए यों बोले कि हमारा पहिला ही पुरोहित हैं चाहे वह कोईभी होवे।५३। इस आने वालेसे हमको कुछ भी कार्य नहीं है । यह जैसे हीं आया है वैसे ही यहां से अब वापिस चला जावे । उस भार्गव ने बड़े भारी क्रोधके साथ उन समायत दानवेन्द्रों को शापदे दिया था ।५४। भार्गव ने कहा-जिस तरह तुम सब लोगोंने मुझे त्याग दिया है वैसेही मैंतुम सबको चिरकाल पर्यन्त श्रीसे हीन, प्राण रहित और दुःख सेजीवन व्यतीताकरने वाले देखूंगा।।५५।तुम सब थोड़ेही समय में महान् घोर आपत्ति में ग्रस्त हुए दुःखित होओगे—ऐसा कहकर काव्य अर्थात् शुक्राचार्य अपनी ही इच्छा से तपोवन में चले गये थे ।५६।

तस्मिन्गतेतत: शुक्रे स्थितस्तत्रबृहस्पति: ।
पालयन्दानवांस्तत्रकिंचित्कालमतिष्ठत: ।।५७
ततोबहुतिथेकाले अतिक्रांतेनरेश्वर ।
संभयदानवा:सर्वे पर्यपृच्छंस्तदागुरुम् ।।५८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसारेऽस्मिन्नसारेतुकिंचिज्ज्ञानं प्रयच्छ नः ।
येनमोक्षव्रजामश्चप्रसादात्तवसुव्रत ॥५६
ततःसुरगुरुःप्राहकाव्यरूपीतदागुरुः ।
ममाप्येषामतिःपूर्वं या युष्माभिरुदाहृता ॥६०
क्षणकुर्वन्तुसहिताश्शुचीभूयसमाहिताः ।
ज्ञानवक्ष्यामिवोदैत्याअहंवैमोक्षदायियत् ॥६१
एषाश्रुतिर्वैदिकीयाऋग्यजुःसामसंज्ञिता ।
वैश्वानरप्रसादात्तु दुःखदाप्राणिनामिह ॥६२
यज्ञश्राद्धं कृतंक्षुद्रैर्हिकस्त्रार्थतत्परैः ।
येत्वमीवैष्णवाधर्माये च रुद्रकृतास्तथा ॥६३

शुक्राचार्य के तपोवन में चले जाने पर वहाँ पर सद्गुरु वृहस्पति स्थित होगये थे । वहाँ पर दानवों का कुछ समय तक परिपालन करतेहुए थोड़े कालतक ठहरे थे ।५६। हे नरेश्वर ! इसके अनन्तर बहुत-सा समय व्यतीत हो जानेपर समस्त दानवों ने एकत्रित होकर उस समय में गुरु से पूछा था ।५८।यह सम्पूर्ण संसार तो सार से हीन है इसमें हमलोग उत्पन्न होकर आगये हैं तो अब कृपाकर हमको कुछज्ञान दीजिए । हे सुव्रत!ऐसा ज्ञान प्रदान कीजिए जिसे पाकर हम लोग मोक्ष की प्राप्ति कर लेवें । आपके प्रसाद से हमारा आवागमन का भाव-बन्धन छूट जावे ।५६। ऐसा पूछने पर भार्गव के स्वरूप को धारण करने वाले सुरगुरु ने कहा--मेरी भी यह बुद्धि पहिलेही थी अर्थात् मेरे हृदय मेंभी यही विचार था जिसको तुमने अब मेरे सामने प्रकट किया है ॥६०॥ एक क्षण भर के लिए आप लोग पवित्र होकर सावधान हो जाओ तब मैं हे दैत्यो ! सबको मोक्ष देने वाला ज्ञान बतलाऊँगा ॥६१॥ ऋक्-यजु और साम संज्ञा वाली जो यह वैदिकी श्रुति है वह वैश्वानर के प्रसाद से इस संसार में प्राणियों को दुःख प्रदान करने वाली ही है ॥६२॥ लौकिक तुच्छ स्वाथ में परायण लोगोंके द्वारा यज्ञऔर श्राद्ध आदि किये जाते हैं । जो ये विष्णुसे सम्बन्ध रखने वाले धर्म हैं और रुद्र कृत धर्म हैं सब इसी प्रकार के हैं ॥६३॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुधर्मादारसहितैर्हिंसाप्राया: कृताहितं: ।
अर्द्धनारीश्वरोरुद्र:कथमोक्षंगमिष्यति ।।६४
वृतोभूतगणंभूं रिभूषितश्चास्थिभिस्तथा ।
नस्वर्गोनैवमोक्षोऽत्रलोका:क्लिश्यंतेवंतथा ।। ६५
हिंसायामास्थितोविष्णु:कथंमोक्षंगमिष्यति ।
रजोगुणात्मकाब्रह्मास्वांसृष्टिमुपजीवति ।।६६
देवर्षवोऽथयेचान्येवैदिकंपक्षमाश्रिता: ।
हिंसाप्राया: सदाक्रूरामांसादा: पापकारिण: ।।६७
सुरास्तुमद्यपानेनमांसादाब्राह्मणस्त्वमी
धर्मेणानेनक:स्वर्गंकथमोक्ष गमिष्यन्ति ।।६८
यच्चयज्ञादिकंकर्म स्मार्तंश्राद्धादिकंतथा ।
तत्रनैवापवर्गोऽस्तियत्रैषाश्रुति: ।।६९
यज्ञकृत्वापशुं हत्वाकृत्वारुधिरकर्दमम् ।
यद्यवंगम्यतेस्वर्गोनरक:केन गम्यते ।।७०

ये सभी कुत्सित धर्म हैं । दाराओं के सहित अहित पुरुषों के द्वारा ही किये जाते हैं जोकि हिंसापूर्ण होते हैं । अर्ध नारीश्वर रुद्र हैं वह किस तरह मोक्ष को प्राप्त होंगे ?।६४।उनको अहर्निश भूतगण घेरे रहा करते हैं और श्मशान की भस्मसे तथा अस्थितियोंसे उनका शरीर भूषित रहता है । ऐसे पुरुषों का न तो स्वर्ग में ही निवास होता है और न वे मोक्षही प्राप्त किया करतेहैं । यहाँ लोग व्यर्थही क्लेश उठाया करते हैं।६५।विष्णु भी हिंसा में समास्थित रहा करते उनकी मुक्तिभी किस प्रकार से होगी ? ब्रह्माजी भी रजोगुण के स्वरूप वाले हैं जो अपनी सृष्टि को ही लेकर उप जीवित रहा करते हैं।६६।देवर्षिगण और जोभी कोई अन्य वैदिक पक्ष का आश्रय लेने वाले हैं वे सभी हिंसा प्राय,सदा क्रूरता धारण करने वाले मांस का भक्षण करने वाले,महान् पापकर्मों के करने वाले हैं।६७।सुरगण मद्य का पान करते हैं और ये ब्राह्मण लोग माँसभोजी हैं । इस धर्मसे कैसे स्वर्ग [illegible] होगा।६८। जो यज्ञादिक [illegible]

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और जो स्मार्त्त अर्थात् स्मृतिमें कहेगये श्राद्धादिक कर्म हैं। उनमें अपवर्गकी प्राप्ति नहीं होतीहै जहांकि यह श्रुति सुनी जाती है।६६।यज्ञ करके उसमें पशुका हनन करके रुधिरका कीच किया जाता है। यदि इस प्रकार के कर्मों से जिनमें हिंसा की प्रधानता रहा करती है स्वर्ग के सुखोपभोग हो जावे तो फिर नरक की यातना किस कर्म से भोगी जायगी ? ॥७०॥

यदिभुक्तमिहान्येनतृप्तिरन्यस्यजायते।
दद्यात्प्रवसतः श्राद्धं न सभोजनमाहरेत् ॥७१
आकाशगामिनोविप्राःपतितामांसभक्षणात्।
तेषां न विद्यतेस्वर्गोमोक्षोनंवेहदानवाः ॥७२
जातस्यंजीवितंतोरिष्टंसर्वस्यजायते।
आत्ममांसोपमं मांसं कथं खादेत पंडितः ॥७३
योनिजास्तुकथंयोनिंसेवते जंतवस्त्वमी।
मैथुनेन कथं स्वर्गं यांस्तेय दानवेश्वर ॥
मृद्भस्मना यत्र शुद्धिस्तत्रशुद्धिम्तु का भवेत् ॥७४
विपरीततमलोकंपश्यदानव यादृशम् ॥
विण्मूत्रस्य कृतोत्सर्गेशिश्नापानेतुशोधनम् ॥७५
नसंभारो ऽस्तिवदनेमृद तोयेनवापुनः।
भुक्त्वाभोजनेराजन्कथंनापानशिश्नयोः ॥७६
क्रियतेशोधनंतद्वद्विपरीतास्थितिस्त्वयम्।
यत्र प्रक्षालनं प्रोक्तं तत्रतेनैवकुर्वते ॥७७

यदि भोग दूसरे के द्वारा किया जावे और तृप्ति अन्य को प्राप्त हो जाया करती हो तो प्रवास में रहने वाले को श्राद्ध दे दिया जाने पर वह प्रवासी को भोजनकी प्राप्ति हो जानी चाहिए किन्तु ऐसा नहीं नहीं होताहैं ।७१। आकाश में गमन करने वाले विप्र मांस के भक्षण करने से पतितहो गये हैं। हे दानवगण ! उन विप्रों को स्वर्ग प्राप्त नहीं होता है और उन्हें मोक्षभी नहीं मिलता है ।७२। जो जीव जन्म धारण करता है उस सबका परम अभीष्ट जीवन ही होता है। अपने मांस के तुल्य ही अन्य का मांस भी होता है। उस मांसको पंडित कैसे खाते हैं? ।७३। सभी लोग योनिसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही उत्पन्न हुआ करते हैं और फिर उस योनिका सेवन करके जोवगण कैसे आनन्दित हुआ करते हैं। हे दाननेश्वर! मैथुन कर्म करनेसे स्वर्गका लाभ किस तरहहो सकता है-अर्थात् मैथुन सेवियों को स्वर्गका गमन नहीं होगा। भस्म से मृत्तिका की जहां शुद्धि होती है वहां क्या शुचिता होगी?।७४।हे दानव ! इस तरह से वह लोक बिल्कुल विपरीत है इसे देखो। मल-मूत्रके त्याग करनेपर जिस प्रकार का शिश्न और अपान को शोधन होताहै।७५ हे राजन्! भोजनके खा लेने पर मुख में मिट्टी और जलसे कुछभी शोधन का सम्भार नहीं किया जाता है तो फिर उसके त्याग करने पर गुदा और शिश्न का यह शोंधन क्यों किया जाता है ?।७६।इनका भी शोधन वैसाही करना चाहिए।। इनके शोधन में यह विपरीत स्थिति क्योंकी जाती है? जहां प्रक्षालन कहा गया है वहां उसी से किया करते हैं ।।७७।।

एतदन्यच्चजगतिदृश्यते पापदायकम् ।
एवविधो यत्र धर्मः परमार्थोमतस्तुकः ।।७८
वदस्व त्वं दानवेंद्र वद भूयो वदामि ते ।
गुरोस्तुगदितंश्रु त्वापरमार्थान्वितंवचः ।।
जातकौतूहलास्तत्र बिविक्तास्तु भवार्णवात् ।।७९
दीक्षयस्व गुरो सर्वान्प्रपन्नान्भक्तितः स्थितान् ।।८०
येन वैन पुनर्मोहंव्रजामस्तवशासमात् ।
सुविरक्ताःस्मसंसारेशोकमोहप्रदायिनि ।।८१
उद्धरस्व गुरो सर्वान्क्लेशाकर्षणकूपतः ।
कस्य देवस्य शरणंगच्छामोब्राह्मणोत्तमः ।।८२
दैवतं च प्रपन्नानांप्रकाशयमहामते ।
स्मरणेनोपवासेन ध्यानधारणया तथा ।।८३
पूजोपहारेचकृते अपवर्गस्तुलभ्यते ।
विरक्तास्स्मकुम्टुं बेतुभूयोनात्रयतामहे ।।८४

यह और अन्य जगत् में सभी पापों के देने वाले हैं। जहां पर इस प्रकार का धर्म है वहां परमार्थ क्या हो सकता है ?।७८।हे दानवेन्द्र! अब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप कहिये जिसको मैं पुनः तुमको बतलाऊँ। गुरु के इस भाषण का श्रवण कर जो कि परमार्थ से समन्वित तथा समस्त दानवगण को बड़ा कौतूहल उत्पन्न होगया था और वे सब संसार सागर से विरक्त होगये।७६।दानवों ने इस गुरु के प्रवचन को श्रवणकर प्रार्थना करते हुए कहा—हे गुरुचरण! ये सब आपकी प्रपत्ति ग्रहण करने के लिए समुपस्थित हैं और भक्ति-भाव से पूर्णतया समन्वित हैं। आप इनको दीक्षा दीजिए।८०' अब आप हमको ऐसी ही दीक्षा देवें कि जिससे हम लोग आपके शासन को प्राप्तकर फिर मोह को कभी भी प्राप्त न होवें। यह संसार तो शोक और मोहकोप्रदान करने वाला है। इसे हमने भली-भाँति समझ लिया है। हमको इस संसार से अब पूर्ण वैराग्य हो गया है।८ ।हे गुरुवर ! कुए में गिरेहुए को उसके केश पकड़कर जैसे उसका उद्धार किया जाता है वैसे ही आप हमारे केशों का आकर्षण कर इस संसार से उद्धार कर दीजिये। हे ब्राह्मणों में परम श्रेष्ठ! अब हम किस देव की शरण में जावें ?॥८२॥आपकी शरणागति में आये हुए हमारे आपही दैवत हैं। हे महान् मति वाले ! हमको प्रकाश प्रदान कीजिए। स्मरण-उपवास-ध्यान-धारणा-पूजा और उपहार के करने से अप गं का लाभ किया जाता है। अब हम लोग कुटुम्बसे पूर्ण विरक्तहो गये हैं। फिर हम लोग इसमें कुछ भी यत्न नहीं करेंगे॥८३-८४॥

एवंचैवगुरुश्छन्नस्तैरुक्तोदनुपुंगवैः।
चिंतयामासतत्कार्यंकथमेतत्करोम्यहम्।।८५
कथमेतेमयापापाःकर्तव्यानरकौकसः।
विडंबनाच्छ्रुतेर्बाह्यास्त्रैलोक्येहास्यकारिणः॥८६
इत्युक्त्वाधिषणोराजश्चिंतयामासकेशवम्।
तस्यतच्चिंतितंज्ञात्वामायामोहजनार्दनः॥८७
समुत्पाद्यददौतस्यप्राहचेदंबृहस्पतिम्।
मायामोहोऽयमखिलांस्तान्दैत्यान्मोहयिष्यति।८८
भवतासहितःसर्वान्वेदमार्गबहिष्कृतान्।
एवमादिश्य भगवानतंर्धानं जगामह।।८९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपस्यभिरतान्सोऽथमायामोहोगतोऽसुरान् ।
तेषांसमीपमागत्यबृहस्पतिरुवाचह ॥९०
अनुहार्थंयुष्माकंभक्त्याप्रीतस्त्विहागतः ।
योगीदिगम्बरोमुण्डोबर्हिपत्रधरोह्ययम् ॥९१
इत्युक्ते गुरुणापश्चान्मायामोहोऽब्रवीद्वचः ।
भो भो दैत्याधिपतयः प्रब्रूततपसिस्थिताः ॥
ऐहिकार्थं तु पारक्यं तपसःफलमिच्छथ ॥९२
कुरुध्वं मम वाक्यानि यदि मुक्तिमभीप्सथ ।
आहतं सर्वमेतच्च मुक्तिद्वारमसंवृतम् ।
धर्माद्विमुक्ते रर्होऽयं नैतस्मादपरः परः ॥ ३
अत्रै वावस्थिताःस्वर्गं मुक्तिचापि गमिष्यथ ।
एवप्रकारैर्बहुभिर्मुक्तिदर्शनवर्जितैः ॥९४

गुप्त रूप में रहने वाले सुरगुरु से इस तरह उन दनु श्रेष्ठों ने कहा था। तव गुरु ने उस कार्य के विषयमें चिन्तन किया था कि इस कार्यको मैं कैसे करूँ ॥८॥ मेरे द्वारा ये सव पापात्मा नरकगामी किस तरह से करने चाहिए। विडम्बना से ये श्रुति से बहिष्कृत हैं और त्रिलोकी में हास्यकारी हैं।८६। हे राजन् ! ऐसा मन में कहकर वृहस्पति ने भगवान् केशव का ध्यान किया था सुरगुरु कें उस चिन्तन को जानकर भगवान् जनार्दन ने माया-मोह समुत्पन्न कर फिर उसे दे दिया था और वृहस्पतिसे यह वचन बोले—यह माया-मोह हैं जो उन समस्त दैत्यों कोमोह पैदा कर देगा।८७-८८।आप हितपूर्वक उन सब वेद के मार्गसे वहिष्कृत दनुजों को मोहित कर देना—इस प्रकार से आदेश देकर भगवान् अन्तर्हित होगये थे।८९।इसके अनन्तर माया-माह को प्राप्त हुए वह वृहस्पति तपमें अभिरत उन असुरों के समीप में आकर कहने लगे।९०।आप लोगों की भक्ति-भाव से प्रसन्न, आप सबके ऊपर अनुग्रह करने के लिए यह वर्हिपत्रधारी मुण्ड दिगम्बर योगी यहां आया है।९१।गुरुने तो इतना ही कहा था इसके पश्चात् माया-मोह यह वचन बोला था-हे दैत्योंके अधिपतियो! आप लोग तपश्चर्या में स्थित हैं। आप बतलाइये कि तपस्या का फल ऐहलौकिक चाहते हैं या पारलौकिक फल की इच्छा रखते हैं ? ॥९२॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायामोहेन ते दैत्या वेदमार्गबहिष्कृताः ।
धर्मायैतदधर्माय सदेतदसदित्यपि ॥९५
विमुक्तये त्विदंनैतद्विमुक्तिसंप्रयच्छति ।
परमार्थोऽयमत्यर्थंपरमार्थोनचाप्ययम् ॥९६
कार्यमेतदकार्यंहिनैतदेतत्स्फुटत्विदम् ।
दिग्वाससामयंधर्मोऽयंबहुवाससाम् । ९७
इत्यनेकार्थवादांस्तुमायामोहेनतेयतः ।
उक्तास्ततोऽखिलादैत्याः स्वधर्मांस्त्याजित नृप ॥९८

दानवों ने कहा--हमने यह तपस्या पारलौकिक धर्म के लाभ प्राप्त करने के लिए ही आरम्भ की है और यही हमको अभीष्ट भी है । आपअब बतलाइये कि इस विषय में आपको क्या कहना है ? इस पर दिगम्बर ने कहायदि आप लोग मुक्तिके इच्छुक है तो मेरे बताये हुए वचनों को करो। यह सब खुला हुआ मुक्ति का द्वार अहित है । धर्म से विमुक्त के यह योग्य है । इससे अन्य दूसरा कोई नहीं है।९३।यहां पर स्थित रहते हुए ही स्वर्ग और मुक्तिको प्राप्त कर लोगे। इसी प्रकारके बहुत से मुक्ति दर्शनसे वर्जित के द्वारा और माया मोह से वे दैत्य वेद के मार्ग से वहिष्कृत कर दियेगये थे । यह सत् और असत्भी धर्म और अधर्म केलिए है।९४-९५।यह विमुक्ति केलिए नहीं है और यह विमुक्ति देता है। यह परमार्थ है और यह अत्यधिक परमार्थभी नहीं होता है।९६।यह कार्यहै और यह अकार्य है । यह बिल्कुल स्फुट है । जो दिगम्बर होते हैं उनका तो यह धर्म है और जो बहुत से प्रकार के वस्त्र धारण करने वाले हैं उनके लिए यह अधर्म होता है।९७। इस तरह से यह अनेक अर्थ वाले वादों को माया-मोह ने कहा था तबसे नृप ! समस्त दैत्यों को अपने धर्मों से त्यक्त करा दिया था ॥९८॥

अर्हध्वमामकंधर्मंमायामोहेनतेयतः ।
उक्तास्तमाश्रिताधर्ममार्हतास्तेनऽभवन् ॥९९
त्रयीमार्गंसत्मुज्यमायामोहेनतेऽसुराः ।
कारितास्तन्मयाह्यासंस्तथान्येतत्प्रबोधिता ॥१००

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैरप्यन्येपरेतैश्चतैरन्योन्यैस्तथापरे ।
नमोऽर्हते चेति सर्वे संगमे स्थिरवादिनः ।।१०१
अल्पैरहोभिसंस्यक्तास्तैर्दैत्यैःप्रायशस्त्रयी ।
पुञ्जरश्चरक्तांबरधृन्मायामोहोजितेक्षणः ।।१०२
सोऽन्यानप्यसुरान्गत्वाऊवेऽन्यन्मधुराक्षरम् ।
स्वर्गार्थंयदिवोवाञ्छानिर्वाणार्थायवापुनः ।।१०३
तदलंपशुघातादिदुष्टधर्मनिवोधतः ।
विज्ञानमयमेतद्वै त्वशेषमधिगच्छतः ।।१०४

अहृष्व मेरा धर्म है जो कि माया मोह ने कहा है। उस धर्म के आश्रित होने वाले वे आर्हत हो गये थे। ९। माया-मोह के द्वारा वेसब दैत्य वेदत्रयी के धर्मसे छुड़ाकर असुर करा दिये गये थे। उनके द्वारा प्रबोधित किये गये अन्य लोग भी उन्हीं के स्वरूप वाले वैसेही वैदिक धर्मको त्यागने वाले होगये थे। १००। उनके द्वारा और दूसरे और दूसरों के द्वारा और लोग भी सभी संगम में स्थिरवादी होते हुए अर्हन को नमस्कार है ऐसा कहतेथे ।१०१। थोड़े ही दिनों में सभी दैत्यों ने वेदत्रयी प्रतिपादित धर्मसे छुडा दिये गये थे और फिर लाल वस्त्रों को धारण करने वाला माया-मोह विजयशाली हो गया था ।१०२। वह फिर इसी रिति से अन्य जो असुर थे उनके पास पहुँचकर उनकोभी यही बात मधुर वाणीमें बोलता था कियदि आप लोगोंको स्वर्गीय निवास और वहाँ के सुखोंका उपभोग करना अथवा निर्वाणपद प्राप्ति करने की अभिलाषा रखना चाहते हो तो यज्ञादि करके पशुघात करना बन्द कर दो और भली-भांति समझ लो। यह सब विशेष ज्ञान परिपूर्ण है इस बात को जान लो ।।१०३-१०४।।

बुध्यध्वं मे वचः सम्यग्बुधैरेवमिहोदितम् ।
जगदेतदनाधारभ्रांतिज्ञानानुतत्परम् ।।१०५
रागादिदुष्टमत्यर्थंभ्राम्यतेभवसंकटे ।
नानाप्रकार वचनं स तेषां मुक्तियोजितम् ।।१०६
तथातथाऽवदद्धर्मंतत्यजस्ते यथा यथा ।
केचिद्विनिन्दां वेदानां देवानामसरेनप ।।१०७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यज्ञकर्मकलापस्यतथाचान्येद्विजन्मनाम् ।
नैतद्युक्तिसहंवाक्यंहिंसाधर्मायजायते ।।१०८
हवींष्यनलदग्धानिफलान्यर्हंतिकोविदाः ।
निहतस्यपशोर्यज्ञेस्वर्गप्राप्तिर्यदीन्यते ।।१०६
स्वपिता यजमानेन किं वा तत्र न हन्यते ।
तृप्तये जायतेपुंसो भुक्तामन्येन चेद्यदि ।।११०
दद्याच्छ्राद्धं प्रवसतोनवहेयुः प्रवासिनः ।
यज्ञैरनेकैर्देवत्वमवाप्येन्द्रेण भुज्यते ।।१११
शम्यादि यदिचेत्काष्ठं तद्वरं पत्रभुक्पशुः ।
जनाश्रद्धेयमित्येतदगवम्य तु दद्वचः ।।११२
उपेक्ष्य श्रयसे वाक्यं रोचतांयन्मयेरितम् ।
नह्याप्तवादानभसोनिपततिमहासुराः ।।११३

मेरे वचनों को अच्छी तरह समझ लो, इसको बड़े-बड़े बुद्धवानों ने ही कहा है । हे सम्पूर्ण जगत् आधार से रहित है और इसमें केवल भ्रान्ति का ज्ञान ही भरा हुआ है । यह राग आदिसे अत्यधिक दोषपूर्ण है । इसी से यह जीवात्मा इस संसार के सङ्कट में भ्रमित किया जाता हैं । इस प्रकार से उसने मुक्तिसे योजित अनेक प्रकार के वचन कहे थे।१०५-१०६ उसने उसी भाँतिसे कहा था कि वे जिस-जिस रीति से धर्मको त्याग देवे । हे नृप ! कुछ लोग वेदों की विशेष बुराई करते थे और दूसरे लोग देवों की निन्दा करते थे ।।१०७।। अन्य लोग यज्ञादि कर्मों के समूह की निन्दा करते थे और दूसरे द्विजन्मा ब्राह्मणों की बुराई करते थे यह वचन युक्ति सङ्गत कभी भी नहीं हो सकते कि हिंसासे धर्म होता है।१०८।कोविदगण अग्नि में दग्ध किए हुए हवि फलों का हनन नहीं करते है । यज्ञमें वध किये हुए पशु से जो स्वर्ग की प्राप्ति की इच्छा की जाती है ।१०६। यदि ऐसा ही है तो यजमान के द्वारा वहाँ पर अपने पिता का हनन क्यों नहीं किया जाता है । लोग कहते थे कि यदि अन्य के द्वारा खाये हुए से पितृगण की तृप्ति होती है तो प्रवासमें रहने वाले को भी श्राद्ध दिया जाने से वह प्रवासी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी उसे प्राप्त कर तृप्त होजाना चाहिए। जहाँ पर अनेक यज्ञों से देवत्व को प्राप्त करके इन्द्रके द्वारा स्वर्गका भोग किया जाताहै।११०-१११।शमी आदि यदि काष्ठ है तो उससे श्रेष्ठ तो पत्तों को खाने वाला पशुहै। ये सब बातें जनों की श्रद्धाके योग्य नहीं हैं,इसीतरह से उसके वचनोंको जानकर उपेक्षा करके सेवन करते हो या मेरे द्वारा कथित वचन आपको रुचिकर लगते हैं जो सत्य बोलने वाले आप्त पुरुषों के वाग्ह होते हैं। हे महासुरो। वे कभी यों ही आकाश से नहीं गिरा करते हैं ॥११२-११३॥

युक्तिमद्वचनं ग्राह्यं मयान्यैश्च भवद्विधैः।
तत्ववादेवयं सर्वे प्रसन्नास्तव भक्तितः ॥११४
कुरुष्वानुग्रहंचाद्यप्रसन्नोऽसियादिप्रभो।
संभारानाहरामोऽद्यदीक्षायोग्यांश्चसर्वशः ॥११५
प्रसादत्तवयेनाशुमोक्षाहस्तगतोभवेत्।
ततस्तानब्रवीत्सर्वान्मायामोहोऽसुरांस्तदा ॥११६
प्रपन्नःशासनंह्यषमदीयोगुरुरग्यधीः।
दीक्षांदास्यतियुष्माकंनिदेशान्ममसत्तमः ॥११७
एतान्दीक्षयभोब्रह्मन्वचनान्ममपुत्रकान्।
गतेमोहेदानवास्तेभार्गववाक्यमब्रुवन् ॥११८
देहिदीक्षांमहाभगसर्वसंसारमोचनीम्।
तथेत्याहोशनादैत्यान्गच्छामोनर्मदामन् ॥११९

आपके समान सुयोग्य पुरुषों को मेरे द्वारा कहे गये हों या अन्य किन्हीं के द्वारा कहे गये हों किन्तु यदि युक्ति युक्त हैं तो अवश्य ही ग्रहण करने चाहिए दानवों ने कहा—तत्ववाद में हम सब लोग सहमत हैं और भक्ति के भाव से आपके शरणागति में प्राप्त हुए हैं।११४।हे प्रभो ! यदि आप प्रसन्न हैं तो अब हमारे ऊपर अनुग्रह कीजिए। हम आज ही दीक्षा के योग्य जो भी सामान होवे हम सब ले आवें।११५।आपकेही प्रसाद का यह फल होगा कि जिससे हमारे हाथ में मोक्ष शीघ्र प्राप्त हो जावेगा। इतना कहने के पश्चात् उनसब असुरों से उस समयमें माया-मोह ने कहा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

।११६।मैं गुरु के शासन में प्रसन्न रहने वाला हूँ। यह मेरे श्रेष्ठ बुद्धि वाले गुरुचरण आपको मेरी प्रार्थनामे दीक्षा दे देंगे। यह परम श्रेष्ठ है।११७। माया-मोह ने कहा-हे ब्रह्मन मेरे वचन से आप इन मेरे पुत्रों को दीक्षा दे दीजिएगा। यह कहकर माया-मोह वहांसे चला गया था और उसके चले जाने पर उन समस्त दानवों ने भार्गव स्वरूपधारी गुरु से यह वचन कहे ।११८। हे महाभाग्य वाले ! आप इस संसार से मोचन (छुटकारा) कराने वाली दीक्षा हम लोगों को दे दीजिए। ऐसा ही होगा—यह कहकर वह उशनवेषी गुरु बोलें—हे दैत्यो ! नर्मदा के तट पर चलो ।११९।

भोभोस्त्यजतवासांसिदीक्षांकारयितास्मिवः ।
एवतेदानवाभीष्मभृगुरूपेणधींमता ॥१२०
आंगिरसेनतंतत्रकृतादिग्वाससोऽसुराः ।
बर्हिपिच्छध्वजंतेषांगुंजिकाचारुमालिकाम् ॥१२१
दत्वा चकार तेषां तु शिरसो लुंचनततः ।
केशस्योत्पाटनंचैवपरमंधर्मसाधनम् ॥१२२
धनानामीश्चरोदेवोधनदःकेशलंचनात् ।
सिद्धिपरमिकांप्राप्ताःपदावेषस्यधारणात् ॥१२३
नित्यत्वंलभ्यतेह्येवंपुराप्राहार्हतःस्वयम् ।
वालोत्पाटेनदेवत्वं मानुषलंभ्यतेत्विह ॥१२४
किनकुर्वीतयत्तस्मान्महापुण्यप्रद यतः ।
मनोरथो हि देवानां लोके वैमानुषेकदा ॥१२५
अस्मिन्स्यादभारतेवर्षेजन्मनः श्रावकेकुले ।
तपासायुञ्ज्महेऽस्मान्वंकेशोत्पाटनपूर्वकम् ॥१२६

हे दैत्यगणो ! आप सब लोग वस्त्रों का त्यागकर देवें अब मैंआपको दीक्षा प्रदान करूंगा। हे भीष्म ! इस प्रकार से धीमान् भृगु रूपधारी वृहस्पतिने वे सब असुर दानव वहां पर दिगम्बर अर्थात नग्नकर दियेथे। फिर उन सबको उसने वर्हिपिच्छ की ध्वजा और गुञ्जा की माला दे दी थी ।१२०।यह देकर फिर उनके शिरोंका लुंचन किया था तथा केशोंका उत्पादन भी किया था जो किधर्मका परम साधनथा।१२१।धनोंका स्वामी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धनद देव है । सदा वेषके धारण करनेसे और केशों के लुञ्चनसे परमित्र सिद्धि को प्राप्त होगये थे ।१२२। इस प्रकार से नियत्व की प्राप्ति होतीहै यह पहिले अहत ने स्वयं अपने मुख से कहा था। यहां १२ बालों के उत्पादन करने मनुष्यों को देवत्व की प्राप्ति हो जाती है ।१२३। इसलिए उसे क्योंन किया जावे क्योंकि यह महान् पुण्यके प्रदान करने वाला कार्य है । लोक में मानुष जीवन में देवों का मनोंरथ कब होता है ।१२४। इस भारतवर्ष से देवगण का यही मनोरथ रहता है कि श्रावक कुल में जन्म प्राप्त कर केशोत्पादन पूर्वक हम लोग तपस्या युक्त होवें ।१२५। उन्होंने चौबीस तीर्थङ्कर पुरस्कृत किये थे । फणीन्द्र ने ध्यान मार्ग के प्रदर्शन करने वाले छाया स्वरूप ही किया है ।।१२६।।

तीर्थंकराश्चतुर्विषत्तथातैस्तुपुरस्कृताः ।
छावाकृतंफणीन्द्रेणध्यानमार्गप्रदर्शकम् ।।१२७
स्तुवन्तंमन्त्रवादेनस्वर्गोहस्तगतोऽर्हतम् ।
मोक्षोवाभवितानूनवि ारःक ऽत्रकथ्यते ।।१२८
कदास्यामर्षयोभूत्वासूर्य्याग्निसतेजसः ।
जप्त्वाविरागणश्चैवमनुपंचांगकतथा ।।१२९
तथातपस्यतांमृत्युंगतानांकालपर्ययात् ।
पाषाणेनशिरोभग्नंभवतेपुण्यकर्मणाम् ।।१ ०
अरण्येनिर्जनेवासःकदावैभ वताहिनः ।
कर्णजप्यंश्रावकाश्चकरिष्यंतिसमाहिताः ।।१३१

मन्त्रवाद के द्वारा अर्हत का स्तवन करने वाले व्यक्ति के लिए स्वर्ग तो हाथ में आया हुआ ही हो जाता है । अथवा मोक्ष हो जायगा—यह बिल्कुल निश्चय हीहै । इसमें क्या विचार कहा जाता है अर्थात् इसमें कुछ भी विचारने की आवश्यकता ही नही है ।।१२७।। पञ्चाङ्ग मन्त्र को जपते हुए विरागी और अमर्षय होकर कब सूर्य की अग्नि के समान तेज वाले हो ।१२८। उस प्रकार से तप करने वाले काल के पर्यन्य से मृत्युको प्राप्त होने वाले लोगों के पुण्य कर्मों का कब पाषाण से शिर का भग्न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा ।११९। हम लोगों का वन में जहाँ कि कोई भी नहीं रहता हो कब निवास होगा और श्रावक होकर परम सावधान होते हुए कब जाप करेंगे ।१२०। हे ऋषिवर ! आपको यहाँ से नहीं जाना चाहिए क्योंकि आपतो मोक्ष मार्गी हैं। जो भी स्थान प्राप्त किये हैं वे सब पुनः आवृत्तिके कराने वाले ही हैं ।१२१।

भोभोऋषेनगतंव्य मोक्षमार्गीयतोभवान् ।
लब्धानियानिस्थानानिभूयोवृत्तिकराणि च ।।१३२
भवद्ध्व सहितायूयं ते तथा मोक्ष भागिनः ।
एवमुक्त्वासनियमान्कृत्वातान्दनुपुंगवान् ।।१३३
जगामधिषणो राजन्देवलोकं दिवौकसाम् ।
आचचक्षे स तत्सर्वंदानवानां च कारितम् ।।१३४
ततस्तेत्वसुराजग्मुनर्मदामभितोवसन् ।
दृष्ट्वातान्दानवांस्तत्र प्रह्लादेन विनाकृतान् ।।१३५
देवराजस्ततो हृष्टो नमुचिप्राहवैवचः ।
हिरण्याक्षं यज्ञहनं धर्मघ्नं वेदनिदकम् ।।१३६
राक्षसं क्रूरकर्माणं प्रघसंविघसंतथा ।
मुचिचैव तथा बाणं विरोचनमथापि वा ।।१३७
महिषाक्षं वाष्कलं च प्रचण्डचंडकंतथा ।
रोचमानं तथात्युग्रं सुषेणं दानषोत्तमम् ।।१३८
एतान्दृष्ट्वा तथा चान्यान्दानवेन्द्रानथाब्रवीत् ।
दानवेंद्राः पुराजाताः कृतं राज्यं त्रिविष्टपेः ।।१३९

आप लोग संसार के ध्वंस करने वाले तथा मोक्ष के भागी होगये हैं -- इस प्रकार से कहकर बृहस्पति हे राजन् ! देवों के लोक में चले गये थे और दानवोंमें श्रेष्ठ पुरुषों को सब नियम बद्धकर दियरथा तथा दानवों को भी कराना था वह सब कह दिया था ।१३२-१३३। इसके पश्चात् वे समस्त दानव एवं असुर वहाँ गये और नर्मदा के तट पर सब ओर निवास करने लगे थे । प्रहलाद से बिना कृत समस्त दानवों को वहाँ पर इन्द्र ने देखा था ।१३८। देवराज इस तरह उन असुरों को देखकर बहुत हीप्रसन्न

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए और नमुचि से बोले—वहाँ पर यज्ञोंके हनन क ने वाले धर्मके नाशक और वेद की निन्दा करने वाले हिरण्याक्ष को,क्रूर कर्म करने वाले प्रधस तथा विघस राक्षस को, मुचि-वाण एवम् विरोचन को, महिपाक्ष,वाष्कल, प्रचण्ड, चण्डक रोचमान और अत्यन्त उग्र दानवों में उत्तम सुषेणको इन सबको तथा अन्य दानवेन्द्रों को वहां देखकर इन्द्र ने कहा—इन्द्रदेव बोले हे दानवेन्द्रो ! आप लोग तो पहिले उत्पन्न हुए हैं और आपने तो स्वर्गमें राज्य शासन किया है ।।१३५-१३९।।

इदानीं कथमेवेदं व्रतं वेदविलोपकम् ।
भवद्भिः कर्तुमारब्ध नग्नमुंडि कमंडलु ।।१४०
मयूरध्वजधारित्वं कथं चौवेह तिष्ठथ ।
त्यक्तः सर्वासुरभाव ऋषिधर्मे वयं स्थिताः ।।१४१
धर्मवृद्धिकरं कर्म चरामः सर्वजन्तुषु ।
त्रैलोक्यराज्यमखिलं भुंक्ष्व शक्रव्रजस्व च ।।१४२
तथेति चोक्त्वा मघवा पुनर्यातस्त्रिविष्टपम् ।
एवंते मोहिताः सर्वे भीष्म देवपुरोधसा ।।१४३
नर्मदा सरितं प्राप्य स्थिता दानवसत्तमाः ।
ज्ञात्वा शुक्रेणते सर्वे वृत्तांतमनुबोधिताः ।।
तदा त्रैलोक्यहरणे चक्रुः क्रूरां पुनर्मतिम् ।।१४४

इस समय में आप सबने यह वेदों के विलोप करने वाले धर्म को एव व्रत करना कैसे आरम्भ कर दिया है? और नग्न मुण्डों वाले कमण्डलु धारी क्यों हो गये हैं ? मोरकी पंख की ध्वजाको धारण करने वाले यहाँ पर क्यों स्थित हो रहे हो ? दानवों ने इस तरह इन्द्र द्वारा पूछे जानेपर उत्तर दिया था कि हमने वह असुरतत्वका भाव बिल्कुल ही त्याग दियाहै और अब हम लोग ऋषि धर्म में स्थित हो रहे हैं ।१४०-१४१। अब हम सब लोग समस्त जन्तुओं में धर्म की वृद्धि करने वाले कर्म का आचरण करते हैं । हे इन्द्रदेव!अब आपही समस्त त्रिलोकी के राज्यका सुखोपभोग कीजिए और यहाँ से चले जाइये।१४२।ऐसा ही किया जायगा-यह कहकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरराज इन्द्र फिर स्वर्गलोक चले गये थे । हे भीष्म ! इस प्रकारसे देवों के पुरोहित वृहस्पतिने उन सब असुरों को मोहित कर दिया था ।१४१। समस्त दानव श्रेष्ठ नर्मदा नदी के तट पर जाकर स्थित होगये थे असुर गुरु शुक्राचार्य ने इसको जानकर उन सब असुरोंको यह पूरा-पूरा वृत्तान्त बताकर भली-भाँति समझाया था तब तो उन असुरोंने पुनः त्रैलोक्य का हरण करने की वही क्रूर बुद्धि बनाली थी ।।१४४।।

।।अर्जुन तथा कर्ण का उत्पत्ति और बैर का कारण ।।

कथं त्रिपुरुषाज्जतो ह्यर्जुनः परवीरहा ।
कथं कर्णस्तु कानीनः सूतजः परिकीर्त्यते ।।१
वैरंतयोः कथं भूतं निसर्गादेव तद्वद ।
बृहत्कौतूहलं मह्यं तद्भवान्वक्तुमर्हति ।।२
छिन्ने वक्त्रे पुरा ब्रह्मा क्रोधेन महता वृतः ।
ललाटे स्वेदमुत्पन्नं गृहीत्वाऽताडयद्भुवि ।।३
स्वेदतः कुंडली जज्ञेस धनुष्कोमहेषुधि. ।
सहस्रकवची वीरः किंकरोमीत्युवाच ह ।।४
तमुवाच विरिंचिस्तु दर्शयन्रुद्रमोजसा ।
हन्यतामेष दुर्बुद्धिर्जायते न यथा पुनः ।।५
ब्रह्मणो वचनं श्रुत्वा धनुरुद्यम्य पृष्ठतः ।
सप्रतस्थे महेशस्य बाणहस्तोऽतिरौद्रदृक् ।।६
दृष्ट्वा पुरुषमत्युग्रं भीतस्तस्य त्रिलोचनः ।
अपक्रांतस्ततोवेगाद्विष्णोश्रममभ्यगात् ।।७

भीष्म ने कहा—शत्रुओं के वीरों का हनन करने वाला अर्जुन त्रिपुरुष से कैसे समुत्पन्न हुआ था और कर्ण सूत से उत्पन्न कानीन (कन्या से उत्पन्न) क्यों कहा जाता है ? ।।१।। इन दोनों महावीरों का पारस्परिक स्वभाव से ही वैर क्यों होगया था—इसे आप बताने की कृपा कीजिए मुझे हृदय में इस बातका बढ़ा भारी कौतूहल होरहा है । आप इस गुत्थी को भली-भाँति सुलझाने में योग्य एवम् समर्थ हैं ।२। पुलस्त्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनि ने कहा—प्राचीन काल में मुख के छिन्न हो जाने पर ब्रह्माजी को बड़ा भारी क्रोध होगया था और उस क्रोध के अतिशय के कारण उनके ललाट पर पसीना उत्पन्न होगया था जिसे लेकर उन्होंने भूमि पर ताड़ित किया था ।३। उस पसीनेकी कुण्डली हुई और उसने वह एक धनुषधारी महेषुधि सहस्र कवच वाला वीर समुत्पन्न किया था जो उठकर कहने लगा मैं क्या करू ? ।४। तब ब्रह्माजी ने रुद्र को दिखाते हुए उससे कहा—तू इसको ओज से मार डाल जिससे कि फिर ऐसी दुर्बुद्धि उत्पन्न न होगी ।५। ब्राह्मण ने यह विधाता का वचन सुनकर धनुष प्रस्तुत करके महेश के पीछे से चल दिया था । इसके हाथमें संधान हुआ धनुष-बाण था और यह अत्यन्त रौद्र (भयानक) उस समय में दिखलाई दे रहा था ।६। उस अत्यन्त उग्र पुरुष को पीछे आते हुए देखकर भगवान् त्रिलोचन डर गये थे और बड़े वेग के साथ वहाँ अपक्रमण करके भगवान् विष्णु के आश्रम में चले गये थे ।।७।।

त्राहि त्राहीतिमांविष्णो नरादस्माच्च शत्रुहन् ।
ब्रह्मणानिर्मितः पापो म्लेच्छरूपोभयंकरः ।।८
यथा हन्यान्नमां क्रुद्धस्तथा कुरु जगत्पते ।
हुङ्कारध्वनिना विष्णुर्मोहयित्वा तु तंनरम् ।।९
अदृश्यः सर्वभूतानां योगात्मा विश्वदृक्प्रभुः ।
तत्रप्राप्तविरूपाक्षं सांत्वयामास केशवः ।।१०
ततस्स प्रणतो भूमौ दृष्टो देवेन विष्णुना ।
पौतौ हि मे भवान्रुद्र क ते कामं करोम्यहम् ।।११
दृष्ट्वा नारायण देवं भिक्षां देहीत्युवाच ह
कपालं दर्शयित्वाग्रे प्रज्वलत्तेजसोत्कटम् ।।१२
कपालपाणि सप्रेक्ष्यरुद्रं विष्णुरचिन्तयत् ।
कोऽन्यायोग्योभर्तेदिभक्षुर्भिक्षादानस्यसांप्रतम् ।।१३
योग्योऽयमिति संकल्प्य दक्षिणं भुजमर्पयत् ।
तद्बिभेदातितीक्ष्णेन शूलेन शशिशेखरः ।।१४

वहाँ पहुँचकर महेश्वर ने कहा—हे विष्णु ! आप तो शत्रुओं के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनन करने वाले हैं । इस नर से मेरी अब रक्षा करो, त्राण करो । यह महापापी ब्रह्माजी ने निर्मित किया है। यह महाम्लेच्छ स्वरूप वाला और अत्यन्त भयंकर है ।८। हे जगतों के स्वामिन! यह क्रोधित होकर आ रहा है यह मुझे मार न डाले-ऐसा ही आप करें। भगवान् विष्णुने महेशकी इस करुण पुकार का श्रवण कर हुङ्कार की ध्वनि से उस नरको मोहित कर दिया था ।९। योग के स्वरूप वाले समस्त प्राणियों को न दिखाईदेने वाले होकर विश्व की रचना करने वाले प्रभु केशवने वहां पर प्राप्त होने वाले विरूपाक्ष को सात्वना दी थी अर्थात् उसे शांत कर दिया था । इसके अनन्तर देव विष्णु ने उसे भूमि में प्रणत होकर प्रणाम करते हुए उसे देखा था ।१। भगवान् विष्णु ने कहा-हे रुद्र! आप तो मेरे पौत्र (नाती)हैं अब बतलाओ मैं तुम्हारी किस कामना को पूर्ण करूँ?।११। भगवान् नारायण को देखकर उसने कहाकि मुझे आप भिक्षा प्रदान कीजिए । उसने भिक्षा के ग्रहण करने का कपाल उनके सामने कर दिया था । वह उस समय में अपने तेजसे अत्यन्त उत्कट एवं प्रज्वलित दिखलाईदे रहा था।१२।भगवान् विष्णु ने हाथमें कपाल लिए हुए रुद्रको देखकर विचार किया था किइसके अतिरिक्त इस समय में अन्य भिक्षा दान के योग्य कौन भिक्षु होगा।१३। यह परम योग्यदान केलिए भिखारी प्राप्त हुआ है ऐसा मनमें संकल्प कर उसे अपना दाहिना भुज प्रदानकर दिया था। शशि को शिरमें धारण करने वाले ने उसका अत्यन्त तीक्ष्ण शूल से विभेदन कर दिया था ।।१४।।

प्रावर्ततततोधारा शोणितस्य विभोर्भुजात् ।
जांबूनदरसाकारा वह्निज्वालेव निर्मिता ।।१५
निपपात कपालांतश्शम्भुनाशाप्रभिक्षिता ।
ऋज्वी वेगवती तीव्रा स्पृशन्तीत्वंबरंजवात् ।।१६
पंचाशद्योजनाद्दैर्ध्याद्विस्ताराद्दशयोजना ।
दिव्यवर्षसहस्रं सा समुवाह हरेभुजात् ।।१७
इयं तं कालमीशोऽसौ भिक्षां जग्राह भिक्षुकः ।
दत्तानारायणेनाथ कापालेपात्रउत्तमे ।। १८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो नारायणः प्राहशंभुं परमिदं व चः ।
सपूर्णं वानवापात्रं ततो वैः परमेश्वरः ।।१९

सतोयांबुदनिर्घोष श्रुत्वा वाक्यं हरेर्हरः ।
शशिसूर्याग्निनयनः शशिशेखरशोभितः ।।२०

कपाले दृष्टिमान्वेश्य त्रिभिर्नेत्रैर्जनार्दनम् ।
अगुल्या घटयन्प्राह कपालं परिपूरितम् ।।२१

इसके अनन्तर विभु की भुजा से रक्त की धारा निकलने लगी थी और वह रक्त-धारा जाम्बूनम के रसके आकार वाली वह्निकी ज्वालाकी भांति निर्मित हो गई थी ।१५। शम्भु के द्वारा भिक्षा में याचना की हुई वह भुजा के कटने से रक्त की धारा उस कपाल के अन्दर गिर गई थी । यह धारा ऋजु थी और अत्यन्त वेग वाली एवम् तीव्र थी और ऐसी प्रतीत हो रही थी मानो अम्बर का वेग से स्पर्श करती हुई चली आ रही हो ।१६। दीर्घता में यह पचास योजन वाली थी और विस्तार में दश योजन थी । वह धारा एक सहस्र वर्ष दिव्य वर्ष पर्यन्यहार की भुजासे प्रवाहमान हुई थी ।।१७।। इस भिभुक ईश ने उस समय में यह भिक्षा ग्रहणकी थी। और भगवान् नारायण ने उत्तम कपाल पात्रमें उसे प्रदान किया था।१८। इसके पश्चात् नारायणने शम्भुसे यह परम वचन कहा था कि आपका यह भिक्षा का पात्र कपाल भर गया अथवा नहीं भरा है ।१९। तब तो हरने सजलमेघ के तुल्य निर्घोष वाले हरिके वचन का श्रवण किया था।ब्रह्मचंद को मस्तक में धारण करने वाले शिव के दोनों नेत्र चन्द्र और सूर्य की अग्नि के समान तेज से पूर्ण थे ।।२०।। तब तो अपने तीनों नेत्रोके द्वारा कपाल में दृष्टि डालकर अपनी अंगुलिसे संकेत करते हुए यह बतला दिया था कि मेरा कपाल भर गया ।।२१।।

श्रुत्वा शिवस्यतांवाणीविष्णुधारांसमाहृत् ।
पश्यतोऽथहरेरीशः स्वांगुल्यारुधितरंदा ।।२२

दिव्यवर्षसहस्रं च दृष्टिपातममथ सः ।
मथ्यमाने ततो रक्ते कलिल बुद्बुद् क्रमात् ।।२३

वभूव च ततः पश्चात्किरीटी स शरासनः ।
बद्धतुणीरयुगला वृषस्कन्धोऽङ्गलित्रवान् ।।२४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरु॰ो वह्निसंकाशः कपाले संप्रदृश्यते ।
त दृष्ट्वा भगवान्विष्णुः प्राहरुद्रमिदं वचः ॥२५
कपाले भव को वाय प्रादुर्भूतोऽभवन्नरः ।
वचः श्रुत्वा हरेरीशस्तमुवाचविभोशृणु ॥२६
नरोनामैष पुरुषः परमास्त्रविदांवरः ।
भवतोक्तो नर इति नरस्तस्माद्भविष्यति ॥२७
नरनारायणौ चोभौ युगे ख्यातौ भविष्यतः ।
संग्राप्रे देवकार्येषु लोकानां परिपालने ॥२८

शिव की उस वाणी का श्रवणकर भगवान् विष्णु ने रक्तधारा को समाहृत कर लिया था । फिर हरि के देखते हुए ईशने अपनी अंगुलिसे उस रुधिर का एक सहस्र दिव्यवर्ष पर्यन्त दृष्टिपातों के द्वारा मन्थन किया था । उस रक्त के मथित किये जाने पर उसमें कलिल और बुद्बुद के तुल्य क्रमसे हो गया था ।२२-२३। इसके पश्चात् शरासनसे युक्त किरीठ धारी, दो तूणीरों को बाँधे हुए,वृष स्कन्ध, अंगुलित्रवान् वह्नि के तुल्य पुरुष कपालमें दिखलाई देता है उसको देखकर भगवान् विष्णु रुद्रदेव से यह वचन बोले थे ।२४-२५। हे भव ! इस कपाल में कौन नर प्रादुर्भूत हो गया है? इस प्रकार विष्णु के वचन श्रवण कर ईश ने उनसे कहा-हे विभो! आप मुझसे सुनिये ॥२६ । नर नाम धारी यह पुरुष परमास्त्रों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ है । आपने इसको 'नर'-इस नाम से कहा है इसीसे यह नर ही होगा ।२७। ये दोनों नर और नारायण इन दो नामों से लोक में प्रसिद्ध होंगे । ये संग्राम की वेला में देवगणों के कार्यों में और लोकों के परिपाल में कार्य करेंगे ॥२८॥

एष नारायणसखो नरस्तस्माद्भविष्यति ।
अथासुरवधे साह्यं तवकर्त्तामहाद्युतिः ॥२९
मुनिर्ज्ञानपरीक्षायां जेता लोकेभविष्यति ।
तेजोऽधिकमिदं दिव्यं ब्रह्मणः पंचमंशिरः ॥३०
तेजसो ब्रह्मणोदीप्ताद्भुजस्य तव शोणितात् ।
ममदृष्टिनिपाताच्चत्रीणिते त्रांसियानितु ॥३१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्संयोगसमुत्पन्नः शत्रुं युद्धे विजेष्यति ।
अगध्याये भविष्यति दुर्जया अपि चापरे ॥३२
शक्रस्य चामराणां च तेषामेषभयंकरः ।
एवमुक्त्वाऽस्थितः शंभुर्विस्मितश्च हरिस्तदा ॥३३
कपालस्थाः स तत्रैव तुष्टाव हरकेशवौ ।
शिरस्यजलिमाधाय तदा वीर उदारधीः ॥३४
किंकरोमीतितौप्राह इत्युक्त्वा प्रणतः स्थितः ।
तमुवाचहरः श्रीमान्ब्रह्मणास्वेनतेजसा ॥३५

यह नारायण का सखा है इसी से नर होगा। यह महती द्युति से संपन्न असुरों के बध करने के कार्य में आपकी सहायता करेगा। ६। यह मुनि ज्ञान की परीक्षामें लोक में विजय करने वाला होगा। यह ब्रह्माका पांचवाँ शिर अधिक तेज युक्त और दिव्य हैं। ३०।ब्रह्माजी के दीप्त तेजसे आपकी भुजा से रक्तसे और मेरी दृष्टि के गिराने से इसमें तीन तेजों का जो संग्रह हुआ है, उन सबके संयोग से यह समुत्पन्न हुआ है। यह युद्धमें शत्रुओं को जीत लेगा। अन्य लोग जो कि दुर्जय भी हैं वे सब अवध्याय हो जायेंगे अर्थात् इससे पराक्रममें हलके रह जायेंगे।३१-३२देवोंके राजा इन्द्र और देवों केलिए यह महान् भङ्कर होगा। इतना कहकर शम्भु वहां स्थित हो गये थे और उस कालमें भगवान् हरिभी इससे परम आश्चर्यमे युक्त हो गये थे।३३।कपाल में स्थित उसने वहाँ पर ही हर और केशवका स्तवन किया था। फिर अपने शिर पर दोनों हाथों की अञ्जलि बांधकर उस समय में उस उदार बुद्धि वाले वीर उन दोनों से कहा था कि मैं क्या करूं? यह कहकर वह प्रणत होकर वहाँ स्थित हो गया था। फिर उससे श्रीमान् हर ने कहा ॥३४-३५॥

सृष्टो नरोधनुष्पाणिस्त्मेनंतुनिषूदय ।
इत्थमुक्त्वांजलिधरं स्तुवंतं शकरो नरम् ॥३६
तथैवांजलिसबद्धं गृहीत्वा च करद्वयम् ।
उद्धृत्याथमपालात्त पुनर्वचनमब्रवीत ॥३७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स एष पुरुषौ रौद्रो यो-यावेदितस्तव ।
विष्णूहुंकाररचितमोहनिद्रां प्रवेशितः ॥३८
विबोधयैनंत्वरितमित्युक्त्वन्तर्दधेहरः ।
नारायणस्य प्रत्यक्षं नरेणानेनवैस्तदा ॥३९
वामपादहतः सोऽपि समुत्तस्थौमहाबलः ।
ततो युद्धं समभवत्स्वेदरक्तजयोर्महत् ॥४०
विस्फारितधनुः शब्दं नादिताशेषभूतलम् ।
कवचं समेतयर्युद्धे दिव्यं वर्षद्वयंतयोः ।
युध्यतोः समतीतं च स्वेदरक्तजयोर्पेनं ॥४२

ब्रह्माजी ने अपने तेज से यह धनुष हाथ में ग्रहण कराने वाला नर सृजित किया है । तू इसको निषूदित कर दे । इस प्रकार कहकर शंकर ने स्तुति करते हुए अञ्जलि धारी उस नर को और अञ्जलि-संबद्ध दोनों हाथों को पकड़कर तथा कपालसे उसे उठाकर फिर वचन कहे थे। ३६-३७ वह यह ही रौद्र पुरुष है जिसके विषयमें मैंने तुमसे कहा था । विष्णु की हुङ्कारसे रचित मोह निद्रा में प्रवेश किया हुआ है।३८।तू इसको अतिशीघ्र विशेष रूप से समझ ले—यह कहकर अन्तर्ध्यान हो गये । नारायण के सामने ही उसी समय मैं नरसे उसे बाँये पादसे हत किया था। और महान् बलवान भी खड़ाहो गया था । तबतो फिर स्वेद और रक्तके समुत्पन्न होने वाले उन दोनों में महान् संग्राम हुआ था । ३९-४०।जिसमें धनुषका शब्द विस्फारित हो रहा था और समस्त भू-मण्डल जिससे शब्दायमान होरहा था। ऐसे स्वेदज के एक कवचकी रक्तजने अपाकृत कर दिया था अर्थात दूर कर दिया था।४१।इस प्रकार से एकत्रित हुए उन दोनोंके युद्धमें दो दिव्य वर्ष युद्ध करते हुए थे । हे नृप ! उन दोनों में एक पसीने से उत्पन्न होने वाला था और दूसरा विष्णु की भुजा के रुधिर से उत्पन्न था ।।४२।।

रक्तजं द्विभुजं दृष्ट्वा स्वेदजंचैवसंगतौ ।
विचिन्त्य वासुदेवाऽगाद्ब्रह्मणः सदनं परम् ॥४३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ससंभ्रममुवाचेदं ब्रह्माणं मधुसूदनः ।
रक्तजेनाद्यभोब्रह्मन्स्वेदजोऽयंनिपातितः ।।४४
श्रुत्वैतदाकुलो ब्रह्मा बभाषे मधुसूदनम् ।
हरेऽद्यजन्मनि नरो मदीयो जीवतादयम् ।।४५
तथा तुष्टोऽब्रवीत्तं च विष्णुरेव भविष्यति ।
गत्वा तयो रणमपि निवार्याह च तावुभौ ।।४६
अन्यजन्मनिभविताकलिद्वापरयोर्मिथः ।
संधौमहारणेजातेतत्राहंयाजयामिवाम् ।।४७
विष्णुनातुसमाहूयग्रहेश्वरसुरेश्वरौ ।
उक्ताविमोनरौभद्रौपालनीयौममाज्ञया ।।४८
सहस्रांशोस्त्वेदजोऽयंस्वकीयोऽगोधरातले ।
द्वापरान्तेऽवतार्योऽत्रंदेवानांकार्यसिद्धये ।।४९

दो भुजाओं वाले रक्तज और स्वेदज इन दोनों को सङ्गत देखकर भगवान वासुदेव ने विशेष चिन्तन किया था और फिर ब्रह्माजी के सदन में गये थे ।४३। मधूसूदन ने सम्भ्रम के सहित ब्रह्माजी से यह कहा था-हे ब्रह्मन् ! आज रुधिर समुत्पन्न होने वाले ने इस स्वेदज को निपातित कर दिया है ।४४। यह श्रवण धरके उस समय में ब्रह्माजी व्याकुल हो गये थे और फिर भगवान् मधुसूदन से बोले । हे हरे! आज वह मेरा नर जन्ममें जीवित हो जावे।४५।ब्रह्मा की इस प्रकारसे की गई प्रार्थनासे विष्णु सन्तुष्ट हो गये और यह बोले कि ऐसाही होगा । फिर वह युद्धस्थल में पहुंचकर उन दोनों के युद्ध को भी निवारित कर दिया था और उन दोनोंसे कहा था।४६।दुसरे जन्ममें यह युद्ध तुम दोनोंका होगा । जिस समय कलि और द्वापर इन दोनों युगोंकी आपस में सन्धि का काल होगा उस समयमें एक महान् रण होगा उसमें तुम दोनों को योजित करूंगा।४७।भगवान विष्णु ने ग्रहों के स्वामी और सुरों के ईश्वर को बुलाकर उन दोनोंसे कहा था कि ये दोनों का परम भद्रनर हैं । अब मेरी आज्ञा से इन दोनोंका पालन करना चाहिये ।४८।है सहस्र अंशु (किरणों)वाले यह स्वेदज इस धरातल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अपना ही अंश है। इसका अवतार द्वापर के अन्त में करना है जो कि देवों की कार्य सिद्धि के लिए ही करना होगा। ।।४६।।

यद्नांतुकुलेभावारोनाममहाबलः।
तस्य कन्या पृथानामरूपेणाप्रतिमाभुवि ।।५०
उत्पत्स्यतिमहाभागादेवानांकार्यसिद्धये।
दुर्वासास्तुवरंतस्यै मंत्रग्रामंप्रदास्यति ।।५१
मत्रेणानेनवंदेवभक्त्याआवाहयिष्यति।
देवि तस्य प्रसादात्तु तव पुत्रो भविष्यति ।।५२
साचत्वामुदयेहृष्ट्वासाभिलाषारजस्वला।
चिन्ताभिपन्नातिष्ठन्तीभजितव्याविभाभवो ।।५३
तस्यागर्भेत्वयंभावीकानीनः कुंतिनन्दनः।
भविष्यति सुतोदेवदेवकार्यार्थमिद्धये ।।५४
तथेतिचोक्त्वाप्रोवाचतेजोराशिर्दिवाकरः।
पुत्रमुत्पादयिष्यामिकानीनंबलगर्वितम् ।।५५
यस्यकर्णे तिवैनामलाकः सर्वोवदिष्यति।
मत्प्रसादादस्यविष्णोविप्राणांभाबितात्मनः ।।५६

यह नर नाम वाला महान् बलवान् यदुओं के कुल में उत्पन्न होगा। उसकी कन्या होगी जिसका नाम पृथा होगा और वह इस भू-मंडलमें रूप सौन्दर्य से अनुपम होगी।५०।वह महान् भाग वाली देवोंकी कार्य-सिद्धिके लिए ही उत्पन्न होगी। दुर्वासा ऋषि उसे वरदान और मन्त्रों का समूह प्रदान करेंगे।५१।दुर्वासाने कहा थां इस मंत्रके द्वारा जिस देवताकी भक्ति से उपासना करेगी और उसका आवाहन करेगी हे देवी ! उसी देवता के प्रसाद से तेरे पुत्र की उत्पत्ति होगी।५२। हे विभावसो ! वह पृथा तुमको उदयकाल में देखकर रजस्वला होकर अभिलाषा वाली होगी और चिन्ता से अभिप न होकर स्थित रहेगी। उस समय में आपको सेवन अवश्य ही करना चाहिए।५३। उसके गर्भ में होने वाला कानीन कुन्ति नन्दन होगा। यह पुत्र देवों के कार्यों की सिद्धिके लिए उत्पन्न होगा।५४। तेजके समूह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान दिवाकर ने ऐसा ही किया जायगा-यह कहकर फिर बोले-मैं बल पराक्रम के गर्व से समन्वित कानिनी (कन्या से जन्म लेने वाला) पुत्र समुत्पन्न कर दूँगा।५५। समस्त लोक उसका 'कर्ण' -यह नाम कहेंगे। मेरे प्रसाद से वह भगवान् विष्णु का और विप्रों का परम भक्त होगा।५६।

अदेयंनास्त्रि लोकेवस्तुकिंचिच्चकेशव।
एवं प्रत्रावं चैवंनं जनये वचनात्तव ॥५७
एवमुक्त्वासहस्रांशुर्देवंदानवघातिनम्।
नारायणं महात्मान तत्रैवांतर्दधे रविः ॥५८
अदर्शनंगतेदेवेभास्करे वारितस्करे।
वृद्धश्रवसमप्येवमुवाच प्रीतिमानसः ॥५९
सहस्रनेत्ररक्तोत्थोनरोऽयंमदनुग्रहात्।
स्वांशभूतोद्वापरांतेयोक्तव्योभूतलेत्वया ॥६०
यदापांडुर्महाभागः पृथांभार्यामवाप्स्यतिः।
माद्रींचापिमहाभागतदारण्यंगमिस्यति ॥६१
तस्याप्यरण्यसंस्थस्यमृगः शापंप्रदास्यति।
तेनचोत्पन्नवैराग्यः शतशृंगंगमिष्यति ॥५२
पुत्रानभीप्सन्क्षेत्रोत्थान्भार्यासप्रवदिष्यति।
अनीप्संतीदाकुंतीतभर्त्तारंसावदिष्यति ॥६३

हे केशव ! उसकी ऐसी वृत्ति होगी कि लोक में कोई भी वस्तु न देने के योग्य नहीं होगी। आपके वचनसे मैं ऐसे ही दानशीलताके प्रभाव से परिपूर्ण इसको जन्म ग्रहण कराऊँगा।५७।सूर्यदेवने इस प्रकारसे दानवों के घात करने वाले महात्मा देव नारायणसे कहकर रवि वहीं पर अन्तर्हित हो गये थे ॥५८॥ जलों के शोषण करने वाले भास्कर देव के लोप हो जाने पर प्रीति से युक्त मन वाले वृद्धश्रवा से इस प्रकार कहा ॥५९॥ सहस्र नेत्र वाले के रक्त से उत्थित यह नर मेरे अनुग्रह से आपको भूतल में स्वीकीय अंश रूप इसको द्वापर में अन्त में युक्त करना चाहिए ॥६०॥ जिस समय में महान् भाग्य वाला राजा पाण्डु पृथा नामवाला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भार्या को प्राप्त करेंगे और माद्री पत्नीको प्राप्त करेंगे तब वह महाभाग अरण्य में चले जायेंगे।६ ।अरण्य में स्थित रहने वाले भी उनको एक मृग शाप देगा । इससे वैराग्य उत्पन्न होने जाने वाला यह शतशृङ्ग को चले जायेंगे।६२।वह अपने क्षेत्रसे अर्थात् भार्याके उदर से उत्पन्न पुत्रोंकी इच्छा रखते हुए अपनी भार्या से कहेगा । उस समयमें वह कुन्ती इच्छान रखती हुई अपने स्वामी से कहेगी ।।६३।।

नाहंमर्त्यस्यवैराजन्पुत्रानिच्छेकथंचन ।
दैवतेभ्यः प्रसादाच्चपुत्रानिच्छे नराधिप ।।६४
पोर्थयत्यंत्वाशककुन्त्यैदेयोनरस्ततः ।
वचसा च मदीयेन एवं कुरू शचीपते ।।६५
मथाब्रवीत्तदाविष्णुं देवेशोदुःखितोव चः ।
अस्मिन्मन्वंतरेऽतीतेचतुर्विशतिकेयुगे ।।६६
भवतीयंरघुकुलेगृहे दशरथस्यच ।
रावणस्य वधार्थाय शान्त्यर्थं दिवौकसाम ।।६७
रामरूपेण भवता सीतार्थमटतावने ।
मत्पुत्रोहितितावेव सूर्यपुत्रहितार्थिना ।।६८
पालिनामाप्लवगेन्द्रः सुग्रीवार्थे त्वयाहतः ।
दुःखेनानेन तप्तोऽहंगृहणामि न सुतनरम् ।।६९
पगृह्णमानवेंद्र कारणातरवादिनन् ।
हरिः प्रोचे शुनासीरं भुवोभारावतारणे ।।७०
अवतारं करिष्यामि मर्त्यलोकेत्वहं प्रभो ।
सूर्यपुत्रस्य नाशार्थं जयार्थमात्मजस्य ते ।।७१

कुन्ती कहेगी कि हे राजन् ! मैं मनुष्यों के पुत्रों की किसी प्रकार से भी इच्छा नहीं रखती हूं और हे नराधिप!मैं तो देवों उनके ही प्रसाद के स्वरूप पुत्रोंकी अभिलाषा रखतीहूँ।६४।हे शक्र! तब प्रार्थना करनेवाली कुन्तीको आपके द्वारा नर देना चाहिए । हे शची केस वामिन्! मेरे वचन से आप इस तरह से करें।६५।इसके अनन्तर देवेश्वर इन्द्र बहुतही दुःखित होकर भगवान् विष्णुसे यह वचन बोला था । इस मन्वन्तर के व्यतीतहो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने पर चौबीसवें युग में रघुकुलमें दशरथ के यहाँ अवतार लेकर रावण के वध के लिए और देवगणको शान्ति प्रदान करने केलिए आपदे श्रीराम का रूप धारण किया था। उस समय सीता की खोज करने केलिए वनों में भ्रमण करते हुए सूर्य पुत्र के हित चाहने वाले आपने हे देव! मेरे पुत्र को हिंसित नर दिया था ।।६६-६८।। आपने सखा सुग्रीव के हित का सम्पादन करने केलिए वानरों के राजा बाली का वध कर दिया था। मैं इस दुःख से बहुत ही सताप से युक्त हूँ इसलिए मैं इस सुतजर को ग्रहण नही करता हूं ।६९। इस प्रकार से ग्रहण न करते हुए ओर इस ग्रहण न करने का अन्य कारण बताने वाले शुनाशीर से भूमण्डल का भार उतारने के लिए भगवान् ने कहा ।।७०।। हे देवराज ! मैं मनुष्य शोकमें भी सूर्य के पुत्र के नाश करने के लिए और आपके आत्मज की विजय के लिए अवतार लूंगा ।।७१।।

।। पुष्कर तीर्थ की उत्पत्ति ।।

सभा कांतिमतीनाम् देवानां शर्मदायिका ।
ऋषिसंघसमायुक्ता मुनिवृन्द निषेविता ।।१
द्विजातिसामशब्देन नादितानंददायिनी ।
तस्याँ निविष्टो देवेशः संध्यासक्तः पितामहः ।।२
ध्यायतिस्म परं देव येनेदं निर्वितंजगत् ।
ध्यायतो बुद्धिरुत्पन्ना कथं यज्ञं करोम्यहम् ।३
कस्मिन्स्थाने मया यज्ञः कार्यः कुत्र धरातले ।
काशो प्रयागतुंगा च नैमिषं शृङ्खलं तथा । ४
कांची भद्रा देविका च कुरुक्षेत्रं सरस्वती ।
प्रभासादोन तोर्थानि पृथिव्यामिहमध्यतः ।।५
क्षेधात्रि पुण्यतीर्थानि सति यानात् सर्वश ।
महोदेशाच्च रुद्रेण कृतान्यन्यानिभूतले ।।६
यथाहं सर्वदेवेषु आदिदेवो व्यवस्थितः ।
तथाचैकं परं तीर्थमादिभतं करोम्यहम् ।।७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुलस्त्य मुनि ने कहा-कान्तिमती नामवाली देवताओं को कल्याण प्रदान करने वाली एक सभा थी जो कि ऋषियों के संघ से समायुक्त थी और मुनिगण के द्वारा भी सेवित रहा करती थीं।१। यह सभा द्विजातियों के द्वारा की गई सामवेद की ध्वनि से ध्वनित रहा करती थी तथा आनंद के प्रदान करने वाली थी। उस सभामें देवोंके अधीश्वर पितामह निविष्ट होकर संध्या-वन्दना में संसक्त हो गये थे।२। फिर पितामह ने परदेवता का ध्यान किया था जिसने इस जगत का निर्माण किया है। इस प्रकारसे ध्यान करते हुए उनकी बुद्धि में आया था कि मैं यज्ञ कैसे करूं? ।३।इस धरातल में कहां पर किस स्थान में मुझे यज्ञ करना चाहिए? इस पृथ्वीके मध्य में काशी, प्रयाग, तुङ्गा, नैमिष्ट, शृंखल, कांची, भद्रा, देविका, कुरु क्षेत्र, सरश्वती और प्रभास आदि अनेक तीर्थ स्थल हैं।४-५।इस तरहके जो पुण्य क्षेत्र तीर्थ यहाँपर सभी ओर हैं और मेरे आदेशसे इस भू-मण्डल में अन्य स्थल भी बना दिये हैं।६।जिस प्रकारसे समस्त देवोंमें मुझे आदि देव व्यवस्थित किया गया है उसी प्रकार से मैं एक सबमें परम श्रेष्ठ आदि तीर्थ करना चाहता हूँ।।७।।

अहं यत्र समुत्पन्नः पद्मं तद्विष्णुनाभिजम् ।
पुष्करं प्रोच्यते तीर्थंमृषिभिर्वेदपाठकैः ।।८
एव चिंतयतस्तस्य ब्रह्मणस्तु प्रजापतेः ।
मतिरेषा समुत्पन्ना ब्रजाम्येषधपातले ।।९
प्राक्स्थान स समासाद्य प्रबिष्टस्तद्वनोत्तमम् ।
नानाद्रुमलताकीर्णं नानापुष्पोपशोभितम् ।।१०
तद्वनं नन्दनसमं मनोदृष्टिविवर्धनम् ।
पद्मयोनिस्तु भगवांस्थता रूप वनोत्तमम् ।।११
ददर्शादर्शवप्रहृष्टया सौम्यया पापयन्निव ।
तावृक्षपंक्तयः सर्वा दृष्ट्वा देवं तथागमम् ।।१२
निवेद्य ब्रह्मणे भक्त्या मुमुचः पुष्पसंपदः ।
पुष्पप्रतिग्रह कृत्वा प्रादपानां पितामहः ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरं वृणीध्वं भद्रं वः पादिपानित्युवाच सः ।
एवमुक्ता भगवता तरवो निरवग्रहाः ॥१४
ऊचुः प्रांजलयः सर्वे नमस्कृत्वा विराचनम् ।
वरं ददासि चेद्देव प्रपन्नजनवत्सल ॥१५
इहैव भगवन्नित्य वने सन्निहितोभव ।
एष नः परमः कामः पितामहः नमोऽस्तु ते ॥१६

जिस स्थान पर मैं समुत्पन्न हुआ था वहाँ भगवान विष्णु की नाभि से उत्पन्न पद्म हैं। उस स्थलको वेदोंके पाठ करने वाले ऋषियोंके द्वारा पुष्कर कहा जाता है।८।इस प्रकार चिन्तन करतेहुए प्रजापति ब्रह्माजी को यह पहुँचे और फिर उसके उत्तम वनमें उनने प्रवेश कियाथा जो वन अनेक तरह के वृक्ष और लताओं से घिरा हुआ था और विविध प्रकार के पुष्पों से सुशोभित हो रहा था ।१०।वह वन नन्दन वनके तुल्य था जोमन और नेत्रों को आनन्द की वृद्धि करने वाला था। पद्यसे उत्पन्न होने वाले भगवान् ब्रह्माजी ने उस प्रकारके परम सुन्दर श्रेष्ठ वनको देखा था मानो आदर्श की भाँति सौम्य दृष्टि से पिला रहे हो। उन वृक्षों पक्तियों ने वहां पर समागत देव को देखकर ब्रह्माजी को भक्ति-भाव में निवेदन करके विविध पुष्पों की वर्षा की थी पितामहने वृक्षों के द्वारा समर्पित पुष्पों का प्रतिग्रह स्वीकार किया था ।११-८३। ब्रह्माजी ने वृक्षोंसे कहाथा तुम्हारा कल्याण हो और अब तुम जो भी चाहो वह वरदान मुझसे माँग लो। इस प्रकार से ब्रह्मा के द्वारा कहे गये अवग्रहसे रहित उन वृक्षोंने ब्रह्माजी को नस्कार करके दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा—हे शरण में आये हुए लोगों पर स्नेह करने वाले देव ! यदि आप कृपाकर वरदान देते हैं तो हम यही वरदान आपसे चाहते हैं कि आप हे भगवन् ! यहां पर ही इस वन में सन्निहित होकर रहें। हे पितामह ! यही हम सबकी परम कामना है। हम सबका आपको नमस्कार है ॥१४-१६॥

उत्तम सर्वक्षेत्राणां पुण्यमेतद्नविष्यति ।
नित्यं पूष्पफलोपेता नित्यं सुस्थिरयौवनाः ॥१७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामगाः कामरूपाश्च कामरूपफलप्रदाः ।
कामसंदर्शनाः पुंसां तपः सिद्ध्युज्ज्वलजानणाम् ॥१८
श्रिया परमया युक्ता मत्प्रसादाद्भविष्यथ ।
एवं स वरदो ब्रह्मा अनुजग्राहपादपान् ॥१९
स्थित्वा वर्षसहस्रं तु पुष्करंप्राक्षिपद्भुवि ।
क्षितिर्निपतितातेन व्यकंपत रसातलम् ॥२०
विवशास्तस्तत्यजुर्वेलां सागराः क्षुभितोर्मयः ।
शक्राशनिहतानीवव्याघ्रव्यावृतारि च ॥२१

ब्रह्माजी ने कहा—यह वनस्थली समस्त अन्य पुण्य क्षेत्रों से परम श्रेष्ठ होगी । इसमें नित्यही पुष्प और फल रहा करेंगे और सर्वदा सुस्थिर यौवन वाली रहेगी ।१७। यहाँ आप सब कामनाओं के गामी, इच्छा रूप वाले, काम स्वरूपानुरूप फलों के प्रदाता, इच्छा के अनुसार दर्शन देने वाले मनुष्यों को तपस्या की सिद्धि देने से उज्ज्वल होंगे।१८।मेरे प्रसादके प्रभाव से आप से सब परमोत्तम श्री से सम्पन्न हो जातेंगे। इस रीति से पितामह ब्रह्माजीने वरदान प्रदान करके उन पादपों पर पूर्ण अनुग्रह किया था।१९। एक सहस्र वर्ष पर्यन्त वहाँ पर ब्रह्माजीने अपनी स्थिति बनाकर भूमण्डल में पुष्कर को प्रक्षिप्त कर दिया था और उससे पृथ्वी रसातलको जाती हुई विशेष रूपसे कम्पितहो गई थी ।२०।क्षोभ से युक्त तरङ्गों वाले सागरों ते विवश होकर वेला का त्याग कर दिया था पर्वतोंकी चोटियाँ जो व्याघ्र और व्यालों से आवृत थीं वे इन्द्र के वज्र के प्रहार की भाँति मानो निहित हो गयीं थीं ॥२१॥

शिखराण्यप्यशीर्यंत पर्वतनां सहस्रशः ।
देवसिद्धविमानानि गंधर्वनगराथि च ॥२२
प्रचेलुबभ्रमुःपेतुर्विविशुश्च धरातलम् ।
कपोतमेघाः खात्पेतुः पुटसंवातदशिनः ॥२३
ज्योतिर्गणांश्छादयतो बभूववुस्तीव्रभास्कराः ।
महता तस्य शब्देन मकान्धबधिरीकृतम् ॥२४
बभव व्याकुल सर्वं त्रैलोक्यं च चराचरम् ।
सुरासुराणांसर्वेषां शरीराणिमनांसि च ॥२५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवसेदुश्चकिमितिकिमित्येतन्नजज्ञिरे ।
धर्ममालव्य सर्वेऽय ब्रह्माणं चाप्यलोकयन् ।।२६
न च ते तमपश्यंतकुत्र ब्रह्मा गतोह्यभूत् ।
किमर्थं कंपिता भूमिर्निमित्तोत्पातदर्शन ।२७
तातद्विष्णुर्गतस्तत्र यत्र देवा व्यवस्थिताः ।
प्रणिपत्य इदं वाक्यमुक्तवतोदिवौकसः ।।२८

सहस्रों पर्वतों के शिखर वज्र के आघात के समान शीर्ण हो गये थे । देवों और सिद्धों के विमान तथा गन्धर्वों के नगर सब चलायमान हो गये, चक्कर खाने लगे और गिरकर धरातल में प्रविष्ट हो गये थे। पुट संवाल के देखने वाले कपोल मेघ आकाश से पतित हो गये थे । २२-२३। तीव्र सूर्य ज्योतिर्गणों का छेदन करते हुए अस्थिरता को प्राप्त हो गये थे। उस पुष्कर के पास ऐसी महान् घोर ध्वनि हुई थी उनने उसको मूक (गूंगा) और बहरा बना दिया था ।२४। स्थावर जङ्गम समस्त चराचर तीनों लोक व्याकुल हो उठे थे और सुर तथा असुर सबके शरीर एवं मन अवसाद में खिन्न हो गये थे।२५।यह क्या कारण, यह किसका ऐसा घोर परिणाम है-इसे कोई भी न जान पाये थे। इसके अनन्तर सबने धैर्य धारण किया और सबके सब ब्रह्माजी को देखने लगे थे।।२६।।किन्तु उन्होंने वहाँ ब्रह्माजी को नहीं देखा था । वे विचारने लगे कि ब्रह्मा कहाँ चले गये हैं ? यह भूमि किस लिये ऐसी कम्पित हुई हैं । यह तो किसी उत्पात का ही कोई निमित्त है।२७। इसी बीचमे वहाँ पर भगवान् विष्णु पहुँच गयेथे जहाँ पर देव लोग अवस्थित थे । सब देवगणों ने विष्णु को प्रणाम किया और उनसे यह वाक्य बोले थे ।।२८।

किमेतद्भगवन्ब्रूहि निमित्तोत्पातदर्शनम् ।
त्रैलोक्य कंपित येन संयुक्त कालधर्मणा ।।२९
शुभोऽशुभोवाशब्दोऽयंत्रैलोक्यस्यदिवौकसमाम् ।
भगवन्यदिजानासिकिमेतत्कथयस्वनः ।।३०
एवमुक्तोऽब्रवीद्विष्णुः परमेणानुभावितः ।
माभष्टमरुतःसर्वे श्रृणुध्वचात्र कारणम् ।।३१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चयेनानुविज्ञाय वक्ष्याम्येषयथाविधम् ।
पद्महस्तोहिभगवान्ब्रह्मा लोकपितामहः ॥३२
भूप्रदेशेपुण्यराशौ कर्त्तुं व्यवस्थितः ।
अवरोहे पर्वतानां वने चातीवशोभने ॥३३
कमलंतस्य हस्तात्तु पतित धरणीतले ।
तस्यशब्दोमहानेष थेन यूयं प्रकंपिताः ॥३४
तत्रासौ तरुवृन्देन पुष्पामोदाभिनंदितः ।
अनुगृह्याथभगवान्वनंतत्संमृगांडजम् ॥३५

हे भगवन्! यह क्या हो रहा है और किस उत्पातके दिखावेका निमित्त है-इसे आप कृपाकर वतलाइये । काल धर्मसे संयुक्त त्रिलोकी को जिसने कम्पायमान कर दिया है। २९।शैलोक्यके देवगणों के लिये यह शब्द शुभ है अथवा अशुभ है ? हे भगवन् ! यदि आप इसे जानते हैं तो कृपया बतला दीजिये कि यह क्या है ? ।३०।इस तरहसे जब भगवान् विष्णु से प्रार्थना की गई तो अत्यन्त अनुग्रह से अनुभावित होकर विष्णुने देवगणसे कहा—हे देवगणों ! आप लोग भयभीत मत होओ । इसका कारण आप लोग मुझसे श्रवण करलो।३१।मैं पूर्ण निश्चय करके और समझकर पूरी बात जोभी जैसी है तुम्हें बतलाता हूँ । लोकोंके पितामह भगवान ब्रह्मा जीं पद्म हाथ में धारण करनेवाले हैं।३२।उन्होंने पुण्य स्थल भू-मण्डल में यज्ञ करने की व्यवस्था का निश्चय किया है । पर्वतों के अवरोह में और अतीव शोभा सम्पन्न वनमें उस यज्ञ करने का विचार किया है।३३।उनके हाथ से पद्म धरणी तल पर गिर गया हैं। उस कमल के पातन होने का यह महान् शब्द हैं जिससे कि भीत होकर आप लोग कम्पयुक्त हो गये हैं वहाँ पर तरुओं के समूह के द्वारा इन ब्रह्माजी का पुष्पों की गन्ध से अभिनन्दन किया गया है । मृगांत्रल के सहित उस वन को ब्रह्माजी ने अनुगृहीत किया है ॥३४-३५॥

जगतोऽनुग्रहार्थाय वासं तत्रान्वरोचयत् ।
पुष्करं नाम तत्तीर्थं क्षेत्रं वृषभमेव च ॥३६
ज्ञानतं तद्भागवता लोकनां हितकारिणा ।
ब्रह्माणतत्रवैगत्वा तोषयध्व मया सह ॥३७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आराध्यमानो भगवान्प्रदास्यतिवरान्वरान् ।
दत्युक्त्वाभगवान्विष्णुः सहतैर्देवदानवैः ॥३८
जगामतद्वनोद्देशं यत्रास्ते स तु कंजजः ।
प्रहृष्टामनसः कोकिलालापलापिताः ॥३९
पुष्पोच्चयोज्ज्वलं शस्त विविशुर्ब्रह्मणोऽनम् ।
सप्राप्तंसर्वदेवैस्तु वनंनंदनसंहितम् ॥४०
पद्मिनीमृगपुष्पाढ्यं सुदृढं शुशुभे तदा ।
प्रविश्याथ धनदेवाः सर्वपुष्पोपशोभितम् ॥४१
इहदेवोऽस्तीतिदेवा बभ्रभुश्चदिदृक्षवः ।
मृगयं तस्ततस्ते तु सर्वेदेवाः सवासवाः ॥४२

समस्त जगत् के हित—सम्पादन करने के लिए ही भगवान् पितामह ने वहाँ पर ही निवास करने की रुचि की है ! वह तीर्थ पुष्कर नाम वाला है उस क्षेत्र को पुष्कर कहते हैं । लोगों की भलाई की कामना से भगवान् ने वृषभ भी समुत्पन्न किया है । सो अब आप सब मेरे ही साथ में चलकर वहाँपर ही ब्रह्माजीको प्रसन्न करदें और सन्तुष्ट करें ।३६-३७। इस प्रकारसे आराधना किये जाने पर वह ब्रह्मा भगवान् परम श्रेष्ठ वरदान प्रदान कर देंगे—यह इतना कहकर भगवान् विष्णु देव उन समस्त देवगणों के साथ तथा दानवों को भी साथ में लेकर उस वन के भाग में चले गये थे जहाँ पर कमलसे समुत्पन्न होने वाले ब्रह्माजी विराजमान थे । अत्यन्त प्रसन्न और परम सन्तुष्ट मन वाले तथा कोकिलके तुल्य अतीव मधुरश्रुति प्रिय संलाप करतेहुए सब लोग विविध प्रकार के पुष्पों के समूहसे समुज्वल परम प्रशस्त उस ब्रह्मा के वन में प्रविष्ट हुए थे । समस्त देवों के द्वारा सम्प्राप्त वह जोकि स्वर्ग के नन्दन वन के सदृश था और पद्मिनी मृग एवम् पुष्पों से समन्वित था उस समय मैं बहुत ही अधिक सुशोभित हुआ । इसके अनन्तर सम्पूर्ण प्रकार के पुष्पों से समुपशोभित उस वनमें देवगणने प्रवेश किया था।३८-४१।यहाँ पर ब्रह्माजी विराजमान होंगे-इस तरह के निश्चय से उन्हें देखने की इच्छा रखने वाले समस्त देवता इन्द्र के सहित इधर-उधर सर्वत्र उस वन में भ्रमण करने लगे थे ॥४२॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्भुतस्य वनस्यांतं न ते ददृशुराशुगाः ।
विचिन्वद्भिस्तदा देव देवैर्वायुर्विलोकितः ॥४३
स तानुवाच ब्राह्माणं न द्रक्ष्यथ तपोविना ।
तदाखिन्नाविचिन्वतस्तस्मिन्पर्वततरोधसि ॥४४
धर्मनेत्रत्राणमस्मादधिकं कर्तुं हिसि ।
वाङ्मनःकायभावैस्त्वां प्रपन्नास्मः पितामह ॥४५
एवंस्तुतस्तदा देवैर्ब्रह्मा ब्रह्मविदां वरः ।
प्रदास्यामि स्मृतोबाढममोघं दर्शनं हि वः ॥४६
ब्रुवनुवांछितपुत्राःप्रदास्यामि वरान्वरान् ।
एवमुक्ता भगवतादेवा वचनमब्रुवन् ॥४७
एषएवाद्य भगवन्सु पर्याप्तोसहान्वरः ।
जनितोनः सुशब्दोऽयकमलंक्षिपतात्वया ॥४८
किमर्थं कंपिताभूमिर्लोकाश्चाकुलिताकृताः ।
नैतन्निरर्थकं देव उच्यतामत्र कारणम् ॥४९

अत्यन्त शीघ्रता से गमन करने वाले भी ने कब उस परम अद्भुत वन का अन्त न देख पाये थे । उस समय में सब ब्रह्माजी की खोज करने वाले देवों ने वायु को देखा था।।४३।।उस वायु ने उन सबसे कहा था कि आप लोग तपश्चर्या के बिना ब्रह्माजी को नहीं देख सकेंगे । उस समय उस पर्वतों के मध्य में ब्रह्मा को ढूँढते हुए सब अत्यन्त खिन्न हो गये थे ।४४। देवों ने वहाँ पर ब्रह्मा का बहुत कुछ स्तवन किया था और कहा—हे धर्मनेत्र ! इतने ही से आप हमारी रक्षा करने के योग्य होते हैं । हम सभी लोग मन-वाणी और शरीर से आपकी शरणागति में समुपस्थित हो गये हैं । हे पितामह ! हमारे ऊपर अनुग्रह कीजिए।४५।इस प्रकार से देवगण के द्वारा स्तुति किये गये ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ ब्रह्माजीने कहा था-आप लोगों के द्वारा स्मृत हुआ मैं आप सभी को अपना दर्शन दूंगा।४६।हे पुत्रो? आप लोग अपना अभीप्सित बतलाओ । मैं आपको श्रेष्ठ वरदान प्रदान करूँगा इस रीति से कहे गये देवताओं ने अपने वचन कहे थे ॥४७।।हे भगवन् !

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह ही आज बहुत ही पर्याप्त (काफी) महान् वरदान है कि आपने अपने हाथ के कमल को फेंकते हुए यह बड़ा ही सुन्दर, शब्द समुत्पन्न हमारे लिये पैदा कर दिया। था४८।यह समस्त भू-मण्डल आपने किस प्रयोजन की सिद्धि के लिये प्रकम्पित किया है और ये लोक सब क्यों व्याकुल कर दिये हैं ? हे देव ! यह सब कुछ बिना किसी प्रयोजन के व्यर्थ तो नहीं है। इसका अवश्य ही कुछ प्रयोजन है आप इसका जो भी कारण हो उसे ही बताने का अनुग्रह करें ॥४६॥

युष्मद्धितार्थमेतद्वै पद्म विनिहितंमया।
देवतानां च रक्षार्थं श्रूयतामत्रकारणम् ॥५०
असुरोवज्रनाभोऽयं बालवापहारकः
अवस्थितस्त्ववष्टभ्यरसातलतलाश्रयम् ॥५१
युष्मदागमनं ज्ञात्वा तपस्थान्निहितायुधान्।
हतुकामोदुराचारःसेंद्रानपि दिवौकसः ॥५२
घातःकमलपातेन मयातस्यविनिर्मितः।
स राज्येश्चर्यदर्पिष्ठस्तेनासौनिहतोमया ॥५३
लोकेऽस्मिन्समये भक्ताब्राह्मणा वेदपारगाः।
मैव ते दुर्गति यांतुलभंतांगतिंपुनः ॥५४
देवानां दानवानांच मनुष्योरगरक्षसाम्।
भूतग्रामस्यर्वस्य समोऽस्मित्रिदिवौकसः ॥५५
युष्मद्धितार्थं पापोऽसौमयामंत्रेंणघातितः।
प्राप्तःपुण्यकृतांलोकान्कमलस्यास्यदर्शनात् ॥५६

इस पर ब्रह्माजी ने कहा—मैंने आप सब लोगों की भलाई के लिये ही यह पद्म विशेष रूप से निहित किया है। इस कमल का फेंका जाना देवताओं की रक्षा करने केलिये हो हुआ है। इसमें जो भी कारण है उसे सुन लो।५०।यह वज्रनाभ नाम वाला असुर है जो बाल जीवोंके अपहरण करने वाला है। वह रसातल के तल को अपना आश्रय बनाकर तथा उसे अवष्टब्ध करके अवस्थित हो रहा है। आप सबका यहाँ आगमन जानकर तपश्चर्या में स्थित निहित आयुधों वाले आप सबकेहनन करने की इच्छा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला वह दुष्ट आचार वाला था। वह इन्द्र के सहित सभी देवताओं को मार डालने की इच्छा कर रहा था५१-५२। ने इस कमल के गिरा देने से उसका घात कर दिया था। वह अपने राज्यके ऐश्वर्यसे बहुतही अत्यत घमण्ड वाला था। इससे मैंने उसको मार डाला है।५३।इस समय लोक में वेदों के पारगामी ब्राह्मण भक्त सभी दुर्गतिको प्राप्त न होवें और सभी पुनः सुगति का लाभ करें।५३।हे देवगण ! मैं तो देवों के दानवोंके,मनुष्यों के, उरगों के, राक्षसोंके और सम्पूर्ण प्राणिमात्रके लिये समान हूँ अर्थात् सभी का कल्याण चाहने वाला हूँ।५५। आप सभी के कल्याण करने क लिए मैंने इस महान् पापात्मा का मन्त्र से घात किया है और अब वह इस कमलके दर्शन से ही पुण्यकारी लोकों को प्राप्त हो गया है ॥५६॥

यन्मयापद्ममुक्तं तु तेनेदपुष्कर भुवि ।
ख्यातंभविष्यते तीर्थं पावन पुण्यदंमहत् ॥५७
पृथिव्यां सर्वज तूनाम्पुण्यदं परिपठ्यते ।
कृतोह्यनुग्रहोदेवा भक्तानां भक्तिमिच्छताम् ॥५८
वनेऽस्मिन्नित्यत्रासेन वृक्षै रभ्यर्थितेनच ।
महाकालोवनेऽत्रागादागतस्य ममानघाः ॥५९
तपस्यतांच भवतांमहज्ज्ञानं प्रदर्शितम् ।
कुरुध्वं हृदयेदेवाः स्वार्थं चैव परार्थकम् ॥६०
भगद्भिदर्शनीयं तु नानारूपधरंर्भुवि ।
द्विषन्वैज्ञाननंविप्रं पापेर्नेवार्दितोनरः ॥६१
नविमुच्येत पापेन जन्मकोटिशतैरपि ।
वेदांगपारगं विप्रं नहन्यान्नचदषयेत ॥६२
एकस्मिन्निहते यस्मात्कोटिर्भवतिघातिता ।
[illegible] वेदातग विप्रं भोजयेच्छ्रद्धयान्वितः ॥६३

मैंने जो यह पद्म मुक्त किया है इससे भू मण्डल में यह पुष्कर [illegible]सिद्ध होगा जो कि परम पुण्य के प्रदान करन वाला एक महान् पावन तीर्थ होगा।५७।पृथ्वी में समस्त जन्तुओंको पुण्य प्रदान कराने वाला कहा जाता है। हे देवगण ! भक्तिकी इच्छा रखने वाले भक्तोंके लिए मैंने यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुग्रह ही किया है।।५८।।इस वनमें निवास करने से और वृक्षों के द्वारा अभ्यर्थित होने से मेरा यहाँ पर आये हुए की महान् मान होगा है ।५९। हे अनघो ! तपस्या करने वाले आप लोगों को महान् ज्ञान प्रदर्शित होगा हे देवताओं ! आप लोग हृदय में स्वार्थ तथा परार्थ दोनों ही करो ।६०। भू-मण्लडमें नाना रूपोंके धारण करने वाले आपको द्वेष मात्र रखने वाले और ज्ञानी विप्र देखने योग्य होंगे यह मनुष्य पाप के द्वारा ही अर्दित हो रहा हैं ।।६१।।सैकड़ों करोड़ जन्मों में भी पाप से विमुक्त नहीं होता है । अतएव जो वेद का पारगामी विप्र है उसका हनन तथा दूषण नहीं करना चाहिए।६२।एक का भी विहनन करनेसे करोड़ों की घात हो जाया करती है इतना महान् पाप है । एक वेदान्त शास्त्रके पूर्ण ज्ञान रखने वाले विप्र की परम श्रद्धा से समन्वित होकर भोजन कराना चाहिए ।।६३ ।

क्षेत्रनिवेशया मासयथा त्वत्कथयामिते ।
उत्तरे चद्रनद्यास्तु प्राची यावत्सरस्वती ।।६४
पूर्वंतुनदनात्कृत्स्नंथावत्कलषसतुष्करम् ।
वेदोह्येषाकृतायज्ञे ब्रह्मणालोककारिणा ।।६५
ज्येष्ठतुप्रथमंत्रयतीर्थं त्रैलोक्यपावनम् ।
ख्यातंतद्ब्रह्मदैवत्यं मध्यम वैष्णवं तथा । ६६
कनिष्ठ रुद्रदैवत्यं ब्रह्मा पूर्वमकारयत् ।
आद्यमेतत्पर क्षेत्रं गुह्यं वेदेषु पठ्यते ।।६७
अरण्य पुष्कराख्यं तु ब्रह्मासन्निहित प्रभुः ।
अनुग्रहोभूमिभागेकृतोवैब्रह्मणास्दयम् ।६८
अनुग्रहार्थं विप्राणां सर्वेषांभूमिचारिणाम् ।
सुवर्णवज्रपर्यंता वेदिकांका महीकृता ।।६९
विचित्रकुट्टिमारत्नः कारितासर्वशोभना ।
रमतेतत्र भगवान्ब्रह्मालोकपितामहः ।।७०

ब्रह्माजीने देवों से कहा—इस क्षेत्र में जो भी मैंने निवेशित किया है वह सब ठीक-ठीक तुमको बतलाता हूँ । चन्द्र नदीके उत्तरमें जब तक प्राची

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् पूर्व दिशा ही सरस्वती है ।।६४।। नन्दन से पूर्व जितना भी सम्पूर्ण कल्प है वह पुष्कर है । लोकों के धारण करने वाले ब्रह्मा ने यज्ञ में यह वेदी बनाई थी।६५।सबसे बड़ा, प्रथम और त्रिलोकी में परम पावन इस तीर्थ को समझना चाहिए । इसके अधिष्ठातृ देवता ब्रह्माजी हैं-ऐसा ही प्रसिद्ध है । तथा जो मध्यम तीर्थ हैं वह वैष्णव है अर्थात् उसके अधिष्ठातृ देवता विष्णु हैं।६६।सबसे छोटा रुद्र के अधिष्ठातृ देवता वाला तीर्थ है । ऐसा ही ब्रह्माजी ने पहिले किया था, यह परम श्रेष्ठ आद्य क्षेत्र है जो वेदों में अति गोपनीय पढ़ा जाता है।६६।पुष्कर नाम वाला जो अरण्य(वन) है वहाँ पर प्रभु ब्रह्मा सन्निहित रहा करते हैं । इस भूमि के भाग में ब्रह्माजी ने स्वयं परम कृपा की है।६८।समस्त भूमि पर विचरण करने वाले विप्रों के ऊपर अनुग्रह करने के लिये इस मही को सुवर्ण वज्र पर्यन्त वेदिका के अंकवाली कर दिया है ।६९।यह वेदी।अति विचित्र कुट्टिम रत्नों से सब प्रकार की शोभा वाली बनादी है जहां पर भगवान् पितामह ब्रह्मलोक के अधिष्ठाता रमण किया करते हैं ।।७०।।

विष्णुरुद्रौतथादेवौवसवोऽप्यश्चिनावपि ।
मरुतश्चमहेंद्रण रमंतेचदिवौकसः ।।७१
एतत्तै तथ्यमाख्यातलोकानुग्रहकारणम् ।
सहितानुक्रमेणात्रमंत्रैश्चविधिपूर्वकम् ।।७२
वेदान्पठन्तियेविप्रा गुरुशुश्रूषणेरताः ।
वसंति ब्रह्मसामीप्येसर्वेतेनानुभाविताः ।।७३
भगवान्केनबिधिनाअरण्येपुष्करेनरैः
ब्रह्मलोकमभीप्सद्भिवस्तव्यंक्षेत्रवासिभिः ।।७४
किमनुष्यैरुमस्त्रीभिरुतवर्णाश्रमान्वितैः ।
वसद्भिः किमनुष्ठेयमेतत्सर्वं ब्रवीहिमे ।।७५
नरैःस्त्रीभिश्चवस्तव्यंवर्णाश्रमनिवासिभिः ।
स्वधर्माचारनिरतैर्दम्भमोहविवर्जितैः ।।७६

यहाँ पर भगवान् विष्णु रुद्र, इन्द्रदेव, अश्विनीकुमार, मरुत्, महेन्द्र तथा अन्य सब देवगण भी रमण किया करते हैं।७१।यह परम सत्य मैंने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बता दिया है जो लोगों के ऊपर अनुग्रह के लिए ही किया गया है। यही इसका कारण है। यहाँ पर जो विप्र संहिता के अनुक्रम से वेदों का पाठ किया करता है तथा विधि-विधान के सहित मन्त्रों से वेदोंको पढ़ते हैंऔर अपने गुरुचरण की सेवा में अनुरक्त रहाकरते हैं वे सब अनुभावित होते हुए ब्रह्मके ही समीप में निवास किया करते है।७२-७३। भीष्म ने पूछा था— हे भगवन् ! इस अरण्य में मनुष्यों को किस विधि से निवास करना चाहिए जो कि ब्रह्मलोक की इच्छा रखने हैं और इस क्षेत्र में वास किया करतेहैं मनुष्यों को, स्त्रियों को और वर्णाश्रमों से युक्त रहने वालों को यहाँ निवास करते हुए क्या करना चाहिए-यह सब कृपाकर हमको बताइये। पुलस्त्य मुनि ने कहा—पुरुषों को तथा स्त्रियों को वर्णाश्रम के अनुसार ही अपने-अपने धर्मों का आचार पालन करते हुए मोह और दम्भ से रहित होकर यहाँ पर निवास करना चाहिए ॥७४-७६॥

॥ ब्रह्मदेव कृत यज्ञ वर्णन ॥

यदेतत्कथित ब्रह्मंस्तीर्थं महात्म्यमुत्तमम् ।
कमलस्याभिपातेन तीर्थंजातधरातले ॥१
तत्रस्थेन भगवता विष्णुना शकरेण च ।
यत्कृतं मुनिशार्दू ल तत्सर्वं परिकीर्त्तय: ॥२
कथं यज्ञो हृदेवेन विभुना तत्र कारित: ।
केसदस्याऋत्विजश्च ब्राह्मणः केसमागताः ॥३
के भागास्तस्य यज्ञस्य किंद्रव्यं काचदक्षिणा ।
कावेदीकिंप्रमाणंचकृत तत्र विरिंचना ॥४
योयाज्यः सर्वदेवानां वेदै:सर्वत्र पठ्यते ।
कंचकाममभिध्यायन्वेधायज्ञंचकार ह ॥५
यथासौदेवदेवेशो ह्यमरश्चामरश्चह ।
तथाचैवाक्षयः स्वर्गस्तस्य देबस्य देवस्य दृश्यते ॥६
अन्येषांचैवदेवानांदत्त:स्वर्गोमहात्मना ।
अग्निहोत्रार्थं मुत्पन्नावेदाओषधयस्तथा ॥७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीष्म ने कहा—हे ब्रह्मन् ! आपने पुष्कर तीर्थ का अत्यन्त उत्तम माहात्म्य का वर्णन किया है जो कि इस धरातल में ब्रह्माजी के हाथ से गिरे हुए कमलसे यह तीर्थ हुआ है।१।हे मुनियोंमें शार्दूल ! अब आप यह वर्णन करने की कृपा कीजिये कि उस तीर्थ में स्थित भगवान् विष्णु और शंकरने जो कुछ भी क्या किया था।।२।।विभुदेव ने वहां पर किस प्रकारसे यज्ञ कराया था। उस यज्ञ में कौन-कौन ब्राह्मण वहाँ आये थे और उस यज्ञ के सदस्य तथा ऋत्विज बने थे।।३।।उस यज्ञ के कितने कौन-कौन से भाग थे। उसमें क्या-क्या द्रव्य थे और क्या उसकी दक्षिणा थी। उसकी वेदी कैसी और कितनी लम्बी-चौड़ी ब्रह्माजीने वहाँ आकर बनाई थी।४ जो समस्त देवों का यजन करने के योग्य है वह वेदों के द्वारा सर्वत्र पढ़ा ही जाता है। वेधा ने किस कामना के लिए यह यज्ञ वहाँ पर किया था ।।५।।जिस प्रकार से यह देवों का भी देवेश्वर जरा (वृद्धावस्था) और मृत्यु से रहित है तथा उस देव का कभी क्षय को प्राप्त न होने वाला स्वर्ग दिखलाई देता है ।।६।। इस महान् आत्मा वाले ने अन्य देवों को स्वर्ग प्रदान किया है। अग्निहोत्रका कार्य संपादन करने के लिये ये समस्त वेद एवं ओषधियाँ समुत्पन्न हुए हैं ।।७।।

येचान्येपशवोभूमासर्वेतेयज्ञकारणात् ।
सृष्टा भगवतानेनइत्येषा वैदिकीश्रुति ।।८
तदत्रकौतुकंमह्यं श्रुत्वेदतवभाषितम् ।
यंकाममधिकृत्यैकं यत्फलं यां च भावनाम् ।।९
कृतश्चानेनवैयज्ञःसर्वंशंसितुमर्हसि ।
शतारूपा च यानारीसावित्रीसात्विहाच्यते ।।१०
भार्यासाब्रह्मणःप्रोक्ताऋषीणांजननीचसा ।
पुलस्त्याद्यान्मुनीन्सप्तदक्षाद्यास्तुप्रजापतीन् ।।११
स्वायंभुवादीश्चमनून्सावित्रीसमजीजनत् ।
धर्मपत्नीतुतांब्रह्मापुत्रिणीमात्मनःप्रियाम् ।।१२
पतिव्रतांमहाभागांसुव्रतांचारुहासिनीम् ।
कथंसतीपरित्यज्यभार्यामन्यामविदत ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विःन स्त्रीकिंसमाचाराकस्यसातनयाविभोः ।
क्वसादृष्टाहिदेदेनकेनचास्यप्रदर्शिता ।।१४

इस भूमि पर जो ये सब पशु हैं ने सभी यज्ञ कार्य की पूर्ति करने के कारणसे ही इन भगवान्के द्वारा सृजित कियेगये हैं—ऐसी वेदोक्त श्रुति है।८।इस विषयमें मुझे आपके इस भाषण को श्रवणकर बड़ा भारी कौतुक होता है। जिस कामना को लेकर या जिस भावना को हृदय में रखकर जो किया जाता है उसका एक फल होता है।९।इन महापुरुषों ने यज्ञ क्रिया था सो यह सभी आप मुझे बताने के योग्य होते हैं। जो शतरूपा नारी थी वह सावित्री कहीं जाती है१०वह ऋषियों को जन्म देने वाली माता है पलस्त्य आदि मुनियों को और दक्ष प्रभृति सात प्रजापतियों को एवं स्वायम्भव आदि मनुओं को उसी सावित्री ने जन्म प्रदान किया था। से ब्रह्मा की भार्या वताया गया है। अपनी प्रिय पुत्री उस धमपत्नी को ब्रह्माजी ने जो कि परम पतिव्रता—सुभगा,सुव्रता,सती और चारुहासिनी थी, उसका परित्याग कर कैसे दूसरी भार्याको प्राप्तकर लिया था।१ । वह किस नाम वाली थी, उसका आचार क्या था और वह किसकी पुत्री थी? देवदेव ने उसको कहाँ पर देखा था और किसने इनको इन दिखलाया था? ।।१०।।

किंरूणसातुदेवेशींदृष्टाचित्तविमोहिनी ।
यांतुदृष्ट्वासदेवेशःकामस्यवशमोयवान् ।।१४
वर्णतोरूपतश्चैवसावित्र्यास्त्वधिकामुने ।
यामोहितवतीदेवंसर्वलोकेश्वरविभम् ।।१६
यथागृहीतवान्देवोनारींतांलोकसुन्दराम् ।
यथाप्रवृत्तायज्ञाऽसौतयासवप्रकातंय ।। ७
तांदृष्ट्वाःपार्श्वेसावित्रींकिंचकारह ।
सावित्र्यांतुतदाब्रह्माकांतुवृत्तिमवर्त्तत ।।१८
सन्निधोकानिवाक्यानिसावित्रीब्रह्मणातदा ।
उक्ताप्युक्तवतीभूयःसर्वं शंसितुमर्हसि ।।१९
किंकततत्रयुष्ताभि.कोपोवाथक्षमापिवा ।
यत्कृतं तत्रयद्दृष्टं यजवोत्त मथार्तिर्हं ।।२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विस्तरेणेहसर्वाणिकर्माणिपरमेष्ठिनः ।
श्रोतुमिच्छास्यशेषेणविधेर्यज्ञविधिंपरम् ।।२१

वह देवी किस प्रकाप के रूप-सौन्दर्य वाली थी जो कि चित्त को विमोहित करने वाली देखी गई थी जिसका एकबार ही दर्शन करके यह देवेश्वर काम के वशीभूत होगये थे।१५।हे मुने ! क्या यह सुन्दर वर्ण और रूप लावण्य में सावित्री से भी अधिक थी जिसने समस्त लोकों के स्वामी वभू को भी इस प्रकार से मोहित कर लिया था ? ।१६। जिस प्रकार से इस देवेश्वर ने उस लोक सुन्दरी को ग्रहण किया था और जिस राति से उनके द्वारा यह यज्ञ प्रवृत्त किया गया था यह सब कुछ आप वर्णन करिये ।१७।ब्रह्माजी के समीप में ग्रहण की हुई उसनारी को देखकर फिर सावित्री ने क्या किया था और सावित्री के विषय में उस समय में ब्रह्मा से किस वृत्ति का बरताव किया था ।१८। उस समय में ब्रह्मा के समीप में सावित्री ने कौन से वाक्य कहे थे और उसके कहने पर फिर उससे क्या कहा गया था? यह सभी कुछ आप बतानेका अनुग्रह कीजिए।१९।आपने कोप अथवा क्षमा किसलिए किया था और जो कुछ किया था तथा आपका वहाँ जो देखा था एवं मैंने कहा था—इन सबको परमेष्ठी के कर्मों को मैं पूर्ण रूप से श्रवण करने की इच्छा करता हूँ तथा विधाता की यज्ञ की विधि भी सुनना चाहता हूँ ।।२०-२१।।

प्रश्नभारोमहानेष त्वयोक्यो ब्रह्मणश्चयः ।
यथाशक्तितु वक्ष्यामि श्रूयतांतत्परं यशः ।।२२
सहस्रांस्यं सहस्राक्ष सहस्रचर .चयम ।
सहस्रश्रवणं चैव सहस्रकरमव्ययम् ।।२३
सहस्रजिह्व साहस्रं सहस्रपरमंप्रभुम् ।
सवस्रद सहस्रादिं सहस्रभुजमव्ययम् ।।२४
हवनं सवनं चैव हव्यंहोतारमेव च ।
पात्रणि च पवित्राणि वेदीं दीक्षां चरुंस्रुवम् ।।२५
स्रुक्सोममवभृच्चैव प्रोक्षणी दक्षिणाधनम् ।
अद्ध्वर्युं सामगं विप्र सदस्यान्सदनंसदः ।।२६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूपं समित्कुश दर्वी चमसोलखलानि च ।
प्राग्वंशं यज्ञभूमिं च होतारं बन्धनचयत् ।।२७
ह्रस्वान्यतिप्रमाणानिप्रमाणस्थावराणिच ।
प्रायश्चित्तानिवाजाश्चस्थण्डलानिकुशास्तथा ।।२८

पुलस्त्य मुनि ने कहा—आपने ब्रह्माके विषय में बहुत से प्रश्नों का बोझा मेरे समक्ष में रखदिया है । मैं अपनी शक्ति के अनुसार बतलाता हूँ। उस परम यश का आप श्रवण करो।२२।वह सहस्र मुखोंसे युक्त है, सहस्र नेत्र सहस्र जिह्वा हैं । वह सहस्रों सहस्र परम प्रभु हैं । सहस्रों के प्रदान करने वाले सहस्रादि तथा अक्षय भुजाओं वाला है ।।२४।। हवन—सवन—हव्य—होता -पवित्र पात्र—वेदी—दीक्षा—चरु-स्रुव—स्रुक्—सोम—अवभृथ—प्रोक्षणी—दक्षिणा देने के लिये धन—सामवेद का गान करने वाला विप्र—सद्स्य—सदन—सद—यूप—समिधा—कुश—दर्वी—धमस—उलूखल—द्राग्वंश—यज्ञभूमि—होता और जो बन्धन हैं । ये ह्रस्व हैं और अत्यधिक प्रमाण वाले तथा स्थावर प्रमाण वाले हैं । प्रायश्चित-वाज-स्थण्डिल और कुशाऐं भी उसी प्रकार के हैं ।।२५-२८।।

मंत्रयज्ञं च हवनं त्र्हिनभागं भवंचमम् ।
अग्रेभुज होमभुज शुभार्चिषमुदायुधम् ।।२९
आहुर्वेदविदोविप्रा योयज्ञःशाश्वतःप्रभु ।
यां पृच्छासि महाराजपुण्यांदिव्यामिमांकथाम् ।।३०
यदर्थं भगवान्ब्रह्माभूमौ यज्ञमथाकरोत् ।
हितार्थंसुरमर्त्यानांलोकानांप्रभवायच ।।३१
ब्रह्माथ कपिलश्चैव परमेष्ठी तथैव च ।
देवाः सप्तर्षयश्चैव त्र्यबकश्च महायशाः ।।३२
सनत्कुमारश्चमहानुभावो मनमहात्मा भगवान्प्रजापतिः
पुराणदेवोऽथ तथा प्रचक्रे प्रवीप्तबश्वानरतुल्यतेजः ।३३
पुरा कमलजातस्य स्वपतस्तस्यकोटरे ।
पष्करे यत्र सभूतादेवाऋषिगणास्तथा ।।३४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एषपौष्करकोनामप्रादुर्भावोमहात्मनः ।
पुराण कथ्यतेयत्र वेदस्मृतिसुसंहितम् ।।३५

मन्त्र, यज्ञ, हवन, वह्नि भाग, भव, चम, अग्नि भुज, होम भुज, शुमर्वि और उदायुध को वेदों के ज्ञाता विप्रों ने बताया है । जो यज्ञ है वह शाश्वत प्रभु है । हे महाराज ! आपजो परम दिव्य एक पुण्यमयी कथा को मुझसे पूछ रहे हैं । भगवान् ब्रह्माने भू-मण्डलमें जिस लिये यह किया था उसका कारण देवगण और मनुष्यों का हित का सम्पादन तथा लोकों के प्रभवके लिये किया था ।२९-३१। इसके अनन्तर ब्रह्मा-कपिल-परमेष्ठी-देवगण—सप्तऋषि—महान् यश वाले त्र्यम्बक-महानुभाव सनत्कुमार-महात्मा मनु भगवान् प्रजापति और प्रदीप्त अग्नि के समान तेज वाले पुराण देव किये गए थे ।। ३२-३३ ।। पहिले समय में शयन करने वाले कमल से समुत्पन्न होने वालेके कोटर पुष्करमें देवता तथा ऋषिगण उत्पन्न हुए थे ।।३४।।महान् आत्मा वाले का यह पौष्कर नाम वाला प्रादुर्भाव है जिसमें वेद स्मृति से सुसंहित पुराण कहा जाता है ।।३५।।

वराहस्तश्रुतिमुखः प्रादुर्भूतोविरिंचिनः ।
सहायार्थं सुरश्रेष्ठो वाराहं रूपमास्थितः ।।३६
विस्तीर्णं पुष्करे कृत्वा तीर्थं कोकामुखं हि तु ।
वेदपादोयूपदंष्ट्रःक्रतुहस्तश्चितीमुखः ।।३७
अग्निजिह्वोदर्भरोमाब्रह्मशीर्षोमहातपाः ।
अहोरात्रेक्षणोदिव्योवेदांगः श्रुतिभूषणः ।।३८
आज्यनासः स्रुवतुंडःसामघोषस्वनोमहान् ।
सत्यधर्ममयः श्रीमान्कर्मविक्रमसत्कृतः ।।३९
प्रायश्चित्तनखोधीरः पशुजानुर्मखाकृतिः ।
उदगात्रन्त्री होमलिंगो फलबीजमहौषधिः ।।४०
वाऽवंतरात्मा मन्त्रास्थिरापः स्फिक् सोमशोणितः ।
वेदस्कन्धो हविर्गंधो हव्यकव्यातिवेगवान् ।।४१
प्राग्वंशकायोद्युतिमान्नानादीक्षाभिरर्चितः ।
दक्षिणाहृदयोयोगीमहासत्रमयोमहान् ।।४२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रुति के मुख वाला वराह (विरञ्चि ब्रह्मा) से प्रादुर्भूत हुआ था सुरगण में परम श्रेष्ठ देवने सहायता करने के लिये ही वाराह रूपको धारण किया था।३६।पुष्कर में कोका मुख तीर्थ को विस्तार युक्त करके इस रूप मे समास्थित हुए थे। वेद जिसके चार चरण थे और यूप दाढ़ें थीं, क्रतु हस्त थे तथा चिती मुख वाले थे।३७।अग्नि की जिह्वा--दर्भोंके रोम और ब्रह्म के मस्तक वाले महान् तप से युक्त उनका स्वरूप था। अहोरात्र ही उनके दोनों नेत्रथे तथा वेदोंके अङ्ग श्रुति भूषण थे।३८।आज्य अर्थात् घृत ही उनकी नासिका थी स्रुव तुण्ड था। सामवेद की ध्वनि ही उस बाराह रूपधारी प्रभु का घोष था जो कि अति महान् था। श्री से सम्पन्न वाराह भगवान् सत्य और धर्मसे परिपूर्ण थे तथा कर्म एवम् विक्रमसे सत्कार युक्त थे।३९।प्रायश्चित ही उनके नख थे, धीर उनके पशु जानु थे और मख की आकृति वाले थे।उग्दातन्त्र—होम लिङ्ग वाले, फल, बीज और महौषधिसे युक्त वायु की अन्तरात्मा वाले, मन्त्रों की अस्थियों से युक्त थे। जल ही उनके स्फिक् थे और सोम रुधिरथा, वेद स्कन्ध थे, हवि गन्ध था और हव्य तथा तव्य रूपी वेगसे संयुत थे।४०-४१।प्राग्वंश उनका शरीर था, वेद्युति युक्त से थे तथा अनेक प्रकार की दीक्षाओं से समर्चित थे। दक्षिणा उनका हृदय था बाराह भगवान् योगी और महान् सत्र से परिपूर्ण थे ॥४२॥

उपाकर्मेष्टिरुचिरःप्रवर्ग्यावर्तभूषणः।
छायापत्निसहायोवैमणिश्रृङ्गमिवोच्छ्रितः ॥४३
सर्वलोकहितात्मायोदंष्ट्रयाम्भुज्जहारगाम्।
ततःस्वस्थानमानोयपृथिवींपृथिवीधरः ॥४४
तताजगामपृथिवी निर्वाणधारणाद्धरेः।
एवमादिवराहेण धृत्वाब्रह्महितार्थिता ॥४५
उद्धृता पुष्करेपृथ्वोसागरां बुगतापुरा।
वृतः शमदमाभ्यांयोदिव्येकाकामुकेस्थितः ॥४६
आदित्यैर्वसुभिःसाध्यैमरुद्भिर्दैव तैःसह।
रुद्रै विश्वसहायश्च यक्षराक्षसकिन्नरं ॥४७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिग्भिर्विदिग्भिः पृथिवीनदीभिः सह सागरैः ।
चराचरगु श्रीमान्ब्रह्माब्रह्मविदांवरः ।४८
उवाच वचनंकोकामुखंतीर्तंत्वयाविभो ।
पालनीयसदागोप्यरक्षाकार्यामखेत्विह ।।४६
एवंकरिष्येभगवस्तदाब्रह्माणमुक्तवान् ।
उवाचतंपुनर्ब्रह्माविष्णुदेवंपुरः स्थितम् । ४०

उपाकर्म दृष्टि से रुचिर और प्रवर्ग्यावर्त्त के भूषण वाले थे । छाया रूपिणी पत्नीकी सहायता वाले और मणियोंकी शिखर की भाँति अत्युन्नत स्वरूप था।।४३।समस्त लोकोंकी हित-कामना से पूर्ण उस वाराह भगवान् ने अपनी दंष्ट्रा से भूमिका उद्धार किया था । इसके अनन्तर उन वाराह रूपी पृथ्वीधर भगवान् ने अपनी दाढ़ पर पृथ्वी को उठाकर अपने स्थान पर उसे ले आये थे।४४।इसके पश्चात् हरि के द्वारा धारण करने से वह पृथ्वी भी निर्वाण को प्राप्त हो गई थी । इस तरह से ब्रह्मा के हित करने वाले भगवान् आदि वाराह ने पृथ्वी को दाढ़ पर धारण किया था और समुद्र के जल के मध्य में गई हुई पृथ्वी का पहिले पुष्करमें उद्धार किया था । जो शमदमों से युक्त दिव्य कोका मुख में स्थित हो गये थे।४५-४६। समस्त आदित्य-वसुगण-साध्य-मरुद्गण और देवों के साथ, रुद्रगण, विश्व के सहायक यक्ष—राक्षस और किन्नरों के सहित, दिशा, विदिशा, पृथिवी नदी और समस्त सागरों के साथ ब्रह्म के वेत्ताओंमें परम श्रेष्ठ चर और अचर सबसे गुरु श्रीमान् ब्रह्माजीने कोका मुख तीर्थ से यह वचन कहे थे हे विभो ! तुमको मेरे वचनों का पालन करना चाहिए और सदा उनको गोपनीय रखना । यहाँ पर तुमको मख में रक्षा करनी चाहिए।४७-४६तब उनने ब्रह्माजी से कहा था—हे भगवन् ! मैं इसी प्रकार से करूँगा इसके पश्चात् पुनः समक्ष में संस्थित विष्णुदेव से ब्रह्माजी ने कहा था ।।५०।।

त्वं हि मे परमोदेवस्त्वहि मे परमोगुरुः ।
त्वं हि मेपरनंधामशक्रादीनां सुरोत्तम ।।५
उत्फुल्लामलपद्मक्ष शत्रु पक्षक्षयावह ।
यथायज्ञ न मंध्वंसोदानवश्चविधीते ।।५२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथात्वयाविधातव्यंप्रणतस्यनमोऽस्तुते ।
भयंत्यजस्वदेवेशयंनेष्यामिदानवान् ।५३
येचान्येविघ्नकर्तारोयातुधानास्तथासुराः ।
घातयिष्यास्यहसर्वान्स्वास्तेस्तपितामह ।५४
एवमुक्त्वास्थितस्तत्रसाहाय्येन कृतक्षणः ।
प्रववुश्चशिवावाताः प्रसन्नाश्चदिशोदश ।५५
सुप्रभाणिचज्योतींषिचंद्रं चक्रुः प्रदक्षिणम् ।
नवग्रहंग्राश्चक्रुः प्रसेदुश्चापि सिंधवः ।५६

हे शक्र आदि में श्रेष्ठ देव ! आप ही मेरे परम देव हैं और आप ही मेरे परम गुरु हैं । हे देवेश्वर ! आप ही मेरे परम धाम हैं ।५१। हे विकसित विशुद्ध कमल के समान नेत्रों वाले ! आप तो शत्रुओं के पक्ष का क्षय कराने वाले हैं । दानवों द्वारा मेरे यज्ञ का ध्वंस किया जाता है सो आप कृपया ऐसा करिए जिससे वह न हो मैं आपकी सेवा में प्रणत हूँ और मेरा आपको नमस्कार है । हे देवेश ! आप भय का त्याग कर दीजिए । मैं दानवों का क्षय कर दूँगा ।५२-५३। और जो अन्य विघ्नों के करने वाले है चाहे वे यातुधान हो या असुर हों, मैं उन सबको मार डालूँगा । हे पितामह ! आपका कल्याण हो ।५४। इस प्रकार से कहकर सहायता से कृतक्षण अर्थात परम प्रसन्न होता हुआ वहाँ पर स्थित हो गये थे । उस समय में मंगलकारी वायु वहन करने लगा और दशों दिशाएं अत्यन्त प्रसन्न दिखलाई देने लगीं ।५५। आकाश में जितने भी ग्रह नक्षत्र आदि थे वे सब उत्तम प्रभा वाले होकर चन्द्रमा की प्रदक्षिण करने लगे थे । ग्रह परस्पर में विग्रह नहीं करने वाले हो गये तथासिन्धु भी प्रसन्न थे ।५६।

नीरजस्काभूमिरासीत्सकलः हृदयस्त्रयः ।
जग्मुः स्वमार्गंसरितोनापिचुक्षुभुरर्णवाः ।५७
आसञ्शुभानींद्रियाणिनराणामतरात्मनाम् ।
महर्षयोवीतशोकावेदानुच्चैरवाचयन् ।५८
यज्ञ तस्मिहविः पाकेशिवआसंश्चपावकाः ।
ऽवृत्तधर्मंसद्वृत्तलोकामुदितमानसाः ।५९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णोः सत्यप्रतिज्ञस्यश्रुत्वाऽरिनिधनागिनः ।
ततोदेवाः समायातदानवाराक्षसैस्सह ।६०
भूतप्रेतपिशाचाश्चसर्वेतत्रागताःक्रतात् ।
गन्धर्वाप्सरसश्चैवनागाविद्याधरागणाः ।६१
वानस्पत्याश्चौषधयोयच्चेहयच्चनेहति ।
ब्रह्मादेशान्मारुतेनआनीताः सर्वतोदिशः ।६२
यज्ञपर्वतमासाद्यदक्षिणामभितोदिशम् ।
सुराउत्तरतः सर्वे मर्यादापर्वते स्थिताः ।६३

भूमि रज से रहित हो गई थी । तीनों ह्लादी कला से से युक्त हो गये थे । समस्त नदियाँ अपने सही मार्ग में बहने लगी और सागर क्षोभ से रहित हो गए थे।५७। मनुष्यों की अन्तरारात्माओं की सब इन्द्रियाँ शुभ हो गई थीं । जो महर्षि लोग थे उनके सब शोक नष्ट हो गये थे और वे वेदी का उच्च स्वर से वाचन कर रहे थे ।५८। उस पवित्र यज्ञ में हवि कल्याणकारी था एवं पावक भी मङ्गल करने वाले थे । जितने भी लोग थे सब धर्म कार्य और सद्प्रवृत्ति में प्रवृत्ति वाले होकर प्रसन्न मन वाले थे ।५९। सत्य प्रतिज्ञा वाले भगवान विष्णु की शत्रुओं के निधन कर देने वाली श्रवण कर फिर राक्षसों के सहित दानवगण और देवता वहाँ आ गये ।६०। भूत-प्रेत और पिशाच सभी क्रम से वहाँ पर आ गये । गन्धर्व, अप्सराएँ, नाग, विद्याधरगण, वनस्पतियां और औषधियाँ जो यहाँ थीं और यहां नहीं भी थीं उनको ब्रह्मा के आदेश से मारुत ने सब दिशाओं से यहां ला दिया था ।६१।६२। यज्ञ होने वाले पर्वत पर दक्षिण दिशा में सब ओर से सुरगण उत्तर दिशा से सभी उस मर्यादा पर्वत पर स्थित हो गये थे ।६३।

गंधर्वाप्सरसश्चैवमुनयो वेदपारगाः ।
पश्चिमांदिशमास्थायस्थितास्तत्रमहाक्रतौ ।६४
सर्वदेवनिकायाश्चदानवाश्चासुरागणाः ।
अमर्षंपृष्ठतः कृत्वासुप्रीतास्तेपरस्परम् ।६५
ऋषीन्पर्यचरन्सर्वेशुश्रूषन्ब्राह्मणांस्तथा ।
ऋषयो ब्रह्मर्षयश्चैव द्विजादेवर्षयस्तथा ।६६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजर्षयो मुख्यतमास्समायातास्समं ततः ।
कतमश्च सरोऽप्यत्र क्रतौ याज्यो भविष्यति ।६७
पशवा पक्षिणश्चेवतत्रायाताहिक्षवः ।
ब्राह्मणाभोक्तकामाश्चसर्ववर्णानुपूर्वशः ।६८
स्वयचवरुणोरत्नदक्षश्चान्पस्वयददौ ।
आगत्य वरुणोलोकात्पक्वंचान्नंस्वतोऽपचत् ।६९
वायुर्भक्षविकाराश्चरसपाचीदिवाकरः ।
अन्नपाचनकृत्सोमोमतिदातबृहस्पतिः ।७०
धनदान धनाध्यक्षोवस्त्राणिविविधानिच ।
सरस्वती नदाध्यक्षोगङ्गादेवीसनर्मदा ।७१

उस महान ऋतु में गन्धर्व–अप्सरागण और वेद के पारगाभी मुनि लोग वहां पर पश्चिम दिशा में आस्थित होकर ठहर गये थे ।६४ समस्त देवों के निकाय, दानव और असुरगण पीछे से अमर्ण करके वे सब आपस में सुप्रसन्न थे ।६५। सब लोग ऋषिगण और ब्राह्मणों की शुश्रूषा करते हुए उनकी परिचर्या करते थे । वहां पर ऋषि—ब्रह्मर्षि— द्विज– देवर्षि और राजर्षि जो मुख्यतम थे वे सभी एक साथ आये थे यहाँ पर कौनसा सर इस क्रतु में यजन करने योग्य होगा ।६६-६७। पशु और पक्षी भी देखने की इच्छा रखते हुए वहाँ आये थे । भोजन की कामना वाले ब्राह्मण और सभी वर्णों वाले लोग क्रम से वहाँ उपस्थित हुए थे ।६८। वरुण देव ने स्वयं वहां उपस्थित होकर रत्न तथा दक्ष ने स्वयं आकर अन्नसमर्मित किया था । वरुण ने वहां अपने लोक से आकर पक्व अन्न को स्वयं ही पकाया था ।६९। वायु ने भक्ष विकारों को करने वाले का कार्य किया था और दिवाकर रसों का पाचन करने वाला हुआ था ।अन्न का पाचन करने वाला सोम था और मति को प्रदान करने वाले सुरगुरु वृहस्पति थे ।७०। धन का अध्यक्ष कुबेर धन का दान करता था और अनेक प्रकार के वस्त्रों को सरस्वती प्रदान कर रही थी । नर्मदा के सहित गङ्गा देवी समस्त नदियों की अध्यक्ष थीं ।७१।

देवानांसंनिधौतत्रऋषिभिश्चसमागमे ।
ब्रह्मणोदक्षिणेपार्श्वे स्थितोविष्णःसनातनः ।७२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वामपार्श्वेस्थितोरुद्रः पिनाकीवरदः प्रभुः ।
ऋत्विजांचापिवरणंकृततत्रमहात्मना ।७३
भृग्रर्होतावृतस्तत्रपुलस्त्योऽध्वर्यु सत्तमः ।
तत्रोद्गातामरीचिस्तुब्रह्मावैनारदः कृतः ।७४
सनत्कुमारादयो ये सदस्यास्तत्रतेऽभवन् ।
प्रजापतयो दक्षाद्या वर्वा ब्राह्मणपूर्वकः ।७५
ब्रह्मणश्चसमीपेतु कृता ऋत्विग्विकल्पना ।
वस्त्रै राभरणैयु क्ता कृता वैश्रवणेन ते ।७६
अंगुलीयैः सकटकै मुकुटै भूषिताद्विजाः ।
चत्वारो द्वौ दशात्येच ततस्ते शोडर्शत्विजः ।७७
ब्रह्मणा पूजिता सर्वे प्रणिपातपुरःसरम् ।
अनुग्राहो भवद्भिस्तु सर्वेरस्मिन्क्रताविह ।७८

वहाँ उस महामख में देवगण की सन्निधि में और ऋषिगण के साथ समागम में ब्रह्माजी के दक्षिण पार्श्व में सनातन विष्णु स्थित हुए थे ।७२ ब्रह्मा के बाँयें पार्श्व में पिनाक को धारण करने वाले वरदाता प्रभु रुद्र संस्थित हुए थे । वहाँ पर महान आत्मा वाले ऋत्विजों का वरण किया था ।७३। होता के पद पर वहाँ यज्ञ में भृगु ऋषि का वरण किया गया था । मरीचि ऋषि उस यज्ञ में उग्दाता थे तथा देवर्षि नारद ब्रह्मा बनाये गये थे ।७४। सनत्कुमार आदि जो अन्य थे वे सब उस यज्ञ में सदस्य हुए थे । प्रजापति दक्ष आदि जो थे ब्राह्मण पूर्वक वर्ण थे ।७५। ब्रह्मा के समीप में ऋषित्वजों की विशेष कल्पना की गई थी । वैश्रवण कुवेर ने उन सबको वस्त्र और आभूषण से समन्वित किया था ।७६। अँगूठी—कड़े और मुकुट आदि आभरणों से द्विजों को विभूषित किया गया था। इस तरह से चार, दो और दस—कुल सोलह ऋत्विज उस यज्ञ में वरण किए गए थे ।७७। इन सबका पूजन प्रणिपात के सहित ब्रह्माजी द्वारा किया गया था । ब्रह्मा ने प्रार्थना की थी कि आप सबको इस यज्ञ में मुझे पूर्णरूप से अनुग्रहीत करना चाहिए ।७८।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुसत्कृता च पत्नी सा सावित्री च वरांगना ।
अध्ववर्युणासमाहूता एहि देवि त्वरान्विता ।७६
उत्थिताश्चाग्नाः सर्वे दीक्षाकाल उपागतः ।
व्यग्रासाकार्यकरणेस्त्रीस्वभावेन नागता ।८०
सावित्रीव्याकुलादेवप्रसक्तागृहकर्मणि ।
सख्योनाभ्यांगतायावत्तावगनं मम ।८१
एवमुक्तोऽस्मि वै देव कालश्चाप्यतिवर्त्तते ।
यत्तेऽद्यरुचितं तावत्तत्कुरु व पितामह ।८१
एवमुक्तस्तदा ब्रह्मा किंचित्कोपसमन्वितः ।
पत्नीं चान्यां मदर्थे व शीघ्रं शक्र इहानय ।८३
यथा प्रवर्तते यज्ञःशालहीनो नजायते ।
तथाशीघ्रं विधत्स्त्वं नारीकांचिदुपाय ।८४
यावद्यज्ञसमाप्तिर्मेवर्णेत्वंमाकृथामनः ।
भूयोऽपितां प्रमोक्ष्यामि समाप्तौतुक्रतोरिह ।८५

वह वर अङ्गों वाली सावित्री पत्नी उस यज्ञ में भाँति-भाँति सत्कार वाली की गई थी । अध्वर्यु ने उसे बुलाया था कि हे देवि ! आप शीघ्रता से यहाँ आइये । ये सम्पूर्ण अग्नि समुत्थित हो गई और अब दीक्षा का समय उपस्थित हो गया है । वह कार्यों के करने में बहुत व्यग्र हो रही थी और स्त्रीजन स्वभाववश वहाँ नहीं आई ।७०।८०। हे देव ! सावित्री देवी इस समय में व्याकुल हैं और गृह के कार्यों में संलग्न हैं । उनसे कहा है कि जब तक मेरी सखियाँ नहीं आती हैं तब तक मेरा आगमन नहीं हो सकता है ।८१। हे देव ! मुझसे इस प्रकार कहा गया है और अब समय का अतिवर्तन हो रहा है । हे पितामह ! आज अब जो भी कुछ आपको रुचे वही इस समय कीजिए ।८२। इस तरह से जब ब्रह्माजी से कहा गया तो उनको कुछ क्रोध उत्पन्न हो गया था । ब्रह्मा जी ने कोप से युक्त होकर इन्द्रदेव से कहा—हे इन्द्रदेव ! मेरे लिए इस समय में यज्ञ कार्य सम्पन्न करने के लिए दूसरी कोई पत्नी को शीघ्र ही उप-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्था करो। उसे अभी वहां ले जाओ ।८३। जिस तरह भी यज्ञ का कार्य प्रवृत्त हो जावे और समय की हानि होने से उसमें कोई हीनता उत्पन्न न हो। तुम उसी प्रकार से अत्यन्त शीघ्रता करो और किसी नारी को यहां ले आओ ।८४। जब तक मेरे इस यज्ञ की समाप्ति हो में तेरा वरण करता हूँ इसका कोई भी विचार मन में मत करना। फिर इस यज्ञ की समाप्ति हो जाने पर उसका मोक्ष कर दूँगा ।८५।

एवमुक्तस्तदाशक्रोगत्वासर्वंधरातलम्।
स्त्रियोदृष्टास्तुयास्तेनसर्वास्तास्सपरिग्रहाः ।८६
आभीरकन्या रूपाढ्या सुनासा चारुलोचना।
नदेवीनचगन्धर्वीनासुरीनचपन्नगी ।८६
नचास्ति तादृशी कन्या यादृशोसा वरांगना।
ददर्शतांसुवाचार्वंगींश्रियंदेवीमिव।पराम् ।८८
संक्षिप्तन्तींमनोवृत्तिविभव रूपसंपदा।
यद्यतुवस्तुसौंदर्याद्विशिष्टं लभ्यते क्वचित् ।।८९
तत्तच्छरीरसलग्नंतन्वंग्या ददृशे वरम्।
तां दृष्ट्वा चिंतयामास यद्येषा कन्यका भवेत् ९०
तन्मतःकृतपुण्योऽन्योवदेवोमुविद्यते।
योषिद्रत्नमिदसेयंसभद्दाग्यायां पितामहः ।९१

इस तरह से जब इन्द्र से कहा गया था तो देवराज उस समय में सम्पूर्ण धरातल में घूमा था। उसने जो भी स्त्रियां देखीं थीं वे सभी परि ग्रह से युक्त ही मिली थीं ।८६। एक आभीर (अहीर) कन्या मिली थी जो रूप लावण्य से सम्पन्न थी। उसकी नासिका बहुत सुन्दर थी और नेत्र भी उसके बहुत सुन्दर और मनोरम थे। उसी तरह की कोई भी देवी—गन्धर्वी—आसुरी और पन्नगी नहीं थी ।८७। जैसी परम सुन्दरी वह आभीर कन्या थी वैसी अन्य कोई भी सुन्दरी नहीं थी। इन्द्रदेव ने मनोहर अंगों वाली उस कन्या को दूसरी लक्ष्मी देवी केसदृश ही देखा था ।८८। रूप—सौन्दर्य की सम्पत्ति से मनोवृत्ति के वैभव को संक्षिप्त करती हुई वह कन्या थी। जो भी वस्तु सौंदर्य की सम्पति से मनोवृत्ति के वैभव को संक्षिप्त करती हुई वह कन्या थी। जो भी वस्तु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सौंदर्य से विशेषता वाली हो वह कहीं प्राप्त की जाया करती है ।८९। उसके शरीर में सभी अग्न वही-वही तन्वङ्गी का परम श्रेष्ठ देखा था उस कन्या को देखकर इन्द्र ने सोचा था कि यह कन्या ब्रह्मा की पत्नी हो सकती है ।९०। इस भूमि में मुझसे अधिक अन्य कोई भी पुण्य वाला नहीं है। यह स्त्रियों में रत्न के समान है। पितामह ब्रह्माजी के साथ सौभाग्य प्राप्त करने के योग्य यही एक नारी है ।९१।

कासि कस्य कुतश्चत्वमागतासुभ्रु कथ्यताम् ।
एकाकिनी किमर्थंचवांथोमध्येतुतिष्ठसि ।९२
गोपकन्यात्वहं वीर विक्रीणामीह गोरसम् ।
नवनीतमिदं शुद्धं दधि देदं विमण्डकम् ।९३
दध्ना चवात्र तक्रेण रसुनापि परंतप ।
अर्थी येनासि तद्ब्रूहि प्रगृह्णीष्व यथेप्सितम् ।९४
एवमुक्तस्तदा शक्रो गृहीत्वा तां करे दृढम् ।
अनयत्तां विशालाक्षी यत्र ब्रह्माव्यवस्थितः ।९५
नीयमाना तु सा तेन क्रोशन्ती पितृमातरौ ।
हातातमातर्हाभ्रातर्नयत्येष नरो बलात् ।९६
इत्थमाभाष्यमाणस्तु तया शक्रोऽनयच्च ताम् ।
ब्रह्मणः पुरतः स्थाप्यप्राहास्यार्थेमयाऽबले ।९७
आनीतासि विशालाक्षि माशुचोवरवर्णिनि ।
गोपकन्याचतदृष्ट्वागौरवर्णमहाद्युतिम् ।९८
कमलाक्षसुबाह्वंषपुंडरीकनिभेक्षणम् ।
तप्तकांचसद्भित्तिसदृशापीनवक्षरम् ।९९
मत्तेभहस्तवृत्तोरुं रक्तोत्तुगनखत्विषम् ।
प्राप्तंसाऽमन्यतात्मानमन्मथस्येषुगोचरे ।१००
तत्प्राप्तिहेतुकधिया गतचित्तोवलक्ष्यते ।
प्रभुत्वमात्मनोदानेगोपकन्याऽप्यमन्यत्त ।१०१

देवराज इन्द्र ने उस वराङ्गना से पूछा—हे शुभ्रे ! आप कौन है, किसकी आत्मजा हैं और कहाँ से आई हैं-यह बतलाइये। आप यहां वीथीके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्य में अकेली ही किस प्रयोजन से स्थित हो रही हैं ।६२। उस गोप कन्या ने कहा—हे वीर मैं गोप कन्या हूँ और यहाँ पर गोरस का विक्रय करती हूं मेरे पास वेचने के लिए यह बहुत ही शुद्ध मक्खन है और बिना मण्डक वाला यह दही भी है ।६३। हे परन्तप ! यदि आपको दधि और तक्र रस (मठ्ठा) की इच्छा हो तो आप मुझसे कहें और जितना भी जो चाहें वह मुझसे ग्रहण कर लेवें ।६४। इस प्रकार से उस गोप कन्या के द्वारा कहे जाने पर इन्द्रदेव ने उसी समय उसको हाथ से दृढ़ता के साथ पकड़ लिया था और विशाल नेत्रों वाली को यहाँ पर ले गये थे जहाँ ब्रह्माजी संस्थित थे ।६५। जब इन्द्र के द्वारा वह ले जायी जा रही थी उस समय वह अपने माता पिता का स्मरण कर रुदन करने लगी थी—हे पिता ! हे माता ! हे भाई ! यह मनुष्य बलपूर्वक मुझे ले जा रहा है ।६३। वह इसी रीति से चीखती-चिल्लाती रही थी किन्तु इन्द्र उसे ले आये थे और ब्रह्मा जी के सामने उसे करके फिर इन्द्र ने उस गोप कन्या से कहां—हे अबले ! मेरे द्वारा तू इन्हीं महापुरुष के लिए लाई गई है। हे विशालाक्षि ! हे वरवर्णिनी ! तू शोक और चिन्ता मत कर। उस गोप कन्या ने भी वर्ण से युक्त महान कान्ति से सम्पन्न उनको देखा था ।६७। कमल के सदृश नेत्रों वाले, बड़ी भुजाओं से एवम् स्कन्ध से युक्त पुण्डरीक के समान लोचन वाले, तपे हुए सुवर्ण के तुल्य महिगत्ति के समान पीन वक्ष:स्थल वाले, मस्त हाथी की सूँड के सदृश ऊरुओं से युक्त और रक्त तथा उन्नत नखों की कान्ति वाले उन ब्रह्माजी को प्राप्त हुआ देखकर उस गोप कन्या ने काम वासना से युक्त अपने आपको मान लिया था। उनको प्राप्त करने की बुद्धि से वह गतिचित्त वाली की तरह दिखाई दे रही थी। उस गोप कन्या ने उस समय में अपने आपको उनके समर्पित हो जाने से प्रभुत्व समझ लिया था ।६८-६६।१००।

एवंचित: पराधीना यावत्सागोपकन्यका ।
तावद्ब्रह्मा हरिं प्राहयमार्थंसत्वरंवच: ।१०१
देवीचैषामहाभागा गायत्रीनातत: प्रभो ।
एवमुक्तेतद:विष्णुर्ब्रह्माणंप्रोक्तवानिदम् ।१०२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदेनामुद्वहस्वाद्यमयादत्ताजगत्प्रभो ।
गांधर्वेण विवाहेन विकल्पमाकृथाश्चिरम् ।१०३
अमुं गृहाणदेवाद्य अस्याः पाणिमनाकुलम् ।
गांधर्वेण विवाहेन उपयेमेपितामहः ।१०४
वापवाप्यतदाब्रह्मादगादध्वर्युसत्तमम् ।
कृपा पत्नी महाह्येषा सदने मे निवेशय ।१०५
मृगशृङ्गधराबाला क्षौमवस्त्रावगुंठिता ।
पत्नी शालांतदानीता ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ।१०६
औदुम्बरेण दण्डेन प्रावृतो मृगचर्मणा ।
महाध्वरे तदा ब्रह्मा धाम्ना स्वेनैव शोभते ।१०७
प्रारब्धं च ततो होत्रं ब्रह्मणैर्वेदपारगैः ।
भगुणा सहितैः कर्म वेदोक्तं तैः कृत तदा ।
तथा युगसहस्रं तु सयमुः पुष्करेऽभवत् ।१०८

जल तब वह गोपकन्या इसी प्रकार से अपने मन में उधेड़ बुन कर रही थी और चिन्ता से युक्त होकर सोच रही थी कि तब तक ब्रह्मा जी ने इन्द्र से यज्ञ का कार्य सम्पन्न करने के लिए शीघ्र ही यह वचन कह - यह देवी महान भाग वाली है और हे प्रभो ! इसका नाम अब गायत्री है। इस तरह ब्रह्माजी के कहने पर भगवान विष्णु ने उस समय ब्रह्माजी से कहा ।१०१।१०२। विष्णु बोले... हे जगत के स्वामिन ! मेरे द्वार. स-पवित्र की हुई इसके साथ आप ही विवाह कर लीजिए। गान्धर्व रीति से ही इसके साथ विवाह कर लेना ठीक होगा। इसमें अब देर तक कुछ भी सोच विचार करने का विकल्प मत करो ।१०३। हे देव ! आज ही बिना कुछ सोचे हुए इसका पाणिग्रहण कर इसे स्वीकार कर लो। ऐसा कहे जाने पर ब्रह्माजी ने गान्धर्व विवाह के द्वारा उसके साथ अपना नाम बना लिया था ।१०४। उस नई पत्नी को प्राप्त करके ब्रह्माजी ने अध्वर्यु-श्रेष्ठ से कहा — मैंने अपनी पत्नी इसको बना लिया है अब आप मेरे सदन इसको निवेशित कीजिए ।१०५। उस समय में वेदों के पारगामी ऋत्विजों के द्वारा मृगशृङ्ग को धारण करने वाली क्षौम वस्त्र से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवगुण्ठित वह ब्रह्मा की नई पत्नी उस यज्ञशाला मे लाई गई थी।१०६। उदुम्बर (गूलर) के दण्ड से युक्त तथा मृगचर्म से आवृत ब्रह्माजी उस समय में उस महान् अम्बर में अपने ही अद्भुत तेज की महिमा से शोभित हो रहे थे।१०७। तब तो वेदों के पूर्ण वेत्ता ब्राह्मणों के द्वारा उस यज्ञ भूमि में होम का कार्य आरम्भ कर दिया गया था। भृगु महर्षि के सहित सब ऋत्विजों ने उसी समय वेद में जो भी कर्म बताया गया है वह आरम्भ कर दिया था। उस समय में जो यह महान यज्ञ प्रारम्भ हुआ था वह दो सहस्र युग पर्यन्त पुष्कर क्षेत्र में हुआ था।१०८।

।। नन्दा धेनु—व्याघ्र उपाख्यान ।।

अथ देवव्रतःप्राह किमन्यासां सरिद्वसा।
एतन्मे कौतुकं ब्रह्मन्नन्दाशब्दा सरस्वती।१
यथाभूता येन कृता कारणेन सरिद्वरा।
एवमुक्तः पुलस्त्यःस भीष्मायैतत्पुरातनम्।२
आख्यातुमुपचक्राम नन्दा नाम यतस्मृता।
क्षत्त्रव्रतधरो नित्यमासीद्राजा प्रभंजनः।३
प्रवृत्तोऽसौ मृगान्हतु वने तस्मिन्महावकः।
स ददर्श ततस्तस्मिन्मृगींगुल्मांतरेस्थिताम्।४
मार्गणेन सुतीक्ष्णेन तां विव्याध पुरोगताम्
सा विलोक्य दिशः सर्वास्तु दृष्ट्वा शरपाणिनम्।५
आह किं ते कृतं मूमें त्वयेतत्कर्म दुष्करम्।
स्तनं तावत्प्रयच्छामि सुतस्याधोमुखी स्थिता।६
मांसलोभेन विद्धाह तरसा ह्यकुतोभया।
पिवत गुप्तवत्सं च गूढमाथुनमागतम्।७
एवंविधं मृगं राजन्नहन्यात्प्राङ् मया श्रुतम्।
स्तनं तु तनयस्यास्य प्रयच्छती त्वया हता।८

श्री सूतजी ने कहा—इसके अनन्तर देवव्रत ने कहा—वह अन्य सरिताओं में परम श्रेष्ठ क्या है ? हे ब्रह्मन् ! मेरे हृदय में बड़ा कौतुक है। नन्दा शब्द वाली सरस्वती जिस प्रकार से और जिस कारण सेश्रेष्ठ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरिता की गई थी यह सब कृपाकर मुझे बतलाइए। इस तरह से पूछे जाने पर पुलस्त्य मुनि ने भीष्म के लिए यह पुराना इतिहास बताने का आरम्भ किया था कि जिस कारण से नन्दा यह नाम पड़ा था। पहिले एक क्षत्रियों के व्रत को धारण करने वाल प्रभञ्जन नामधारी राजा हुआ था।१-३। महान् बलशाली वह राजा उस वन में मृगों का हनन करने के लिए प्रवृत्त हुआ था। उसने वहाँ उस वन में झाड़ियों के बीच में बैठी हुई हिरनी को देखा था।४। सामने आई हुई उस हिरनी को देखकर उस राजा प्रभञ्जन ने अपने एक अत्यन्त तीक्ष्ण बाण से उसे विद्ध कर दिया था। उस हिरनी ने समस्त दिशाओं को देखने हुए हाथ में शरों को धारण करने वाले उस राजाको देखा था।५। वह हिरनी उससे बोली—अरे मूढ़ ! तूने यह क्या दुष्कर कर्म डाला है। मैं नीचे की ओर मुख करके इस समय से अपने पुत्र को स्तन पिला रही थी।।६। तूने मुझे माँस के लोभ से विद्ध कर दिया है। मैं तो इस समय में निर्भय होकर स्तन का पान करा रही थी। छिपकर मेरे समीप में स्थित स्तन का पान करने वाले गुप्त वत्स का मैं पोषण कर रही थी।७। इस प्रकार की स्थिति में रहने वाले मृग को नहीं मारना चाहिए। हे राजन्! मैंने ऐसा पहिले सुना था। मैं जिस समय में अपने पुत्र को स्तन का पान करा रही थी उस दशा में तूने मुझे मार डाला है।८।

वाणेनाशनिकल्पेन निर्दोषा वनमागता।
तस्मात्त्वमपि दुर्बुद्धे क्रव्यादत्वमवाप्स्यसि।९
वनेऽस्मिन्कंटकाकीर्णे व्याघ्ररूपं त्वमाप्नुहि।
शापप्रदानं श्रुत्वैसं स राजा पुरतः स्थितः।१०
प्रोवाच प्रांजलिर्भूत्वा तां मृगीं व्यथितेंद्रियः।
स्तन तु तनयस्येह मुयच्छती न मे मताः।११
आज्ञानेन हता भद्रं प्रसीद सुसमाधिना।
व्याघ्ररूपमहं त्यक्त्वा प्राप्स्यामि मानुषं कदा।१२
एवंविधस्य शापस्य विमोक्षं शंस मे मृगि।
एवमुक्ते मृगी तस्य प्रोवाच वचनं शुभम्।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजन्वर्षशतांते तु सम्प्राप्तागतया गवा ।
नन्दया सह संवादमाद्यांतो भविष्यति ।१४

दोष रहित मुझको जबकि मैं इस वन में यहाँ आ गई थी तूने वज्र के तुल्य तीक्ष्ण बाण से मेरा वध कर दिया है । इसलिए हे दुष्ट बुद्धि वाले मैं यह शाप देती हूँ कि तू राक्षसत्व को प्राप्त हो जाएगा ।६। इसी वन में जो कि चारों ओर से कांटों से घिरा हुआ है तू व्याघ्र का रूप प्राप्त करेगा । इस तरह से सामने स्थित उस राजा ने हिरनी के द्वारा शाप का श्रवण किया था ।१०। राजा व्यथित इन्द्रियों वाला होकर अपने दोनों हाथों को जोड़ते हुए उस मृगी से बोला—मुझे यह ज्ञान नहीं था कि तू अपने पुत्र को स्तन पिला रही थी ।११। हे भद्रे ! मैंने तुम्हारा हनन अज्ञान से ही किया है । अब तुम मुझ पर प्रसन्न होकर मुझे यह बतलादो कि व्याघ्र के रूप को त्याग कर फिर मैं मनुष्य का शरीर कब प्राप्त करूँगा ।१२। हे मृग ! तुमने जो शाप दिया हैं उससे मेरा छुटकारा कब हो जाएगा—यह मुझे बतलादो । राजा के इस प्रकार से कहने पर उस हिरनी ने वचन बोले ।१३। हे राजन ! एक सौ वर्ष के पश्चात् आई हुई गौ नन्दा के साथ सम्वाद प्राप्त करके फिर इस शाप का अन्त हो जाएगा ।१४।

मृग्योक्तं वचने राजा व्याघ्र एवाभवत्तता ।
नखदंष्ट्रायुधोपेतो व्यघ्ररूपोऽतिभीषणः ।।१५
तत्रासौ भक्षयन्नास्तेमृगान्गहत्वा चतुष्पदः ।
द्विपदानपि तत्रस्थान्कालेन क्रमयोजितान् ।१६
एवं तत्र वने तस्य संवत्सरशतं गतम् ।
आत्मानं निनदास्य मृगमांसानि खादतः ।१७
कदाह मातुषं भावं गमिष्यामीदृश पुनः ।
कुत्सितं न करिष्यति वियोनिकरण महत् ।१८
कुर्वता मांसलोभेन मृगयां परिधावता ।
आपदासहितं प्राप्तं मानुषाणा भयावहम् ।१९
दर्शनं दुःखदं मह्यं मृगाणा मानुषैः सह ।
पापेन पापतां नीतो ह्यपापऽपि सतांकुले ।२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्नो विकृति नीतः पश्य कालस्त पर्ययम् ।
तस्मान्मे सुकृतं नास्ति हिंसाप्येक विगर्हिता ।२१
तया तु प्राप्यते दुःख न च मोक्षो भविष्यति ।
कथं मे भविता मोक्षः कथं सत्या मृगी भवेत् ।२२

मृगी के द्वारा यह वचन कहे जाने पर उसी समय राजा प्रभञ्जन व्याघ्र हो गया था जिसके बड़े तीक्ष्ण नख और दाढ़ों के आयुध थे । वह महान भीषण व्याघ्र के स्वरूप वाला हो गया था ।१५। यह व्याघ्र वहां उस वन में चौपाओं और हिरनों को मारकर भक्षण करता हुआ रहता था । वहाँ हर स्थित और क्रम से योजित द्विपदों को भी समय पर भक्षण कर लेता था ।१६। इस प्रकार से उस बन में रहते हुए उसके एक सौ वर्ष व्यतीत हो गए थे । मृगों के मांस खाते हुए वह अपने आप को बहुत ही बुरा समझता था ।१७। वह मन में सोचता था कि मैं फिर किस समय मनुष्यता को प्राप्त करूँगा ? अब भविष्य में फिर ऐसा बुरा कोई काम नहीं करूँगा जो कि दूसरी कुत्सित योनि प्रदान करने वाला होवे ।१८। मांस के लोभ से परिभावन करते हुए शिकार करने वाले मैंने मनुष्यों को भय देने वाला आपत्ति से परिपूर्ण यह जन्म प्राप्त किया है । ।१९। अब तो मनुष्यों के साथ मृगों का दर्शन भी मुझे दुखद हो गया है । पाप रहित सत्पुरुषों के कुल में भी रहते हुए मैंने अपने ही किए हुए पाप कर्म से इस पाप योनि को प्राप्त किया है ।२०। सत्कुल में समुत्पन्न होकर भी में इस तरह की विकृति को प्राप्त हो गया हूँ यह कैसा काल का विपर्यय है । इससे ज्ञात होता है कि मेरा एक भी सुकृत नहीं है और यह विशेष निन्दित हिंसा है ।२१। उसी हिंसा से मुझे यह दुःख प्राप्त होता है और मेरा मोक्ष नहीं होगा । मेरा मोक्ष किस प्रकार से होगा और हिरनी की बात कब किस प्रकार से सत्य होगी ।२२।

गते वर्षशते तस्य वसतस्तद्वने तदा ।
आयात गोकुल काले यवसोदककारणात् ।२३
गोवादवाटीसंस्थानं तत्तत्र समवस्थितम् ।
वनोपकण्ठे मंथानरवेणापरितं च यत् ।२४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षोणैर्गोपैःसमाकीर्णं पादपैरपि तद्वनम् ।
निशि वंशरवोपेतं गोपीना च शुभ्रप्रदम् ।२५
एवं तु वसतस्तस्य खर्जूरवनसंसदि ।
हृष्टा तुष्टा च पुष्टा च नंदा वै नाम नामतः ।२६
गोमण्डलस्य सा मुख्या हंसवर्णा घटस्रवा ।
दीर्घघोणा विभक्तांगीं बंधरांगी तनुत्वचा ।२७
नीलकण्ठा शुभग्रीवा घण्टाली मधरस्वना ।
सा च यूथस्य सर्वस्य पुरश्चरति निर्भया ।२८
घासस्थानं चरेच्छन्नं गत्वैका च यथासुखम् ।
यथेष्टकामा सुरभिश्छन्नं चरति वं तृणम् ।२९

उस समय में उस वन में निवास करते हुए उनको एक सौ वर्ष व्यतीत हो गए थे। समय पर यवस और उदक के कारण से वहां गोकुल आया था ।२३। वहां पर गो वाट और वाटी का संस्थान समवस्थित हो गया था जो कि वन के समीप में मन्थर की ध्वनि से परिपूर्ण हो गया था ।२४। वह वन मतवाले गोपों और पादवों से समाकीर्ण हो रहा था। रात्रि के समय में गोपियों की वंशी की ध्वनि से वह वन बहुत ही शुभ प्रद हो गया था ।२५। उस खजूरों के वन रूपी संसद में इस प्रकार से उसका निवास करते हुए परम प्रसन्न, सन्तुष्ट और परिपुष्ट नाम से नन्दा नाम वालों धेनु वहाँ पर रहती थी ।२ । वह नन्दा धेनु उस सम्पूर्ण गोमण्डल में प्रधान थी। उसका वर्ण हंसके समान था तथा वह घटस्तवा थी अर्थात् उसके ऐन घट की भाँति स्रवन करने वाले थे। उसकी नासिका लम्बी थी। उस समस्त अंगावयव ठीक तरह से विभक्त थे तथा उसके सभी अंग उतार चढ़ाव के अनुसार सुडौल थे। उनकी त्वचा पतली थी। ।२७। वह नन्दा नीले कण्ठ वाली थी। उसकी गरदन बहुत शुभ थी, वह घण्टाली और मधुर ध्वनि वाली थी। वह सर्वदा गायों के यूथ के आगे निडर होकर चला करती थी ।२८। जहां पर घास होती थी वहां चुपचाप अकेली जाकर सुखपूर्वक घास को चरा करती थी। यथेष्ट कामना वाली वह सुरभि गुप्त रूप से तण को खाया करती थी ।२९।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोहितो नाम तत्रान्यः पर्वतः सरितस्तटे ।
अनेककन्दरदरीगुहासत्वनिषेवित ।३०
तस्य पूर्वोत्तरेभागे घोरे तृणसमाकुले ।
सङ्कटे विषमे दुर्गे भैरवे लोमहर्षणे ।३१
मृगसिंहसमाकीर्णे वहुश्वापदसेविते ।
वल्लीवृक्षादिगहने शिवाशतनिनादिते ।३२
दुर्गेऽस्मिन्वसते रौद्रः कामरूपी भयंकरः ।
द्वीपी शोणितदिग्धांसो घोरदृष्टा नखायुधः ।३३
नन्दो नाम स धर्मात्मा स च गोपीहिते रतः ।
अच्छिन्नाग्रैस्तृणैर्दीर्घैर्गोधनं परिरक्षति ।३४
तस्य यथपरिभ्रष्टा स नंदा तृणलिप्सया ।
चरंती व्याघ्रपुरतः सा धेनुः प्रत्युपस्थिता ।३५

वहां पर रोहित नाम वाला सरिता के तट पर एक अन्य पर्वत था जिसमें वहुत-सी गुफा और कन्दराएं जिनमें अनेक प्रकार के जीव-जन्तु रहा करते थे ।३०। उस पर्वत के पूर्वोत्तर भाग में दुर्ग था जो वड़ा ही संकट पूर्ण-घोर-विषम-भैरव और लोमहर्षण अर्थात् रोमाञ्च खड़े कर देने वाला था ।३१। वह दुर्ग मृग और सिंहों से घिरा हुआ था तथाउसमें अन्य वहुत से श्वापद पशु रहा करते थे । उसमें बल्लियाँ और वृक्ष इतने घने थे कि वह वड़ा ही गहन हो रहा था । वहाँ सैकड़ों गीदडों की ध्वनियों से सदा शब्दायान वह रहा करता था ।३२। इस दुर्ग में महान रौद्र रूप भयंकर-शोणित रुधिर) से दिग्ध अंश वाला-घोर दाड़ों से युक्त नखों के आयुधों वाला—अपनी इच्चा से रूप धारण करने वाला द्वीपी रहा करता था ।३३। नन्द नामधारी धर्मात्मा था जो सर्वदा गोपियों के हित में अनुराग रखने वाला था । वह बिना टूटे हुए अग्रभाग वाले तृणों से गोधन की परिक्षा किया करता था ।३४। उसकी नन्दा नामवली धेनु यूथ से परिभ्रष्ट हो गई थी और तृणों के चरने की लिप्सा से चरती हुई वह धेड व्याघ्र के सामने उपस्थित हो गई थी ।३५।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभ्यद्रवच्च तां द्वीपी तिष्ठेति चाब्रवीत् ।
त्वमद्य विहितो भक्षः स्वय प्राप्तासि धनुके ।३६
द्वीपीनश्च वचः श्रुत्वा निष्ठरं रोमहर्षणम् ।
शुक्लरूपान्वितं बालं भद्रमिंदुसमप्रभम् ।३७
वत्सं स्मरति सा धेनुः स्नेहाक्ता गद्गदाक्षरम् ।
दह्यंती पुत्रशोकेन नदा सा पुत्रवत्सला ।३८
रुदती करुणं चैव निराशा पुत्रदर्शने ।
द्वीपी दृष्ट्वा तु तां धेनुं क्रंदमानां सुदुःखिताम् ।३९
उवाच वच धार धेनुके किं प्ररुद्यते ।
दैवात्सुखोपपन्मासि भक्षस्त्वं मे यदृच्छया ।४०
रुदंत्या वा हसत्या वा तवात्तं जीवितं भवेत् ।
विहितं भुज्यते लोके स्वयं प्राप्तासि धेनुके ।४१
मृत्युस्ते विहितोऽद्य व वृथा किमनुशोचसि ।
पप्रच्छ तां पुनर्द्वीपी किमर्थं रुदितं त्वया ।४२

वह द्वीपी उसे देखकर उसने धेनु पर आक्रमण कर दिया था और "खड़ी रह-खड़ी रह" ऐसा उसने धेनु से कहा था। हे धेनुके ! आज तू ही मेरा भक्ष हुआ है जो कि स्वयं तू यहाँ प्राप्त हो गई है ।३६। उस द्वीपों के अतिशय निर्दयतापूर्ण और रोमहर्षण इस वचन का श्रवण कर वह धेनु अपने शुक्ल रूप से समन्वित परम भद्र और चन्द्रमा के समान प्रभा वाले वत्स का स्मरण करती हुई स्नेह से द्रवित होकर गद्गद अक्षरों वाली संतप्त पुत्र पर वात्सल्य रखने वाली वह नन्दा पुत्र से अत्यन्त खिन्न हो गई थी।३७-३८।वह करुणा के साथ रुदन करती हुई अब अपने पुत्र के दर्शन करने में बिल्कुल ही निराश हो गई थी। उस द्वीपी ने उस धेनुको क्रन्दन करती हुई और अत्यन्त ही दुखित देखा था।३९ वह द्वीपी उस धेनु से बोली और परम घोर वचन कहकर पूछा हे धेनुके ! तू रुदन क्यों कर रही है ? दैववश सुख से हो तू यहाँ उत्पन्न हो गई है और तू यदृच्छया प्राप्त होने वाला मेरा भक्ष है। ४०।रुदन करनेवाली हो या हँसती हुई हो तो तेराजीवन अब मैं समाप्त ही होगा क्योंकि लोक में विहित का भोग किया जाता है।हे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धेनुके! तू तो यहाँ स्वयंही प्राप्त हो गई है ।।४१ आजही तेरी मौत निश्चित हैं । अबतू व्यर्थंही क्यों सोच कर रही है । इसके पश्चात् दीपीने उस धेनु से फिर पूछा था कि तू किस लिए रुदन करती है ।।४२।।

कौतुकं चात्र मे जातं महन्मे कथतस्व वै ।
व्याघ्रस्य वचनं श्रुत्वा नदावाक्यमथाब्रवीत ।।४३
क्षंतुमर्हसि मे नाथ कामरूपिन्नमोऽस्तुते ।
त्वां समासाद्य लोकस्य परित्राणं न विद्यते ।।४४
जीवितार्थं न शोचामि प्राप्तव्यं मरण मया ।
जातस्यहि ध्रुवो मृत्युध्रूवं जन्ममृतस्यच ।।४५
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न शोचामि मृगाधिप ।
देवैरपि यथा सर्वैर्मर्तव्यमवशैध्रूवम् ।।४६
तस्मात्तु नाहमेवैका व्याघ्र शोचामि जीवितम् ।
किंतु स्नेहेन वे साधो दुःखेन रुदितं मया ।।४७
अस्ति मे हृदि संतापस्तं चत्व श्रोतुमर्हसि ।
प्रथमे वयसि प्राप्ते प्रसूताऽहं मृगाधिप ।।४८
इष्टः प्रथमजातश्च सुतस्तु मम बालकः ।
क्षीरपायी च मे वत्सस्तृणं नाद्यापि जिघ्रति ।।४९
स च गोपकुले बद्धःक्षुधार्तो मामवेक्षते ।
तमहं चातुशोचामि कथं जींविष्यते सुतः ।।५०

द्वीपी ने कहा कि इस प्रकार तेरे क्रन्दन को देखकर मेरे हृदय में बड़ा भारी कौतुक उत्पन्न हो रहा है । इसलिए तू मुझे इसका कारण बतलादे । व्याघ्र के इस वचन का श्रवण कर नन्दा यह वाक्य बोली ।४३। हे काम से ही रूप धारण करने वाले ! हे नाथ! आप मुझे क्षमा कर देने के योग्य हैं । मेरा आपको प्रणाम हैं। आपको प्राप्त करके लोकका परित्राण नही होता है।४४। मैं इस समय में अपने जोवन के लिए शोक नहीं कर हूं क्योंकि मृत्यु तो मुझे प्राप्त करनीही है । जो भी कोई जन्म लेकर यहाँ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार में समुत्पन्न हुआ है उसकी मृत्यु का होना निश्चित ही है और जो मृत्यु को कभी भी प्राप्त होता है उसको जन्म ग्रहण करना भी परम निश्चित है।४५।हे मृगों के स्वामिन् ! यह जन्म लेना और मृत्युको प्राप्त होना तो सभी के लिए अपरिहार्य है अर्थात् टलने के योग्य नहीं है । ऐसे विषयमें मैं चिन्ता नहीं करती हूँ । क्योंकि देवगण के द्वाराभी सबको अवश होकर निश्चय मरना ही होता है।४६।इसलिए हे व्याघ्र! में सोच नहीं कर रही हूँ किन्तु मैं एक ही अकेली नहीं हूं हे साधो! स्नेह के कारण से मुझे दुःख है और उसीसे मैंने रुदन किया है।४७। मेरे हृदयमें जो एक सन्तापहै उसे आप सुनने के योग्य होते हैं । हे मृगाधिप! प्रथम वय में जबमैं प्राप्त हुई तो मैंने प्रसव किया था।४८।प्रथम ही समुत्पन्न मेरा बालक सुत मुझे बहुत ही प्यारा है । वह मेरा नन्हा-सा बच्चा अभी दूध पीता है और अभी वह इतना छोटा है कि तृण नहीं चरता है।४९।वह विचारा गोपोंके समूह में बंधा हुआ है और भूख से पीड़ित होकर मेरी प्रतीक्षा कर रहा होगा। मैं इस समय में उसी अपने पुत्र के लिए सोच कर रही हूँ कि मेरे मर जाने के पश्चात् वह वह कैसे जीवित रहेगा ? ।।५०।।

तस्येच्छामि स्तनं दातुं पुत्रस्नेहवशं गता ।
पाययित्वा स्तनं वत्समवलिह्य च मूर्द्धनि ।।५१
सखीनामर्पयित्वा तु संदिश्य च हिताहितम् ।
पुनः प्रत्यागमिष्यामि यथेष्टं भक्षयिष्यसि ।।५२
स नंदाया वचः श्रुत्वा मृगेद्रः पुनरब्रवीत् ।
किंते पुत्रेण कर्तव्य मरण किं न बुध्यसे ।।५३
वस्यंति सर्वभूतानि म्रियते मां निरीक्ष्य च ।
त्व पुनः कृपयाविष्टा पुत्र पुत्रेति भाषसे ।।५४
न पुत्रा न तपोदान न माता नपिता गुरुः ।
शक्नुवंति परित्रातु नर कालप्रपीडितम् ।।५५
कथं त्वं गोकुल गत्वा गोपीजनसमाकुलम् ।
वृषभैर्नादित दिव्यं वालवत्सविभूषितम् ।।५६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

भूषणं देवलोकेऽस्य स्वर्गं तुल्यं न संशयः
नित्यं प्रमुदित दिव्यं सर्वदेवप्रपूजितम् ॥५७
गोलोक प्रतिमं दृष्ट्वा कथं प्रत्यागमिष्यसि ।
पञ्चभूतानि मे भद्रे पिबंतु रुधिरं तव ॥५८

पुत्र के स्नेह से वशीभूत होकर मैं उसे अपने स्तन का दूध पिलाना चाहती हूँ और स्तन पिलाकर अपने वत्सके मस्तक को चाटनेकी भी इच्छा रखती हुं।५१।इसमें पश्चात् उसे अपनी सखियों के सुपुर्द करके उसके हित एवम् अहित के विषय में पूरा सन्देश उन्हें देकर मैं फिर तुम्हारे पास वापिस आ जाऊँगी । फिर आप मुझे अपनी इच्छाके अनुसार भक्षण कर लेंगे।५२।उस व्याघ्र ने नन्दा धेनु के इस वचन का श्रवण कर वह मृगेन्द्र फिर बोलातुझे अब पुत्र से क्या करना है ? क्या तू अपनी मौत को नहीं जानती है ?।५३।समस्त प्राणी मुझसे त्रस्त हो जाते हैं और मुझे देखकर मर जाया करते हैं । तू ही एक ऐसी है कि कृपा से समाविष्ट होती हुई हा पुत्र–हा पुत्र ऐसा कह रही है।५४। काल से जो पीड़ित होता है अर्थात् जिसकी मौत आ जाती है उस नर को पुत्र–तपश्चर्या- दान- माता- पिता और गुरु कोई भी इनमें से रक्षा नहीं कर सकता है।५५ तू उस गोकुल में जाकर जो गोपीजनों से घिरा हुआ है, जिसमें वृषभों का नाद हो रहाहै, जो अत्युत्तम छोटे छोटे वत्सों से विशेष रूपसे भूपित है, जो देवलोक का भूषण है और स्वर्ग के तुल्य है वह स्थान तो नित्य ही प्रमोद से परिपूर्ण रहता है और अत्यन्त उत्तम एवम् समस्त देवगण के द्वारा पूजित है । उस गोलोक के समान स्थल को देखकर तू वापिस कैसे आयेगी? हेभद्रे! मेरे पाँचों भूत तेरे रुधिर को पीवें ॥५६-५८

न निर्विष्णानि भूतानि वाङ्मात्रेण करोम्यहम् ।
एवं प्रथमवत्साया मृगेंद्र शृणु मे वच ॥५९
दृष्ट्वा सखीं सुत बाल गोपांश्च प्रतिपालकान् ।
गोपीजनमुपामन्त्र्य जननीं च विशेषतः ।।६०
शपथैरागमिष्यामि मन्यसे यदि मुञ्चमाम् ।
यत्पापं ब्रह्मवध्यायां मातापितृवधेषुच ॥६१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेन पापेन लिप्येऽहं यद्यहं न गमे पुनः ।
यत्पातं लुब्धकानां तु म्लेच्छानां गरदायिनाम् ॥६२
तेर पापेन लिप्येऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
गोषु विघ्नांश्च ये कुर्युः स्वपंतीं ताडयती च ॥६३

मैं वाणीं मात्र से प्राणियों को वैराग्य युक्त नहीं करता हूँ इसके अनन्तर नन्दा ने कहा—हे मृगेन्द्र! प्रथम वत्स को समुत्पन्न करने वाले मेरे वचन को आप सुनिये ।५६। मैं अपनी सखी—सुत बालक—गोपगण—प्रतिपालक—गोपीजन तथा विशेष रूप से जननी का उपामन्त्रण करके शपथ पूर्वक कहती हूँ किमैं फिर आपके पासआ जाऊँगी। यदि आप मेरा कथन सत्य मानते हैं तो मुझे छोड़ दीजिए । जो पाप ब्राह्मणकी हत्या करने में होता है तथा जो पाप माता-पिताके वध करने में होता है उसी पाप से मैं भी लिप्तहो जाऊं अगर फिर मैं वापिस न आऊं । जो पाप लुब्धकों को होता है तथा म्लेच्छों को और विष देने वालों को लगता है वही पाप मुझे भी लगेगा यदि मैं वापिस फिर न आऊं ॥६०-६३॥

तेन पापेन लिप्येऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
सकृद्दत्त्वा कन्यां द्वितीते दातुमिच्छति ॥६४
तस्य पापेन लिप्येऽहं यद्यहं नागमे पुनः ।
यस्त्वनर्हान्बलीबंर्दान्विषमो वाहयत्पुमान् ॥६५
कथायां कथ्यमानायां विघ्नं कारयते तु यः ।
तेन पापेन लिप्येऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥६६
गृहे यस्यागतं मित्रं निराशं प्रतिगच्छति ।
तस्य पापेन लित्येऽहं यद्यहं नागमे पुनः ॥६७
इत्येतैः पातकैर्घोरै रागमिष्याम्यहं पुनः ।
बुद्ध्वा संप्रत्यं द्वीपी पुनर्वचनमब्रवीत् । ६८
संजातः प्रत्ययोऽस्माकं शपथैर्धेनुके तव ।
कदाचिन्मन्यसे गत्वा मूर्खोऽयं वञ्चितां मया ॥६९
अत्रापि केचिद्वक्ष्यंति शपथे नास्ति पातकम ।
कामनीषु विवाहेषु गवांमुक्ता तथैव च ॥७०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौओं में जो लोग विघ्न किया करते हैं और मोती हुई का जो ताड़न करते हैं उनको जो पाप लगता है उसी पापसे मैं भी लिप्तहो जाऊं अगर फिर वापिस मैं न आऊं। जो एकवार किसी कन्याको देकर अर्थात् दान करके फिर उसी कन्या को दूसरे किसीं को देने की इच्छा करता है उसे जो पाप लगता है मैं भीं उसी पापकी भागिनी बन जाऊं अगर फिर वापिस लौटकर मैं आपके पास न आ जाऊं। जोअयोग्य बैलोंको विषम स्थल में वाहन किया करता है और जोपुरुष कहीं जाने वाली कथामें वि उपस्थित किया करता है उसे जो पाप होता है में भी उसी पाप से युक्त पापिनी हो जाऊं अगर मै फिर तुम्हारे पास वापिस लौटकर न आऊं।६४-६६।जिसके घरपर आया हुआ मित्र निराश होकर वापिस लौटजाता है उसे जो पाप होता है वही पाप मुझे लगे यदिमैं पुनः वापिस न आऊं।६७। इन इतने घोर पातकोंसे मैं पुन आपके पास लौटकर आऊंगी। द्वीपी ने उसके कहे हुए वचनोंसे पूर्ण विश्वास समजकर फिर वह वचन बोला—व्याघ्र ने कहा।६८ हे धेनुके! तेरी शपथों से हमको पूर्ण विश्वास हो गया है। कदाचित् ऐसा भी मानती हो कि मैंने इस मूख को ठग लिया है ॥६९।। इस विषय में भी कुछ लोग ऐसा कहा करते हैं कि शपथ में कुछ भी पातक नहीं होता है। कामनियों के विषय में--विवाह कार्य के मामलों में और गौओं की मुक्ति के मामले में शपथ लेने पर भी कोई पाप नहीं माना जाता है ॥७०॥

प्राणत्यागे समुत्पन्ने श्रद्धातव्यं न च त्वया।
लोकेऽस्मिन्नास्तिकाः केचिन्मूर्खा, पंडितमानिनः ॥७१
भ्रामयिष्यंति ते चित्रं चक्रारूढमिव क्षणात्।
कुतर्कहेतुवृत्तांतैरज्ञानावृत्तचेतसः ॥७२
मोहयंति नरां क्षूद्रा आगमार्थविशारदाः।
अतथ्यान्यपि तथ्यानि दर्शयंत्यतिपेशलाः ॥७३
त्वथैव दर्शितं सर्वं यथेष्ट कुरु सांप्रतम्।
एवमेव महासाधो कस्त्वां वञ्चयितुं क्षमः ॥७४
आत्मैव वंचितस्तेन यः परं पञ्चयिस्यति।
धेनुके पश्य गच्छ त्वं प ४त्र पुत्रवत्सले ॥७५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुज्ञाता मृगेंद्रेण प्रयाता पुत्रवत्सला।
अश्रुपूर्णमुखी दीना वेपमानान सुदुःखिता ॥७६
अशक्ता स्वपरित्राणे विलपती मुहुर्मुहुः।
सा तत्र गोकुलं प्राप्ता हरिन्नद्यास्तते स्थितम् ॥७७

प्राणत्याग के समुत्पन्न होने पर आपको कभी भी श्रद्धा नहीं करनी चाहिए-ऐसा कहकर इस लोक में नास्तिक, अपने आपको महान् मनीषी मानने वाले कुछ मूर्ख भ्रम डाल देते हैं।७१।ऐसे ही लोग चक्र पर आरूढ़ को भ्रामित किया करते हैं, यह एक बड़ी विचित्र बात है। कुत्सित तर्क हेतु और वृत्तान्तोंके द्वारा अज्ञान से आवृत चित्त वाले क्षुद्र नर मोहको प्राप्त कर दिये जाया करते हैं। आगमोंके अर्थ के विशेष विद्वान अत्यन्त मूढ़ होते हुए जो अतथ्य है उसे भी तथ्य दिखा दिया करते हैं।७२-७३। तुमने सभी कुछ दिखलाया है अब जो चाहो वह करो। नन्दा ने कहा—हे साधो! ऐसा ही है परन्तु आपको वञ्चित कर देने की सामर्थ्य वाला कौन है? जो किसी दूसरे को प्रतारित किया करता है वह अपनी आत्मा को ही वस्तुतः वञ्चित किया करता है।८४। द्वीपी ने कहा—हे धेनुके! तुम पुत्र वत्सला हो, इसलिए जाओ और अपने पुत्र को देखो।७५। इस प्रकार मृगेन्द्र के द्वारा आज्ञा प्राप्त हुई वह पुत्र वत्सला धेनु वहांसे रवाना होगई थी किन्तु वह उस समयमें अश्रुओं से परिपूर्ण नेत्रों वाली-अत्यन्त दैन्य भाव से समन्वित, काँपती हुई और बहुतही दुःखित थी।७६।अपने आपके परित्राण करने में असमर्थ वह बार-बार विलाप करती हुई हरिन्नदी के तट पर स्थित गोकुलमें प्राप्त हो गई थी ॥७७॥

श्रुत्वा वत्स तु क्रोशतं पर्यधावत संमुखो।
उपसृप्य च तं बालं वाष्पपर्याकुलेक्षणम् ॥७८
संप्राप्य मातरं वत्सः शंकितः परिपृच्छति।
न ते पश्याम्यहं स्वास्वास्थ्यं दैर्यं नैवाद्य लक्षये ॥७९
उद्विग्ना चापि ते दृष्टिर्भीता चातीव लक्ष्यसे।
पिब पुत्र स्तनं मेऽद्य कारणं यदि पृच्छिसि ॥८०
अशक्ताहं तवाख्यातुं कुरु तृप्तिं यथेप्सिताम्।
अपश्चिमं तू ते पुत्र दुर्लभं मातृदर्शनम् ॥८१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाहमद्य मे पीत्वा प्रभाते कस्य पास्यसि ।
त्वां त्यक्त्वा पुत्रगंतव्यं शपथैरागता ह्यहम् ।।८२
क्षुत्क्षामस्य च व्याघ्रस्यदातव्यमात्मजीवितम् ।
नंदायाश्च वचः श्रुत्वा वत्सो वचनमब्रवीत् ।।८३

वहाँ पर उसने अपने वत्स के रुदन का श्रवण किया था और वह उसीके सामने दौड़कर पहुँची थी। उसने अपने बालक को वाष्पों से भरे हुए नेत्रों वाला पाया और वह उसके समीप में प्राप्त हो गई थी ।।७८।। उस वत्स ने अपनी माता को प्राप्त करके कुछ शङ्कित-सा होते हुए उससे पूछा-हे माता! आज मैं तेरा अच्छा स्वस्थ्य और धैर्य नहीं देख रहा हूं। तेरी यह यह दृष्टि भी कुछ उद्वेग से पूर्ण है और आज तो तू बहुत ही डरी हुई दिखलाइ दे रही है।७६।इस प्रकार से पुत्रके कहने पर नन्दाने कहा-हे पुत्र! अब आज तो तू मेरा स्तन का पान कर ले। यदि इस सबका तू कारण ही पूछता है ।.८०।। तो उसको बताने मे मैं असमर्थ हूँ। अब तू यथेच्छ रूप से अपनी तृप्ति कर ले। हे पुत्र ! इसके पीछे तो तुझे अपनी माता का दर्शन दुर्लभ हो जायगा ।।८१।। मैं एक ही हूँ। आज मेरा स्तन पीकर फिर प्रभात में तू किसका स्तन पीवेगा? मैं तो अब तुझे यहीं छोड़ कर चली जाऊगी क्योंकि मैं शपथ से ही यहाँ पर आई हुं ।८२। भूख से क्षीण व्याघ्र को मुझे अपना जीवन देना है। नन्दा के इन वचनों को सुनकर वत्स ने यह वचन कहा—।।८३।।

अहम् तत्र गमिष्यामि यत्र त्वं गतुमिच्छसि ।
श्लाघ्यंममापि मरण त्वया सह न संशयः ।।८४
एकाकिनापि मर्तव्यमयार्तेन त्वया विना ।
यदि मांसहितं मातर्वंते व्याघ्रो हनिष्यति ।।८५
यागातिर्मातृभक्तानां ध्रुवं सा मे भविष्यति ।
तस्मादवश्यंयास्यामि त्वया सह न संशयः ।।८६
अथवा तिष्ठ मातस्त्वं शपथाः संतु मे मम ।
जनन्या च वियुक्तस्यजीवितेकिं प्रयोजनम् ।।८७
ननाथस्यवनेनित्यं कोमे यथोभविष्यति ।
नास्तियमातृसमोबन्धुर्बालानांक्षीरजीविनम् ।।८८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नास्ति मातृसमो नाथो नास्ति मातृसमा गतिः ।
नास्ति मातृसमः स्नेहो नास्ति मातृसमंसुखम् ।।८९
नास्ति मातृसमो देव इह लोके परत्र च ।
एवं वै परमोधर्मः प्रजापतिविनिर्मितः ।९०
ते तिष्ठंति सदा पुत्रास्ते यांति परमां गतिम् ।
ममैव विहितो मृत्युर्नत्वं पुत्रागमिष्यसि ।।९१

वत्स बोला—हे माता ! आप जहाँ जाना चाहती है वहां पर मैं जाऊंगा । तुम्हारेही साथ मेरा मरण भी बहुत ही श्लाघनीय होगा-इसमें कुछ भी संशय नहीं है।८४।जब तू यहाँ नहीं होगी तो अकेले रह जाने पर भी मुझे मरना ही पड़ेगा क्योंकि उस दशामें मैं बड़ा दुःखित हो जाऊंगा हे माता यदि मेरे सहितही वह व्याघ्र हनन करेगा तो मेरी भी वही गति होगी जो कि मातृ-भक्तों को निश्चित होती है । इसलिए मैं तेरे ही साथ अवश्य ही जाऊंगा-इसमें कुछभी संशय नहीं है ८५-८६। अथवा हे माता! आप यहीं रहो, वे शपथ जो तुम्हारी हैं मुझे हो जावें क्योंकि जननी से जुदा रहने वालेके जीवित रहने में क्या प्रयोजन हो सकता है।८७।जब मैं बिना नाथ वाला रह जाऊंगा तो इस वन में मेरा दूसरा कौन नाथ होगा? जो बच्चे केवल अपनी माता के ही दूध पर जीवित रहा करते हैं उन बालकों का माता के समान अन्य कोई भी बन्धु नहीं होता हैं ।८८। बच्चों का माता के सदृश अन्य कोई भी नाथ नहीं होना है और माताके तुल्य अन्य कोई भी गति नहीं है । माताके जैसा स्नेह किसी भी अन्यका कभी नहीं होता है । माता की समीपता के तुल्य छोटे दुधमुंहे बच्चे को अन्य कोई भी सुख नहीं होता है ।८९।। हे माता ! इस लोक में और परलोक में दोनों ही जगह में माता के तुल्य कोई दूसरा देव नहीं है । इसी प्रकार का धर्म प्रजापति ने निर्मित किया है ।।९०।। जो सर्वदा पुत्र माताके पास रहते हैं वे परमगतिको प्राप्त हुआ करते हैं । इस पर नन्दा ने कहा—हे पुत्र ! यह तो मेरी ही मृत्यु का विधान किया गया है । वहाँ तुम नहीं जाओगे ।।९१।।

न चायमन्यजीवानां मृत्युः स्यादन्यमृत्यना ।
अपश्चिममिम्पुत्र मातृसंदशमुत्तमम् ।।९२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्रातिष्ठस्व मद्वाक्यात तःशुश्रूषणं पुनः ।
जले स्थले च विचरन्मप्रमाद तात मा कुरु ।।९३
प्रमादात्सर्वभूतानि विनश्यंति न संशयः ।
न च लोभेनचर्तव्यंविषमस्थं तृण क्वचित् ।।९४
लोभाद्विनाशः सर्वेषामिलोके परत्र च ।
समुद्रमटवीं पुत्रं विशति लोभमोहिताः ।।९५
लोभादकार्यमत्युग्रं विद्वानपि समाचरेत् ।
लोभात्प्रमादाद्विस्रंभात्त्रिभिर्नाशोभवेन्नृणाम् ।।९६
तस्माल्लोभं न कुर्वीत न प्रमादं न विश्वसेत् ।
आत्मा हि सतत पुत्र रक्षितव्यः प्रयत्नतः ।।९७

यह मृत्यु का ऐसा ही नियम है जिसकी मृत्यु होने को है उसी को वह होती है। अन्य जीवों की मृत्यु अन्य किसी को कभी नहीं हो सकती है। हे पुत्र मेरा अब यह आखिरी एक उत्तम सन्देश है।९२।तू मेरे वाक्य से यहाँ पर ही रहो, और फिर मेरी बात सुनो। हे तात! जल तथा स्थल में विचरण करते हुए कभी प्रमाद मत करना।९३।प्रमाद बहुत बुरा होता है। इस प्रमाद से समस्त प्राणी विनष्ट हो जाया करते हैं–इसमें तनिकभी सशय नहीं है। कभी लोभ से अभिभूत होकर विषम स्थल में रहने वाले तृष्णा को कहीं परभी नहीं चरना।।९४।लोभ एक नाशकारी दुर्गुणहैं। इस लोभ से सबका यहां और परलोक में भी विनाश हो जाता है। हे पुत्र! लोभ से मोहित होने वाले लोग ही गहर घोर समुद्र में तथा गहन-भीषण वनमें प्रवेश किया करते हैं।९५।लोभ से अत्यन्त उग्र अकार्य को विद्वान् पुरुष भी कर लाया करते हैं। मनुष्योंके नाश होनेके लोभ,प्रमाद और विश्रम ये तीनही कारण हुआ करते हैं।९६।इसलिए लोभ और प्रमाद कभी नहीं करना चाहिए तथा विश्वास भी कदापि न करे। हे पुत्र! अपने आत्मा का सतत रक्षण प्रयत्न के साथ करना चाहिए।।९७।।

सर्वाः सर्वप्रदा नित्यं रक्षध्वं मम बालकम् ।
अनाथं विकल दीन रक्षध्व मम पुत्रकम् ।।९८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मातृशोकाभिसंतप्तं भगिन्यः पालयिष्यथ ।
भगिनीनामय पुत्रो ह्यर्पितस्स्वपुतो मया ।।९९
पाल्यो बालश्च सर्वाभिः पोष्यः पालल्यश्च पुत्रवत् ।
तस्मादनाथमबलं पुववत्पालयिष्पथ ।।१००
प्रकर्तुं मुद्यत भीमं नंदा त्व सत्यवादिनी ।
शपथैः सत्यवाक्येन वचयित्वा महाभयम् ।।१०१
यद्वालं स्वसुतं त्यक्त्वा सत्यलोभेन गम्यते ।
अत्र गाथा पुराप्रोक्ता ऋषिभिर्ब्रह्मावादिभिः ।।१०२
प्रणत्यागे समुत्पन्ने शपथैर्नास्ति पातकम् ।
उक्त्वाऽनृतं भवेद्यत्र प्राणिनां प्राणरक्षणम् ।।१०३
अनृतं तत्र सत्यं स्यात्सत्मनृतं भवेत् ।
कामनीषु विवाहेषु गवां मुक्तौ तथैव च ।।१०४
ब्राह्मणानां विपत्तौ च शपथैर्नास्थि पातकम् ।
परेषां प्राणरक्षार्थं वदाम्येवानृत वचः ।।१०५

इसके अनन्तर उस नन्दा धेनु ने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त अन्य समस्त सखियों को सुनाकर उनके प्रार्थनाकी थी कि अब आप लोग सब कुछ प्रदान करने वाली हैं । भविष्य मे आप लोग नित्य ही मेरे इस बालक की पूर्ण रक्षा करें यह मेरा दुधमुहा विचारा बच्चा परमदीन-बेचेन और अनाथ है । आप सब लोग इसकी रक्षा करें ।९८। यह विचारा अपनी माता के वियोग-जन्य शोक से बड़ा ही सन्ताप युक्त है । हे बहिनो ! आप इसका पालन करोगी, यह आप समस्त बहिनो का ही पुत्र है मैं इस अपने पुत्र को आप सबकी सेवा में समर्पित करती हूं ।९९। इस बालक को आप ही सबको पालन करना चाहिए और अपने ही पुत्र की भांति इसका पोषण करें । देखो, यह एक अनाथ बिना माता वाला बच्चा है । इसका पालन पोषण अपने ही पुत्रकी तरह आप सब करेंगीं ।१०० । इस नन्दाके विनम्र कथनको सुनकर सबने नन्दासे कहा-नन्दा तू तो बहुतही सत्य बोलने वाली है और इस समयमें एक महान् भीषण कार्य करनेको उद्यतहो रही हैं तने शपथों के द्वारा ही सत्य वचनोंसे महान् भयको वञ्चित कर दियाहै और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यकी रक्षाके लोभ से तू अब अपने इस नन्हेंसे पुत्रको त्यागकर वहाँ पुनः जा रही हैं। तू महाधन्य है. परन्तु इस विषयमें बड़े-बड़े ब्रह्मवादी ऋषियों के द्वारा कही हुई एक गाथा है। जोपसिले बताई गई थो।१०१-१०२।जब अपने प्राणों का त्याग उपस्थित हो जावे तो उनकी रक्षा केलिए जो शपथ की जावे उनसे कुछभी पातक नहीं होता हैं। अनृत (असत्य) वचन कह कर भी प्राणियों को अपने प्राणों की रक्षा करनी चाहिए।१०३ यहां पर भूठ भी सत्य हो जाता है और महासत्य भी मिथ्या हो जाया करता है। इसी प्रकार से कामनियोंके साथ प्रेमालाप में प्रणयकी रक्षा करनेके लिए, विवाह-सम्बन्धों के जुड़ाने में और गायों के प्राणों की रक्षा के लिए तथा ब्राह्मणों की विपत्ति का निवारण करने के विपय में जो मिथ्या शपथ भी लेनी पड़ें तो अवश्यही लेलेवें क्योंकि इन उपर्युक्त दशाओं में शपथोंके लेने में कुछ भी पाप नही होता है।१०४।इस पर नन्दाने कहा-आप सबके कथन का मैं आदर करती हूँ और इसका तात्पर्य यही है कि दूसरोंकी प्राणोंकी रक्षा के लिये मैं भी मिथ्या भाषण किया करती हूँ ॥१०५॥

नात्मार्थमुत्सहे वक्तुं जोवितार्थे कथंचन ।
एकः संश्लिष्यते गर्भे मरणे भरणे तथा ॥१०६
भक्ते चैकः सुखंदुःखमतः सत्यं वदाम्यहम् ।
सत्येप्रतिष्ठिता लोका धर्मः सत्येप्रतिष्ठितः ॥१०७
उदधिस्सत्यवाक्येन मर्यादाम् न विलंघते ।
विष्णवे पृथिवीं दत्वावलि पातालमिश्रितः ॥१०८
छद्मनापिबलिर्बद्धः सत्यवाक्यं न चात्यजत् ।
प्रवर्धमानः शैलेन्द्रः शतशृङ्गः समुत्थितः ॥१०९
सत्येन सस्थितो विध्यः प्रबन्धं नातिवर्तते ।
स्वर्गापवर्गनरका सत्यवाचि प्रतिष्ठिताः ॥११०
यस्तु लोपयते वाचमशेष तेन लोपितम् ।
योऽन्यथा संतमात्मानमन्यथा प्रतिपद्यते १११

किन्तु मैं अपने जीवनकी रक्षा करने केलिए किसी प्रकार भी मिथ्या

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलने के लिए उत्साह नहीं कर सकती हूँ। एक ही यह प्राणी गर्भ में सश्लिष्ट होता है और वही अकेला भरण तथा मरणके सुख-दुःखोंका भोग किया करता है। इसलिए मैं तो सदा सत्यही बोलना चाहती हूँ। येसमस्त लोक सत्य में ही प्रतिष्ठित हैं और धर्मभी सत्यमें प्रतिष्ठित है।१०६-१०७ यह महान् सागर अपने सत्य वाक्यसे ही मर्यादाका लंघन नहींकिया करता है। देखो, असुरों के राजा बलिने विष्णु को जो वामन बनकर उसे छलने के लिए आये थे सम्पूर्ण राज्य के वैभव के सहित समस्त पृथ्वी दे दी थी और स्वयं अवसान में पाताल लोकमें निवासार्थ चला गयाथा किन्तु उसने कहे हुए वचनों की रक्षाकर सत्य का परिपालन किया था। छल से उस राजा बलिको बांध लिया गया था किन्तु महान् घोर कष्टों को सहन करके भी सत्य का त्याग नहीं किया था। प्रवर्धमान शैलों का राजा सौ शिखरों वाला होकर उठ खड़ा हुआ था।१०८-१०९। सत्य से ही वह विन्ध्याचल संस्थित होकर रह गया है और विन्ध्य ने प्रबन्धका अतिवर्जन नहीं किया है। ये स्वर्ग, अपवर्ग और नरक सभी कुछ सत्य वचनमें ही तो प्रतिष्ठितहो रहे हैं।११०।जो अपने कथित वचनोंका लोपकर दिया करता है उसनेसभी कुछका लोप कर दिया है-ऐसा समझना चाहिए। जो अपने आपको अन्यथा बना लेता है वह अन्यथा ही प्राप्त किया करता है।१११॥

दृष्ट्वागोपीजनं सर्वं परिक्रम्य च गोकुलम्।
नन्दा संप्रस्थिता देवान्वृक्षांश्चापृच्छयसापुनः ॥११२
चरमाणस्य कर्तव्वं सानुक्रोशैस्त रक्षणम्।
संदिश्य नंदा प्रीत्यैव पुत्रस्नेहवश गता ॥११३
शोकाग्निना च सन्दीप्ता विच्छिन्ना पुत्रदर्शने।
वियक्ता चक्रवाकीव लतेव पतिता तरो ॥११४
अन्धेव दृष्टिरहिता प्रस्खलती पदे पदे।
अगच्छत्सापूनस्तत्र यत्रासौ पिशिताशनः॥११५
आस्ते विस्थूर्जितशुखस्तीक्ष्णदंष्ट्रो भयावहः।
तावत्तस्थाः सुतो वत्स ऊद्ध्वंपुच्छोऽतिवेगवान् ॥११६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगत्यमातुरग्रेऽसो मृगेंद्रस्याग्रतोऽभवत् ।
आगत तु सुतं दृष्ट्वा मृत्यु तमग्रतः स्थितम् ।। १७
व्याघ्रं दृष्ट्वा तु सा धेनुरिद वचनमब्रवीत् ।
भो भो मृगद्रागताहं सत्यधर्मव्रते स्थिता ।। १८

इसके पश्चात् उस नन्दा ने समस्त गोपो जनों से भेंट की थी और फिर उस सम्पूर्ण गोकुल की परिक्रमाकी थी । फिर वह नन्दा सव देवगण तथा वहांके वृक्षों से आदेश प्राप्तकर सम्प्रस्थित हो गई थी।११२।उसने पुनः प्रार्थना की कि आप सब दयापूर्वक चरण करते हुए मेरे वत्सका संरक्षण करना । इस तरह से नन्दा प्रीति से सन्देश देकर अपने पुत्र के स्नेहमें वशीभूत होगई थी।११३। वह नन्दा पुत्र के वियोग से उत्पन्न शोक रूपी अग्नि से एक दम संतप्त हो रही थी और अपने पुत्र के देखने में विच्छिन्न होगई थी । वह चक्रवाकी की भांति जुदा होती हुई वृक्षकी लता के समान नीचे गिर पड़ी थी।११४। एक अंधे के समान वह दृष्टि से हीन होकर कदम-कदम पर प्रस्खलित हो रही थी इस तरह गिरती-पड़ती वह वहां पर ही चली गई थी जहा यह मांसभोजी रहता था ।११५।वहाँ पर अपना मुख खोले हुए तीक्ष्ण दाड़ी वाला महान् भयानक वह व्याघ्र स्थित था । इसी बीच में उस नन्दा का पुत्र, वत्स ऊपर को अपनी पूछ उठाये हुए अत्यन्त वेग से युक्त वहां पर ही आ गया था ।११६। वह वत्स वहाँ पहुंचकर अपनी माताके सामने और उस बाघ के आगे हो गया था उस आये हुए अपने पुत्र को और उसके सामने ही उस मृत्यु स्वरूप व्याघ्रको देखा था ।।११७ उस व्याघ्र को देखकर उस धेनु ने यह वचन कहा—हे मृगेन्द्र ! मैं अपने सत्य धर्म वृत में स्थित होने वाली आपके समक्ष में उपस्थित हो गई हूँ ।।११८।।

कुरु तृप्ति यथाकाममस्तन्मसेन सांप्रतम् ।
सतर्पयस्व भूतानि पिव त्व शोणितं मम ।।११९
मृतायां तु मयि त्वं भो भक्षयेमं तु बालकम् ।
स्वागत तव कल्याणि धेनुके सत्यवादिनि ।।१२०
न हि सत्यवतां किंचिदशुभ भवति क्वचित् ।
त्वयोक्तं धेनुके पूर्वं सत्यं प्रत्यागमे पुनः ।।१२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तेन मे कौतुकं प्राप्तं प्राप्ता गच्छेत्कथंपुनः ।
तव सत्यपरीक्षार्थं प्रेषितासि मया पुनः । १२२
अन्यथा मां समासाद्य जीवंती यास्यमे कथम् ।
यच्च नः कौतुकं जातं सत्यस्यान्वेषणं मम ।। १२३
तस्माददेन सत्येन मुक्तऽसि च मयाधुना ।
भगिनी भवती मह्यं भागिनेयः सुतस्तव ।।१२४
दत्तोपदेशस्य शुभे मम पापिष्ठकर्मणः ।
सत्य प्रतिष्ठिता लोका धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः ।।१२५
सत्येन गौः क्षीरधारां प्रमुंचति हविः प्रियाम् ।
स वै धन्यतमो गोपो यस्त्वत्क्षीरेण जीवित ।।१२६

हे मृगेन्द्र! अब आप मेरे माँस-से अपनी इच्छा अनुसार अपनी तृप्ति कर लीजिए।अपने भूतोंको संतप्त करें और मेरे रुधिरका पान करें। ११६ जब मुझे मारकर आप खा लेवें तो मेरे मर जानेके पश्च त् आप मेरे इस पुत्र का भी भक्षण कर लेवें। नन्दाके इस निवेदन को सुनकर द्वीपी बोला हे सत्य बोलने वाली धेनुके! हे कल्याणी ! तेरा स्वागत है ।।१२०।। जो सत्यके पूर्ण पालन करने वाले होते हैं उनका कभी भी कहीं कुछ अशुभ नहीं हुआ करता है । हेधेनुके! तूने पुनः यहां आगमन करने के विषय में पहिले बिल्कुल सत्य वचन कहे थे ।।१२१।। इससे मेरे हृदय में बड़ा ही कौतुक हो रहा है तू यहां से जाकर भी पुनः कैसे यहाँ वापिस लौटकर आ गई है । मैंने तेरे सत्य की परीक्षा लेने के लिए ही यहाँ से भेज दिया था।१२०। अन्यथा मुझको प्राप्त कर तू जीवित रहते हुए कैसे चली जाती जो मुझे इस समय में कौतुक हुआ है वह मेरा एक सत्यका अन्वेषण ही है-१२३। इसलिए अब तेरे इस सत्यके पूर्ण पालन करनेके कारण मेरे द्वारा तू मुक्त की जाती हैं । तू अब आजसे मेरी भगिनी होगई और यह तेरा पुत्र अब मेंरा भानजा हो चुका है ।१ ४। हे शुभे! तून तो मुझ जैसे महानन् पाप कर्म करने वालेको बड़ा उपदेश प्रदान किया है कि सत्य में ही ये समस्त लोक प्रतिष्ठित है और धर्मभी सत्य में प्रतिष्ठित है।१२५। सत्य हो गौ हवि की प्रिय क्षीर की धारा का प्रमुञ्न किया करती है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह गोप परम धन्य एवं महान् भाग्यशाली है जो तुझ जैसी सत्यपालिका धेनु के दूध से जीवन धारण किया करता है ।।१२६।।

तत्करिष्याम्हं कर्म येन मुच्येय किल्त्रिषात् ।
मया जीवसहस्राणि भक्षितानि शतानिच ।।१२७
गतिं का मिहयच्छामि दृष्ट्वा गोः सत्यमीदृशम् ।
अहं पापो दुराचारो नृशंसोजीवघातकः ।।१२८
कांस्तुलोकागगमिष्यामि कृत्वा कम सुदारुणम् ।
गामष्ये पुण्यतीर्थानि करिष्ये पापशोधनम् ।।१२६
पतिष्ये गिरिमारुह्य प्रवेक्ष्ये वा हुताशनम् ।
धेनोऽद्य यन्मया कार्यं तपः पापाद्विशुद्धये ।।१३०
तदा दिशस्व संक्षेपान्न कातो विस्तरस्य तु ।
तपः कृते प्रशंसंति त्रेतायां ज्ञानमेव च ।।१३१
द्वापरे यज्ञमित्याहुर्दानमेकं कलौ युगे ।
सर्वेषामेव दानानामिदमेवैकमुत्तमम् ।।२३२

द्वीपी व्याघ्र ने अन्त में कहा था कि अब ऐसा ही कर्म करूँगा, जिससे में किये हुए पापों से छुटकारा पा जाऊँ मैंने सैकड़ों और सहस्रों जीवों को मारकर खा लिया है ।।१२७।। इस संसार में मैं किस गति को प्राप्त होऊँगा । मैंने इस गौ के इस प्रकार के सत्य-परिपालन को देख लिया है । मैं तो महान् पापी, दुष्ट आचार वाला, अत्यन्त क्रूर और जीवों के घात करने वाला हूँ ।।१२८।। मैंने ऐसे-ऐसे महान् दारुण कर्म किये हैं कि मैं किन लोकों में मरकर जाऊँगा ? अब तो पुण्य तीर्थों का अटन करूँगा और किये हुए अपने पापों का शोधन करूँगा ? ।१२६। मैं पर्वत पर चढ़कर उससे नीचे गिरूँगा अथवा अग्नि में प्रवेश करूँगा । हे धेनो ! मुझे अपने किये हुए पापों के शोधन करने के लिए जो कुछ भी करना चाहिए उसे तुम संक्षेप में मुझे बतःदो क्योंकि विस्तार से कथन करने का अब अधिक समय नहीं है ।।१३०।। इस प्रकार व्याघ्र के द्वारा कहे जाने पर उस धेनु ने कहा—कृतयुग मे तो तपश्चर्या का करना ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वोत्तम उपाय समझा जाना है। त्रेत युग में ज्ञान का अर्जन करने से कल्याण होता है।१३१द्वापर में यज्ञादि के कर्मों के करने से उद्धार होता है और कलियुग में तो केवल दान से ही आत्म कल्याण हो जाता है और सम्पूर्ण प्रकार के दानों में यही एक दान सबसे उत्तम एवन् एव परम श्रेष्ठ हाता है ।।१३२।।

अभयं सर्वभूताना नास्ति दानमतः परम् ।
चराचराणां भूतानाभयं यः प्रयच्छति ।।१३३
स च सर्वभयान्मुक्तः परं ब्रह्माधिगच्छिति ।
नास्त्यहिंसामं दानं नास्त्यहिंसासमं तपः ।।१३४
यथा हस्तिपदेष्वन्यत्पदं सर्वं प्रलीयते ।
सर्वेधर्मास्तथा व्याघ्रे प्रलीयंते ह्यहिंसया ।।१३५
योगवृक्षस्य छाया या तापत्रयविनाशिनी ।
धर्मज्ञाने च पुष्पाणि स्वर्गमोक्षौ फलानि चा ।।१३६
दुःखत्रयांभितप्तस्य छाया योगतरोः स्मृता ।
न बाध्यते पुनर्दुःखैः प्राप्य निर्वाणमुत्तमम् ।।१३७
इत्येतत्परमं श्रेयः कीर्तितं ते समसितः ।
ज्ञातं चैव त्वया सर्वं केवल मां तु तुच्छसि ।।१३८

संसार में समस्त प्राणियों को अभय का दान देना चाहिए। इस अभय के दान से उत्तम अन्य कोई भी दान नहीं हैं। चर और अचरभूतों को जो सर्वदा अभय का दान दिया करता हैं वह प्राणी सभी भयों से छुटकारा पाकर परम ब्रह्म की प्राप्ति का लाभ लिया करता है। अहिंसा के समान अन्य कोई भी दान इस लोक में नहीं है और प्राणियोंकी हिंसा न करने के सदृश अन्य कोई तप नहीं होता है ।१३३-१३४।जिस प्रकार हाथी के पैर के चिन्ह में अन्य सभी जीवों के पदचिहन आ जाया करते हैं उसी भांति हे व्याघ्र! सम्पूर्ण अहिंसा में ही आजाया करते हैं। ३५। योग रूपी बृक्षकी जो छायाहै वह अधिभौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक इन तीनों प्रकार के तापों का विनाश करने वाली है इस वृक्ष के धर्म और ज्ञान पुष्प है तथा स्वर्ग की प्राप्ति एवं मोक्ष ये दोनों इस वृक्ष

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के फल होते हैं ।१३६। उपर्युक्त तीनों प्रकार के तापों से सन्तप्त प्राणी को शान्ति प्रदान करने के लिये योग रूपी वृक्ष की छाया ही बतलाई गई है। निर्वाण पद की प्राप्ति करके यह प्राणी फिर दुःखों से बन्धित नहीं किया जाता है ॥१३७॥ यह ही जीवों के लिये परम श्रेय है जो कि मैंने आपके सामने अति संक्षेप में बतला दिया है। आप तो इस सबको स्वयं ही जानते हैं। मुझसे तो आप वैसे ही केवल पूछ रहे हैं ।१३८॥

अहं मृग्या पुरा शप्तो व्याघ्ररूपेथसंस्थितम् ।
तत प्राणिवधात्सर्वमणेषममविस्मृतम् ॥१३९
त्वत्सस्पर्कोंपदेशाभ्यां सञ्जातंस्मरणंमम ।
त्वंचाप्यनेनसत्येनगमिष्यसिपरां गतिम् ॥१४०
तदहं त्वां पुनः पृच्छे प्रश्नमेकं हृदि स्थितम् ।
साग्रं वर्षशत जात चिंतयानस्य मे शुभं ॥१४१
भवत्या भाग्ययोगेन कदाचित्स्वर्गशोभने ।
कृतंधर्मस्य संस्थानं सतां मार्गेण प्रतिष्ठितम् ॥१४२
किंतेऽभिधानं कल्याणि ब्रूहि मेऽज्ञस्य सुव्रते ।
मम नन्देति संज्ञा तु कृता नन्देन स्वामिना ।१४३
साम्प्रतं भक्षयामोति ह्यतिष्ठः केन हेतुना ।
नन्देति श्रुत्वा तन्नाममुक्तशापप्रभञ्जनः ॥१४४
पुनर्नृपत्वमापन्नो बलरूपसमन्वितः ।
एतस्मिन्नन्तरे धर्मस्तां ज्ञात्वा सत्यवादिनीम् ॥१४५
द्रष्टुं समागतस्तत्र प्राब्रवीच्च पयस्विनीम् ।
तव सत्यव्रताद्धृष्टो धर्मोऽहमिह चागतः ॥१४६

इसके अनन्तर द्वीपी ने कहा-मैं पहिले भी व्याघ्र के रूप में संस्थित था और मुझे एक मृगी ने शाप दे दिया था। इसके पश्चात् प्राणियों के वध करने से मुझे यह सभी कुछ विस्मृत होगया था।१३९। अब तुम्हारे सम्पर्क प्राप्त होने से और उपदेश से मुझे उसका स्मरण होगया है। इस सत्यके परिपालन से तू भी परमगति को प्राप्त होवेगी ॥१४०॥ मैं तुझसे फिर एक प्रश्न पूछता हूँ क्योंकि यह मेरे हृदय में जिज्ञासा स्थित है। हे शुभे!

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह चिन्तन करते हुए मुझे एकसौ वर्ष से अधिक समय हो गया है।१४१। भक्ति से भाग्य के योग से कदाचित धर्म का संस्थान सत्पुरुषों के मार्ग में स्वर्ग को प्रतिष्ठित किया है। हे कल्याणी! हे सुव्रते! तेरा नाम क्या है—यह मुझे तू बतलादे क्योंकि में तेरे नाम को भी अभी तक नहीं जानता हूँ। इस तरह से उस व्याघ्र के पूछने पर नन्दा ने कहा—मेरा नाम नन्दा है जो कि मेरे स्वामी नन्द ने रक्खा है।१४२-१४३। अभी भक्षण करता हूँ ऐसा कहकर आप किस कारण से रुक गये हैं? नन्दा—यह नाम सुनकर उसके नामसे वह राजा प्रभंजन मुक्त शाप वाला होगया था।१४४। शाप से मुक्ति हो जाने पर वह बल और रूप-सौन्दर्य से समन्वित होकर पुनः नृपत्व को प्राप्त होगया था। इसी बीच में धर्म उस धेनु को सत्य बोलने वाली जानकर उसे देखने के लिए वहाँ पर आया था और उस पयस्विनी से कहा—तेरे सत्य बोलने के व्रत से बहुत ही प्रसन्न होकर मैं धर्म यहाँ पर आया हूँ।१४५-१४८।

नन्दे वृणीष्व भद्रं ते वरं वरतमं हि यत्।
एवमुक्ता हि सा देवी नन्दा तं प्रार्थयद्वरम्॥१४७
तवानुभावात्ससुता गच्छामि पदमुत्तमम्।
भवेदिदंशुभ तीर्थं मुनीनां धर्मदायकम्। १४८
मन्नाम्ना च सरिदियं नन्दा नाम सरस्वती।
वरप्रदानाद्देवेश तदेतत्प्रार्थितं मया॥१४९
सातत्क्षणाद्गता देवी स्थानं सत्यव्रतां शुभम्।
प्रभञ्जनोऽपि तद्राज्यं संप्राप्तः प्रागुपार्जितम्॥१५०
नन्दा येन गता स्वर्गं नन्दां प्राप्य सरस्वतीम्।
तेनाख्यया बुधैस्तस्याः प्रोक्ता नन्दा सरस्वती॥१५१

फिर धर्म ने उस धेनु से कहा—हे नन्दे! तेरा कल्याण हो तुझे जो भी अभीष्ट हो वह परम श्रेष्ठ वरदान मुझसे माँगले। इस प्रकार से धर्म के द्वाराकहे जानेपर उस देवी नन्दा ने वरकी प्रार्थना की थी।१४७। नन्दा ने कहा—आपके अनुग्रह से मैं अपने पुत्र के सहित उत्तम पद की प्राप्ति करूँ और यह स्थल एक परम शुभ तीर्थ स्थान बन जावे जो कि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मुनियों को धर्म प्रदान करने वाला है दे ।१४८। मेरे ही नाम से यह नदी नन्दा नाम वाली सरस्वती वरदान से होजावे । हे देवेश! यही मेरी प्रार्थना है जिसे मैंने इस समय कर दिया है ।१४६। पुलस्त्य मुनि ने कहा—वह देवी उसी क्षण में सत्यवानों के अति शुभ स्थान को वहाँ से चली गई थी। राजा प्रभञ्जन भी पहिले से समुपार्जित अपने राज्य में चला गया था। ।१५०। जिस सरस्वती को नन्दा नाम प्राप्त कराके स्वर्ग को गई थी उसी नाम से बुध लोगों के द्वारा उसका नन्दा सरस्वती नाम प्रख्यात किया गया था ।१५१।

।। वृत्रासुर-वध तथा अगस्त्य उपाख्यान वर्णन ।।

कथयामि समासेन शृणु त्वं सुसमाहितः ।
पूर्वं कृतयुगे भीष्म दानवा युद्धदुर्मदाः ।।१
कालेया इति विख्याता गणाः परमदारुणाः ।
ते तु वृत्रं समाश्रित्य नानाप्रहरणोद्यतः ।।२
समन्तात्पर्यधावन्त महेन्द्रप्रमुखान्सुरान् ।
ततो वृत्रवधे यत्नमकुर्वस्त्रिदशाः पुरा ।।३

पुरन्दरं पुरस्कृत्य ब्रह्माणमुपतस्थिरे ।
कृताञ्जलींस्तु तान्सर्वान्परमेष्ठीत्युवाच ह ।।४
विदितं मे सुरासर्वं युद्धःकार्यं चिकीर्षितम् ।
तमुपायं प्रवक्ष्यामि वृत्रं वधिष्यथ ।।५
दवीचिरिति विख्यातो महानृषिरुदारधीः ।
तं गत्वासहितास्सर्वे वरं च प्रतियाचत ।।६
स वो दास्यतिधर्मात्मा सुप्रीतेनान्तरात्मना ।
स वाच्यःसहितैसर्वैर्भवद्भिर्जयकांक्षिभिः ।।७

पुलस्त्य महर्षि ने कहा—हे भीष्म ! अब मैं अति संक्षेप से कहता हूँ उसे तुम परम सावधान होकर श्रवण करो । सत्ययुग में पहिले दानव लोग युद्ध करने के लिए ही दुर्मद हो गये थे ।१। इन दानवों का अत्यन्त दारुणगण थे जो कि 'कालेय'—इस नाम से लोकों में विख्यात था ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वे सब वृत्रासुर के आश्रय में प्राप्त होगये थे और अनेक प्रकार अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर रहा करते थे ।२।ये सभी अपना धावा कर दिया करते थे तथा इन्द्र आदि प्रमुख देवताओंके ऊपर आक्रमण कर दिया था। इसके पश्चात् देवताओं ने प्राचीन समय में वृत्रासुर के वध के लिये यत्न किया था ।३। अत्यंत उत्पीड़ित होकर देवगण इन्द्रदेव को अपना नेता बनाकर ब्रह्माजी के पास उपस्थित हुए थे । सब वहाँ हाथ जोड़कर खड़े हुए उन देवगणों से परमेष्ठी ब्रह्माजी ने कहा था ।४। हे देवताओ ! मुझे पहिले से ज्ञात होगया है जिस कार्य के लिये आप सब लोग यहाँ पर आये हैं। मैं अब आपको वही उपाय बतलाता हूं जिससे वृत्रासुर का वध हो जावेगा।५।एक दधीचि नाम वाले महान् उदार बुद्धि से समन्वित महर्षि हैं । उनके पास आप सभी लोग उपस्थित होकर वरदान प्राप्त करने की याचना करें।६।वह महर्षि बहुत ही धर्मात्मा हैं । वह तुमको अवश्य ही वरदान प्रदान कर देंगे । वह अपनी अन्तरात्मा से परम प्रसन्न हो जायेंगे । उस समय में विजय की आकांक्षा रखने वाले आप सबको मिलकर उनसे यह कहना चाहिए ।७।

स्वान्यस्थीनि प्रयच्छस्व त्रैलोक्यहितकांक्षया ।
स शरीरं समुत्सृज्य स्वान्यस्थीनि प्रदास्यति ।।८
तस्यास्थिभिर्महाघोरं वज्रं संक्रियतां दृढम् ।
महच्छत्रुहनं दिव्यं तदस्त्रमशनिः स्मृतम् ।।९
तेन वज्रेण वै वृत्रं वधिष्यति शतक्रतुः ।
एतद्व सर्वमाख्यातं तस्मात्सर्वं विधीयताम् ।।१०
एवमुक्तास्ततो देवा अनुज्ञाप्य पितामहम् ।
शतक्रतुं पुरस्कृत्य दधीचेराश्रमं ययुः ।।११
सरस्वत्या परेपारे नानाद्रुमलतावृतम् ।
षट्पदोद्गीतनिनदैरुद्घुष्टं समागैरिव ।।१२
त्रिविष्टपसमप्रख्यं दधीच्याश्रममागमन् ।
तत्रापश्यन्दधीचिं तं दिवाकरसमप्रभम् ।।१३
जाज्वल्यमानंपुषा यथा यक्ष्म्या चतुर्भुजम् ।
तस्य पादौ सुरा राजन्नभिवद्य प्रणम्यच ।।१४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयाचंत वर सर्वे यथोक्तं परमेष्ठिना ।
ततो दधीचिः परमप्रतीतश्ज सुरोत्तमान् ॥१८

ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा–जब वह परम प्रसन्न होकर तुमको वरदान प्राप्त करने को कहें तो उनसे कहना कि आप अपनी अस्थियाँ तीनों लोकों की भलाई की कामना हमको प्रदान कर देवें । ऐसी तुम्हारी याचना करने पर वह ऋषि अपने शरीर का त्याग करके अपनी अस्थियाँ तुमको प्रदान कर देंगे।८।उनकी अस्थियाँ से आप लोग महान् घोर वज्र बनाइये जो कि अत्यन्त दृढ़ होगा । वह महान् शत्रु के हनन करने वाला होगा॥९॥उस वज्र से इन्द्रदेव वृत्रासुर का वध करेंगे । मैंने यह सभी कुछ आप लोगों को बता दिया है सो अब आप यह सब कार्य सम्पादित करो।१०।इसके पश्चात् देवगण को ब्रह्मा के द्वारा ऐसा कहा जाने पर उन देवताओं ने ब्रह्माजी से वायदा किया और आदेशप्राप्त करके वे सब इन्द्र को अपना अगुआ बनाकर महर्षि दधीचि के आश्रम में चले गये थे।११।दधीचि महर्षि का आश्रम सरस्वती नदी के परलीपार था जो विविध प्रकारके वृक्ष और लताओं से आवृत्त था । वहाँ पर पुष्पों का मकरन्द पान करने वाले भ्रमरों की गुञ्जा से वह आश्रम शब्दायमान हो रहा था जैसे वहाँ वैदिक लोग सामवेद के मन्त्रों का गान कर रहे हों।१२।वह महामुनिदधीचि का आश्रम स्वर्ग के तुल्य था ऐसे परमोत्तम आश्रम में समस्त देवगण आये थे और वहाँ पर उन्होंने सूर्य के समान प्रभा वाले दधीचि का दर्शन किया था।१३।दधीचि मुनि अपने शरीरकी क्रान्ति से जाज्वल्यमान ऐसे दिखलाई दे रहे थे जसे लक्ष्मी के सहित चार भुजाओं वाले साक्षात् भगवान् नारायण विराजमान हों । वहाँ पहुँचकर समस्त देवगण से प्रणाम किया था । फिर जिस प्रकार से ब्रह्माजीं ने कहा था उसी रीति से उन महामुनि की सेवा में अपनी याचना की थी । तब तो दधीचि मुनि बहुत ही प्रसन्न हुए और उन सुरों से उन्होंने कहा ॥१४-१५॥

उवाच प्रणतो भूत्वा त्विदं कार्यकरं वचः ।
इन्द्राद्यास्त्यागता देवाः किमर्थं तद्वदस्तु मे ॥१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीड्यमानानहं मन्ये ह्यप्रभसुरोत्तमाः ।
यदर्थं पीडितात्मानस्तद्वदन्तु निराकुलम् ॥ ७
त्वदस्थिकृतशस्त्रेण देवास्सन्तु निरामयाः ।
करोमि यद्वो हितमद्य देवाः स्वं वापि देह त्वहमुत्सृजामि ।
तानेवमुक्त्वा विपदांवरिष्ठः प्राणांस्ततोऽसो सहसोत्ससर्ज ॥१८
सुरास्तदस्थीनि सवासवास्ते यथोपयोग जगृहुःस्म तस्य ।
प्रहृष्टरूपाश्च जयाय देवस्त्वष्टारमासाद्य तमर्थमूचुः ॥१६
त्वष्टा तु तेषां वचन निशम्य प्रहृष्टरूपः प्रयतः प्रयत्नात् ।
चकार वज्रं भृशमुग्रवीर्यं कृत्वा च शस्त्र तमुवाच हृष्टः ॥२०
अनेन शस्त्र प्रवरेण देव भस्मीकुरुष्वाद्य सुरारिमुग्रम् ।
ततो हतारि सगणः सुख त्व प्रशाधि कृत्स्न त्रिदिव दिविष्ठः ।
त्वष्टा तथोक्तस्तु पुरंदरश्च वज्रं प्रहृष्ट प्रयतो ह्यगृह्णात् ॥२१

दधीचि ने प्रणत होकर जो भी वचन देवगण से कहे थे वे कार्य को पूर्ण करने वाले थे । दधीचि ने कहा—आप देवराज इन्द्र आदि समस्त देवगण यहाँ पर आये हैं । यह बताइये कि आप लोग किस प्रयोजन से यहाँ उपस्थित हुए हैं ? ।१६। मैं ऐसा समझता हूँ कि आप सब उत्पीड़ित हैं और आपकी कान्ति क्षीण-सी हो रही है । जिस कारण से आप लोग पीड़ित हैं उसे शान्तिपूर्वक बिना किसी व्याकुलता के स्पष्ट मुझे बता दीजिए ।१७। तब देवों ने कहा—हम समस्त देवगण आपकी अस्थियों से निर्मित किये हुए शस्त्र से स्वस्थ एवं सुखी होवेंगे । इस कथन पर महर्षि दधीचि ने कहा था—हे देवगण ! आप लोगों का जिसमें हित होगा वही मैं आज करता हूँ । मै अपने देह का भी त्याग करता हूँ । पुलस्त्य ऋषि ने कहा द्विपदो अर्थात् मनुष्यों में परम श्रेष्ठ दधीचि ऋषि ने उन देवताओं से इस प्रकार कहकर फिर उसने शीघ्र ही अपने प्राणों का त्याग कर दिया था ।१८। उन समस्त देवताओं ने इन्द्र के सहित उनकी उन अस्थियों को उपयोग के अनुसार ग्रहण कर लिया था । परम प्रसन्न रूप वाले देवों ने अपनी विजय प्राप्त करने के लिए त्वष्टा अर्थात् अस्त्र निर्माण करने वाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समीप पहुँच कर अपना जो अस्थियों से अस्त्र बनवाने का प्रयोजन था वह कह दिया था।१९। त्वष्टा ने भी उनके वचनों को सुनकर परम प्रसन्न होते हुए उस कर्म में वह प्रयत्नपूर्वक संलग्न हो गया था और उसने बहुत ही उग्र पराक्रम वाले वज्रास्त्र का निर्माण करके प्रसन्न होते हुए उसने कहा।२०। हे देव ! इस अति श्रेष्ठ शस्त्र से आप आज ही देवों के उग्र शत्रु को मार देने वाले आप अपने गणों के सहित देवलोक में निवास करते हुए सम्पूर्ण त्रिदिव पर शासन कीजिए। त्वष्टा के द्वारा इस प्रकार से कहे गये इन्द्रदेव ने अत्यन्त प्रसन्न होकर उस वज्रास्त्र को बड़े ही प्रयत्नपूर्वक ग्रहण कर लिया था।२१।

ततः सवज्रेण युतो दैवतैरभिपूजितः।
आससाद ततो वृत्रं स्थितमावृत्य रोदसी ॥२२
ज्ञात्वा बलस्थं त्रिदशाधिप त ननाद वृत्रस्सुमहानिनादम्।
तस्य प्रणादेन धरादिशश्च खं द्यौर्नगाश्चेतिम् चचाल सर्वं ॥२३
ततो महेंद्रः परमाभितप्तः श्रुत्वा रव घोरतर महान्तम्।
भयेन मग्नस्त्वरितं मुमोच वज्र महान्तं खलुतस्य शीर्षे ॥२४
स शक्रवज्राभिहतः पपात महास्वनः कान्चनमाल्यधारी।
यथा महासैलवर पुरस्तात्समन्दरो विष्णुकरात्प्रमुक्तः ॥२५
तस्मिन्हते दैत्यवरे भयातः शक्रः प्रदुद्राव सरः प्रवेष्टम्।
वज्र च मेने स्वकरात्प्रमुक्तं वृत्रं भयाच्चैव हतं न पश्यति ॥२६
सर्वे च देवा मुदिता प्रहृष्टा महर्षयश्चैनमथो स्तुवन्ति।
शेषांश्च दैत्यांस्त्वरित सनेप्य जघ्नुः सुराः वृत्रवधाभितप्तान् ॥२७
ते वध्यमाना स्त्रिदशैस्तदानीं महासुरा वायुसमानवेगाः।
समद्रमेवाविविशुर्भयार्ता प्रविश्य चैवोदधिमप्रमेयम् ॥२८

इसके पश्चात् वह इन्द्रदेव उस वज्र से युक्त होकर समस्त देवगण के द्वारा समर्पित होते हुए इस रोदसी को आवृत करके स्थित होने वाले वृत्रासुर के समीप में प्राप्त होगये थे।२२। वह वृत्रासुर भी त्रिदश के अधिप इन्द्र को बल में स्थित होने वाला जान गया था और उस वृक्ष ने बड़ी भारी गर्जन की ध्वनि की थी। उसकी इस गर्जन की ध्वनि से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह भूमि—समस्त दिशाऐं—आकाश—द्यौं और पर्वत सब कंपित होकर हिल उठे थे।२३।उस समय इस महान् घोर ध्वनि को सुनकर देवराज इन्द्र अत्यन्त अभिताप से युक्त हो गया था। वह भय से निमग्न होकर अत्यन्त त्रस्त हो गया था और उसने फिर मस्तक में वह महान् वज्र छोड़ दिया था।२४।वह वृत्रासुर जो कञ्चन से निर्मित माला को धारण करने वाला था इन्द्र के छोड़े हुए वज्र से अभिहत होकर अत्यन्त घोर शब्द करता हुआ गिर गया। उस समय में गिरता हुआ वह ऐसा प्रतीत होरहा था जैसे कोई महान् शैल सामने मंदराचल के सहित भगवान विष्णु के हाथ से छूट गया हो।२५।उस महान् दैत्य के हत हो जाने पर भय के पीड़ित होकर इन्द्रसर में प्रवेश करने के लिये दौड़ गया था। उस देवराज ने अपने हाथ से छूटा हुआ वज्र तो समझ लिया था किंतु भय के कारण उसने वृत्र को मारकर गिरते हुए नहीं देखा था।२६। सब देवता बहुत ही आनन्द मग्न एवं परम प्रसन्न हो गये और महर्षि गण भी बहुत खुश होकर इसका स्तवन कर रहे थे। बचे हुए जो असुर उस समय उस युद्ध-स्थल में बैठे सब वृत्र के वध हो जाने से अभितप्त हो रहे थे। उनको देवों ने एकत्रित होकर शीघ्र ही मार दिया था।। ७।। उस समय में देवगण के द्वारा मारे गये वे महासुर जिनका वायु के समान वेग था भय से पीड़ित होते हुए अथाह समुद्र में घुसकर उसी में प्रवेशकर विलीन होगये ।।२८।।

झषाकुलं रत्नसमाकुल च तदास्म मन्त्रं सहिताः प्रचक्रुः।
तत्रस्म कश्चिन्मतिनिश्चियज्ञास्तांस्तानुपायन्परिचिन्तयन्तः ।।२९
भयार्दिता देवनिकायतप्तास्त्रैलोक्यनाशाय मतिप्रचक्रुः।
तेषां तु तत्र क्षयकालयोगाद्धोरामितिश्चिन्तयतां वभूव ।।३०
ये सन्ति विद्या तपसोपपन्नास्तेषां विनाशः प्रथमं च कार्यः।
लाकाश्च सर्वे तपसा ध्रियन्ते तस्म त्वरध्वं तपसा क्षयाय ।।३१
ये सन्ति केचिद्धि वसुन्धरायां तपस्विनो धर्मविदश्च तज्ज्ञाः।
तेषां वधश्च क्रियतां हि क्षिप्रं तेषु प्रनष्टेषु जगद्विनष्टम् ।।३२
एवं हि सर्वे गतबुद्धिभावा जगद्विनाशे परमप्रहृष्टाः।
दुर्गं समाश्रित्य महोर्मिमन्तं रत्नाकरं वारुणमालय स्म ।।३३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्रं ते समासाद्य वारुणं त्वम्भसांनिधिम् ।
कालेयास्संमपद्यन्तं त्रैलोक्यस्य विनाशने: ॥३४
ते रात्रौ समभिक्रुद्धा बभक्षुस्तांस्तदा मुनीन् ।
आश्रमेषुच ये सन्ति पण्येष्वायतनेषु च ॥३५

झप मछलियों से घिरे हुए और रत्नों से आकुल उस समुद्र में सबने एकत्रित होकर मन्त्रणा की थी । वहाँ पर कुछ लोग मति के निश्चय के ज्ञाता उन-उन उपायों का चिन्तन कर रहे थे ॥२६॥ भय से पीडित और देवों के समुदाय से संतप्त होने वाले उन्होंने त्रिलोकी के नाश कर देनेकी बुद्धि की थी । वहां पर चिन्तन करने वाले उनको कालक्षय के योगसे अति घोर बुद्धि होगई थी ॥३०॥ जो भी कोई विद्या और तप से समन्वित हैं उनका विनाश सबसे पहिले करना चाहिए समस्त लोक तप से ही धारण किये जाते हैं इसलिए तप के लिए ही शीघ्रता से कार्य करें।६१। जो कोई भी इस पृथ्वी पर तपस्वीजन हों और धर्म के ज्ञाता पुरुष हों उनका ही वध शीघ्रातिशीघ्र कर दिया जावे । उसके नष्ट हो जाने पर यह समस्त जगत् नष्ट हो जायगा ॥३२॥ इस प्रकार से सभी लोग हीन बुद्धि हो गये थे और सम्पूर्ण जगत् के विनाश के कार्य से प्रसन्न थे । महान् ऊर्मियों से युक्त रत्नों की खान उस वरुणदेव के आलय सागर को अपना एक किला समझ कर वे सब उसी में समाश्रित हो पड़े थे ॥३३॥ जलों के निधि उस वारुण समुद्र को प्राप्त करके कालेय तीनों लोकोंके विनाश करने में सलग्न होगये थे ॥३४॥ वे लोग अत्यन्त अभिक्रुद्ध होकर रात्रि में मुनियों का भक्षण करते थे जो अपने आश्रमों में और पुण्य आयतनों में निवास किया करते थे ॥६५॥

आजग्मु: परमो द्विग्नास्त्रिदशा मनुजेश्वर ।
समेत्य समहेन्द्रास्तु भयान्मन्त्र प्रचक्रिरे ॥३६
नारायण पुरस्कृत्य वैकुण्ठमपराजितम् ।
ततो देवास्समेतास्ते तदोचुर्मधुसूदनम् ॥३७
त्वं नः स्रष्टाः च गोप्ता व भर्ता च जगत प्रभोः ।
त्वयासृष्टं जगत्सवं यच्चेङ्ग यच्चनेङ्गति ॥३८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ते प्रविश्योदधिं घोरं नानाग्राहसमाकुलम् ।
उत्सादनार्थं लोकस्य रात्रौ घ्नन्ति मुनीनिह ।।३९
न तु शक्याः क्षये नेतं समुद्रान्तर्हिता हि ते ।
समुद्रस्य क्षये बुद्धिर्भवद्भिःपरिचिन्त्यताम् ।।४०
एतच्छ्रुत्वा वचो देवा विष्णुना समुदाहृतम् ।
परमेष्ठिनमासाद्य अगस्त्यस्याश्रम ययुः ।।४१
तत्रापश्यन्महात्मान वारुणं दीप्ततेजसम् ।
उपास्यमानमृषिभिर्देवैरिव पितामहम् ।।४२
तेऽभिगम्य महात्मान मैत्रावरुणिमुत्तमम् ।
अप्रमत्त तपोराशिं कर्मभिःस्वैरनुष्ठितैः ।।४३

हे मनुजेश्वर ! उस समय में अत्यन्त उद्विग्न होकर देवता वहाँ पर आये थे और महेन्द्र के सहित सब एकत्रित होकर भय से भीत हुए मन्त्रणा करने लगे।३६।इसके अनन्तर एकत्रित हुए वे सब देवता अपराजित वैकुण्ठ निवासी नारायण के आगे होकर भगवान् मधुसूदन से बोले। हे इस सम्पूर्ण जगत् के स्वामिन् ! आप ही हम सबके सृजन करने वाले हैं। आप ही रक्षक और सबका मरण करने वाले हैं। इस सम्पूर्ण जगत् को जो स्थावर और जङ्गम स्वरूप वाला है आपने ही रचा है।३७-३८। देवगण के द्वारा इस प्रकार से प्रार्थना करने पर भगवान् विष्णु ने कहा-हे समस्त सुरगणो ! मुझे प्रजा के क्षय होने का कारण ज्ञात होगया है। मैं आप सबको भी वतलाता हूँ। आप सब सन्ताप का त्याग करके उसका श्रवण करो। परम दारुण कुछ गण हैं जो 'कालकेय'-इस नाम से प्रसिद्ध हैं। ६ वे वृत्रासुर को मरा हुआ देखकर जो कि इन्द्र ने अपनी बुद्धि के बल से मार डाला था, अपने जीवन की रक्षा करते हुए वरुणदेव के आलस्य समुद्र में प्रविष्ट होगये हैं।४०।अनेक ग्राहों से घिरे हुए इस घोर उदधि में वे प्रवेश करके लोकों के नाश करने के लिए रात्रि में मुनियों को मारा करते हैं।४१। वे समुद्र के अन्दर छिपे हुए रहते हैं इसलिये उनका क्षय नहीं किया जा सकता है। जब आप लोग इस समुद्र के जल का ही शोषण होकर क्षय हो जावे-ऐसी कोइ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि का चिन्तन करो ।४२। भगवान् विष्णु के द्वारा कहे हुए इस वचन को सुनकर देवगण परमेष्ठी ब्रह्माजी के पास पहुँचकर फिर अगस्त्य मुनि के आश्रम में गये थे ।४३।

नहुषेणाभितप्तानां लोकानां त्वं गतिः पुरा ।
भ्रंशितश्च पुरैश्वर्याल्लाकार्थं लोककण्टकः ॥४४
क्रोधात्प्रवृद्धः समहान्भास्करस्य नगोत्तम ।
वचस्तवानतिक्रामन्विध्यःशैलो न वर्धते ।,४५
तमसाच्छादिते लोके मृत्युनाम्यर्दिताः प्रजाः ।
त्वामेव नाथमागम्य निर्वृ तिं परमांगताः ॥४६
अस्माकं भयभीतानां नित्यमेव भवान्गतिः ।
ततस्त्वत्त प्रयाचास्त्वां वरं वरदो ह्यसि ॥४७
त्रिदशानांवचः श्रुत्वा मैत्रावरुणिरब्रवीत् ।
किमर्थं समुपायाता वरंमत्तःकिमिच्छथ ॥४८
एवंमुक्तास्तदा तेन देवास्तं मुनिमब्रुवन् ।
इच्छाम एकं वरमद्भुतं वय पिबाणंव देवमुने महात्मन्।।४९
एव त्वयेच्छेमकृते महर्षे महार्णव पीयमान समग्रम् ।
ततो विहन्याम च सानुबन्ध कालेयसञ्ज्ञ सुरविद्विषां बलम्।५०
त्रिदशानांवच श्रुत्वा तथेति मुनिरब्रवीत् ।
करिष्ये भवतां कामलाकानांसुखकारकम् ॥५१

वहाँ पर देवी के द्वारा पितामह की भाँति ऋषियों के द्वारा उपासित होने वाले-दीप्त तेज से युक्त महात्मा वरुग का देवगण ने दर्शन प्राप्त किया था । वे सब परमोत्तम महान् आत्मा वाले—प्रमाद से रहित अपने किये हुए कर्मों से तप के समूह मैत्रावरुणि के पास उपस्थित हुए थे ।४४। ।४५। देवगण ने कहा—हे मुनिवर ! पहले नहुष के द्वारा अभिताप से सयुत लोकों की आप ही गति हुए थे अर्थात् आपने ही लोकों का उद्धार किया था । लोकों को भलाई के लिये उस लाकों को कष्ट देने वाले कण्टक रुपी दुष्ट का सुरैश्वय से भ्रश किया था ।४६। वह भास्कर का नगोतम अर्थात् पर्वतों में श्रेष्ठ बहुत बड़ा था और क्रोध से अत्यधिक बढ़ता ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा रहा था। उस समय उसने आपके वचन की जो अवहेलना करदी थी इसका परिणाम यह हुआ कि अब वह विन्ध्य नहीं बढ़ता है ।।४७। अन्ध-कार से समाच्छादित इस लोक में सम्पूर्ण प्रजा मृत्यु के द्वारा उत्पीड़ित हो रही थी। उस समय में नाथ आपको ही प्राप्त करके समस्त प्रजा परम निर्वृत्ति को प्राप्त हुई थी।४८। हम जब भय से त्रस्त होते है उस समय आप हमारे उद्धार करने वाले हुआ करतेहैं। इसलिए आज भी हम आपकी याचना कर रहे हैं आप ही रक्षक हैं आप हमको वरदान प्रदान करने वाले हो जावें ।।४९।। देवताओं के इस प्रार्थनापूर्ण बचन को श्रवणकर मैत्रावरुणि बोले—हे देवताओ ! आप लोग यहाँ किस प्रयोजन की सिद्धि के लिये आये हैं और आप लोग मुझसे क्या वरदान चाहते हैं ? ।।५०।। उस महर्षि के द्वारा इस प्रकार से कहे गये देवगण उस मुनि से बोले—हम लोग आपसे एक अद्भुत वरदान चाहते हैं। हे महात्मन् ? देवमुने ! आप इस सागर का पान कर लीजिये। हे महर्षे ! हम लोग आपसे द्वारा इस सम्पूर्ण महासागर को पीया हुआ चाहते हैं आपके द्वारा इस प्रकार किये जाने पर फिर हम देवों के शत्रुओं के कालेय सञ्ज्ञा वाला जो बल है उसे अनुबन्ध के सहित नष्ट कर देंगे ।।५१।।

एवमुक्त्वा ततोऽगच्छत्समुद्रं निधिमम्भस ।
तपःसिद्धैश्च मुनिभिःसार्धंदेवैश्च सुव्रत ।।५२
मनुष्योरगगंधर्वा यक्षा किंपुरुषास्तथा ।
अनुजग्मुर्महात्मानं द्रष्टुकामास्तदद्भुतम् ।।५३
ततोऽभ्यपश्यत्सहितैः समुद्रं भीमनिःस्वनम् ।
नृत्यन्तमिवचोर्मीभिर्वल्यन्तमिव वायुना ।।५४
हसंतमिव फेनौघै स्खलन्त कन्दरेषु च ।
नानाग्राहसमाकीर्णं नानाद्विजगणैर्युतम् ।५५
अगस्त्यसहिता देवाः सगंधर्वमहोरगाः ।
ऋषयश्च महाभागा समासेदुमहोदधिम् ।५६
समुद्रं स समासाद्य वारुणिर्भगवानृषिः ।
उवाच सहितान्देवानषींस्तांस्तु समागतान् ।।५७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवगण के इस वचन को सुनकर मुनि ने 'तथास्तु' अर्थात् ऐसाही किया जायगा—यह कहकर स्वीकार कर लिया था मुनि ने इसके उत्तर में कहा था—हे देवगण ! मैं आप लोगों का कार्य करूँगा क्योंकि वह आपकी अभिलाषा लोकों को सुख प्रदान करने वाली है।५०।हे सुव्रत ! इस प्रकार से कहकर फिर वह जलोंके निधि समुद्रके समीप चलेगये थे । उनके साथ बहुत-से तपस्या में सिद्धि—मुनि और देवगण भी गये थे ॥५३॥ इस परम अद्भुत कार्य को देखने की इच्छा वाले उन महात्मा के पीछे पीछे मनुष्य-उरग—गन्धर्व—यक्ष—किम्पुरुष भी चले गये थे ॥५४॥ इसके अनन्तर सबके साथ उन मुनि ने महान् भयानक शब्द करने वाले ऊर्मियों (लहरों) के द्वारा नृत्य सा करता हुआ और वायु से बलगते हुए समुद्र को देखा था । फेनों के समूह से हास करते हुए की भाँति कन्दराओं में स्खलन करते हुए अनेक प्रकार के ग्राहों से समन्वित और विविध भाँति के पक्षियों से युक्त सागर को उस मुनि ने देखा था॥५५-५६॥ अगस्त्य मुनिके सहित देवगण गन्धर्वों के साथ महोरग. ऋषि वृन्द और महाभाग्य वाले सब लोग समुद्र के पास प्राप्त हो गये थे ॥५७॥

पातुकाम समुद्रं च अगस्त्यऋषिसत्तमः ।
एष लोकहितार्थाय पिवामि वरुणालयम् ॥५८
भवतां यदनुष्ठेयतच्छीघ्र सविधीयताम् ।
एतावदुक्त्वा वचन मैत्रावरुणिरग्रतः ॥५९
समुद्रमपिपबत्क्रुद्धःसवलोकम्ययतः ।
पीयमानं समुद्रं तु दृष्ट्वा देवाः सवासवाः ॥६०
विस्मयं परमजग्मुस्तुतिभिश्चाप्यपूजयन् ।
त्वं नस्त्राता विधाता च लोकानां लोकभावनः ॥६१
त्वत्प्रसादात्समुत्सेधमुपगच्छेत्समं जगत् । २
संपूज्यमानस्त्रिदशैर्महात्मा गन्धर्वमुख्येषु नदत्सु चैव ।
दिव्यैश्च पुष्पैरवकीर्यमाणो महार्णवं निःसलिलं चकार ॥६३
दृष्ट्वा कृत निःसलिलं महार्णवं सुराःसमस्ताःपरमप्रहृष्ट ।
प्रगृह्य दिव्यानि वरायुधानि तान्दानवाञ्जघ्नुरदीनसत्वाः ॥६४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह भगवान् वारुणि महर्षि समुद्र के समीप में पहुँचकर आये हुए उन समस्त देवता और ऋषियों से बोले-।५८। ऋषियों में परम श्रेष्ठ अगस्त्य अब समुद्र के पान करने की इच्छा वाले हैं। यह मैं लोकों के हित सम्पादन करने के ही लिये इस वरुण के आलय सागर का पान करता हूँ ।५६। इस समय में आप लोगों को जो भी कुछ करना हो उसे अति शीघ्रता से कर डालना चाहिये। इतना वचन कहकर मैत्रा वरुणि ने सबके आगे सभी लोगों के देखते हुए क्रुद्ध होकर समुद्र का पान कर लिया था। पीये गये उस समुद्र को देख कर इन्द्र के सहित सब देवगण वहाँ उपस्थित थे।६०। ।६१। सभी लोग परम आश्चर्य को प्राप्त हुए थे और फिर सबने स्तुतियों के द्वारा उनकी अर्चना की थी। आप लोकों पर अनुग्रह करने वाले हैं। आप हमारी रक्षा करने वाले हैं ।६२। आपकी कृपा से यह सम्पूर्ण जगत् समुन्नति को प्राप्त हो गया ।६३। गन्धर्वों प्रमुखों के द्वारा जयकार की ध्वनि की जाने पर यह महान् आत्मा वाले महर्षि अगस्त्य देवगण के द्वारा भली भाँति पूजित हुए थे। देवाङ्गनाओं के द्वारा दिव्य पुष्पों की आकाश से उन पर वृष्टि की गई थी। इस तरह से उस महर्षि ने उस सागर को पीकर जलशून्य बना दिया था ।६४।

ते वध्यमानास्त्रिदशैर्महात्मभिर्महाबलेर्वेगयुतैर्नदद्भिः।
न सेहिरे वेगवतां महात्मनांवेगं तदाधारयितुं दिवौकसाम् ६५
ते वध्यमानास्त्रिदशैर्दानवा भीमनिःस्वनाः।
चक्रुः सुतुमुलंयुद्धं मुहूर्त्तमिव भारत ।।६६
ते पूर्वं तपसादग्धा मुनिभिर्भावितात्मभिः।
यतमानाः परं शक्त्या त्रिदशैर्विनिषूदिताः ।।६७
ते हेमनिष्कःभरणाा कुण्डलाङ्गदधारिणः।
निहता ब्रह्वशोभंत पूष्पिताइव किंसुकाः ।।६८
हताशष्टास्ततः केचित्कालेयदनुजोत्तमाः।
विदाय वसुधां देवीं पातालतयमाश्रिता ।।६९
निहतान्दानवान्दृष्ट्वा त्रिदशा मुनिपुङ्गवम्।
तुष्टुर्विविवर्धास्यगिदंचैवाब्रुवन्वचः ।।७०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस महासागर को जल से रहित बनाया हुआ देखकर समस्त देवता अत्यत ही प्रसन्न हुए थे । पूर्ण सत्त्व से समन्वित देवों ने अपने दिव्य एव परम श्रेष्ठ आयुधों को ग्रहणकर उन समुद्र में छिपकर रहने वाले दानवों को मार दिया था ।६५। महात्मा देवगणों के द्वारा वध किये जाने वाले वे दानव उस समय में उनके वेग को रोकने में समर्थ नहीं हो सके थे । वे देवता भी महान् बल से सम्पन्न थे और अत्यन्त वेग से युक्त सिंहगर्जन करने वाले थे । ऐसे देवगण का वेग भी महान् ही था जिसका सहन करना बहुत ही दानवों के लिये कठिन हो रहा था ।६६। हे भारत ! जिस समय में से दानवगण देवों के द्वारा वध किये जा रहे थे वे बड़ा ही भयानक शब्द कर रहे थे और थोड़ी देर तक देवों के साथ उन्होंने महान् घोर युद्ध भी किया था।६७।वे दानव पहिले तो भावितात्मा मुनियों के द्वारा तप से दग्ध किये गये थे फिर वे प्रयत्नशील देवगण के द्वारा शक्ति से नष्ट किये गये थे ।६८। वे सुवर्ण के निष्क आभरण वाले और कुण्डल तथा अङ्गदों के धारण करने वाले दानव जब निहत होकर भूमि पर पड़े हुए थे तब वे सब खिले हुए पुष्पों से युक्त किंशुक के वृक्षों के समान अत्यधिक शोभित हो रहे थे।६९। उस समय में जो भी दानव हनन से शेष बच गये थे, जो दनुजों में उत्तम कालेय नाम से प्रसिद्ध थे, वे इस भूमि का विदारण कर पाताल तल में जाकर स्थित हो गये थे । वहाँ पर ही उन्होंने अपना आश्रय बना लिया था ।७०।

त्वत्प्रसादान्महाभाग लोकैः प्राप्त महत्सुखम् ।
त्वत्तेजसा च निहताःकालयाभीमविक्रमाः । ७१
पूरयस्व महाविप्र समुद्रं लोकभावनम् ।
यत्त्वया सलिलपीतंतदस्मिन्पुनरुत्सृज ।।७२
एवमुक्त प्रत्युवाच भगवान्मुनिपुङ्गवः ।
जीण तद्धि मया तोयमुपायाऽन्यः प्रचिन्त्यताम् ।।७३
पूरणार्थं समुद्रस्य भवाद्भयत्नमास्थितैः ।
एव श्रुत्वा तु वचन महर्षेर्भावितात्मनः ।।७४
विस्मिताश्च विषण्णाश्च बभूवुः सहितास्सुराः ।
परस्परमनुज्ञाप्य प्रणम्य मुनिपुङ्गवम् ।।७५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजा:सर्वामहाराज निप्राजग्मयथागतम् ।
त्रिदशा विष्णुनासार्द्धं मनुजग्मुः पितामहम् ॥७६
पूरण.र्थं समुद्रस्य मन्त्रयन्त:परस्परम ।
ऊचु:प्राञ्जलयस्सर्वे सागरस्य हि पूरणम् ॥७७

समस्त दानवों को निहत (मरे हुए) देखकर देवगण मुनियों में अत्युत्तम अगस्त्य का स्तवन करने लगे थे और अनेक प्रकार के वाक्यों से उनकी स्तुति की थी। फिर देवताओं ने उनसे यह वचन बोले थे—।७१। हे महाभाग! आज आपके ही प्रसाद से समस्त लोकों ने यह महान् सुख प्राप्त किया है। यह आपके ही तेजका प्रभाव हैकि बड़ेही भीषण पराक्रम वाले ये कालेय दानव मारे गये है।७२।हे महाविप्र! आप इस लोक पर कृपा करने वाले इस समुद को पूरित कर दीजिये। आपने जो इसकें जल का पान कर लिया है उसे पुनः इसी में छोड़ दीजिये। जिससे यह फिर पूर्व की भाँति जल से भरा पूरा दिखलाई देने लगे।७३।इस तरह से प्रार्थना किये गये मुनि श्रेष्ठ ने उन देवों से कहा था कि वह जल तो मुझे सब पच गया है। अबतो इसका कोई अन्य उपाय ही सोचिये। यदि आप लोग इस सागर को जल से पूरित करना चाहते हैं तो आप कोईभी और यत्न करने में समास्थितहो जाइये। इस तरह भावित आत्मा वाले उस महर्षि केवचन को उन समस्त देवोंने श्रवण किया था।७४।तब तो समस्त सुरगण बहुत ही आश्चर्य से समन्वित और अत्यन्त विषाद से संयुक्त होगये थे। उन सबने आपस में अनुज्ञापन करके मुनि श्रेष्ठ को प्रणाम किया था ॥७५॥ हे महाराज! उस समयमें सारी प्रजा और विप्रगण जैसे ही वहाँ पर आये थे, चले गये थे। समस्त देवगण भगवान् विष्णु के साथ फिर पितामह के पास चले गये थे ॥७६॥ सभी देवता उस समुद्र को जल से भरा पूराकर देने के लिये आपस में मन्त्रणा करते हुए हाथ जोड़कर सबने सागर की पूर्ति के लिये प्रार्थना की थी ॥७७॥

तानुवाच समेतांस्तु ब्रह्मा लोकपितामहः ।
गच्छध्वं विबुधास्सर्वेयथाकाम यथेप्सितम् ॥७८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महताकालयोगेन प्रकृतिं यास्यतेऽर्णवः ।
ज्ञातोस्तु कारणं कृत्वा महाराजोभगीरथः ॥७९
गङ्गौघेन समुद्रं च पुनः संपूरयिष्यति ।
एव ते ब्रह्मणां देवाः प्रेषिता ऋषिसत्तमाः ॥८०
उवाच भगवांतुष्टस्त्वगस्त्यमृषिसत्तमम् ।
देवकार्यं तु भवता दानवानां विनाशनम् ॥८१
यतस्संतारिता देवास्तेनपुष्टोऽस्मि वै मुने ।
अभिप्रेतो वरो यस्ते याचयस्व ददाभितम् ॥८२
एवमुक्तस्तदागस्त्यः प्रणिपातपुरः सरम् ।
इहस्थेन मया देव देवकार्यं मिदं कृतम्नम् ॥८३
सर्वाश्रमाणां प्रवरो भवत्वेष ममाश्रमः ।
त्वया चोक्तस्तु भगवन्भयिता नात्र संशयः ॥८४

उन समस्त समागत हुए देवताओं से पितामह श्री ब्रह्माजी ने कहा था कि हे देवगण ! आप सब लोग अपनी इच्छा के अनुसार अपने-अपने अभीष्ट स्थान पर चले जावें ॥७८॥महान् काल के योग से यह महासागर अपने ही आप स्वाभाविक स्थितिको प्राप्त हो जायगा । महाराज भगीरथ अपने भाइयों तथा पूर्वजों के उद्धार का कारण बनकर ऐसा ही कोई कार्य करेंगे।७९।इस सागर को गंगा के प्रवाहसे फिर पूरित कर देंगे । इसप्रकार से हे ऋषियों में श्रेष्ठ गणों! पितामह ने उन देवताओं को वापिस भेज दिया था।८०।फिर भगवान ने परम् प्रसन्न होते हुए अगस्त्य ऋषि श्रेष्ठ ने कहा था कि आपने देवताओं का बहुत बड़ा यह कार्य किया हैं जिसके कि दानवें का पूर्ण विनाश हो गया है।८१।हे मुनि! आपने समस्त देवों को सतारित कर दिया है, इससे मैं आप से बहुत ही प्रसन्न एवं तुष्ट हो गया हूँ । अब आपको जो भी अपना अभीष्ट वरदान हो वह मुझसे इस समयमें माँग लो उसे ही मैं आपको दे दूंगा।८२। इस रीति से जब मुनि से कहा गया तो अगस्त्य मुनि ने प्रणाम करके कहा-हे देव ! मैंने यहाँ पर स्थित होकर ही यह देवगण का महान् कार्य सम्पन्न कर दिया है ।८३। इसलिए अब मेरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
यही प्रार्थना है कि यह मेरा आश्रम समस्त आश्रमों में श्रेष्ठतम होजावे। आपने जब कह दिया है तो यह अवश्य ही ऐसा ही हो जायगा—इसमें लेशम त्र भी संशय नहीं है ।।८४।।

आश्रमेषु यथोक्तेषु यथोवर्त्तं वै द्विजातय, ।
ये वर्तन्ते समन्त्रास्तु तेषां लोकामहोदया: ।।८५
ये न हिंसन्ति भूतानि कर्मणा मनसा गिरा ।
अनृशंसतरा: सन्त: सर्वदा च प्रियंवदा: ।।८६
अग्निहोत्ररतानित्यं चातिथिपूजका: ।
नित्यं स्वादयायवन्तश्च नित्य स्नानपरायणा: ।।८७
मातृवत्स्ववच्चैव तथा दुहितृवच्च ह ।
परदारान्प्रपश्यन्ति सततं विगस्पृहा: ।।८८
येऽधिक्षिप्ता: न कुर्यन्ति न हिंसन्ति च हिंसिता: ।
समदु:खसुखा: सन्तो महात्मानो जितेन्द्रिया: ।।८९
ते हि सर्वे प्रपश्यन्ति पुरा चेरुर्महीमिमाम् ।
समाधिना चिन्तयन्तो ब्रह्मलोकं सनातनम् ।।९०

ब्रह्माजी के वरदान से फिर ऐसा ही प्रभाव हुआ था कि यथोक्त अश्रमों में जो द्विजातिगण थे वे सभी ठीक-ठीक आश्रमों का परिपालन करने वाले थे। जो वहाँ रहते थे सब मन्त्रों से युक्त थे और उनके लोक भी महान् दया वाले थे ।।८५।। वहां पर कोई भी मन वाणी और कर्म के द्वारा प्राणियों की हिंसा नहीं करते थे। सभी लोग नृशंसता से रहित होते हुए सदा परम प्रिय वचन बोलने वाले थे ।८६। समस्त लोग अग्निहोत्र करने में रत रहने वाले थे और नित्य ही अतिथियों की अर्चना किया करते थे। सभी लोग नित्य हीं स्वाध्याय किया करते थे और नित्य स्नान करने में तत्पर रहते थे ।८७। सब लोग पराई स्त्रियों को माता भगिनी और पुत्री के समान देखा करते और सर्वदा कोई भी किसी प्रकार की स्पृहा नहीं किया करते थे ।८८। उन पर कोई अधिक्षेपभी कर देता था तो भी वे किसी भी प्रकार कोप नहीं किया करते थे। यदि कोई पुरुष कोई प्रति हिंसा का भाव रखता था तो वे स्वयं हिंसित होकर भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी प्रकार भी बदले में हिंसा नहीं किया करते हैं। सभी महान् आत्मा वाले, इन्द्रियों को अपने वश में रखकर उन्हें जीत लेने वाले और उनके लिए सुख तथा दु;ख दोनोंही समान थे।८६। वे सब पहिले इस भूमि पर समभाव से देखते हुए विचरण किया करते थे। समाधि से सर्वदा सनातन ब्रह्मलोक का चिन्तन किया करते थे ॥६०॥

अथाभवदनावृष्टिः कदाचिन्महती तदा।
कृच्छ्रं प्रायोह्यभूत्तत्र सर्वलोकः क्षुधार्दितः ॥६१
ततो निरन्नेलोकेऽस्मिश्चात्मानं ते परीप्सवः।
मृतं कुमारमादाय कृष्छ्प्रायास्तदापचन् ।।६२
अथ पर्यचरुत्तत्र क्लिश्यमानान्हि तानृषीन्।
दृष्ट्वा राजा विषादा र्त्तः प्रोवाचेदं वचस्तदा ॥६३
प्रतिग्रहो ब्रह्मणानां दृष्ट्वा वृत्तिरन्दिता।
तस्मात्प्रतिग्रान्मत्तो गृहणीध्वमुनिसत्तमाः ॥६४
वरान्ग्रामान्व्रीहियवात्नानि काञ्चनम्।
गाश्च धेनूश्च तत्सर्वं मा मांसं पचत द्विजाः ॥६५
राजन्प्रतिग्रहो घोरो मध्वास्वादो विषोपमः।
तज्जानतां न नः कस्मात्त्वं कुरुषे सम्प्रलोभकम् ॥६६
दशसूनासमश्चक्री दशचक्रिसमो ध्वजी।
दशध्वजिसमा वेश्या दशवेश्यासमो नृपः ॥६७
दशसूना सहस्राणि यो वाहयति शौण्डिकः।
तेन तुल्यस्ततोराजा घोरस्तस्य प्रतिग्रहः ॥६८

इसके अनन्तर किसी समय में यहाँ पर बड़ी भारी अनावृष्टि हुई थी और वहां पर उस समय में सबका जीवन बहुत कष्टों से परिपूर्ण हो गया था तथा सभी लोग भूख से पीड़ित होगये थे।६१। उस समय लोकमें अन्न का पूर्णतया अभाव हो गया था और ऐसा महान् भीषण समय उपस्थित हो गया कि लोग अपने प्राणों की रक्षा की इच्छा रखते हुए अपने ही मृत हुए कुमार को कष्टापन्न होकर पकाने लग गये थे ।६२॥ वहाँ पर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा ने क्लेश को प्राप्त हुए उन ऋषियों को देखकर उनकी परिचर्या की थी और उस समय में विषाद से अत्यन्त आर्त्त होकर उनसे वह यह वचन बोला।९३। राजा ने कहा-ब्राह्मणों का प्रतिग्रह एक अनिन्दित वृत्ति से-ऐसा देखकर मै प्रार्थना करता हूं कि इसलिए हे मुनिश्रेष्ठो ! आप लोग मुझ से प्रतिग्रह ग्रहण करो।९४ आप लोक श्रेष्ठ ग्राम, व्रीहि और यव रस, रत्न, सुवर्ण, गौ और धेनु ये सभी मुझसे प्राप्त करो किन्तु हे द्विजगण! आप लोग मास का पांचन मत करो।९५।ऋषियों ने कहा-हे राजन ! यह प्रतिग्रह तो महान् घोर मदिराके या मधुके अस्वाद के समान है किन्तु यह परिणाम में विष के ही तुल्य होता है। इसको भलीभांति जानने वाले हमको आप क्यों इसका प्रलोभन कर रहे हैं ?।९६। दश सूनों के समान एक चक्री होता है और दश चक्रियों के तुल्य एक ध्वजी होता है। दश ध्वजियां के बराबर एक वेश्या होती है और दश वेश्याओं के समान एक नृप हुआ करता है। सहस्र दशसूनों का जो वाहन करता है वह शौण्डिक होता हैं उसके समान राजा कहा है। इसलिए राजा का प्रतिग्रह तो महान् घोर होता है ॥९७-९८।-

यो राज्ञः प्रतिगृह्णाति ब्राह्मणो लोभमोहितः।
तामिस्रादिषु घोरेषु नरकेषु सपच्यते ॥९९
तद्गच्छ कुशल तेऽस्तु सहदानेन पार्थिव।
अन्येषां दीयतामेतदित्युक्त्वा ते वनं ययुः ॥१००
अथराज्ञः समादेशात्तत्र गत्वाथ मन्त्रिणः।
उदुम्बराणि व्यकिरन्हेमगर्भाणि भूतले ॥१०१
ततो ह्यत्रः विचिन्वन्तो गृह्णंश्चोदुम्बराण्यपि।
गुरुणि हि विदित्वा तु ग्राह्यण्यत्रिरब्रवीत् ॥१०२
नास्महे मूढविज्ञाना नास्महे मन्दबुद्धवः।
हैमानीमानि जानीमः प्रतिबद्धाः स्मज्ञानिनः ॥१०३
इहैवेद वसुप्रीत्यै प्रेत्त वंकुण्ठितोदयम्।
तस्मान्न ग्राह्यमेवैतत्सुखमानन्त्यमिच्छता ॥१०४
शतेन गुणित निष्क सहस्राण समन्वितम्।
यश्चान्यतः प्रतीच्छेत्स पापिष्ठां लभते गतिम् ॥१०५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्पृथिव्यां व्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः।
नूनं नैकस्य पर्याप्तमिति मत्वा शमंव्रजेत् ॥१०६

जो ब्राह्मण लोभ से मोहित होकर राजा के प्रतिग्रह को ग्रहण किया करता है वह तामिस्र आदि जो महान् घोर नरक हैं उनमें पड़कर वहांकी अत्यन्त तीव्र यातनाएं सहा करता है।९९।इसलिए हे राजन्! आप यहांसे चले जाइये, आपका कुशल हो, आप अपने इस दानको भी ले जाइये। इस दान को आप दूसरों को ही दीजिएगा। यह कहकर वे वन में चले गयेथे।१००। इसके पश्चात् राजा के आदेश से वहाँ पर मन्त्रियोंने जाकर भूतल में हेम को मध्यमें डालकर गूलरोंको बिखेर दिया था।१०१।इसके अनन्तर अन्न की खोज करते हुए उन्होंने उन उदुम्बरों का भी ग्रहण किया था और उनको जब भारी देखा तो अत्रिने कहा इनको कभी ग्रहण नही करना चाहिए।१०२।अत्रि मुनिने कहा—हम लोग ऐसे मूढ़ और ज्ञानसे शून्य नही हैं और न हम इतने मन्द बुद्धि वाले ही हैं। हम इनको हेम से युक्त भली भाँति जानते हैं। हम ज्ञान वाले हैं और सभी कुछ समझ गये है।१०३। यह धन की प्रीति यहाँ पर संसार में है फिर मरकर तो यह धन उदय को रोक देने वालाही हो जाता है। इसलिए इस धन को अनन्त सुख की इच्छा करने वालों को कभी भी ग्रहण नहीं करना चाहिए। शतसे गुणित निष्क सहस्र से समन्वित होता है जो दूसरे से इसको ग्रहण करता है वह महा पापिष्ठों की गतिको प्राप्त होताहै।१०४-१०५। जो भी पृथ्वीमें व्रीहि और यव, सुवर्ण, पशु और स्त्री हैं वे सब निश्चय ही एक के लिए भी पर्याप्त नहीं है-ऐसा ही समझकर शुभ को धारण करो ॥१०६॥

तपसा संचयो यस्य द्रव्याणां यस्य सञ्चयः।
तपः सञ्चय एवेह विशिष्टो धनसञ्चयात् ॥१०७
त्यजेत् सञ्चयान्सर्वान्यान्ति नाशमुपद्रवाः।
न हि संचयवान्सश्चिद्दृश्यते निरुपद्रवः ॥१०८
यथा यथा न गृह्णाति ब्राह्मणोऽसत्प्रतिग्रहम्।
तथातस्य द्विज सन्तोषाद् ... तेजोऽभिवर्द्धते ॥१०९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकिञ्चनत्वं राज्यं च तुलया समतोलयत् ।
अकिञ्चनत्वमधिकं राज्यादपि हितात्मनः ॥११०
अनर्थो ब्राह्मणस्यैष यस्त्वर्थं निचयो महान् ।
अर्थैश्वर्यविमूढो हि श्रेयसो भ्रश्यते द्विजः ।
अर्थसंपद्विमोहाय विमोहो नरकाय च ॥१११
तस्मादर्थमनर्थाख्यं श्रेयोऽर्थीद्‌रतस्त्यजेत् ।
यस्य धर्मार्थमर्थेहा तस्या तस्यानीहा गरीयसी ॥११२

वसिष्ठ मुनि ने कहा-एक तो यहां पर तप का संग्रह करना और दूसरा जिसके पास धन का संचय होता है । इन दोनों में तप का संचय ही विशेषता से युक्त होता है धन का संग्रह तो उसके मुकाबले में कुछभी महत्व नहीं रखता है ॥१०७॥ इसलिए सभी प्रकार के संचय को त्याग दो। ये सभी उपद्रव हैं और इसके नाश की प्राप्ति हुआ करती है इस सांसार में कोई भी संचय करने वाला पुरुष उपद्रव से रहित नहीं दिखलाई देता है ।१०८। ब्राह्मण जैसे-जैसे असत्प्रतिग्रह को ग्रहण नहीं करता वैसे ही सन्तोष धारण करने से उनका ब्राह्म-तेज बढ़ता है ।१०९। अकिंचनत्व अर्थात् पास में कुछ भी न रहना और राज्य के विशाल वैभव को तुला में तोला में गयाथा तो उस समय में हितात्माका जो अकिंचनत्वथा वह राज्य के वैभव से अधिक प्राप्त हुआ था।११०। कश्यप ऋषिने कहा-जो ब्राह्मण के पास अर्थ का महान् निश्चय होता है वह ब्राह्मण के लिए एक प्रकार का अनर्थ ही होता है । जो ब्राह्मण ऐश्वर्य में विमूढ़ हो जाता है वह श्रेय से भ्रष्ट हो जाया करता है । अर्थ को जो सम्पत्ति होती है उससे विशेष मोह उत्पन्न हो जाया करता है और विमोह नरक के लिए हुआ करता ।१११। इसलिए यह जो अर्थ (धन-दौलत) हैं यह अनर्थ नाम वालाही होता है अर्थात् इस अर्थ से अनर्थ की ही उत्पत्ति सर्वदा होती है । जो श्रेय के चाहने वाल हो उसे दूरसे ही इस अर्थ को त्याग देना चाहिए । जिसकी केवल धर्म के करने लिए धन को प्राप्त करने की अभिलाषा होती है उनकी अनीहा बड़ी होती है अर्थात् धन की बिल्कुल ही इच्छा न रखना अधिक महत्व वाली हुआ करती हैं ।।११२।।

CC-0. Nanaji Deshmukh Library, BJP, Jammu. Digitized by eGangotri

ये लोकाः दानशीलानां स तानाप्नोति शाश्वतान् ।
योऽर्थानिच्छेन्नृपाद्विप्रः शचितव्यो महर्षिभिः ॥११३
न स पश्यति मूढात्मा नरके यातनाभयम् ।
प्रतिग्रहसमर्थोऽपि न प्रसज्येत्प्रतिग्रहे ॥११४
प्रतिग्रहेण विप्राणां ब्राह्मं तेजः प्रशाम्यति ।
प्रतिग्रहसमर्थानां निवृत्तानां प्रतिग्रहात् ॥११५

य एवं ददतां लोकास्ता एवप्रतिहृणताम् ।
बिसतंतुर्यथानित्यमम्भस्थस्सतत विशेत् ॥११६
तृष्णा चैवमनाद्यंतां तथा देहगतासदा ।
या दुस्त्यजा दुर्मतिभिर्या न जीर्यतिजीर्यतः ॥११७

योऽसौ प्राणान्ति को रोगस्तां तृष्णां त्यजतः सुखम् ।
इत्युक्त्वा हेमगर्भाणि त्यक्त्वा तानि फलानि वै ॥११८
ऋषयोर्जग्मुरन्यत्र सर्वं एव दृढव्रताः ।
ततस्ते विचरन्तो वै मध्यमं पुष्करं गताः ॥११९

दानशील पुरुषों के जो लोक होते हैं वे शाश्वत अर्थात् नित्य होते हैं ? उनको वह व्यक्ति जो धन के प्राप्त करने की इच्छा नहीं करते हैं प्राप्त किया करते हैं । जो विप्र राजा से धन प्राप्त करने की इच्छा किया करते हैं वे महर्षियों के द्वारा शोचनीय होते हैं ॥११३॥ वह ऐसा मूढ़ आत्मा वाला होता है कि उसे नरकमें मिलने वाली यातनाओं का भयभी नहीं दिखलाई दिया करता है । प्रतिग्रह लेने से विप्रों को जो ब्रह्म तेज होता है वह नष्ट होजाया करता है। जो प्रतिग्रह के ग्रहण करने की शक्ति रखते हैं और फिर भी प्रतिग्रह लेने से निवृत्त होते जो इस प्रकार के हों उन्हें ही लोग देते हैं और वे उसे ग्रहण नहीं किया करते हैं । अरुन्धती ने कहा—जिस प्रकार से विस का तन्तु जलमें स्थित रहकर ही सदा प्रवेश किया करता है।११५।-११६। यह तृष्णा आदि और अन्त से रहित होती है और सदा इस देह के साथ ही लगी रहा करती है । यह तृष्णा ऐसीही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है कि बुरी बुद्धि वालोंके द्वारा यह त्याग करने के योग्य नहीं होती है। यह जीर्ण शरीर हो जाने पर कभी जीर्ण नहीं हुआ करती है।११७। इस प्रकार से कहते हुए उन्होंने उन मध्यमें सुवर्ण वाले उदुम्बरों का त्याग कर दिया था।।११८।वे समस्त ऋषि लोग बहुत ही सुदृण व्रत वालेथे और वहांसे किसी अन्य स्थान में चले गये थे। इसके अन्तर के विचरण करते हुए मध्यम पुष्कर में पहुँच गये थे ।।११९।।

दद्दशुः सहसा प्राप्तं परिव्राजं शुनः सखम् ।
तेनेह साहितास्तत्र गत्वा किञ्चिद्वनान्तरम् ।।१२०
सरः परमपश्यन्त वृतं पद्मैर्जलाशयम् ।
निविष्टासरसस्तीरे चिन्तयन्तो गतिशुभाम् ।।१२१
शुनः सखो मुसीन्सर्वानुवाच क्षुधितांस्तदा ।
सर्वे वदन्तु सहितः कीदृशी क्षुत्प्रवेदना ।।१२२
तमूचुः सहितास्ते तु परिव्राजं शुनः सखम् ।
शक्तिखड्गगदाभिश्च चक्रतोमरसायकैः ।।१२३
बाधितेवेदना या तु क्षुधयासापि निर्जिता ।
श्वासकुत्टक्षयाष्ठालीं ज्वरापस्मारशूलकैः ।।१२४
व्याधिभिर्जनितासापि क्षुधायानाधिकाभवेत् ।
हिरण्याङ्गदकेयूरमुकुटोज्ज्वलकुण्डलाः ।।१२५

वहाँ पर उन्होंने सहसा प्राप्त हो जाने वाले परिव्राज शुनःसख को देखा था। उसके साथ मिलकर वे किसी दूसरे वन में चले गये थे।१२०। वहाँ पर कमलों से घिरा हुआ बहुतही उत्तम एक जल का आशय सरोवर देखा था। वे सब उस सरोवर के तट पर बैठ गये और शुभ गतिके होने के विषय में चिन्तन करने लगे।१२१।उस समय क्षुधासे युक्त और पीड़ित उन समस्त मुनियों से शुन सख परिव्राजक ने पूछा था-आप लोग सब हित के सहित यह बतलावें कि क्षुधाके कारण उत्पन्न होसे वाली वेदना किस प्रकार की होती है।१२२। उस रीति से पूछे जाने पर उन सब ऋषियोंने मिलकर उस परिव्राजक शुनःसख को उत्तर देते हुए कहा था कि शक्ति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खंग-गदा-चक्र-तोमर और सायक आयुधों से बाधित किये जाने पर जो वेदना उत्पन्न होती है उसको भी क्षुधासे होने वाली वेदना ने जीत लिया है अर्थात् उपर्युक्त शस्त्रास्त्रोंके द्वारा प्रहार प्राप्त करदेने होनेवाली वेदना से भी कहीं अधिक वेदना क्षुदा के कारण हुआ करती है। श्वांस (कोढ़) -क्षय-अष्ठीली-ज्वर--अपस्मार (मृगी) और शूल रोगों से जो वेदना मनुष्यों को हुआ करती है वह भी क्षुदा के कारण से होने वाली वेदनासे अधिक नही होती है। क्षुधा के कारणतो ऐसी विकलता उत्पन्न हो जाती है कि सुवर्णके निर्मित अङ्गद-केयूर-मुकुट और अत्युज्वल कुण्डलसे समस्त भूषण क्षुधा में अच्छे नहीं लगा करते हैं वहां पर जो मनुष्य स्थित होते हैं उन्हें कुछ भी नहीं सुहाया करता है ॥१२३-१२५॥

क्षुधायां न विराजन्ते तत्रये संस्थिताः नराः ।
यथा भूमिगतं तोयं रविरश्मिर्विकर्षति ॥१२६
तद्वच्छरीरजानाडय शोष्यन्ते जठराग्निना ।
न शृणोति न चाघ्राति चक्षुषा नैन पश्यति ॥१२७
दह्यते क्षीयते मढः शुष्यते क्षुधयार्दितः ।
न पूर्वां दक्षिणां चापि पश्चिमां नोत्तरामपि ॥१२८
नचाधो नैव चक्षुधाविष्टो हि विन्दति ।
मूक वं बधिरत्वं च जडत्वनथपङ्गुता ॥१२९
भंग्वत्वममर्यादं क्षुधायां संप्रवर्द्धते ।
जनकं जननीं पुत्रान्भार्यां दुहितरं तथा ॥१३०
भ्रातर स्वजन वापि त्यजति क्षुधयादितः ।
न पितॄन्पूजयेसम्यग्देवं चापि गुरुं तथा ॥१३१
ऋषीनुपगतांश्चापि क्षुधाविष्टो न विन्दति ।
एवमन्नविहीनस्य भवन्त्येतानि देहिनाम् ॥१३२
अन्नात्परमतो लोके न भूत न भविष्यति ।
अन्नमूलं जगत्सर्वमन्ने चैव प्रतिठतम् ॥१३३

जिस प्रकार से सूर्य की किरणें भूमि में रहने वाले जल का विकर्षण किया करती हैं, ठीक उसी भांति जठर में स्थित अग्नि के द्वारा शरीर में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुत्पन्न नाड़ियों का शोषण क्षुधा की दशा में हुआ करता है । जो क्षुधा से समुत्पीड़ित व्यक्ति होता है वह उस समय में कुछ भी श्रवण नहीं किया करता है-न वह सूंघता है और न वह कुछ भी देखा करता है । तात्पर्य हैं कि क्षुधासे क्षीण पुरुष की कर्ण, घ्राण और चक्षु आदि ज्ञानेन्द्रियाँ ऐसी शिथिल एवं शक्तिहीन हो जाती हैं कि अपना कुछ भी कार्य नहीं कर सकती हैं । क्षुधा दुःखित मनुष्य एकदम मूढ़ होकर शोषित, दुग्ध और क्षीण होता रहा करता हैं । उसे क्षुधा के कारण पूर्व-पश्चिम-दक्षिण और उत्तर दिशाओं का भी ज्ञान नहीं रहता है।१२६-१२८।जो पुरुष क्षुधासे आविष्ट होता है उसे ऊर्ध्व भाग और अधो भाग का भी कुछ ज्ञान नहीं रहा करता है । क्षुधा में गूंगापन-बहिरापन-जड़ता और पगुता भैरवता और मर्यादा से रहित हो जाना काफी बढ़ जाया करते हैं । जो आदमी भूख से पीड़ित होता हैं वह अपने पिता को-माता को पुत्र को भार्या को-पुत्री को-भाई को अपने जनों को भी त्याग दिया करता है । भूखा व्यक्ति अपने पितरों को देवगणों का तथा गुरुओं का भीभली भांति सम-र्चित नहीं करताहै।१२९-१३१।यदि ऋषिगण भी घर पर आ जावेंतो क्षुधा से पीड़ित पुरुष उनकाभी समुदित समादर-सत्कार नहीं किया करता है । इसी प्रकार से अन्न से रहित देहधारियों में उपर्युक्त बातें सभी उत्पन्नहो जाया करती हैं । इस लोक में भी अन्न की बहुत बड़ी महिमा है इस ससार में अन्न से बढ़कर अन्य कुछ भी नहीं है-न कभी अन्न से अधिक महत्व वाला कुछ भी पहिले हुआ था और न भविष्य में भी इससे ज्यादा कुछ वस्तु होगी । सम्पूर्ण संसार का मूल एक मात्र अन्न ही है और सभी कुछ में ही प्रतिष्ठित है । इस अन्न की बड़ी विशाल महिमा है ॥१३२-१३३।

देवद्विजसमीपस्थोऽन्नस्य दाता विमुच्यते ।
प्रबुद्धो वा प्रमत्तो वा प्रसङ्गादागतोऽपि वा ॥१३४
भक्त्याविरहितो वापि शृण्यवन्पापाद्विमुच्यये ।
दानेनसंयुता विप्राः सुखिनोधर्मभागिनः ॥१३५
यमो दमो वै नियमः प्रोक्तस्तत्त्वार्थदर्शिभिः ।
ब्राह्मणानां विशेशेण दमो धर्मः सनातन ॥१३६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दमस्तेजो वर्द्धयति पवित्रो दम उत्तमः ।
विपाप्मा चैव तेजस्वी पुरुषो दमतो भवेन ॥१३७
ये केचिन्नियमालोके ये च धर्माश्शुभावन्वयाः ।
सर्वयज्ञफलं चापि दमस्तेभ्योविशिष्टे ॥१३८
तपो यज्ञस्तथा दानं दमादेव प्रवर्तते ।
किमरण्ये त्वदान्तस्य द्रान्तस्यापि किमाश्रमे ॥१३९

देव-द्विज के समीप में स्थित रहने वाला, अन्न का दान करने वाला पुरुष विमुक्त हो जाया करता है, चाहे वह प्रबुद्ध अर्थात् ज्ञानसे सम्पन्नहो अथवा प्रमत्त हो या प्रसङ्गवश आया हुआ हो ।१३४। भक्ति-मात्र से हीन होता हुआ भी श्रवण करता हुआ पापों से विमुक्ति पा जाया करता है । जो विप्रगण दान से संयुक्त हुआ करते हैं वे अधिक सुख वाले और धर्मके भागी होते हैं ।१३५। तत्व के अर्थों के जानने वाले महानुभावों ने यम-दम और नियम को बतलाया है किन्तु विशेष रूप से ब्राह्मणों में दम ही एक सनातन धर्म होता है ।१३६। दम तेज की वृद्धि किया करता है और दम परम पवित्र एव उत्तम होता है । दमके साधने से पुरुष पापोंसे रहित तथा अत्यन्त तेजस्वी हो जाया करता है।१३७।लोक में जो कुछ भी नियम होते हैं और जो शुभ को प्रदान करने वाले धर्म कार्य होते हैं तथा सम्पूर्ण प्रकारके यज्ञों का फल जो होता है इन सभी दम विशेषता रखने वाला होता है अर्थात् दम सबसे श्रेष्ठ होता है।१३८। सब प्रकार की तपश्चर्या समस्त यज्ञयागादि और दान ये सभी दम से प्रवत्त हुआ करते हैं अर्थात् इन सबका दम साधन स्वरूप होता है । जो दम से रहित है वह यदि अरण्य में भी रहकर निवास करने वाला होवे तो उसका वहाँ पर रहना भी व्यर्थ ही होता है । तात्पर्य यह कि बिना दम के कुछ भी फल नहीं मिलता है । जो दान्त अर्थात् दमशील हैं उसको आश्रममें जाकर रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि दम करने वाला जहाँ कहीं भी रहेगा वही उसका फल उसे प्राप्त हो जायगा । तात्पर्य यह है कि दम का रखना परम मुख्य है ॥१३९॥

यत्र यत्र वसेद्दान्तस्तदरण्यं महाश्रमः ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीलवृत्तसमेतस्य निगृहीतेन्द्रियस्य च।
आर्जवे वर्तमानस्य आश्रमैः किं प्रयोजनम् ॥१४०
वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागिणां गृहेऽपि पञ्चेन्द्रियनिस्तपः
अकुत्सिते कर्मणि यः प्रवर्तते निवृत्तरागस्य गृहं तपोवनम् ॥१४१
सुकर्मधर्मार्जिताजीवितानां सदा च सन्तुष्य गृहे रतानाम्।
जितेन्द्रियाणामतिथिपियाणां गृहेऽपि धर्मो नियमस्थितानाम् ।१४२
न शब्दशास्त्रे निरतस्य मोक्षो न चैव रम्यावसथप्रियस्य।
न भोजनाच्छादनतत्परस्य न लोकचित्तग्रहणे रतस्य ॥१४३
एकान्तशीलस्य दृढव्रतस्य सर्वेन्द्रियप्रीतिनिवर्तकस्य।
अध्यात्मयोगे गतमानस्य मोक्षो ध्रुवं नित्यमसिकस्य ॥१४४
सुखं च दान्तः स्वपिति सुखेन प्रतिबुद्धयते।
समः सर्वेषु भूतेषु मनो यस्य प्रबुध्यते ।:१४५
न रथेन सुख याति न हयेन न दन्तिना।
यथात्मना विनीतेन सुख याति महापथे ॥१४६
न तु कुर्याद्धरिः स्पृष्टः सर्वोत्रावाप्यतिरोषितः।
अरिर्वानित्यसक्रुद्धो यथात्मा दमवर्जितः ॥१४७
न यमं यममित्याहुरात्मा वै यमउच्यते।
आत्मा वै यमितोयेन स यमस्तु विशिष्यते ॥१४८
यमो यम इति प्रोक्तो वृथा तुद्विजतेः जनः।
आत्मा वै यमितो येन यमस्तस्य करोति किम्! ॥१४९

दमशील पुरुष जहां जहां भी निवास करता है वहीं अरण्य एवं श्रेष्ठ आश्रम जैसा हो जाया करता है। जो व्यक्ति शील और चरित्र से समन्वित होता है तथा इन्द्रियों को नियन्त्रित कर अपने दर्श में कर एवं जो सरल स्वभाव में समास्थित है उस पुरुष को विशेष स्थान तथा आश्रमोंमें रहने की क्या आवश्यकता है? ऐसा पुरुषतो जहांभी रहेगा वहीं उसका कल्याण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जायगा ।१४। जिनका स्वभाव राग से युक्त है अर्थात् जिनके मन में काम क्रोधादि शत्रुओं ने निवास कर रखा है वे भलेही वन में जाकर सबसे दूर नितान्त एकान्त स्थानमें भी निवास क्यों न करें उनको वहां पर भी दोषों का प्रभाव अवश्यही हो जाता है क्योंकि उनका अन्तकरण शुद्ध नहीं होता है और वे दमशील नहीं होते हैं। जिन पुरुषोंने अपनी पाचों इन्द्रियों को निगृहीत कर अपने काबू में कर रक्खा है उनका घर में रहते हुएभी पूर्ण तप का साधन बन जाया करता है क्योंकि सबसे मुख्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर दम रखना ही होता है। जो व्यक्ति सर्वदा सत्कर्मोंमें ही अपनी प्रवृत्ति रखता है ऐसे रागसे निवृत्ति प्राप्त करने वाले पुरुष को घर ही तपोवन के समान है ।१४१।जो कर्मोंके द्वारा जीविका का अर्जन करने वाले पुरुष हैं और जो सन्तोष रखने की वृत्तिसे अपने घरमें ही रति रखा करते हैं तथा जिन पुरुषोंने अपनी इन्द्रियों को जीत लियाहै एवं जो व्यक्ति अतिथियों को प्यार करते हैं अर्थात् उनका समुचित सत्कार किया करतेहैं ऐसे नियमों में संस्थित पुरुषो का घरमें भी रहकर पूर्णधर्म का परिपालन हो जाता है।१४२।शब्दशास्त्र अर्थात् व्याकरण शास्त्र में सदा निरत रहने वाले मोक्ष अर्थात् जन्म-मरण के आवागमन रूपी भव बन्धन से छुटकारा नहीं होता है। परम सुन्दर आश्रमोंमें निवास करने वालेकी भी मुक्ति नहीं होती है जो अहर्निश अपने ही भोजन तथा आच्छादन (वस्त्र) की चिन्ता एवं प्राप्ति के कार्य में तत्पर रहते हैं उनका भी मोक्ष नहीं होता है। जो लोगों के चित्त को अपने मधुर भाषणसे आकर्षित कार्यमें अनुराग करनेके रखते हैं उनकाभी मोक्ष नहीं होता है।१४३।जो सदा एकान्त-निवास करने वाले होते हैं, जिनके व्रत अति सुदृढ़ होते हैं, जो अपनी समस्त इन्द्रियोंकी प्रीति रखने के कार्यों से निवृत्ति प्राप्त कर लेते हैं. जो सर्वदा आध्यात्म चिन्तन के योगमें अपना मन लगा सदा हिंसाके कार्योंसे दूर रहतहै उनका ही निश्चित रूप से अवश्य ही मोक्ष होती है ।४४। दान्त अर्थात् दमशील पुरुष सुख पूर्वक यन करता है और दमशील पुरुष सुखपूर्वक ही प्रतिबुद्ध होता है अर्थाद् जागृत हो जाता है। जिस मनसे समस्त प्रणियोंमें समभाव रखने वाला होता हैं वह ही प्रतिबुद्ध हो जाता है।१४५। महापथ में रथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा भी कोई सुख से नहीं गमन किया करता है-अश्व के द्वारा एवं हाथी के द्वारा भी सुख से गमन नहीं किया जा सकता है, जिस प्रकारसे विनीत भाव से युक्त आत्मा के द्वारा महापथ में सुखसे गमन किया करता है।१४६। दम से रहित आत्मा जितना भी अनिष्ट कर देता है वैसा सिंह स्पर्श किया हुआ अत्यन्त क्रोधित सर्प तथा निरंयही क्रोधसे भरा हुआ शत्रु भी नहीं किया करता है। तात्पर्य यह है कि दमके न होने से महान् अनिष्ट हुआ करता है और ऐसा अमङ्गल होता है जैसा अन्य किसी पर भयानक से भयानक नहींहो सकता है।१४७।यमको यम नहीं कहते हैं अत्युत आत्मा ही यम कहा जाता है । जिसने आत्मा को यमित कर लिया हैं वह यमतो विशिष्ट होता हैं।१४८। यम को यम कहा गया है। मनुष्य व्यर्थ ही उससे उद्विग्न होते है। जिसने अपनी आत्मा को यमित अर्थात् यम से समन्वित कर लिया है उसका वह यमराज क्या करेगा ? अर्थात् कुछ भी नहीं कर सकता है ॥१४९॥

आत्मानमपि जानीयात्परं दोयैस्तुनाक्षिपेत् ।
मन्त्रैर्हीनं क्रियाभिर्वा जगन्नाप्यथवापुनः ॥१५०
दमश्छादयते सर्वं हीनमंगं पटो यथा ।
अधीयते निरर्थं ते नाभिजानंन्ति ये दमम् ॥१५१
श्रुतस्य हि दमो मूलं दमो धर्मः सनातनः ।
यो ह्यात्मनस्तुलयते सुवर्ण तुलया दमम् ॥१५२
स तेन धृतिमान्ख्य तो न तु द्रक्ष्येण मोहितः ।
व्रतानापि सर्वेषां दम एव परायणम् ॥१५३
यद्यधोते षडङ्गानि वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः ।
दमेन तु विहीनश्च पूज्यत्व नेह गच्छति ॥१५४
दमेन हीन न पुनति वेदा यद्यप्यधीताः सह षड्भिरंगैः ।
साङ्ख्यंच योगश्च कुलं चजन्म तीर्थाभिषेकश्च निरर्थंकानि॥

अपनी आत्मा के अन्दर रहने वाले दोषों की समीक्षा भली-भाँति करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि अपने दोषों को समझकर उन्हें हटाना चाहिए। दूसरों के दोषों को देखकर उनके विषय में कभी भी आक्षेप नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना चाहिए वह जैसा भी हो चाहे मन्त्रों से हीन हो, क्रियाओं से शून्य हो अथवा जन्म से विहीन हो ।१५०। कोई भी किसी प्रकार की हीनता क्यों न हो यदि दमशीलता है तो वह अकेला दम ही समस्त कमियों को ढक दिया करता है अर्थात् किसी दोष का फिर उस पर कोई बुरा प्रभाव नहीं हुआ करता है, जिस प्रकार से वस्त्र किसी हीन शरीरके अङ्ग को आच्छादित करके प्रकट नहीं होने देता है। जो दम को नहीं जानते हैं वे ही लोग अध्ययन किया करते हैं किन्तु दमके ज्ञानके बिना उनका अध्ययन निरर्थक ही होता है ।१५१। श्रुत अर्थात् शास्त्र का मूल दम ही होता है और दम ही हमेशा से चले आने वाला धर्म है। जो अपनी आत्माके दम को तुला के द्वारा स्वर्ण से तोलता है ।।१५२।। वह आदमी धृति वाला उस दम से ख्यात अर्थात् प्रसिद्ध होता है। द्रव्य से कभी मोहित नहीं होता है। समस्त प्रकार के जो वृक्ष हैं उनमें दम ही एक परायण होताहै।१५३ जो द्विज वेदों के अर्थ के तत्वों को जानने वाला वेदों के छै अङ्गों का अध्ययन किया करता है। ऐसा द्विज भी यदि दमसे हीन है तो चाहे वह षडङ्ग समन्वित वेदों का कितना ही अच्छा ज्ञाता क्यों न हो समाज में कभी भी पूज्य नहीं हो सकता है। तात्पर्य यह है कि दम रहित विद्वानका भी कहीं समाज में समादर नही होता है।१५४।जो दमसे हीन व्यक्ति होता है उसको वेद भी पवित्र नहीं किया करते है। चाहे छहों निरुक्तदि अङ्गों के सहित उनका भली-भाँति स्वाध्याय किया गया हो। साँख्य शास्त्र—योगदर्शन एवं योगाभ्यास-अकुल-जन्म अर्थात् सुभसुयोग में उत्पत्ति तथा तीर्थों में अभिषेक ये समस्त साधन दम से हीन होने पर निष्प्रयोजन ही होते हैं। तात्पर्य यह है कि इन उपर्युक्त साधनों के होने से भी कोइ कल्याण नहीं हो सकता ।।१५५।।

स धर्मनावमारुह्य दुर्गाण्यतितरिष्यति ।
दमाध्यायमिमं पुण्य सततं श्रायये‍द्द्विजः ।।१५६
स ब्रह्मलोकमाप्नोति तस्माच्च च्यवते पुनः ।
श्रूयतां धर्मसर्वस्व श्रुत्वा चैतत्प्रधार्यताम् ।।१५७
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषाँ न समाचरेत् ।
मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्टवत ।।१५८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मवत्सर्वभूतानि यः पश्यतिः स पश्यति ।
पचनं वैश्वदेवार्थे परार्थे यच्च जीवितम् ।।१५९
पुत्रार्थं मैथुनं यस्य स्वर्गार्थं तस्य जीवितम् ।
एतद्भवेच्च सर्वस्वं धातूनामिव कांञ्चनम् ।।१६०
सर्वभूतहितं राजन्नधीत्गयामृतमश्नुते ।
एवं वै धर्मसर्वस्वमक्त्वा ते तु शुनः सखम् ।।१६१

जो द्विज इस परम पुण्य दम के महत्व बतलाने वाले अध्याय का निरन्तर श्रवण कराया करता है वह धर्मरूपी नौका पर समारोहण करके समस्त घोर कष्ट एवं महापातकों से अवितरण कर जाता है।१५६ दमाध्याय का अध्येता तथा श्रवण कराने वाला विप्र सीधा ब्रह्मलोकाकी प्राप्ति का लाभ लिया करता है और फिर कभी भी च्युत नही होता है। इस धर्म के सर्वस्व दमाध्याय को श्रवण करो और सुनकर इसकी भलीभांति धारण करनी चाहिए।१५७।सम्पूर्ण कर्म का सर्वस्व सार यही है कि जो अपने आत्मा के प्रतिकूल कर्म-वचन अथवा भावना हो उसे कभी भी अन्य लोगोंके प्रति प्रयुक्त नहीं करना चाहिए क्योंकि हमको बुरा प्रतीत होता है. वह दूसरोंको भी उसी तरह प्रतिकूल प्रतीत अवश्यही होगा और उसके मन को बड़ी ठेस लगेगी। आपका सताना बुरा फल देने वाला होगा एक तो यह बात है और दूसरी बात यहहै कि पराई स्त्रियोंके प्रति अपनी माताके सयान भाव रखना चाहिए। तीसरी बात यह है कि पराये धनको मिट्टीके ढेल के तुल्य सकझकर कभीभी उस पर अपनी नीयत न बिगाड़नीं चाहिए।१५८।जो समस्त प्राणियों को अपनेही समान नेखता है वही वस्तुतः देखा करता है। तात्पर्य यह है कि यहीं सब प्राणियों के विष में सोचना-समझना चाहिए जैसा दुःख-सुख हमको होता है वैसा ही प्रत्येक भूतमात्र को हुआ करता है। अपने समान समझने से कोई भी कर्मी किसी को उत्पीड़ित न कर सर्वदा सुखही पहुँचाने का प्रयत्न करेगा। वैश्वदेव कर्म को सम्पादित करने के लिए पाचन करना और दूसरोंकी भलाई करने के लिए जीवन धारण करनाही सिद्धान्त में उचित विचार है। अपनेही उदर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
भरने के हेतु पाक करना तथा केवल सुखों का उपभोग करने के लिये जीवन रखना मूढ़ता की भावना है।१५६।जिसकी मैथुन क्रिया ऐन्द्रिक सुखास्वादन के लिये न होकर केवल पुत्रोत्पत्ति के लिए होती है उसका जीवन स्वर्ग के लिये ही होता है। यही धर्म सर्वस्त्र सार है जिस प्रकार से समस्त धातुओं में सुवर्ण सर्वोत्तम होता है वैसे ही यह सबसे उत्तम धर्म होता है।१६०। समस्त प्राणियों के हित को पढ़कर हे राजन् ! अमृततत्व का लाभ किया करता है। इस प्रकार से उन्होंने शुनःसख से धर्म के सर्वस्व सार को कहा है।१६१।

तेनैव सहिताः सर्वे निविष्टास्सरसस्तटे ।
सरोऽश्यन्सुविस्तीर्णं पद्मोत्पलजलावृतम् ॥१६२
तत्रावतारंकृत्वा ते विसानि च कलापशः ।
त रेनिक्षिप्य सरसश्चक्रुः पुण्यां जलक्रियाम् ॥१६३
अथोत्तीर्यंजलात्तस्मात्ते समेत्य परस्परम् ।
विसान्येतान्यपश्यन्त इद वचनमुब्रुवन् ॥१६४
केन क्षुधाभितप्रानामस्माकं पापकर्मणाम् ।
नृशंसेनापनीतानि बिसान्यहारकाङ्क्षिणा ॥१६५
ते शङ्कमानास्त्वन्योन्यं पर्यपृच्छन्द्विजोत्तमाः ।
चक्रुश्च निश्चयं सर्वे क्षपथं प्रति पार्थिवं ॥१६६
इष्टमेव द्विजातीनां यदिद शपथीकृतम् ।
त्वया कृतं विसस्तैन्यं सर्वेषां नः शुनः सख ॥१६७

उसी के साथ वे सब सरोवर के तट पर निविष्ट हो गये थे। उन सबने उस सरोवर को अत्यन्त विस्तार से युक्त और पद्मोत्पन्नो से समन्वित, जल से परिपूर्ण देखा था।१ २। उस सरोवर में भीतर उतरकर कलापशः समस्त विशों को अर्थात् मृणाल तन्तुओं को तीर पर निक्षिप्त करने उसने सरोवर को पुण्य जल क्रिया की थी।१३३।इसके अनन्तर उस जल में उतर कर वे परस्पर में एकत्रित होगये थे और इन विशों को न देखते हुए यह वचन बोले—।१६४। ऋषियों ने कहा—क्षुधा से अभितप्त पाप कर्म करने वाले हमारे इन विशों को किस अत्यंत क्रूर और आहार की इच्छा रख

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले ने यहाँ से हटा दिया है ? ।१६५। हे पार्थिव ! उस समय में आपस में ही एक-दूसरे पर शङ्का करते हुए श्रेष्ठ द्विजों ने पूछा था और सबने शपथ करके निश्चय किया था ।१६६। ऋषियों ने कहा—द्विजातियों की यह शपथीकरण ही अभीष्ट है । हे शुनःसुख ! हमारे इन सब विशों की चोरी आपने की है ।१६७।

मया ह्यन्तर्हितान्यासन्बिसानीमानि वो द्विजाः ।
धर्मं च श्रोतुकामेन जानीध्व मां च वासवम् ॥१६८
अलोभ दक्षया लोका जिता वो मुनिसत्तमाः ।
विमानमधितिष्ठध्वं गच्छामस्त्रिदशालयम् ॥१६९
ततो महर्षयस्ते तु विज्ञायाथ पुरन्दरम् ।
ऊचुः पुरन्दरचेद वाक्यं वाक्यविशारदाः ॥१७०
इहागत्य नरो यस्तु मध्यमं पुष्करंविशेत् ।
त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा लभेदावश्यकंफलम् ॥१७१
इन्द्रेणसह सप्रीतास्तदाजग्मुस्त्रिविष्टपम् ।
एवं विलोभ्यमानास्ते लोभैर्बहुविधैरिह ॥१७२
नैव लोभं तदा चक्रुस्तेन जग्मुस्त्रिविष्टपम् ।
इदंयः शृणुयान्नित्यमृषीणां चरितं शुभम् ।
विमुक्तः सर्वपापेभ्यः स्वर्गलोके महीयते ॥१७३

शुनःसख ने कहा—हे द्विजगण ! आपकी ये समस्त विश मेरे द्वारा ही अन्तर्हित की गई हैं । मैं आप लोगों से धर्म की वार्त्ता सुनने की इच्छा वाला हूँ । मुझे आप लोग वासव समझ लो ।१६८। हे मुनि सत्तमो ! आप लोगों ने लालच न करके ही समस्त अक्षय लोकों को जीत लिया है । अब आप लोग सब इस विमान पर सत्तारूढ़ हो जाइये । हम सभी अब देवलोक को चलते हैं ।१६९। इसके अनन्तर उन महर्षियों ने इन्द्रदेव को जानकर वाक्यों के बोलने में महा पण्डित उन ऋषियों ने देवराज से यह कहा ।१७०। ऋषियों ने कहा था कि जो भी कोई मनुष्य यहाँ आकर मध्यम पुष्कर में प्रवेश करे और तीन रात्रि तक उपवास करे तो उसे आवश्यक अभीष्ट फल की प्राप्ति होनी चाहिए।१७१। फिर इन्द्रदेव के साथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी समय वे सब परम प्रसन्न होते हुए स्वर्गलोक में चले गये थे। इस प्रकार से अनेक तरह के प्रलोभनों के द्वारा वे अत्यधिक लुभाये भी गये थे किन्तु उनने उस समय थोड़ा सा भी लोभ नहीं किया था। इसी का यह फल उन्हें प्राप्त हुआ था कि वे सब देवलोक को प्राप्त हो गये थे। इस ऋषियों के शुभ चरित्र को जो भी कोई नित्य-प्रति श्रवण करता है वह सभी प्रकार के घोर पापों से छुटकारा पाकर अन्त में स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित हो जाता है।१६२-७२।

॥ इन्द्र शाप से अग्नि मारुत का जन्म वर्णन ॥

भूर्लोकोऽथ भुवर्लोकःस्वर्लोकोऽथमहर्जनः।
तपः सत्यं च सप्तते देवलोकाः प्रकीर्तिता ॥१
पर्यायेण तु सर्वेषामाधिपत्यं कथं भवेत्।
इह लोके शुभ रूपमायुरारोग्यमेव च ॥२
लक्ष्मीश्च विपुला ब्रह्मन्कथ स्यात्सुरपूजित।
पुरा हुताशनःसार्द्धं मारुतेन महीतले ॥३
आदिष्टःपुरुहूतेन विनाशाय सुरद्विषाम्।
निर्दग्धेषु ततस्तेन दानवेषु सहस्रशः ॥४
तारकः कमलाक्षश्च कालदंष्ट्रःपरावसुः।
विरोचनस्तु संह्लादः प्रयातास्ते तदावसन् ॥५
अन्तःसमुद्रमाविश्य सन्निवेशमकुर्वत।
अशक्ता इति तेऽप्यग्निमारुताभ्यामुपेक्षिताः ॥६
ततः प्रभृति वै देवान्मानुषान्सभृजङ्गमान्।
सम्पीड्य च मुनीन्सर्वान्प्रविशन्ति पुनर्जलम् ॥७

भीष्म देव ने कहा—भूर्लोक—भुवर्लोक—स्वर्लोक—महर्लोक—जनलोक तपोलोक और सत्यलोक ये सात लोक देवलोक कहे गये हैं।१। इन सब लोकों का बारी बारी से आधिपत्य किस प्रकार से होता है? हे सुरपूजित! हे ब्रह्मन्! इस लोक में शुभ रूप, आयु और आरोग्य तथा विपुल लक्ष्मी किस प्रकार से होती है? पुलस्त्य ऋषि ने कहा—पुराने समय में इस महीतल में इन्द्रदेव के द्वारा मारुत के साथ हुताशन (अग्नि) को आज्ञा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदान की गई थी और देवों के शत्रु असुरों के विनाश के लिये ऐसी आज्ञा दी थी। इसके पश्चात् सहस्रों दानवों को निर्दग्ध उनके द्वारा किया गया था।२-४। तारक--कमलाक्ष--कालदंष्ट्र-परावसु--विरोचन--संह्लाद ये सब वास करते थे सो प्रयाण कर गये थे।५। ये सब समुद्र के अन्दर प्रवेश करके इन्होंने वहाँ पर ही सन्निवेश किया था। वे सब शक्तिहीन थे इसीलिए वे अग्नि और मारुत के द्वारा अपेक्षित कर दिये गये थे।६। तभी से लेकर भुजंगों के सहित देवों की मनुष्यों को और समस्त मुनियों को सम्यक् प्रकार से पीड़ित करके ये सब फिर समुद्र के जल के अन्दर प्रवेश कर जाया करते हैं।७।

एवं युगसहस्राणि ते वीराः सप्त पञ्च च।
जलदुर्गबलाद्राजन्पीडयन्ति जगत्त्रयम् ॥८
ततः पुनरथो वह्निमारुतावमराधिपः।
आदिदेशाचिरादम्बुनिधिरेष विशोष्यताम् ॥९
यस्मादस्मद्द्विषां चैष शरणं वरुणालयः।
तस्माद्भवद्भ्यामद्यैव शोषमेष प्रणीयताम् ॥१०
तावूचतुस्ततः शक्रं मयशम्बरसुदनम्।
अधर्म एष देवेन्द्र सागरस्य विनाशनम् ॥११
यस्माज्जीवनिकायस्य महतः संक्षयो भवेत्।
तस्मादुपायमन्यं तु समाश्रय पुरन्दर ॥१२
यस्य योजनमात्रेऽपि जीवकोटिशतानिच।
निवसन्ति सुरश्रेष्ठ स कथं नाशमर्हति ॥१३
एवमुक्तः सुरेन्द्रस्तु क्रोधसंरक्तलोचनः।
उवाचेद वचो रोषादमरावग्निमारुतौ ॥१४

इस प्रकार से वे सप्त और पाँच अर्थात् बारह वीर हे राजन्! सहस्रों युगों तक जल के दुर्ग के बल से तीनों लोकों को पीडा दिया करते थे।८।इसके अनन्तर अमरों के स्वामी इन्द्रदेव ने अग्नि और मारुत इन दोनों को पुनः यह आदेश प्रदान किया था कि तुरन्त ही जलों के निधि इस समुद्र को शोषित कर डालो।९। इस शोषण करने का यही एक कारण है

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि इस सागर ने हमारे शत्रुओं को शरण दी है। इसीलिये आप दोनों को इस समुद्र का शोषण आज ही कर देना चाहिए।१०। इस प्रकार से आज्ञा देने पर उन दोनों देवों ने मय और शम्बर के हनन कर देने वाले देवराज इन्द्र से कहा था—हे देवेन्द्र ! इस तरह से सागर का विनाश कर डालना बड़ा ही अधर्म का कार्य है।११। क्योंकि सागर का शोषण किया जायगा तो तमाम इसके अन्दर निवास करने वाले जीवों के समूह का सक्षय हो जायगा। हे पुरन्दर ! इसलिये इस शत्रुओं के विनाश का कोई अन्य ही उपाय का समाश्रय ग्रहण कीजिए।१२।हे सुरों में परम श्रेष्ठ ! जिसके एक योजन मात्र परिमाण में भी सैकड़ों करोड़ों जीव निवास किया करते हैं। ऐसा सागर किस प्रकार से नाश करने के योग्य हो सकता हैं ?।१३। पुलस्त्य ऋषि ने कहा इस प्रकार से कहे जाने पर सुरेन्द्र क्रोध से संरक्त नेत्रों वाला हो गया था। देवराज ने रोष से अग्नि और मारुत इन दोनों देवों से यह वचन कहा—।१४।

न धर्माधर्मसंयोगं प्राप्नुवन्त्यमराः क्वचित् ।
भवन्तौ तु विशेषेण महात्मानौ च तिष्ठत ।।१५
मयाज्ञानकृता यस्मान्मारुतेन समं त्वया ।
मुनिव्रतपरो भुत्वा परिग्रह्य कलेवरम् ।।१६
धर्मार्थशास्त्ररहितां यानि प्रति विभावसो ।
तस्मादेकेन वपुषा मुनिरूपेण मानुषे ।।१७
मारुतेन समं लोके तव जन्म भविष्यति ।
यदा तु मानुषत्वेऽपि त्वया गण्डूषशोषितः ।।१८
भविष्यत्युदधिर्वह्ने तदा देवत्वमाप्स्यसि ।
इतीन्द्रशापात्पतितौ मत्क्षणात्तौ महीतले ।।१९
अवाप्तवन्तौदेहं च कुम्भाज्जन्मततोऽभवत् ।
मित्रावरुणयोर्वीर्याद्वसिष्ठश्चात्यजोऽभवत् ।।२०
ततोऽगस्त्य उग्रतपा बभूव मुनिसत्तमः ।
अस्मत्भ्रातुः सवैभ्राता वसिष्ठस्यानुजो मुनिः ।।२१

इन्द्रदेव ने कहा—देवगण कहीं भी धर्म और अधर्म का संयोग प्राप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं किया करते हैं। आप दोनों तो विशेष रूप से महान् आत्मा वाले देव हैं।१५। मुझे इस बात का ज्ञान नहीं हुआ है। इसी कारण से आप मारुत के साथ मुनियों के से व्रतों में परायण होकर शरीर को धारण करें।१६।हे विभावसो ! वह शरीर भी धर्म-अर्थ और शास्त्र से रहित योनि में होवें। इसलिये मनुष्य के रूप में मुनिके रूप वाले एक ही शरीरसे मारुतके साथ लोक में तेरा जन्म होगा। जिस समय में मानुष के स्वरूप में भी रहते हुए आपके द्वारा यह समुद्र गण्डूषों के द्वारा शोषित होगा उस समय में हे वह्ने ! आप देवत्व के स्वरूप को प्राप्त कर लोगे। पुलस्त्य मुनि ने कहा—इन्द्रदेव के शाप से उसी समय में वे दोनों महीतल में पतित होगये थे।१७-१९। उन दोनों ने देह की प्राप्ति की थी और कुम्भ से जन्म हुआ था। मित्रावरुण के वीर्य से वसिष्ठ आत्मज हुआ था।२०। इसके अनन्तर उग्र तपश्चर्या वाले अगस्त्य मुनियों में परम श्रेष्ठ हुए थे। हमारे भाई के वे भाई थे तथा मुनि वसिष्ठ के अनुज थे।२१।

कथं च मित्रावरुणौ पितरावस्य तौ स्मृतौ।
जन्मकुम्भादगस्त्यस्य यथा भूत्तद्वदाधुना ॥२२
पुरा पुराणपुरुषः कदाचिद्गन्धमादने।
भूत्वा धर्मसुतो विष्णुश्चचार विपुलं तपः ॥२३
तपसा चास्य भीतेन विघ्नार्थे प्रेषितावुभौ।
शक्रेण माधवानङ्गावप्सरोगणसयुतौ ॥२४
यदा च गीतवाद्येन भावहावादिना हरिः।
न काममाधवाभ्यां च माहं नेतुमशक्यत ॥२५
तदा काममधुस्त्रीणां विषादमभजद्गणः।
संक्षाभाय ततस्तेषामूरुदेशान्नराग्रजः ॥२६
नारीमुत्पादयामास त्रैलोक्यस्या प मोहिनीम्।
समोहितास्तया देवास्तौ तु चैव सुरावुभौ ॥२७
अप्सराणां समक्षं हि देवानामब्रवीद्धरिः।
उर्वशीति च नाम्नेयं लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥२८

भीष्म ने कहा—इसके वे दोनों मित्रावरुण कैसे पिता हुए थे ? कुम्भ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जिस प्रकार से अगस्त्य मुनि का जन्म हुआ था यह सब इस समय आप बतलाइये।२२।पुलस्त्य मुनि ने कहा—प्राचीन काल में पुराण पुरुष भगवान् विष्णु ने किसी समयमें गन्धमादन नाम वाले पर्वत पर धर्म का पुत्र होकर बहुत तपश्चर्या की थी।२३। इनके तप से भयभीत होकर देवराज ने उसमें विघ्न डालने के लिये अप्सराओं के गण से युक्त माधव और अनङ्ग इन दोनों को भेजा था।२४। जब भगवान् हरि काम और माधवके द्वारा गीत वाद्य तथा भाव-हाव आदि से मोह को प्राप्त नहीं किये जा सके थे।२५। उस समय में काम—मधु और स्त्रियों का गण अत्यन्त ही अपनी विफलता पर विषाद को प्राप्त होगया था। इसके उपरान्त नरों के अग्रज ने उनके संक्षोभ के लिये अपने उरु भाग से एक नारी की उत्पत्ति की थी जो कि इतनी सुन्दरी थी कि समस्त त्रैलोक्य को भी अपने रूप-लावण्यसे मोहित करने वाली थी उसके लोकोत्तर सौन्दर्य की सुषमा से सब देवगण और वे दोनों सुर भी मोहित हो गये।२६-२७। उन सब अप्सराओं के और देवों के समक्ष में हरि ने कहा—यह नारी 'उर्वशी'—इस नामसे लोक में प्रसिद्ध प्राप्त करेगी।२८।

ततः कामयमानेन मित्रेणाहूयतोर्वशी।
प्रोक्ता मां रमयस्वेति बाढमित्यब्रवीच्च सा ॥२९
गच्छन्ती तु ततः सूर्यलोकमिन्दीवरेक्षणा।
वरुणेन वृता पश्चाद्वचन नमभाषत ॥३०
मित्रेणाह वृता पूर्वं मम सूर्यःपतिःप्रभो।
उवाच वरुणश्चित्त मयि सन्यस्य गम्यताम् ॥३१
गतायां बाढमित्युक्त्वा मित्रशापमदादथ।
अद्यैव मानुषे लोके गच्छ सोमसुतात्मजम् ॥३२
भजस्वेति यतो मिथ्याधर्म एष त्वया कृतः।
जलकुम्भे ततो वीर्यं मित्रेण वरुणेन च ॥३३
प्रक्षिप्तमथ सञ्जातौ द्वावेव मुनिसत्तमौ।
निमिर्नाम नृपः स्त्राभिः पुरा द्यूतमदीव्यत ॥३४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदन्तरेऽभ्याजगाम वसिष्ठो ब्रह्मसम्भवः ।
तस्य पूजामकुर्वाण शशाप स मुनिर्नृपम् ।।३५

इसके अनन्तर कामवासना से अभिभूत हुए सूर्यदेव ने उस उर्वशी को बुलाकर कहा था कि तू मुझे रमण करा दे। इस सूर्य के कथन पर उसने बहुत अच्छा, ऐसा ही करूँगी'—यह उत्तर दिया था ।२९। कमलके समान सुन्दर लोचनों वाली वह उर्वशी सूर्य लोक में जा ही रही थी मार्ग में वरुण देवता ने उसका वरण किया था। उससे वह बोली—।३०। मुझे पहिले सूर्य देव ने वरण किया है इसलिये हे प्रभो ! मेरा सूर्य ही पति है। इस पर फिर वरुण ने कहा—मुझमें अपना चित्त का त्याग करके चली जा ।३१। 'बहुत अच्छा'—यह कहकर उसके चले जाने पर मित्र ने शाप दे दिया था कि तू आज ही सोम सुताके आत्मज के पास मनुष्यलोक में चली जा। वहाँ जाकर उसका सेवन कर क्योंकि तूने मिथ्या धर्म यह किया है। इसके अनन्तर जल कुम्भ में मित्र (सूर्य) और वरुण ने अपना वीर्य प्रक्षिप्त किया था ।३२-३३। इसके पश्चात् दो मुनि श्रेष्ठ समुत्पन्न हुए थे। निमि नाम वाला नृप पहिले स्त्रियों के साथ द्यूत क्रीड़ा किया करता था ।३४। इसी बीच में ब्रह्मपुत्र वसिष्ठ वहाँ पर आ गये थे। जब उस राजा ने जो कि द्यूत क्रीड़ा में संलग्न था उन मुनि की पूजा-प्रक्रिया नहीं की तो मुनि ने उसे शाप दे दिया था ।३५।

विदेहस्त्वं भवस्वेति शप्तस्तेनाप्यसौमुनिः ।
अन्योन्यशापादुभयोर्विशरीरे तु तेजसी ।।३६
जन्मतुश्शापनाशाय ब्रह्माणं जगतः पतिम् ।
अथ ब्रह्मासमादेशाल्लोचनेष्ववसन्निभिः ।।३७
निमेषाःस्युश्च लोकानां तद्विश्रामायपार्थिव ।
वसिष्ठोऽप्यभवत्तस्मिञ्जकुम्भे च पूर्ववत् ।।३८
ततो जातश्चतुर्बाहुः साक्षसूत्रकमण्डलुः ।
अगस्त्य इति शान्तात्मा बभूव ऋषिसत्तमः ।।३९
मलयस्यैकदेशे तु वैखानसविधानतः ।
सभार्यः सवृतो विप्रैस्तहश्चक्रे सुदुष्करम् ।।४०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः कालेन महताः तारकादिनिपीडितम् ।
जगद्वीक्ष्य स कोपेन पीतवान्वरुणालयम् ॥४१
ततोऽस्य वरदास्सर्वे वभूवुः शङ्करादयः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च भगवान्वरदानाय जग्मतुः ॥४२

वसिष्ठ ने यह शाप दिया था कि तू विदेह हो जा। इस पर वह मुनि को भी उस नृप के द्वारा शाप दे दिया गया था। परस्पर में एक-दूसरे के शाप से दोनों के विना शरीर वाले तेज जगत् के पति ब्रह्माजी समीप में शापों के विनाश करने के लिए गये थे। इसके उपरान्त ब्रह्माजी के आदेश से निमि नृप ने लोचनों में निवास किया था।३६--३७। हे पार्थिव ! वह लोकों के विश्राम के लिए निमेष होते हैं। वसिष्ठ भी पूर्व की भाँति उस जल कुम्भ में हुए थे।३८। इसके उपरान्त चार भुजाओं वाला, अक्षसूत्र और कमण्डलु से युक्त परम शान्त स्वरूप से समन्वित ऋषि श्रेष्ठ अगस्त्य उत्पन्न हुए थे।३९। मलय पर्वत के एक भाग में वैखानस के विधान से विप्रों के द्वारा संवृत भार्या के सहित उसने परम दुष्कर तपस्या की थी।४०। इसके अनन्तर वहुत काल में तारक आदि से परम उत्पीड़ित इस जगत् को देखकर उस अगस्त्य महर्षि ने इस समुद्र का पान कर डाला था।४१। इसके पश्चात् शंकर प्रभृति—ब्रह्मा और भगवान् विष्णु सभी इनको वर देने वाले होगये और वरदान देने के लिए इनके समीप में सब गये थे।४२।

वरं वृणीष्व भद्रं ते यश्चाभीष्टोऽत्रः वैं मुने ।
यावद् ब्रह्मसहस्राणां पञ्चविंशतिकोटयः ॥४३
वैमानिको भविष्यामि दक्षिणाम्बरवर्त्मनि ।
मद्विमानोदयात्कुर्याद्यः पश्चित्पूजनं मम ॥४४
स सप्तलोकाधिपतिः पर्यायेण भविष्यति ।
यस्त्वाश्रम पुष्करे तु मन्नाम्ना परिकीर्तयेत् ॥४५
स चैवपुण्यतां यातु वर एष वृतो मया ।
श्राद्धं येऽत्र करिष्यन्ति पिण्डपूर्वं तु भक्तितः ॥४६
तेषां पितृगणास्सर्वे मया सह दिवि स्थिताः ।
एतत्काल वसिष्यन्ति एषएव वरो मम ॥४७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवमस्त्विति तेऽप्युक्त्वा जग्मुर्देवा यथागतम् ।
तस्मादर्घः प्रदातव्यो ह्यगस्त्याय सदा बुधैः ।।४८

वहाँ सबने मुनि से कहा—हे मुने ! आपका कल्याण हो, आपको यहाँ जो भी कुछ अभीष्ट हो हमसे वर माँग लो । अगस्त्य मुनि ने कहा—ब्रह्म सहस्रों की जितनी पच्चीस कोटियाँ हैं मैं वैमानिक होकर रहूँ । दक्षिणाम्बर के मार्ग में मेरे विमान के उदय से जो कोई भी मेरा पूजन करे वह पर्याय से सातों लोकों का अधिपति होवेगा । जो पुष्कर में मेरे नाम से आश्रय को परिकीर्त्तित करेगा वह भी परम पुण्य को प्राप्त होवे—यही वरदान मैं चाहता हूँ । जो यहाँ पर मुक्तिभाव से पिण्डदान पूर्वक श्राद्ध करेंगे उनके समस्त पितृगण मेरे ही साथ दिवलोक में स्थित होते हुए इतने ही समय तक वास करेंगे—यही मेरा वरदान अभीष्ट है । ।४३। से ।४७। ऐसा ही होगा—यह कहकर वे सब देवता जैसे ही आये थे वापिस चले गये । इसलिये सबको ही भगवान् अगस्त्य मुनि के लिये अर्घ अवश्य ही देना चाहिए ।४८।

।। वामनावतार चरित्र वर्णन ।।

सम्यक्पृच्छसि भोस्त्वं यत्संशृणुत्वं समाहितः ।
यथा पूर्वं पदन्यासः कृतो देवेन विष्णुना ।।१
यज्ञपर्वतमासाद्य शिलापर्वतरोधसि ।
पुरा कृतयुगे भीष्म देवकार्यार्थंसिद्धये ।।२
विष्णुना च कृतं पूर्वं पृथिव्यर्थे परन्तप ।
त्रिदिवं सर्वमानीत दानवैर्बलवत्तरैः ।।३
त्रैलोक्यं वशमानीय जित्वा देवान्सत्रासत्रान् ।
दानवा यज्ञभोक्तारस्तत्रासन्बलवत्तराः ।।४
कृता वाष्कलिनः सर्वे दानवेन बलीयसा ।
एवम्भूते तदा लोके त्रैलोक्ये सचराचरे ।।५
परमार्ति ययौ शक्रो निराशी जीविते कृतः ।
स बाष्कलिर्दानवेन्द्रोऽवध्योऽयं नमसंयुगे ।।६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मणो वरदानेन सर्वेषां तु दिवौकसाम् ।
तदहं ब्रह्मणो लोकवृतः सर्वैर्दिवौकसै ।।७

पुलस्त्य मुनि ने कहा—हे भीष्म ! आपने बहुत ही सुन्दर प्रश्न किया है । अब आप परम सावधान होकर अच्छी तरह श्रवण करो जिस तरह से विष्णु देव ने पूर्व पद का न्यास किया था ।१। हे भीष्म!पहिले समय में देवताओं के कार्यों की सिद्धि के लिये कृतयुग में विष्णु ने यज्ञ पर्वत पर पहुँचकर शिला पर्वत रोध पर पृथिवी के लिये परम दुष्कर तप किया था क्योंकि अत्यधिक बलशाली दानवों ने सब त्रिदिव को ले लिया था ।२३। समस्त त्रैलोक्य को अपने वश में लेकर इन्द्र के सहित समस्त देवों को जीतकर वहाँ पर दानव ही यज्ञों के भोग करने वाले हो गये थे क्योंकि वे सब अधिक बलवान् थे ।४। अत्यन्त बली बाष्कलि दानव ने सब अपने वश में कर लिये थे । इस चराचर त्रिलोकी में इस प्रकार की उस समय दशा के हो जाने पर इन्द्र अपने जीवन में भी निराश होकर अत्यन्त दुःखित हो गया था और सोचने लगे कि यह दानवेन्द्र बाष्कलि मेरे युद्ध में वध के योग्य हो जाना चाहिए ।५-६। ब्रह्मा के वरदान से समस्त देवताओं का मैं ब्रह्मा लोकवृत सब देवगण के द्वारा हो गया था ।७।

व्रजामि शरणं देवं गतिरन्या न विद्यते ।
एवं विचिन्त्य देवेन्द्रो वृतः सर्वैदिवौकसैः ।।८
जगाम त्वरितो भीष्म यत्र देवः पितामहः ।
ब्रह्मणः स पदंप्राप्य वृतस्तैश्च दिवौकसः ।।९
अब्रवीज्जगतः कार्यं प्राप्तामापदमुत्तमाम् ।
किं न जानासिवै देव यतो नो भयमागतम् ।।१०
दैत्यैर्यदाहृतं सर्वं वरदानाच्च ते प्रभो ।
कथितं वै मयासर्वं बाष्कलेश्च दुरात्मनः ।।११
क्रियतां चाविलम्बेन पिता त्वं नः पितामहः ।
तत्त्वं चिन्तयदेवेशशान्त्यर्थं जगतस्त्विह ।।१२
तेषां च पश्यतां किञ्चिन्छ्रौतस्मार्तादिकाः क्रियाः ।
न प्रावर्तन्त हानिस्तु तैरस्माकं दिने दिने ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

अब मैं देव की शरण में जाता हूँ क्योंकि मेरी अन्य कोई गति नहीं है। इस प्रकार से विचार कर सब देवगण के द्वारा देवेन्द्र वृत हुआ था।८। हे भीष्म ! फिर वह शीघ्र ही वहाँ पर चला गया जहाँ पर पितामह देव थे और ब्रह्मा के पद को प्राप्तकर सभी देवताओं के द्वारा वरण किया गया था।९। जगत् का समस्त कार्य बतलाया कि बड़ी भारी आपत्ति प्राप्त होगई है हे देव ! क्या आप नहीं जानते हैं कि हमको भारी भय उपस्थित होगया है ? हे प्रभो ! तुम्हारे वरदान से जो सब दैत्यों ने आहरण कर लिया है मैं दुष्ट वाष्कलि का सभी कुछ कह दिया है।१०-११। उसे अब बिना किसी विलम्ब के किये हुए कर दीजिए क्योंकि आप हमारे पिता तथा पितामह हैं। हे देवेश ! यहाँ पर जगत् की शान्ति के लिये किसी तत्व वस्तु का चिन्तन करें।१२। इन सबके देखते हुए ही कुछ भी श्रौत एवं स्मार्त्त क्रिया आदि प्रवृत्त नहीं हुई हैं इसीलिए दिन पर दिन हम सबकी हानि हो रही है।१३।

जानामि वाष्कलिं त तु वरदानाच्च गर्वितम् ।
अजेयंभवतांमन्येविष्णुसांध्योभविष्यति ।।१४

निरुध्य सस्थितो ब्रह्मा भावं तत्त्वमयं तदा ।
समाधिस्थस्य तस्यैवध्यानमात्राच्चतुर्भुजः ।।१५

स्तोकेनैव हि कालेन चिन्त्यमानः स्वयम्भुवा ।
आजगाम मुहूर्तेन सर्वेषामेव पश्यताम् ।।१६

भोभोब्रह्मन्निवर्त्तस्व ध्यानादस्मान्निवारितः ।
यदर्थमिष्यतेध्यानंसोऽहंत्वांसमुपागतः ।।१७

महाप्रसाद एषोऽत्र स्वामिनो ह प्रदर्शनम् ।
कस्यान्यस्यभवेच्चैषाचिन्तायाजगतः प्रभो ।।१८

ममैव तावदुत्पत्तिर्जगदर्थे विनिर्मिता ।
जगदेतत्त्वदर्थीयं तत्त्वतो नास्ति विस्मयः ।।१९

भवता पालनं कार्यं सहरेद्र द्र एव तु ।
एवम्भुते जगत्यस्मिञ्शक्रस्यास्य महात्मनः ।।२०

हृतं राज्यं बाष्कलिना त्रैलोक्य सचराचरम् ।
भृत्यस्य क्रियतांसाह्यं मन्त्रदानेनकेशवः ।।२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माजी ने कहा—मैं उस वाष्कलि को भली-भाँति जानता हूं जो कि वरदान प्राप्त कर बहुत ही घमण्ड में है। मैं तो अब उसे जीतने के योग्य ही मानता हू। वह तो भगवान् विष्णु के द्वारा ही साध्य हो सकता है।१४। उस समय अपनी प्राण वायु का निरोध करके ब्रह्माजी तत्व-मय भाव में संस्थित होगये थे। समाधिमें स्थित उनके ध्यान मात्रके करने ही से स्वयम्भू के द्वारा चिन्त्यमान चार भुजा वाले प्रभु थोड़े ही समय में वहाँ पर आगये थे।१५-१६। भगवान् विष्णु ने कहा—हे ब्रह्माजी! अब इस प्रकार ध्यान करने के कार्य को बन्द कर दीजिए। जिस प्रयोजन की सिद्धि के लिए आपका यह ध्यान लगाया गया है वह मैं स्वयं ही इस समय आपके समीप में उपस्थित हो गया हूँ।१७। ब्रह्माजी ने कहा हे प्रभो! यह तो आपका अनुग्रह ही है कि इस समय में आपके यह दर्शन मुझे प्राप्त हो रहे हैं। जो इस जगत् की चिन्ता आपको है वैसी चिन्ता अन्य किसको हो सकती है।१८। आपने मेरी जो उत्पत्ति की थी वह भी इस जगत् के कल्याण के सम्पादन के लिए की थी। यह सम्पूर्ण आपके ही लिए है यह परम तात्विक है—इसमें लेशमात्र भी विस्मय की कोई बात नहीं है।१९। आपका कार्य इस जगत् का पालन करना है और रुद्र इसका संहार किया करते हैं। इस प्रकार से इस जगत् की स्थिति है। इस दशा में महात्मा देवराज इन्द्र का सम्पूर्ण राज्य जो कि चराचर त्रैलोक्य है इस दुष्ट वाष्कलि ने हरण कर लिया है। इस अपने भृत्य की केशव भगवान् मन्त्र दान के द्वारा सहायता करें।२०-२१।

भवतो वरदानेन अवध्यः स तु साँप्रतम्।
बुद्धिसाध्यः स वै कार्यो बन्धनादिह दानवाः ॥२२
वामनाऽहं भविष्यामि दानवानां विनाशकः।
मया सहव्रजत्वेषबाष्कलेस्तु निवेशनम् ॥२३
तत्र गत्वा वरं त्वेष मदर्थे याचतामिमम्।
वामनस्यास्य विप्रस्य भूमें राजन्पदत्रयम् ॥२४
प्रयच्छस्वमहाभाग याच्ञैषा तु मयाकृता।
शक्रेणोक्तोदानवेन्द्रोदद्यात्स्वमपिजीवितम् ॥२५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृह्य प्रतिगृहं तस्य दानवस्य पितामह ।
त वद्ध्वा च ततो यत्नात्कृत्वा पातालवासिनम् ॥२६
दधार दिव्य वर्षाणां सहस्रं दिव्यमीश्वरम् ।
ततः समभवत्तस्यां वामनोभूतवामनः ॥२७
जातेन येन चक्षूंषि दानवानां हृतानिवै ।
जातमात्रे ततस्तस्मिन्देवदेवे जनार्दने ॥२८
नद्यः स्वच्छाम्बुवाहिन्यो ववौ गन्धवहोऽनिलः ।
कश्यपोऽपि सुख लेभे तेन पुत्रेण भास्वता ॥२९
सर्वेषां मानसोत्साहस्त्रैलोक्दान्तरवासिनम् ।
सञ्जातमात्रे तु ततो जनाधिप जनार्दने ॥३०

भगवान् वासुदेव ने कहा—आपने ही उसे वरदान दिया है इसलिये इस समय तो वध करने के योग्य नहीं है । इसलिये यहाँ पर बन्धन से उसे बुद्धिके द्वारा ही साध्य करना चाहिए अर्थात् बुद्धिसे ही उसे काबू में लेना है।२२। मैं वामन (बोना) होऊँगा जो कि समस्त दानवों का विनाश करने वाला हो जाऊँगा । मेरे ही साथ यह भी वाष्कलिके घर में चले।२३।वहाँ जाकर यह मेरे लिये इस प्रकारसे वरकी याचना करे कि हे राजन् ! इस वामन विप्र को तीन पैंड़ भूमि प्रदान करदो । यह याचना मेरे द्वाराकी हुई होगी । शक्र के द्वारा कहे जाने पर यह दानवों का राजा अपने जीवनको भी दे देगा।२४-२५।हे पितामह ! उस दानवके द्वारा प्रदान किया हुआ वह भूमि का प्रतिग्रह ग्रहण करके मैं उसका बन्धन कर दूँगा और यज्ञ द्वारा उसे फिर यहाँ से हटाकर पाताल लोक का निवास करने वाला बना दूँगा।२६।दिव्य वर्षों के सहस्र ने दिव्य ईश्वर को धारण किया था । इसके अनन्तर उसमें वामनोभूत वामन हुआ था ।२७। इसने उत्पन्न होते ही दानवों के चक्षुओं का हरण कर लिया था । उन देवों के भी देव भगवान् जनार्दन के उत्पन्न हो जाने पर ही समस्त नदियाँ अति स्वच्छ वारि के वाहन करने वाली हो गई थीं और वायु सुन्दर गन्धके वहन करने वाला होगया था । उस परम या समान पुत्र को देखकर कश्यप महर्षि को भी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अत्यधिक सुख की प्राप्ति हुई थी।२८-२९।हे जनाधिप ! उन भगवान् जनार्दन के जन्म ग्रहण करने मात्र से ही त्रैलोक्य में निवास करने वाले सभी प्राणियोंके मनमें एक तरह का अद्भुत उत्साह समुत्पन्न हो गया था।३०।

परमासाद्य यं विष्णुं ब्रह्माह जगतः कृते ।
जातोऽहं भवतामर्थे वामनो यदपीश्वरः ॥३१
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च एष एव महेश्वरः ।
एष वेदाश्च यज्ञाश्च स्वर्गश्चैष न संशयः ॥३२
सर्वथा वामनोदेवो देवकार्यं करिष्यति ।
एव चिन्तयतांतेषां भाविताना दिवौकसाम् ॥३३
जगाय शक्रसहितो वाष्कलेश्च निवेशनम् ।
दूरादेव च तां दृष्ट्वा पुरीं तस्यसमावृत्ताम् ॥३४
पाण्डुरैः खगमागम्यैः सवरत्नोपशोभितैं ।
शीभितां भवनैर्मुख्यैस्सुविभक्तमहापथैः ॥३५

जिस परम विष्णु को प्राप्त करके मैं इस जगत् के लिये ब्रह्मा हूँ। यह यद्यपि ईश्वर ही साक्षात् है तो भी आप सबके कार्य की सिद्धिके लिये वामन होकर समुत्पन्न हुए हैं ।३१। यह ही ब्रह्मा हैं-यही विष्णु हैं और यह महेश्वर हैं—यही सम्पूर्ण वेद हैं—यही सब यज्ञ हैं और यह ही स्वर्ग हैं—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।३२। यह वामन देव पूर्णतया देवों के कार्य को सिद्ध कर देंगे—इसी प्रकार से भावतात्मा देवों के चिन्तन करते हुए होने पर वह वामनदेव देवराज इन्द्रके सहित दानवेन्द्र वाष्कलि के निवास स्थान पर पहुँच गये थे । उन्होंने दूर से ही उसकी समान आकार वाली पुरीको देखा था ।३३-३४। उस पुरीमें सब प्रकारके रत्नोंसे उप शोभित आकाश को गमन करने वाले अर्थात् बहुत ऊँचे ऊँचे पाण्डुर वर्णके भवन बने हुए थे और भली-भाँति से उस पुरी में महापथ विभक्त हो रहे थे । तात्पर्य यह हैं कि सभी मार्ग अलग-अलग अच्छे ढङ्ग वाले थे ।३५।

इन्द्रं पुरागत दृष्ट्वा दानवेन्द्राय पार्थिव ।
इदमचुस्तदा गत्वा दानवा युद्धदुर्मदाः ॥३६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्चर्यमिति वै कृत्वा इन्द्रोऽभ्येति पुरो तव ।
एकाकी द्विजमुख्येन वामनेन सहप्रभा ॥३७
अस्माभिर्यदनुष्ठेयं साम्प्रतं नो वद स्वराट् ।
दानवानब्रवीत्सर्वान्पुरे तिष्ठत संकुलम् ।
प्रवेश्यतां देवराजः पूज्यः स तु ममाद्य वै ॥३८
एतस्मिन्नेव काले तु वामनः च वासवः ।
आगतौ दनुनाथेन प्रेम्णार्चवावलोकितौ ।।३९
कृतार्थं मन्यतात्मान प्रणिपातपुरःसरम् ।
उवाच वचनं राजा दानवानां धुरन्धरः ॥४०
अद्य वं त्रिषु लोकेषु नास्ति धन्यतरो मया ।
योऽहंश्रिया वृतः शक्रं पश्यामिगृहमागतम् ॥४१
अर्थित्वकाम्यया यस्तु मामर्यं याचयिष्यति ।
गृहागतस्य तस्याहं दास्येप्राणानपिध्रुवम् ॥४२
दारान्पुत्रांस्तथागारं त्रैलोक्ये का कथा मम ।
आगत्य सम्मुख तस्य अङ्कमानीय सादरम् ॥४३
परिष्वज्याभिनन्द्यैन गृह प्रावेशयत्स्वकम् ।
तस्य स्वागतमर्घ्याद्यैः कृत्वा पूजां प्रयत्नतः ॥४४

हे पार्थिव ! युद्ध करने में दुर्मद दानव उस समय में आगे आये हुए इन्द्र को देखकर दानवों के राजा वाष्कलि के समीप में जाकर यह बोले-।३८। दानवों ने कहा-हे प्रभो ! यह आज बहुत ही अधिक आश्चर्य होरहा है कि यह देवों का राजा इन्द्र आपकी पुरीमें आरहा है। यह अकेलाही है केवल इसके साथ में एक वामन ब्राह्मण है।३७। अब हम सबको इस समय जो कुछ भी करना चाहिए वह आप हमको आदेश प्रदान कीजिए । ऐसा दानवों के कहने पर उनसे दानवेन्द्र ने कहा—तुम सब पुर में संकुल होकर स्थित रहो और उस देवराज को हमारे पास प्रविष्ट करदो क्योंकि आज मेरा पूजा करने का योग है ।३८। इसी समय में वह वामनदेव और देवराज इन्द्र वहाँ पर आगये थे और दानवों के राजा के द्वारा बड़े ही प्रेम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
के साथ देखे गये थे ।३९।उस समय में अपने आपको परम कृतार्थ मानते हुए प्रणिपात पूर्वक दानवों के धुरन्धर राजा ने यह वचन कहा था ।४०। आज तीनों लोकों में मुझसे अधिक अन्य कोई भी धन्य एमम् भाग्यशाली नहीं है जोकि मैं श्री से वृत होकर भी घर पर आये हुए देवराज कादर्शन कर रहा हूं।४१। अर्थी होने की कामना से जो यह मुझसे कुछ भी याचना करेगा तो मेरे घर पर आये हुए इसकी मैं अपने प्राण भी निश्चय ही दे दूंगा ।।४ ।। स्त्रियों को पुत्रों को, तथात्रैलोक्य के समस्त अपार को दे ड लुंगा, मेरी तो बात ही क्या है–इस प्रकार से विचार करते हुए उसके सम्मुख आकर बहुत ही आदर के साथ अपनी गोद में बिठाकर उसकेसाथ समालिङ्गन किया और अच्छी तरह अभिनन्दन करके अपने निज घर में उस देवराज का प्रवेश कराया था । फिर उसका स्वागत सत्कार करके अर्घादि से प्रयत्नपूर्वक पूजा की थी ।।४३-४४।।

अद्य मे सफलं जन्म पूर्णाः सर्वे मनोरथाः ।
यस्त्वां पश्यामि शक्राद्य स्वयमेव गृहागतम् ।४५
ख्याप्योऽहं दनुमुख्यानां देवराज त्वया कृतः ।
आगच्छता मम गृहं पुण्यता तु पुरा हि मे ।४६
जानेऽहंदनुमुख्यानांप्रधानं त्वांतुत्राऽकले ।
नात्याश्चर्यमिदं भाति त्वयि दृष्टेऽपुरोत्तम ।४७
विमुखा नार्थिनो यान्ति भवतो गृहमागताः ।
अर्थिनां कल्पवृक्षोऽसि दाता चान्यो न विद्यते ।४८
प्रभायां सूर्यतुल्योऽसिगाम्भीर्यं सागरोपमः ।
सहिष्णुत्वे धराचैव श्रियानारायणोपमः ।४९
ब्रह्मणः कश्यपकुले चातोऽय वामनः शुभे ।
प्रार्थितोऽहमनेनैवं भूमिर्देहि पदत्रयम् ।५०

दानवराज ने फिर कहा आज मेरा जन्म सफल है और आज मेरे सभी मनोरथ पूर्ण हो गये । क्योंकि आप स्वयं ही चलकर मेरे घर पर आये हुए हे देवराज ! आपका दर्शन प्राप्त कर रहा हूं।।४५।।हे देवराज ! आपने ही मुझे दानवों में प्रमुख प्रसिद्ध कर दिया है । आपने स्वयं मेरे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर पर शुभागमन करके मुझे परम पुण्यवान बना दिया है ।४६। देवराज इन्द्र ने कहा—हे वाष्कले ! दानवों में परम प्रधान आपको मैं भली-भाँति जानता हूँ । हे असुरों में परम श्रेष्ठ ! आपको देखने पर मुझे यह कुछ अत्यन्त आश्चर्य नही प्रतीत होता है ।४७। आपका स्वभाव ही ऐस है कि जो भी कोई याचना करने आपके घर पर आ जाते हैं वे कभीविमुख होकर वापिस नहीं जाया करते हैं । आप तो याचना करने वालों के लिए तो कल्प-वृक्ष के ही समान समस्त मनोरथ पूर्ण करने वाले हैं । आपके तुल्य तो संसार में अन्य कोई दान-दाता विद्यमान ही नहीं है ।४८। प्रभाव में तो आप तेजस्वी सूर्यदेव के समान हैं और गम्भीरता में सागर के तुल्य हैं । सहनशीलता तो आप से भूमि के सदृश विद्यमान है न । इसकी सम्पन्नता ऐसी हैं कि आप साक्षात् नारायण जैसे हैं । देखिए यह वामन परम शुभ ब्रह्माजी के कश्यप कुल में समुत्पन्न हुआ हैं । इसने मझसे याचना की थी कि तीन पद प्रमाण वाली भूमि का दान मुझे दे दो ।।४९-५०।।

ममाग्निशरणार्थाय यत्र कुर्यां मुखं त्वहम् ।
तदस्य कारणं कृत्वा अर्थितैषा मम प्रभो ।५१
लोकत्रय मेऽपहृतन्त्वया विक्रम्य वाष्कले ।
निवृंत्ति को निर्धनोऽस्मि यद्वित्तेन तदस्ति मे ।५२
यदि ते रुचित वीर दानवेन्द्र महाद्युते ।
तदस्मै दीयतां शीघ्रं वामनाय महात्मने ।५३
देवेन्द्र स्वागत तेऽस्तु स्वस्ति प्राप्नुहि मा चिरम्
त्वं समीक्ष स्वधात्म नं सर्वेषां च परायणम् ।५४
वृहत्त्रपा मे देवेन्द्र यद्भूमेस्तु पदत्रयम् ।
ब्राह्मणस्य विशेयेण प्रार्थित तु त्वया विभो ।५५
दास्येग्रामवरानस्य भववस्तुविष्टपम् ।
अश्वान्गजान्भूमिधन स्त्रियश्चोद्भिन्नचु चुकाः ।५६

मेरी अग्नि शरणार्थना के लिए जिस स्थान पर मैं मख किया करता हूं उसी कारण से हे प्रभो ! इसने यह मेरी याचकता ग्रहण की थी ।५१। हे वाष्कले ! आपने तो मेरे तीनों ही लोक अपने बल-विक्रम से अपहरण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर लिए हैं। मैं तो इस समय बिना वृत्ति वाला और एकदम निर्धन हो गया हूँ कि जो कुछ भी मेरी दे देने की इच्छा भी हो तो वह अब मेरे पास कुछ भी नहीं रहा है।५०। हे दानवेन्द्र वीर ! आप तो महती द्युति वाले हैं। यदि आपको उचित एवं रुचिकर प्रतीत हो तो इस महान् आत्मा वाले वामन के लिए शीघ्र ही प्रदान कर दीजिए।५३। वाष्कलि ने कहा—हे देवेन्द्र ! आपका परम स्वागत है। आप शीघ्र ही कल्याणकी प्राप्ति कर। आप सबके परायण हैं अपने आपको स्वधात्मा ही देखें।५४ किन्तु हे देवेन्द्र ! मुझे बहुत ही अधिक लज्जा आ रही है कि आपने इस ब्राह्मण के लिए केवल तीन पैंड भूमि की प्रार्थना की है।५५। मैं इस वामन को बहुत ही श्रेष्ठ ग्राम दूँगा और आपको त्रिविष्टप दे दूँगा। इनके अतिरिक्त बहुत से अश्व-गज-भूमि, धन तथा समुन्नत वक्ष स्थलकी सुन्दर स्त्रियाँ भी दूँगा ॥५६॥

पुरोधास्तूशना प्राह दानवेन्द्रं तदा वचः।
भवात्मजा दानवेन्द्र ऐश्चर्येऽष्ठविधे स्थितः।५७
युक्तायुक्तं न जानासि देय कस्य मया क्वचित्।
मन्त्रिभिः सुसमालोच्य युक्तायुक्तं परीक्ष्य च।५८
प्राप्तं त्रैलोक्यराज्यत्व जित्वा देवान्सवासवान्।
वाक्यस्यास्यावसाने च भवान्प्राप्स्यति बन्धनम्।५९
य एष वामगोराजन्विष्णुरेव सनातनः।
नास्य वै भवता देयं पिता ते घातितः स्वयम्।६०
अय ते पितृहा प्राप्तो मातृहा बन्धघातकः।
वंशोच्छेदकरस्तुभ्य भूतश्चैव भविष्यति।६१
न चैष धर्मं जानाति शक्रादीनां हिते रतः।
मायाविना दानवा पे मायया येननिर्जिताः।६२
मायया ब्राह्मणं रूपं वामनं च प्रदर्शनम्।
अत्र किं बलनोक्तेन नास्य देयं तु किञ्चन।६३
सक्षिकापादमात्रं तु भूमिरस्य प्रतिग्रहः।
विनाशमेष्यति क्षिप्रं सत्यं सत्यं मया श्रुतम्।६४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी समय में दानवों के पुरोहित शुक्राचार्य ने दानवेन्द्र से कहा—हे दानवेन्द्र ! आप राजा हैं और आठ प्रकार के ऐश्वर्यों में इस समय अधिष्ठित हैं अर्थात् सभी ऐश्वर्य आपको प्राप्त हैं।५९। किन्तु आप क्या युक्त हैं और क्या अयुक्त हैं—यह बिल्कुल भी नहीं जानते है । किस समय में, मुझको किसके लिए क्या देना चाहिए इसका ज्ञान आपको नहीं है, आपको चाहिए कि अपने मंत्रियों के साथ भलीभाँति समालोचना करके और युक्त तथा अयुक्त की परीक्षा करके देना चाहिए ।।५ ।। इन्द्र के सहित समस्त देवों को जीतकर अपने ही बल विक्रम से यह त्रैलोक्य के राज्य-वैभव को प्राप्त किया है । अब जो दान देने का वचन तो आप दे चुके हैं किन्तु इसके पूर्ण करने के अवसान में ही आप बन्धन की प्राप्ति करेंगे।५६। हे राजन् ! जो यह वामन (बौना) ब्राह्मण है यह साक्षात् सनातन विष्णु है। इसको आपके द्वारा कुछ भी नहीं देना चाहिए क्योंकि इसने स्वयं ही आपके पिता का हनन किया था ।६०। यही तुम्हारे पिता को मारने वाला है, यही माता का हनन करने वाला और बन्धुओं का घात करने वाला है। यह आपके वंश का उच्छेद करने वाला सर्वदा से रहा है और रहेगा।६१। यह धर्म तथा न्याय की बात कुछ भी नहीं समझता और सर्वदा इन्द्र आदि देवगणों का ही हित करने में संलग्न रहा करता यह बहुत ही मायावादी है ।इसने अपनी माया से ही समस्त दानवों को निर्जित किया है।६२। इस समय भी माया से ही वामन का स्वरूप प्रदर्शित किया है । मैं अब इससे अधिक क्या कहूँ, संक्षेप में कथन है कि इसको कुछ भी नहीं देना चाहिए । तीन पैड़ तो बहुत है इसे तो मक्खी के चरण के बराबर भी भूमि का दान देना तेरा विनाशक हो जायगा और वह भी बहुत ही शीघ्र होगा । मैं यह पूर्णतः सत्य-सत्य कहता हूं ।।६३-६४।।

गुरुणाप्येवमुक्तस्तु भूयो वाक्यमथाब्रवीत ।
धर्मार्थिना मया सर्वं प्रतिज्ञातं गुरो त्विदम् ।।६५
प्रतिज्ञापालनं चाथ सतां धर्मः सनातनः ।
यद्येष भगवान्विष्णुर्मत्तो धन्यतरो मया । ६६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

गृह्य प्रतिग्रह मत्तो यदि देवान्वुभूषति ।
भयोऽपि धन्यतां नीतो देवेनानेन वं गुरो ।६७
ये योगिनो ध्यानयुक्तां ध्यायमाना हि दर्शनम्
न लभन्ते तथा विप्रास्सोऽय हृष्टो मयाद्य वै ।६८
एतच्छ्रुत्वा गुरुस्तत्र त्रपयाऽधोमुखः स्थितः ।
अर्थिता भवता देव देया सर्वा धरा मया । ६
त्रपाकरं भवेन्मह्यं यदस्य भूपदत्रयम् ।
सत्यमेतद्दानवेन्द्र यदुक्तं भवता हि मे ।७०
भूमेः पदत्रयार्थित्व द्विजेनानेन मे कृतम् ।
एतवता त्वयं च र्थी मयाप्यस्य कृते भवान् ।७१

दानवों के गुरु शुक्राचार्य के द्वारा इस प्रकार से कहे जाने पर दानवेन्द्र ने फिर यह वचन कहा था—हे गुरो ! धर्म के अर्थी मैंने इसको दान देने की प्रतिज्ञा कर दी है।६५। की हुई प्रतिज्ञा का पालन करना सत्पुरुषों का सनातन धर्म होता है। यदि यह साक्षात् भगवान विष्णु ही वामन का स्वरूप धारण कर मेरे पास भूमि की याचना करने के लिए आये हैं तो फिर इस संसार में मुझसे अधिक कोई भी धन्य एवं भाग्य-शाली नहीं है।६६। हे गुरुवर ! मुझसे दान ग्रहण करके भी यह देवों को विभूषित कर देवेंगे तो मैं और भी अधिक इस देव के द्वारा मान्यता को प्राप्त कर दिया जाऊँगा ६७। जिसको ध्यानमें निमग्न होकर ध्यानकरते हुए भी योगीजन दर्शन में नहीं पाते हैं और विप्र लोग भी जिसकी प्राप्ति नही किया करते हैं उसी को आज मैंने अपने ही घर पर प्राप्त हुआ देख लिया है—यह तो बड़े ही सौभाग्य की बात है।६८। पुलस्त्य महर्षि ने कहा—दानवेन्द्र की यह बातें सुनकर गुरु शुक्राचार्य लज्जा से नीचेकी ओर मुख करके स्थित हो गये। वाष्कलि ने कहा-हे देव !आपने जो मुझसे भूमिकी याचना की है वह सम्पूर्ण भूमि मुझे अवश्य ही आपको देनी ही है किन्तु यह तीन पैंड भूमि का दान मुझे अत्यन्त ही लज्जादेने वाला हो रहा है। इन्द्र ने कहा—हे दानवेन्द्र ! आपने जो कुछ भी मुझ कहाहै कि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णतः सत्य है।६ -७०। इस द्विज ने मुझसे केवल तीन पैंड ही भूमि की याचना की थी। यह याचक इतना ही भूमि का इच्छुक है अतएव मैंने भी आपसे उतनी ही भूमि के दान के लिए निवेदन किया है ।।७१।।

दनुपुत्रे याचितोऽसि वरमेतत्प्रदीयताम् ।
पदत्रयं वामनाय देवराज प्रतीच्छ मे ।७२
तत्र त्वं सुचिरं कालं सुखी सुरपते वस ।
एवमुक्त्वा वाष्कलिना वामनाय पदत्रयम् ।७३
तोयपूर्वं तदा दत्तं प्रीयतां मे हरिःस्वयम् ।
दत्ते तु दानवेन्द्रेण त्यक्त्वा रूपं च वामनम् ।७४
हरिराचक्रमे लोकान्देवानां हितकाम्यया ।
यज्ञपर्वतामासाद्य गत्वाचैव उदङ्मुखः ।७५
देवस्य वामचरणे निविष्टो दानवालयः ।
तत्र क्रमं स प्रथमं ददौ सूर्ये जगत्पत्तिः ।७६
द्वितीयं च ध्रुवे देवस्तृतीयेन च पार्थिव ।
ब्रह्माण्डस्ताडितस्तेन देवेनाद्भुतकर्मणा ।७७
अंगुष्ठाग्रेण भिन्नेऽण्डे जलं भूरि विनिःसृतम् ।
प्लावयित्वा बह्मलोकान्सर्वाल्लोकाननुक्रमात् ।७८

मैंने दनु के पुत्र आपसे वही याचना की है। इतनी ही भूमि प्रदान करने का कार्य श्रेष्ठ है और वही आप इस समय प्रदान कर दीजिए। वाष्कलि ने कहा-हे देवराज वहाँ पर बहुत समय तक सुखी होकर निवास करें।७३। पुलस्त्य महर्षि ने कहा—इस प्रकार से कहकर वाष्कलि ने वामन विप्र के लिए जल पूर्वक तीन पद प्रमाण भूमि उस समय में प्रदान कर दी थी और यह कहा था कि श्री हरि भगवान स्वयं मुझ पर प्रसन्न होवें। दानवेन्द्र के द्वारा इस प्रकार से सङ्कल्प कर भूमि का दान दे देने पर वामन ने अपना वह बौना (वामन) स्वरूप त्याग दिया था।७३-७४ फिर हरि ने देवों के हित की कामना से समस्त लोकों को आक्रान्त कर लिया था। यज्ञ पर्वत को प्राप्त कर वहाँ जाकर ही उदङ् मुख होकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थित हुए ।७५। देव के वाम चरण में वह दानवालय सब निविष्ट हो गया था । वहाँ पर उनमें जो कि जगत के स्वामी हैं सूर्य में प्रथम क्रम दिया था ।७६। देव ने द्वितीय पदक्रम ध्रुव में दिया था । हे पार्थिव ! तीसरे से उस देव ने अपने अद्भुत कर्म के द्वारा ब्रह्माण्ड को ताड़ित कर दिया था ।७७। अंगुष्ठ के अग्रभाव से अण्ड के भिन्न हो जाने पर बहुत-सा जल निकल पड़ा था। उस जल ने ब्रह्मलोकों को तथा अनुक्रम से सभी लोकों को प्लावित कर दिया था ।७८।

स वाष्कलिर्वामनेन उक्तः पूरय ये क्रमान् ।
अधोमुखस्तदा जात उत्तरं नास्यविन्दति ।७९
मौनीभूतं तु दृष्ट्वा पुरोधा वाक्यमब्रवीत् ।
स्वाभाविकी दानशक्तिर्न तु स्रष्टुं वयं क्षमा ।८०
यावतायं धरा देव सा दत्ताऽनेन ते प्रभो ।
उक्तो बाष्कलिना विष्णुर्यावन्मात्रा वसुन्धरा ।८१
सा सृष्ठा भवता पूर्वं सा मया न च गोपिता ।
अल्पा भूमिर्भवान्दीर्घो न तु सृष्टेरहं क्षमः ।८२
इच्छाशक्ति प्रभतति प्रभोस्ते देव सर्वदा ।
निरुत्तरस्तदा विष्णुर्मत्वा त सत्यवादिनम् ।८३
ब्रूहि दानवमुख्य त्वं कन्ते कामं करोम्यहम् ।
मम हस्तगत्तं तोयं त्वया दत्तं तु दानव ।८४
तेन त्व वरयोग्योऽसि वराणां भाजनं शुभम् ।
दास्येऽहं भवतः काममर्थीयनवृष्णु हं ।८५
विज्ञप्तो हि तदा तेन देवदेवो जनार्दनः ।
भक्ति वृणोमि देवेश त्वद्धस्तान्मरणं हि मे ।८६
व्रजामि श्वेयद्वीपं ते दुर्लभं तु तपस्विनाम् ।
आहैवमुक्ते विष्णुस्तां तिष्ठस्वैकं युगान्तरम् ।८७
वाराहरूपी यदाहं प्रवेक्ष्यामि धरातलम् ।
तदा हनिष्ये त्वां तु महग्रे च यदैष्यति ।८८

वामन के द्वारा उस वाष्कलि से कहा गया था कि मेरे पदोंके क्रमों को पूरा करो । उस समय में वह वाष्कलि नीचे की ओर मुख वाला होकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थित हो गया था और इसका कोई भी उत्तर वामन को प्राप्तनहीं हुआ था ।७९। जब वह वाष्कलि मौनी होकर स्थित होगया तो उसको उस स्थिति में स्थित देखकर पुरोहितजी ने यह वचन कहे थे–शुक्र ने कहा—हे प्रभो ! यह दान की तों स्वाभाविकी हैं जो भी वस्तु जिस रूप में वर्तमान है उस रूप में दान करने की मेरे यजमान में शक्ति है । हम लोग नई भूमि की रचना करने में तो सामर्थ नहीं रखते हैं कि तुरन्त सजन करके आपकी दान देदिया जावे और शेष की पूर्ति करदी जावे । हे देव ! जितनी भी धारा इस दानवेन्द्र मेरे शिष्य के पास थी वह सभी तो इमने आपको दे दी है ।८। उस समय वाष्कलि ने भगवान विष्णु से कहा था जितनी भूमि थी और जिसका सृजन आपने किया था उनमें से मैंने कुछ भी छिपा नहीं रक्खा है । यह भूमि बहुत थोड़ी है और आपका स्वरूप बहुत दीर्घ है । मैं सृष्टि करने के कार्य में समर्थ नहीं हूं ।८१। हे देव ! हे प्रभो ! आपकी इच्छा शक्तिही प्रभव किया करती है । तब भगवान विष्णु निरुत्तर हो गये और उसको सर्वथा सत्य वक्ता मान लिया था ।।८२।। भगवान विष्णु ने उससे कहा–हे दानवों में परम प्रधान ! अब मैं तुम्हारी कोन सी कामना को पूर्ण करूँ । हे दानव ! मेरे हाथ में तो संकल्प करके तुम्हारे द्वारा दिया हुआ जल वर्तमान है ।८३। इससे तो तुम अवश्य ही वरदान देने के योग्य हो और परम शुभ वरदान प्राप्त करने के पात्र भी हो । मैं तुम्हारी कामना के अनुसार ही दूंगा जो भी आपका अर्थ हो माँग लो ।–४। उस समय में देवों के देव भगवान जनार्दन को भलीभाँति जान लिया गया था । वाष्कलि ने कहा–हे देवेश ! मैं तो आपकी भक्ति प्राप्त करने का वरदान ही चाहता हूँ । आपके हाथ से मेरा मरण हो । अब मैं तो श्वेत द्वीप को जाता हूँ जो कि तपस्वियों का परम दुर्लभ स्थान है ।८५। भगवान विष्णु ने कहा—एक युगान्तर पर्यन्त वहाँ तुम रहो । मैं जिस समय में वाराह रूप वाला होकर धरातल में प्रवेश करूँगा उसी समय में मैं तुम्हारा हनन करूँगा जबकि तुम मेरे सामने आओगे ।८६:८८।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ पुष्कर तीर्थ का निर्माण कथन ॥

तथान्यं ते प्रवक्ष्यामि इतिहासं पुरातनम् ।
यथा रामेण वै तीर्थं पुष्करं तु विनिर्मितम् ॥१
चित्रकूटात्पुरा रामो मैथिल्या लक्ष्मणेनच ।
अत्रे राश्रममासाद्य पप्रच्छ मुनिसत्तमम् ॥२
कानि पुण्यानि तीर्थानि किं वा क्षेत्रं महामुने ।
यत्र गत्वा नरो योगिन्वियोगं सह बन्धुभिः ॥३
नैव प्राप्नाति भगवन्स्तन्ममाचक्ष्वसुव्रत ।
अनेन वनवासेन राज्ञस्तु मरणेन च ॥४
भरतस्य वियोगेन परतप्ये ह्यहि त्रिभिः ।
तद्वाक्यं राघवेणोक्तं श्रुत्वा विप्रर्षभस्तदा ॥५
ध्यात्वा च सुचिरं कालमिदं वचनमब्रवीत् ।
साधु पृष्टं त्वया वीर रघूणां वंशवर्धन ॥६
मम पित्रा कृतं तीर्थं पुष्करं नाम विश्रुतम् ।
पर्वतौ द्वौ च विख्यातो मर्यादायज्ञपतो ।
कुण्डत्रयं ययोर्मध्ये ज्येष्ठमध्यकनिष्ठकम् ॥७

महर्षि पुलस्त्य ने कहा—अब मैं एक दूसरा बहुत ही पुरान इतिहास तुमको बतलाता हूँ कि जिस प्रकार से राम से राम ने इस पुष्कर नामवाले तीर्थ का निर्माण किया था ॥१॥ पुराने समय में जबकि श्रीराम अपनी पत्नी मैथिली और छोटे भाई लक्ष्मण के साथ अत्रि मुनि के आश्रम में पहुँचे थे और उन्होंने मुनियों में श्रेष्ठ से पूछा था ॥२॥ श्रीराम ने कहा—हे महामुने! परम पुण्य तीर्थ कौन-२ हैं तथा पुण्य क्षेत्र कौन हैं ? हे योगिन ! जहाँ पर मनुष्य पहुँच कर अपने बन्धुओं के साथ वियोग कभी नहीं प्राप्त किया करता है । हे सुन्दर व्रतों वाले ! हे भगवन् ! वहहमको कृपा करके आप बतला दीजिए । इस घोर, महा कठिन वनवास करनेसे राजा दशरथ के मरने से और भाई भरत के वियोग हो जाने से इन तीनों कारणों से मैं बहुत ही परितप्त हो रहा हूँ श्रीराम के .।रा कथित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस वचन को श्रवण कर उस समय में विप्र श्रेष्ठ अत्रि ने महुत समय तक ध्यान किया था और फिर इसके उपरान्त यह वचन वे बोले थे ।।३-५।। महर्षि अत्रि ने कहा था-हे राघवेन्द्र ! आपने बहुत ही अच्छा प्रश्न किया है । आप तो रघु के वंश की वृद्धि करने वाले हैं ।।६।। मेरे पिताजी ने 'पुष्कर'—इस नाम से परम प्रसिद्धि तीर्थ की रचना की थी । मर्यादा और यज्ञ पर्वत— इन दो नामों वाले परम विख्यात पर्वत हैं । उन दोनों पर्वतों के मध्य में ज्येष्ठ-मध्यम और कनिष्ठ ये तीस कुण्ड वर्तमान हैं । ७।।

तेषु गत्वा दशरथं पिण्डदानेन तर्पय ।
तीर्थानां प्रवरं तीर्थक्षेत्राणामपि चोत्तमम् ।
अवियोगा च सुरसा वापी रघुकुलोद्वह ।८
पितृन्सन्तर्पयामास अद्भिर्देवांश्च सर्वशः ।
स्नानावसाने रामेण मार्कण्डो मुनिपुङ्गव ।९
आगच्छञ्छिष्यसंयुक्तो दृष्टस्तत्रैव धीमता ।
गत्वा वै सम्मुखं तस्य प्रणिपत्य च सादरम् ।१०
पृष्टोऽवियोगदः कूपः कतमस्यां दिशि प्रभो ।
सुतो दशरथस्याहं रामो नाम जनैः स्मृतः ।११
सौभाग्यवापीतां द्रष्टुं मह प्राप्तोऽत्रशासनात् ।
तत्स्थानंतौ चैव कूपौ भगवान्प्रब्रवोतुमे ।१२
एवमुक्तश्च रामेणः प्रमार्कण्डेय स्युवाच ह ।
साधु राघव भद्रं ते सुकृतं भवता कृतम् ।१३
तीर्थयात्राप्रसंगेन यत्प्राप्तोऽसीह साम्प्रतम् ।
एह्यागच्छस्व पश्यस्व वापीं तामवियोगदाम् ।१४

उन तीनों कुण्डों में जाकर आप महाराज दशरथ को पिण्डदान देकर तप करिये । यह समस्त अन्य तीर्थों में भी श्रेष्ठतम तीर्थ हैं और सम्पूर्ण क्षेत्रों में उत्तम है । हे रघुकल उद्वहन करने वाले ! वहाँ पर एक अवियोगा सुरसा नाम वाली (बावड़ी) है ।६। वहाँ पर श्रीराम ने अपने पितृगण का तथा देवों का वहाँ के जल के द्वारा सब प्रकार से तर्पण किया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। जब स्नान कर लिया था उसके अन्त में श्रीराम ने मुनियों में श्रेष्ठ मार्कण्डेय मुनि को शिष्यों से संयुक्त वहाँ आते हुए देखा था। उनके सामने जाकर बहुत ही आदर के साथ धीमान् राम ने प्रणाम किया था। ।९-१०। श्री राम ने उन मुनि श्रेष्ठ से पूछा था— हे प्रभो ! वियोग के न देने वाला वह कूप यहाँ किस दिशा में है ? मैं महाराज दशरथ का पुत्र हूँ जिसको कि मनुष्यों के द्वारा 'राम'-यह नाम कहा जाता है।११। श्री राम ने कहा था कि मैं तो अत्रिमुनि की आज्ञा से उस सौभाग्यवाली मा दर्शन करने के लिए ही यहाँ पर आया हूँ। अब आप कृपाकर वह स्थान और वे दोनों कूप मुझे बतला दीजिए।१२। इस प्रकार से श्रीराम के द्वारा कहे जाने पर मार्कण्डेय मुनि ने इसका प्रत्युत्तर दिया था। मार्कण्डेयऋषि ने कहा हे राघव ! बहुत अच्छा किया, आपका कल्याण हो, आपने बड़ा सुकृत किया है।१३। आप तीर्थ यात्रा के प्रसङ्ग से ही यहाँ पर प्राप्त हुए हैं, तो आप मेरे साथ इस समय आइये, मैं आपको उस अवियोग प्रदान करने वाली वापी को दिखलाता हूँ उसे आप देख लीजिए। ४

अवियोगश्च सर्वैश्च कूपा एवात्र जायते।
आमुष्मिके चैहिके च जीवतोऽसि मृतस्य वा।१५
एतद्वाक्यं मुनीन्द्रस्य श्रुत्वा लक्ष्मणपूर्वजः।
सस्मार रामो राजानं तदा दशरथं नृप।१६
भरतं सः शत्रुघ्नं भ्रातॄनन्यांश्च नागरान्।
एवं चिन्तयतस्तस्य सन्ध्याकालो व्यजायत।१७
उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां मुनिभिः सह राघवः।
सुष्वाप तां निशां तत्र भ्रातृभार्यासमन्वितः।१८
विभावर्यवसाने तु स्वप्नान्ते रघुनन्दनः।
पित्रा मात्रा तथा चान्यैरयोध्यायां स्थितः किल।१९
विवाहमङ्गले वृते बहुभिर्बान्धवैः सह।
समासीनः ससार्योऽसावृषिभिः परिवारितः।२०
लक्ष्मणेनाप्येयमेव दृष्टोऽसौ सीतया तथा।
प्रभाते लुमनीतांतत्सर्वमेव प्रकीर्तितम्।२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषिभिश्च थेत्युक्त सत्यमेद्रघूत्तम ।
मृतस्य दर्शने श्राद्धं कार्यमावश्यकं स्मृतम् ।२२

यहाँ पर कूप ही ऐसा है कि इस लोक में और परलोक में जीवित अथवा मृत प्राणी सबके साथ वियोग नहीं होता है ।१५। महामुनीन्द्र मार्कण्डेय के इस वचन को लक्ष्मण के ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम ने सुनकर हे नृप ! उस समय है राम ने महाराज दशरथ का स्मरण किया था ।१६। इसके अतिरिक्त भरत-शत्रुघ्न, अन्य भाइ-दूसरे नगर के निवासी इन सबका ध्यान करते हुए श्रीराम को सन्ध्या काल हो गया था ।१७। मुनियों के साथ ही श्रीराघव ने पश्चिम संन्ध्या की पासना करके अपने छोटे भाई और भार्या के साथ उस रात्रि में वहाँ पर ही शयन किया था ।१८। जब रात्रि का अन्त हो गया था उसी समय में स्वप्नान्त में श्री रघुनन्दन अपने पिता माता तथा अन्यों के साथ अयोध्या में स्थित थे ।१९। वान्धवों के साथ विवाह-मङ्गल के होने पर यह अपनी भार्या के साथ ऋषियों से परिवृत होते हुए विद्यमान थे ।२०। इसी प्रकार से लक्ष्मण ने भी सीता के सहित देखा था । जब प्रभात काल हो गया तो उस समय में श्रीराम ने मुनियों से यह घटना कही थी ।२१। ऋषियों ने भी ठीक ऐसा ही है'- यह कहते हुए कहा-हे रघुत्तम ! यह बिल्कुल सत्य है । मृत पुरुष के दर्शन करने पर श्राद्ध करना परमाश्यक है ।२२।

स्नात्वा रामो योगवाप्यां मनींस्तानुपालयन् ।
तध्याह्नच्चलिते सूर्ये कालेकुतपकेतथा ।२३
आयाताऋषयः सर्वे येरामेणानुमन्त्रिताः ।
तानागतान्मुनीन्दृष्ट्वा वैदेही जनकात्मजा ।२४
रामान्तकं परित्यज्य व्रीडिताऽन्त्रसंस्थिता ।
विस्मयोत्फुल्लनयना चिन्तयानाचवेपती ।२५
ब्राह्मणा नेह नाजन्तिश्राद्धकाले ह्युपस्थिताः ।
रामेण भोजिता विप्राः स्मृत्युक्तेन यथाविधि ।२६
वेदिक्यश्च कृतास्सर्वाः सत्क्रियायास्समीरिताः ।
पुराणोक्तो विधिश्चैव वैश्वदेविकपूर्वकः ।२७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्तवत्सु च विप्रेषु दत्वा पिण्डान्यथाक्रमम् ।
प्रेषितेषु यथाशक्ति दत्वा तेषु च दक्षिणाम् ।२८

उस समय में श्रीराम ने योग वापी में स्नान करके उन मुनियों को आमन्त्रित किया था। मध्याह्न से सूर्य के चलित हो जाने पर और ऐसा समय उपस्थित हो जाने पर जब कि ताप कुछ कम हो गया था, वे सभी ऋषिगण वहाँ आकर उपस्थित हो गए थे जो श्रीराम के द्वारा निमंत्रित किए गए थे। उन समागत मुनियों को देखकर जनक की पुत्री वैदेही राम के समीपस्थ स्थान को त्यागकर लज्जित होती हुई दूसरे स्थान पर जाकर संस्थित हो गई थी, उस समय में जानकी के नेत्र विस्मय से उत्फुल्ल हो रहे थे और वह विस्मित सी होकर काँप रही थी ।।२ -२५।। श्राद्ध के समय पर उपस्थित होने वाले ब्राह्मण यहाँ नहीं जानते थे। श्रीराम ने उन समस्त ब्राह्मणों को स्मृतियों में कही हुई विधि से भोजन कराया था ।२७। वैदिकी अर्थात् वेद में बताई हुई सभी सत्क्रियाएँ भली-भाँति की गई थी। पुराणों में जो विधि-विधान श्राद्ध के विषय में बताया गया है वह भी वैश्वदेविक पूर्वक किया गया था। ७। समस्त विप्रों के भोजन कर लेने पर क्रम के अनुसार पिण्डों को देकर सबको यथाशक्ति दक्षिणा देकर उन सबकी वापिस विदाई दे दी थी ।२८।

गतेषु विप्रमुख्तेषु वियां रामोऽब्रवीदिदम् ।
किमर्थं सुभ्रु नष्टासि मुनीन्दृष्ट्वा त्विहागतान् ।२९
तत्सर्वं त्वमिद तत्वं कारणं वद मा चिरम् ।
भवितव्यं कारणेन तच्च गोप्यं नमे कुरु ।३०
शापितासि मम प्राणैर्लक्ष्मणस्य शुचिस्मिते ।
एव मुक्ता तदा भर्त्रा त्रपयाऽवाङ्मुखी स्थिता ।३१
विमुञ्चन्ती साऽश्रुपातं राघवं वाक्यमब्रवीत् ।
शृणुत्वं नाथ यद्दृष्टमाश्चर्यमिह यादृशम् ।३२
राम त्वया चिन्त्यमानो राजेन्द्रिस्त्विह चागतः ।
सर्वाभरणसयुक्तौ द्वौ चान्यौ च तथाविधौ ।३३
द्विजानां देहसंयुक्त स्त्रयस्ते रघुनन्दन ।
पितरस्तु मया दृष्टा ब्राह्मणाङ्गेषु राघव ।३४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्ट्वा त्रपान्विता चाह्यपत्रान्ता तवान्तिकात् ।
त्वया वै भोजिता विप्रा कृतं श्राद्धं यथाविधि ।३५

जब समस्त विप्रों ने भोजन कर लिया था तो इसके उपरान्त भगवान श्रीराम ने अपनी प्रिया वैदेही से कहा था-हे सुभ्रु ! यहाँ पर आये हुए इन मुनियों को देखकर आप यहाँ अलग क्यों चली गयीं थी ? ।२.। आप इसका सम्पूर्ण तत्व तथा कारण हमको बतलाइए और इसके बताने में विलम्ब न करो। इसका कोई न कोई कारण तो अवश्य ही होना चाहिए। अब उस कारण को मुझसे मत छिपाओ ।३०।हे शुचिस्मित वाली ! आपको मेरी तथा लक्ष्मण की शपथ है अगर तुम इसे मुझसे छिपाती हो। इस तरह से अपने स्वामी के द्वारा जब जानकी से कहा गया तो वह लज्जा से नीचे की ओर मुख स्थित हो गई थी ।३१। जानकी अपने नेत्रों से आँसुओं का पात करती हुई श्रीराम से यह वचन बोली— हे नाथ ! मैंने यहाँ पर जो भी, जिस प्रकार आश्चर्य देखा था उसका आप श्रवण कीजिए ।३२। हे राम ! आपके दारा ध्यान किए जाने पर राजेन्द्र यहाँ पर आये थे। समस्त आभरणों से सुमन्वित उसी प्रकार के दो अन्य पुरुष भी थे ।३३। हे रघुनन्दन ! द्विजों के देह से संयुक्त वे तीन पितर ब्राह्मणों के अङ्गों में हे राघव ! मैंने देखे थे ।३४।उनको देखकर लज्जा से युक्त होकर आपके समीप से में अलग चली गई थी। आपने उन ब्राह्मणों को भोजन करा दिया है और विधि के अनुसार पूरा श्राद्ध कर लिया है ।३५।

वल्कलाजिनसवीता कथ राज्ञःपुरसरा ।
भवामि रिपुवीरघ्न सत्यमेतद्रुदाहृतम् ।३६
तच्छ्रुत्वाराघवः प्रीतः प्रियां प्रियवादिनीम् ।
अङ्कमानीयमुदृढ़ परिष्वज्यच सादरम् ।३७
भुक्तौ भोज्यं तदा वीरौ पश्चाद्भुक्ता च जानकी ।
एवं स्थितो तदा सा च तां रात्रि तत्र राघवौ ।३८
उदिते च सहस्रांशो गमन य मनो दक्षुः ।
प्रत्यङ्मुख गतः क्रोशं ज्येष्ठं यावच्च पुष्करम् ३९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सुनकर राघवेन्दु अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और उस परम प्रिय भाषण करने वाली अपनी प्रिया को अपनी गोद मे बिठाकर आदर और दृढ़ता के साथ उसका समालिङ्गन किया था ।३६। उसी समय उन दोनों वीरों ने भोज्य पदार्थों का भोजन किया था और इनके भोजन कर लेने के पश्चात जानकी ने भी भोजन किया था । इस प्रकार से वहाँ पर उन दोनों राम-लक्ष्मण ने तथा जानकी ने उस रात्रि में विश्राम किया ।।३७-३८।। जब प्रातःकाल में सूर्य उदित हुए थे तो उस समय में इनसे गमन करने का मन में विचार किया था । पश्चिम की ओर मुख करके एक कोश पर्यन्त गए थे जहाँ तक कि ज्येष्ठ पुष्कर था -३९।

।। राम का अगस्त्याश्रम गमन ।।

ततो देवाः प्रयातास्तैर्विमानैर्बहुभिस्तदा ।
नामोऽप्यनुजगामाशु कुम्भयोनेस्तपोवनम् ।१
उक्तं भगवता येन भूयोऽप्यागमनं कृथाः ।
पूर्वमेव सभायां च यो मां द्रष्टुं समागतः ।२
तदहं देवतादेशात्तत्कार्यार्थे महामुनिम् ।
पश्यामि त मुनिं गत्वा देवदानवपूजितम् ।३
दृष्ट्वा च देवान्सम्प्राप्तानगस्त्यो भगवानृषिः ।
अर्घ्यमादाय सुप्रीतः सर्वांस्तानभ्यपूजयत् ।४
ते तु गृहं ततः पूजां सम्भाष्यच महामुनिम् ।
जग्मुस्ते त्रिदशा हृष्टा नाकपृष्ठं सहानुगाः ।५
सुतो दशरथस्याहं भवन्तमभिवादुतुम् ।
आगतो वै मुनिश्रेष्ठ सौम्येनेक्षस्व चक्षषा ।६
निर्धूतपापस्त्वां दृष्ट्वा भवामीह न सशयः ।
एतावदुक्त्वा स मुनिमभिवाद्य पुनः पुनः ।७

महर्षि पुलस्त्य ने कहा-इसके अनन्तर वे समस्त देवगण उसी समय में उन बहुत से विमानों के द्वारा रवाना हो गए थे । श्रीराम भी उनके पीछे ही शीघ्र कुम्भयोनि ऋषि के तपोवन को चल दिए थे ।।५।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुम्भयोनि भगवान ने मुझसे कहा था कि आप फिर यहाँ आने की कृपा करें। जो पूर्व ही सभा में मुझे देखने के लिए आये थे ।२। सो मैं देवता के आदेश से उसके कार्य के लिए उस महामुनि के समीप में जाकर जो कि देवों और दानवों दोनों से परम पूजित हैं, उस मुनिवर का दर्शन करूँगा ।३। अगस्त्य भगवान ऋषि ने उन वहाँ प्राप्त होने वाले देवों का दर्शन करके अर्घ्य पात्र हाथ में उठाकर अत्यन्त प्रसन्न एवम् प्रीति संयुत होते हुए उन सबकी पूजा की थी ।४। उन सबने भी अगस्त्य द्वारा की हुई पूजा को स्वीकार करके महामुनि से सम्भाषण करके वे समस्त देवगण अपने अग्रगमन करने वालों के साथ नाक पृष्ठ को चले गए थे ।५। श्रीराम ने निवेदन किया था- हे मुनि श्रेष्ठ ! मैं महाराज दशरथ का पुत्र हूँ इस समय आपका अभिवादन करने के लिए ही यहाँ पर उपस्थित हुआ हूँ। अब आप मुझे अपनी सौम्य दृष्टि से देखने कीं कृपा करें। मैं इस समय आपका परम पावन दर्शन प्राप्त करके अपने सम्पूर्ण पापों को निर्धूत कर देने वाला हो गया हूँ अर्थात मेरे सभी पाप नष्ट हो गए है इसमें तनिक भी संशय नहीं है। पुलस्त्य मुनि ने कहा—इतना भर कहकर श्रीराम ने मुनि का बारम्बार अभिवादन किया था ।७।

कुशलं भृत्यवर्गस्य मृगाणां तनस्य च ।
भगवद्दर्शनाकांक्षी शूद्रं हत्वा त्विहागतः ।८
स्वागत ते रघुश्रेष्ठ जगद्वन्द्य सनातन ।
दर्शनात्तव कांकुत्स्थं पूतोऽह मुनिभिः सह ।९
त्वत्कृते रघुशार्दूल गृहाणार्घं महाद्युते ।
स्वागत नरशार्दूल दिष्ट्या प्राप्तोऽसि शत्रुहन् ।१०
इदं चाभरणं सौम्य सुकृतं विश्वकर्मणा ।
दिव्यं दिव्येन वपुषा दीप्यमानं स्वतेजसा ।११
प्रतिगृह्णीष्व राजेन्द्र मत्क्रियं कुरु राघव ।
लब्धस्य हि पुनर्दाने सुमहत्फलमुच्यते ।१२
त्वं हि शक्तिः परित्रातुं सेन्द्रानपि सुरोत्तमान् ।
तस्मात्प्रदास्ये विधिवत्प्रतीच्छस्व नरर्षभ ।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथोवाच महाबाहुरिक्ष्वाकूणां महारथः।
कृताञ्जलिर्मुनिश्रेष्ठं स्व च धर्ममनुस्मरन् ॥१४

श्रीराम ने अगस्त्य मुनि से पूछा था—कहिए, आपके भृत्य—वर्ग वन के मृगगण और आपके पुत्र का कुशल तो है ? इसके पश्चात् उन्होंने कहा था कि शूद्र का हनन करके आपके पवित्र दर्शन की आकाक्षा रखने वाला मैं यहां पर आया हूँ ।८। अगस्त्य ने कहा हे सम्पूर्ण जगत् के द्वारा वन्दना करने योग्य ! हे सदा सर्वदा से चले आने वाले ! हे रघुश्रेष्ठ ! आपका स्वागत है । हे काकुत्स्थ ! आज जापके दर्शन प्राप्त कर मुनिगण से सहित मैं पत हो गया हूँ।९।हे रघु के वश में शार्दूल के समान ! आप तो महान् द्युति से सम्पन्न हैं । आपके लिए जो यह अर्घ्य समर्पित किया जी रहा है, उसे आप अङ्गीकार कीजिएगा । हे नर षार्दूल! आपका स्वागत है । आप तो शत्रुओं के हनन करने वाले हैं । आज बहत ही प्रसन्नता का बात है कि आपने यहां पर पदार्पण किया है।१०। हे सौम्य! यह एक आभरण है जिसको विश्वकर्मा ने निर्मित किया है। यह दिव्य वपुमे अपने तेज के द्वारा दीप्तिमान होकर दिव्य है ।११। हे राजेन्द्र ! आप इसको प्रतिग्रहण करें और मेरा प्रिय करने का अनुग्रह कीजिए । हे राघव । जो वस्तु लब्ध हुई हो उसका फिर दानकर देनेमें महान् फल की प्राप्ति होती है।१२। हे नरर्षभ ! आप तो इन्द्र के सहित समस्त सुरश्रेष्ठो को परित्राण करने के लिए समर्थ हैं । इस कारण से मैं इसको विधी के साथ आपको दूंगा आप इसको स्वीकार कीजिए ॥१३॥ पुलस्त्य मुनि ने कहा-इसके उपरान्त महान् बाहुओं वाले और इक्ष्वाकुओं में महारथी भगवान श्रीराम हाथों को जोड़ते हुए अपने धर्म का अनुसरण करते हुए उन मुनियों में श्रेष्ठ अगस्त्य से बाले—श्रीराम ने कहा-॥१४॥

प्रतिग्रहो वै भगवस्तव मेऽत्र विगर्हितः।
क्षत्रियेण कथं विप्र प्रतिग्राह्यं विजानता ॥१५
ब्राह्मणन तु वदद्दत्तं तवं वक्तुमर्हसि ।
सपुत्रो गृहवानस्मि समर्थोऽस्मि महामुने ॥१६
आपदा च न चाक्रान्तः कथं ग्राह्यः प्रतिग्रहः।
भार्या मे सुचिर नष्टा न चान्या मम विद्युते ॥१७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवलं दोषभागी च भवामीह न संशयः ।
कष्टां चैव दशांप्राप्यत्रत्रियोऽपि प्रतिग्रहम् ॥१८
न च प्रतिग्रहे दोपो गृहोतपार्थिवेनृंप ।
भवान्वैतारण शक्तस्त्रैलोक्यस्तापि राघव ॥१९
तारय ब्राह्मणं राम विशेषेण तपस्विनम् ।
तस्मात्प्रदास्य विधिवत्प्रीतीच्छस्व नराधिप ॥२०

हे भगवन ! आपके द्वारा दिया हुआ यह प्रतिग्रह यहाँ पर मेरे लिए स्वीकार करना तो एक निंदित कार्य है । हे विप्र! मैं तो क्षत्रिय हूँ मुझे इसका भली-भांति ज्ञान हैं तो तो फिर आपके द्वारा यह प्रतिग्रह प्रकार से ग्रहण कर लेना उचित होगा?॥१ ॥ ब्राह्मण के द्वारा जो दिया जावे वह क्या मुझे लेना ठीक है ? इसे तो आप ही वतानेके योग्य हैं। मैं पुत्र वाला हूं गृहस्थ हूँ और हे महामुने! सभी प्रकार से समर्थ भी हूँ।१६। मैं किसी प्रकार की आपत्ति से भी इस समय में आक्रान्त नहीं हो रहा हूँ तो फिर आपका प्रदान किया हुआ यह प्रतिग्रह मुझे किस तरह ग्रहण कर लेना चाहिए ? मेरी भार्या तो बहुत समय से नष्ट हो गई हैं अन्य कोई भी भार्या मेरी इस समय में नहीं है।१७।मैं तो इसको ग्रहण करके केवल दोष का ही भागी वन जाऊँगा इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है। यदि किसी कष्टों से परिपूर्ण दशा को प्राप्त करके क्षत्रिय भी प्रतिग्रह को ग्रहण करे तो वह कर सकता है ॥१८॥ कष्टोंसे दुर्दशाशापन्न ऐसा करभी लेता है तो उसे कोई दोष नहीं लगता है—ऐसा महर्षि मनु ने वतलाया है । वृद्ध माता;पिता, सती-साध्वी भार्या और शिशु सुत हो तो सैकड़ों अकार्य करके भी उनका भरण-पोषण करना चाहिए-ऐसा भी मनने कहा है । अतएव हे विप्रर्षे ! यह आपका प्रदान किया हुआ प्रतिग्रह मैं नहीं लेना चाहता हूँ । सुरपूजित ! आपको मेरे इस निषेधकर देने पर किसी भी प्रकार का कोप नहीं करना चाहिए । अगस्त्य मुनि ने कहा-हे नृप ! जो राजा है उनके द्वारा प्रतिग्रह के ग्रहण करने पर भी कोई दोष नहीं होता है । आप तो हे राघव ! इस त्रिलोकी के भी तारण कर देनेमें पूर्ण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
समर्थ हैं ॥१९॥ हे राम ! इस ब्राह्मण को और विशेष करके तपस्वी ब्राह्मण का तारण कीजिए, हे नराधिक ! इसी कारण से मैं आपको आपके लिये समर्पित करता हूँ। आप इसको विधिपूर्वक अङ्गीकार कीजिए ॥२०॥

क्षत्रियेण कथं विप्र प्रतिग्राह्यं विजानता ।
ब्राह्मणेन यथा दत्तं तन्म त्व वक्तुमर्हसि ॥२१
ततो रामः प्रजग्राह मुनेर्हस्तान्महात्मनः ।
दिव्यमाभरणं चित्रं प्रदीप्तमिव भास्करम् ॥२२
प्रतिगृह्य ततोऽगस्त्याद्राघव परवीरहा ।
निरीक्ष्य सुचिरं कालं विचार्य च पुनः पुनः ॥२३
मौक्तिकानि विचित्राणि धात्रींफलसमानि च ।
जाम्बूनदनिवद्धानि वज्रं विद्रुमनीलकैः ॥२४
पद्मरागैः सगोमेद्यैर्वैडूर्यैः पुष्परागकैः ।
सुनिबद्धं सुविभक्तं सुकृत विश्वकर्मणा ॥२५
दृष्ट्वा प्रीतिसमायुक्तो भूयश्चेद व्यचिन्तयत् ।
नेदृशानि च रत्नानि मया दृष्टानि कानिचित् ॥२६
अत्यद्भतमिदं ब्रह्मान्नप्राप्यं च महीक्षिताम् ।
कथं भगवता प्राप्तं कुतो वा केन निर्मितम् ॥२७
कुतूहलवशाच्चैव पृच्छामि त्वां महामते ।
करतले स्थिते रत्ने करमध्यं प्रकाशते ॥२८

श्रीराम ने कहा—यह सभी कुछ का ज्ञान रखते हुए क्षत्रिय को हे विप्र ! यह प्रतिग्रह किस प्रकार से ग्रहण करना चाहिए जो कि एक ब्राह्मण के द्वारा दिया जा रहा है। आप ही इस पिषय पर व्यवस्था देने के लिए पूर्णतया इस समय में योग्य होते हैं ॥२१॥ पुलस्त्य मुनि ने कहा-जब अपने उद्धार करने का अत्यधिक अनुरोध किया तो फिर उस महान् आत्मा वाले मुनिके हाथसे उस प्रतिग्रह को राम ने ग्रहणकर लिया था जोकि एक ऐसा दिव्य आभरण था कि बहुत विचित्र था और ऐसा वह देदीप्यमान होरहा था जैसे सूर्य ही हो।२२। शत्रु दल के हनन करने वाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराम ने इसके अनन्तर उसे ग्रहण करके अगस्त्य से अधिक समय तक देखा और बार-बार विचार किया था ॥२३ इस आभरण में आँवले के फलों के समान अति विचित्र मौक्तिकहैं। जाम्बूनद के सदृश हीरा-विद्रूम और नीलम रत्नोंसे यह निबद्ध हैं।२४।इसमें पद्मराग मणियाँ गोमेध-वैडूर्य मणियां और पुष्पराग मजियां भी बहुत सुन्दरता के साथ निबद्ध है जो सुस्पष्ट तथा विभक्त हैं । विश्वकर्मा ने इसे बहुतही अच्छी तरह से निर्मित किया है।२५। परम प्रीतिसे समन्वित होकर पुन' श्रीराम ने चिन्तन किया था कि मैंने अभीतक इस तरह के कोई भी रत्न पहिले नही देखे थे।२६। श्रीराम ने कहा-यह आभरण तो अत्यन्त ही अद्भुत है और राजाओं को भी प्राप्त नहीं होने के योग्य है । आपने इसको किस प्रकार से प्राप्त कर लिया है और कहां से प्राप्त किया है तथा इसका निर्माण किया किया है ॥२७॥ हे महामते ! मुझे हृदय में बड़ा भारी कोतूहल हो रहा है । इसी से मैं आपके यह पूछ रहा हूँ । करतल पर रत्न स्थित हैं और करके मध्य में प्रकाश कर रहे हैं ॥२८॥

शृणु राम पुरावृत्तं पुरात्रेतायुगेमहत् ।
द्वापरे समनुप्राप्ते वने यद्दृष्टवानहम् ॥२६
आश्चर्यं सुमहाबहो निबोध रघुनन्दन ।
पुरा त्रेतायुगे ह्यासीदरण्यं बहुविस्तरम् ॥३०
समन्ताद्योजनशतं मृगाव्याघ्रविवर्जितम् ।
तस्मिन्निष्पुरुषेऽरण्पे चिकीर्षुस्तप उत्तमम् ॥३१
अहमाक्रमितुं सौम्य तदरण्यमुपागतः ।
तस्यारण्यस्य मध्यं तु युक्तं मूलफलैः सदा ॥३२
शाकैर्बहुविधाकारैर्नानारूपै सुकाननैः ।
तस्यारण्यस्य मध्ये तु पञ्चयोजनभातम् ।३३
हंसकः रण्डवाकीर्णं चकवाओपशोभितम् ।
तत्राश्चर्यं मयादृष्टं सरः परमशोभितम् ॥३४

अगस्त्य मुनि ने कहा—हे राम ! अब आप एक पुरावृत्त सुना जो पहिले त्रेता युग में घटित हुआ था और महाद्भुत था । द्वापर युग के समाप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगस्त्य मुनि ने कहा हे राम ! अब आर एक पुरावृत्त सुनो जो पहिले त्रेता युग में घटित हुआ था और महान् था। द्वापर युग के समाप्त होने पर मैंने जिसको देखा था ॥२६॥ हे महा बाहुओं वाले रघुनन्दन ! इस आश्चर्य को आप समझिये। पहिले त्रेता युग में एक स्वधिक विस्तार वाला अरण्य था।३०। चारों ओर उसका योजन का विस्तार था और वह मृग तथा व्याघ्र से रहित था। उस निर्जन अरण्य में उत्तम तपश्चर्या करने की इच्छा रखने वाले मैंने वहां जाकर तप करने को उस अरण्य में अपनी उपस्थित हे सौम्य! की थी। उस अरण्य का जो मध्यभाग था वह सर्वदा मूल और फलोंसे समन्वित रहा करता था।३१-३ ।बहुतसे आकार प्रकार वाले तथा अनेक रूप वाले जंगली शाकों के मध्य में पांच योजन विस्तार वाला उस अरण्य का भाग था।३३।हस-कारण्डवोंसे आकीर्ण और चक्रवाकों से शोभित वह अरण्य का भाग था। उसमें मैंने यह एक आश्चय देखा था कि एक परम शोभित सरोवर था ।। ३४ ।।

प्रभाते पुनरुत्थाय सरस्तदुपचक्रमे ।
अथापश्ययं शवमहमस्पृजरसं क्वचित् । ३५
तिष्ठन्ते परमा लक्ष्म्या सरसो नातिदूरतः ।
तदर्थं चिन्तयानोऽहं मुहूर्तमिव राघव ॥३६
अस्य तीरे न वै प्राणी को वाप्येष सुरषभः ।
मुनिर्वा पार्थिवो वाषि क्व मुनिः पार्थिवोऽपि वा ॥३७
अथवः पार्थिवसुतस्तस्यैवं कृतः ।
अतीतेऽहनि रात्रौ वा प्रातर्वापि मृतो यदि ॥३८
अवश्यं तु मया ज्ञेया सरसोऽस्य विनिष्क्रया ।
अथापश्य मुहूर्त्तातु दिव्यमद्भुतस्यदर्शनम् ।
विमानं परमोदारं हसयुक्तं मनोजवम् ॥४०
परस्तत्र सहस्रं तु विमानेऽसरसां नृप ।
गन्धर्वश्चैव तत्संख्या रमयन्ति नरम् ॥४१

प्रातःकाल में फिर उठकर में उस सर के समीप में पहूंच था । इसके अनन्तर मैंने वहांपर एक शव देखा था जिसमें जरा अवस्था अस्पष्टथी और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्यन्त श्री से समन्वित था और उस सरोवर के निकट ही में वह स्थित था। हे राघव ! उसके विषय में मुहूर्त मात्र पर्यन्त ध्यान करता रहा था। ॥३५-३६॥ मैंने विचार किया था कि इस सरोवर के तट पर कोई भी प्राणी नहीं है फिर यह कोई श्रेष्ठ देव है अथवा कोई पार्थित है। मुनि अथवा पार्थिव भी कहाँ से यहाँ पर आया है ॥३७॥ अथवा यह किसी राजा का पुत्र है किन्तु उसका भी इस तरह यहां आना संभव कैसे हुआ है यह गत दिन में, रात्रि में या प्रातःकाल में यदि मृत हुआ है ॥३८॥ मुझे तो अवश्य ही इस सर की विशेष निष्क्रियां जननी चाहिए। हे रघूत्तम ! जब तक मैं वहां पर स्थित रहा था ॥३९॥ इसके अनन्तर मैंने मुहूर्त मात्र में ही एक परम परम अद्भुत दिखलाई देने वाला परम उदार अर्थात् लम्बा-चौड़ा,हंसोंसे युक्त और मनके समान वेग वाला विमान देखा था ॥४०॥ हे नृप ! उस विमान के आगे सहस्र अप्सरायें थी जो कि विमान में स्थित थीं और इतनी संख्या गन्धर्वों की भी थी जो कि श्रेष्ठ नर को रमण कराते हैं ॥४१॥

गायन्ति दिव्यगयानि वादयन्ति तथापरे ।
अथापश्यं नर तस्माद्विमानादवरुह्य तु ॥४२
शवमांस भक्षयन्त स्नात्वा रघकुलोद्वह ।
ततो भुक्त्या यथाकामं समांस बहुपीवरम् ॥४३
अवतीर्य सरः शीघ्रमारुरीह दिव पुनः ।
तमहं देवसङ्काय श्रिया परमयान्वितम् ॥४४
भोभोस्वर्गिन्महाभाग पृच्छामि त्वां कथं त्विदम् ।
जुगुप्सितस्तवाहारो गतिश्चेयं तवोत्तमा ॥४५
शृणुष्वाद्य यथावृत्त ममेदं सुखदुः खजम् ।
कामो दुरति क्रम्यः शृणु यत्पृच्छसे द्विज ॥४६
पुरा वैदर्भको राजा पिता मे महायशाः ।
वासुदेव इति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु धार्मिषु धार्मिकः ॥४७
तस्य पुत्रद्वयं ब्रह्मन्द्वाभ्तां स्त्रीभ्यामजायत ।
अहं श्वेत ख्यातो यवीयान्सुरथोऽभवत ॥४८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे अति दिव्य गीतों का गायन कर रहे थे तथा दूसरे लोग वादन कर रहे थे इसके पश्चात् मैंने उस विमान से अवरोहण करने वाले नर को देखा था ।४२। हे रघुकुल को उद्वहन करने वाले ! उस मनुष्य ने वहाँ स्नान किया था और उस शव के मांस का भक्षण किया था । माँस से युक्त और अत्यन्त मोटे-ताजे उसको इच्छापूर्वक खाकर एवम् सरोवर में अवतरण करके पुनः वह शीघ्र ही दिवलोक में आरोहण करके चला गया था । उस समय में परमोत्तम श्री से संयुक्त देवता के समान आपसे हे स्वर्गिन ! हे महाभाग ! मैं कैसे यह पूछूँ ? आपका यह आहार ता कितना गर्हित है और आपकी यह गति कैसी उत्तम है।।४२।४३।४४।।४५ श्वेत ने कहा—आज आप श्रवण करो । जिस प्रकार से मुझे यह सुख और दुःख से उत्पन्न होने वाला हुआ है । द्विज ! यह काम बहुत ही दुःख से अतिक्रमण करने के योग्य होता है । आप जो मुझसे पूछ रहे हैं उसे अब सुनो ।४६। पहिले समय में मेरा पितामह वैदर्भिक राजा महान् यश वाला था । वह वसुदेव इस नाम से तीनों लोकों में परम धार्मिक ख्यात हुआ था ।।४७।। हे ब्रह्मन् ! उसके दो स्त्रियों से पुत्र हुए थे । मैं तो श्वेत इस नामसे प्रसिद्ध हुआ और छोटा सुरथ नाम वाला हुआथा।४८

पितर्युपरते तस्मिन्पौरा मामभ्यषेचयन् ।
तत्राहं कारयन्राज्यं धर्मे चासं समाहितः ।।४९
एव वर्षसहस्राणि बहूनि समुपाव्रजन् ।
मम राज्य कारयतः परिपालयतः प्रजाः ।।५०
सोऽहं निमित्ते कस्मिश्चिद्वैराग्येण द्विजोत्तम ।
मरणं हृदये कृत्वा तपोवनमुपागमम् ।।५१
दशवर्षसहस्राणि तपस्तप्त्वता महावने ।
शुभं तु भगनं प्राप्तो ब्रह्मलोकमनामयम् ।।५२
स्वर्गस्थमपि मां ब्रह्मन्क्षुत्पिपासे द्विजोत्तम ।
अबाधेतां भृशं चाहभभव व्यथितेन्द्रियः ।।५३
ततस्त्रिभुवनश्रेष्ठमवोच वै पितामहम् ।
भगवन्स्वर्गलोकोऽय क्षुत्पिपासाविवर्जितः ।।५४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कस्येयं कर्मणः पक्तिः क्षुत्पिासे यतो हि मे ।
आहारः कश्चमे देव ब्रूहित्वं श्रीपितामह ।।५५

मेरे पिताजी के मृत्युगत हो जाने पर पुरवासियों ने मेरा ही उनके राज्यासन पर अभिषेक कर दिया था। यहांपर मैं राज्यका शासन चलाना हुआ परम समाहित होकर धर्म में सस्थित रहता था ।४६। इसी प्रकार से शासन चलाते हुए वहुत सहस्र वर्ष हो गये थे और में बरावर राज्यका कार्य कर रहा था तथा भली विधि प्रजा का पालन भी करता था ।५०। वही मैं किसी निमित्त में वैराग्यवात् होगया था। है द्विजों में परम श्रेष्ठ! मैंने वैराम से ही अपने चिन्ता में मरण का निश्चय कर लिया था औरमैं फिर इसी तपोवन में आ गया था ।।५१।। इस महावन में दस सहस्र वर्ष पर्यन्त घोर तपश्चर्या करके मैंने परम शुभ भवन अनामय ब्रह्मलोक को प्राप्त कर लिया था ।।५२।। हे द्विजोत्तम ! हे ब्रह्मन ! स्वर्ग में स्थित रहने वाले भी मुझको भूख और प्यास बहुत ही अधिक सताया करता था और मैं वहां पर भी व्यथित इन्द्रियों वाला हो गया था ।।५३।। इसके अनन्तर मैंने त्रिभुवन में परमाति परम श्रेष्ठ पितामह से कहा था—हे भगवन! यह तो स्वर्गलोक हैं जो कि क्षुधा तथा तृष्णासे रहित हुआ करता है ।५४। मेरे किस काम का परिपाक है जो कि क्षुधा और पिपासा मुझे यहाँ पर रहते हुए भी सता रही है ? हे श्री पितामह! हे देव! अब मेरा क्या होगा—इसे आप मुझे बतला देवें ।।५५।।

ततः पितामहः सम्यक्चिरं ध्यात्वा महामुने ।
मामुवाच ततो वाक्यं भोज्यं स्वदेहजम् ।।५६
ऋते स्वानि तु मांसानि भक्षय त्व तुं नित्यशः ।
स्वशरीरं त्वया पुष्टं कुर्वता तपउत्तमम् ।।५७
नादत्तं जायते तात श्वेत पश्व महीतले ।
आग्रहाद्भिक्षणा भिक्षापि प्राणिने पुरा ।।५८
स त्वं प्रपुष्टमहारैः स्वशरीरमनुत्तमम् ।
भक्षयस्व च राजेन्द्र सा ते तृप्तिर्भविष्यति ।।५९
एवमुक्तस्ततो देवं ब्राह्मणमहमुक्तवान् ।
भक्षिते च स्वके देहे पुनरन्यन्न मे विभो ।।६०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षधानिवरणे नैव देहस्यास्य विनोदनम् ।
खादामि ह्यक्षयं देव प्रियं मे न हि जायते ।।६१
ततोऽब्रीत्पुनर्ब्रह्मा तव देहोऽक्षयः कृतः ।
दिने दिने ते पुष्टात्मा: शवः श्वेत भविष्यति ।।
यावद्वर्षशतं स्वामांसं खाद भोतृप ।
यदागच्छति चागस्त्य: श्वेत रण्ये महातपा: ।।६३

हे महामुने ! यब तो भली-मांति चिरकाल पर्यन्त पितामह ने ध्यान किया था और मुझसे कहा था कि अपने देह से उत्पन्न होने वाला तुम्हारा कुछ भी भोज्य नहीं है।५६। अपने मांसों को छोड़कर आप नित्य ही भक्षण करें। आपने अपने इस शरीर को परमोत्तम तप करके ही उसके प्रभावसे अपने शरीर को परिपुष्ट किया है।५७।हे श्वेत ! हे तात ! तुम देखलो इस महीतल में जो दिया नहीं गया है वह नहीं होता हैं। तुमने वड़े आग्रह से भिक्षा मांगते हुए भिखारी को भी पहिले किसो प्राणी के लिए भिक्षा नहीं दी थी।५८।ऐसे आपने उत्तम आहारों के द्वारा केवल अपने ही इस अधर्म शरीर को विशेष रूप से परिपुष्ट किया था। राजेन्द्र ! अब आप उस अपने ही शरीर का भक्षण करो। इसी से तुम्हारी वह तृप्ति होगी ।।५६।। ईस प्रकार से ब्रह्मा के द्वारा कहै जाने पर फिर देव ब्रह्माजी से मैंने कहा था-हे विभो ! अपने देह के खो जाने पर फिर कुछ अशन मेरे लिए खाने का पदार्थ नहीं रहेगा ? ।६०।क्षुधा के निवारण करने के कार्य में इस शरीर का ओदन के बिना नहीं होता है। दे देव! मुझे तो कुछ ऐसा अक्षय पदार्थ वताइये जिसको मैं खा लिया करूँ। आपने जो यह वताया है यह तो मुझे प्रिय भक्ष्य नहीं लगता है।६१ ऐसा मेरे द्वारा कहे जाने पर ब्रह्माजी ने फिर मुझसे कहा था कि हमने तुम्हारा देहही अक्षय बना दिया है अर्थात् उसे ऐसा कर दिया है कि वह कभी समाप्त ही नहीं होगा हे श्वेत! आये दिन तेरे शरीर का शव पुष्ट स्वरूप वाला हो जायगा।६२। हे नृप ! जब तक एक सौ वर्ष पूर्ण होगे तब तक तुम अपने ही मांस का भक्षण करो। महान् तपस्वी अगस्त्य जिस समय में इस श्वेतारण्यमें आवें तब तक तुम इसी प्रकार करते रहो ।।६३ ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवानतिदुर्धस्तदा कृच्छ्रामिद्विमोक्ष्यसे ।
स हि तारयितुं शक्तः सेन्द्रानपि सुरासुरान् ।।६४
त मुनिं कृच्छ्रसन्तप्तश्चिन्तयामि दिवानिशम् ।
कदा वै दर्शनं मह्यं समुनिर्दास्यतेवने ।।६५
एवं मे चिन्तयानस्य गतंवषशतन्त्विहि ।
सोऽगस्त्यो हि गतिर्ब्रह्मन्मनिर्मे भविताध्र् वम् ।।६६
न गतिर्भविता महयं कुम्ययोनिमृतेद्विजम् ।
श्रुत्वेत्थं भाषितं राम दृष्वाहारं च कुत्सितम् ।।६७
कृपयापरया युक्तस्तं नृप स्वर्गगामिनम् ।
करोम्यहं सुधा सुधाभोज्यं नाशयामि च कुत्सितम् ।।६८
चिन्तयन्नित्यवोच तमगस्त्यः किं करिष्यति
अहमेतत्कुसितं तेनशयामि महागते ।।६९
ईप्सितं प्रार्थयस्वास्मान्मनः प्रीतिकरं परम् ।
सस्वर्गी मां ततः प्राह कथ ब्रह्मवचोऽन्यथा ।।७०

भगवान् अगस्त्य अत्यन्त दुर्धर्ष हैं। उसी समय में तुम इस कष्ट से मुक्त होओगे। वह ही इन्द्र के सहित समस्त सुर असुरों को तारने में समर्थ हैं ।।६४।। तब श्वेत ने कहा कि मैं तपस्या के कष्ट से संतप्त होने वाले उन्हीं मुनिवर का रात-दिन चिन्तन किया करता हूँ कि किस समय में मुझे वह महामुनि इस वन में दर्शन देंगे ।६५। इसी प्रकार से चिन्तित करते हुए मुझे एक सौ वर्ष यहाँ पर व्यतीत होगये हैं। हे ब्रह्मन् ! वह अगस्त्य मुनिवर मेरी गति निश्चित ही होंगे अर्थात् मेरा इस शव मांस के भक्षण के कष्ट से उद्धार करने वाले अवश्य ही होवेंगे ।६६। अन्य कोई भी कुम्भयोनि द्विज के विना मेरा उद्धार करनेवाला नहीं होगा। हे राम! उसके इस प्रकार से परम कुत्सित आहार को देखकर और उसके इस भाषण को श्रवण कर हे नृप! परम कृपा से युक्त होता हुआ मैं उस स्वर्ग में गमन करने वालेको सुधाका भोजन करने वाला करूँगा तथा उसके इस तिन्दित भोजन करने का नाश कर दूँ। इस तरह से चिन्तन करते हुए उसने कहा था-अगस्त्य क्या करेगा? हे महीपते! मैं तेरे इस कुत्सित भोजन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को नष्ट कर देता हूँ।६७-६९। तुम अपने अभीष्ट की प्रार्थना करो, हमारा मन परम प्रीति करने वाला है। ऐसा कहने पर स्वर्ग में गमन करने वाले ने फिर मुझसे कहा था कि ब्रह्माका कहा हुआ वचन अन्यथा अर्थात् मिथ्या किस प्रकार से होगा ? ।।७०।।

कर्तुं मुनेमया शक्यं न चान्यस्तारयिष्यति ।
ऋते वै कुम्भयोनिं त मैत्रावरुणसम्भवम् ।।७१
अपृष्टोऽपि मया ब्रह्मन्नेवमूचे पितामहः ।
एवं ब्रुवाणं तं श्वेतमुक्तवानहमस्मि सः ।।७२
आगतस्तव भाग्येव दृष्टोऽहं नात्र संशयः ।
ततः स्वर्गी समां ज्ञात्वा दण्डवत्पतितो भुवि ।।७३
तमुत्थाय ततो राम ब्रवं किं ते करोम्यहम् ।
आहारात्कुत्सिताद्ब्रह्मनस्तारयस्वाद्य दुष्कृतात् ।।७४
येन लोकोऽक्षयः स्वर्गो भविता त्वत्कृतेन मे ।
ततः प्रतिग्रहो दत्तो जगद्वन्द्यनपेण हिं ।।७५
भवान्मामनुगृह्णातु प्रतीच्छस्व प्रतिग्रहम् ।
इदमाभरण सौम्य तारणार्थं द्विजोत्तम ।।७६
ब्रह्मर्षे प्रतिगृह्णीष्व प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
इह गाश्च सुवर्णं च दन वस्त्रसमन्वितम् ।।७७
भक्ष्यं भोज्यं च विप्रर्षे ददाम्याभरण त्वहम् ।
सर्वकामप्रद तुभ्यं सर्वान्भोगांश्च ते द्विज ।।७८

हे मुने ! मेरे द्वारा किया जा सकता है किन्तु उस मैत्रावरुण से उत्पत्ति वाले कुम्भ योनि के बिना अन्य नहीं तारेगा।७१। हे ब्रह्मन मेरे द्वारा बिना पूछे हुए ही पितामह ब्रह्माजी ने इस प्रकार से कहा-इस तरह से कहने वाले उस श्वेत से मैंने कहा था कि वह में ही हूँ।।७ ।। मैं तुम्हारे भाग्य से ही यहां आ गया और मैं देख लिया गया हूँ—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। इसके अनन्तर उस स्वर्ग के निवासी ने मुझको जानकर फिर वह भूमि मेरे आगे दण्डकी भाँति प्रणाम करने केलिए गिर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया था। फिर मैंने उसको भूमिसे उसे उठा लिया था और हे राम! फिर मैंने उससे कहा था कि बोल, मैं तेरा क्या करूँ? ७३। इस प्रकार से मेरे कहने पर वह राजा बोला-हे ब्रह्मन्! आज मेरे इस बहुत ही निन्दित बुरे आहारसे मेरा उद्धार कर दीजिएगा।७४।जिससे आपके ही द्वारा इस महान् कार्य के करनेसे यह स्वर्गलोक मेरे लिए क्षयसे रहित हो जावेगा। इसके अनन्तर उस जगत्के द्वारा वन्दनीय नृपने प्रतिग्रह मुझे दियाथा।७५।उसने मुझसे कहा-आप मेरे ऊपर अनुग्रह कर देवें और वह प्रतिग्रह स्वीकार करें। हे द्विजों में परमोत्तम! हे सौम्य! तारण के लिए यह आभरण है।७६।हे ब्रह्मर्षे! आप इस मेरे द्वारा समर्पित प्रतिग्रह स्वरूप आभरण को अंगीकार कीजिएगा और मेरे ऊपर प्रसाद करने के लिए आप योग्य होते हैं। यहां पर हे द्विज! गौएँ-सुवर्ण-वस्त्रों से समन्वित धन भक्ष्य पदार्थ और भोज्य पदार्थ सम्पूर्ण कामनाओं के प्रदान करने वाला तथा समस्त भोगों को प्रदान करने वाला यह आभरण आपको देता हूँ।।७७।७८।।

तारणे तु भवान्मह्यं प्रसाद कर्तुमर्हति।
तस्याहं स्वर्गिणो वाक्यं श्रुत्वा दुःखसमन्वितम् ।।७९
कृता मतिस्तारणाय न लोभाद्रघनन्दन।
गृहीते भूषणे राम ममहस्तगते तदा ।।८०
मानुषः पौर्विको देहस्तदा नष्टोऽयभूपते।
प्रनष्टे तु शरीरे च राजर्षिः परमा मुदा ।।८१
मयोक्तोऽसौ विमानेन जगाम त्रिदिवं पुनः।
तेन मे शक्रतुल्येन दत्तमाभरणं शुभम् ।।८२
तस्मिन्निमित्ते काकुत्स्थ दत्तमद्भुतकर्मणा।
श्वेतो वैदर्भको राजा तदाभूद्गतकल्मषः ।।८३

आपतो अब मेरे तारने के कार्यको करनेके लिए मेरे लिए ऊपर प्रसाद करने के योग्य होते हैं। इस प्रकार से उस स्वर्ग के निवास करने वाले पुरुष के परम दुःख से समन्वित वचनों को मैंने श्रवण किया था।।७९।। हे रघुनन्दन! उस समय में मैंने उसके उद्धार करने की बुद्धिकी थी किन्तु वह किसी लालच के कारण नहीं किय था। हे राम? उस समयमें उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूषण के ग्रहण कर लेने पर तथा उसको मेरे हाथ में आ जाने पर उसी क्षण में हे भूपते ! उसका पूर्व में रहने वाला जो मानवी शरीर था वह नष्ट हो गया था। उस शरीर के नष्ट हो जाने पर वह राजर्षि परम प्रसन्न हो गया था ॥८०-८१॥ फिर प्रसन्नता से युक्त उसको मेरे द्वारा आज्ञा दी गई थी और फिर उसी विमान से त्रिदिव को चला गया था। देवराज इन्द्रके समान उसने मुझे यह परम शुभ आभरण प्रदान किया था ॥८२। हे काकुत्स्थ ? उस निमित्त में अद्भुत कर्म के द्वारा यह आभरण दिया गया है। उस समय वह वैदर्भिक श्वेत राजा समस्त सल्मषों से छूट गया था और फिर उसमें कोईभी पाप शेष नहीं रहा था। यही परम आश्चर्य से समन्वित एक पुरावृत है ॥८३॥

॥ पद्म का आविर्भाव ॥

तत्तेऽहं कथयिष्यापि यथाभक्ति यथाश्रुति।
यद्विज्ञातं मया सम्यगृषिमार्गेण सत्तम ॥१
क. समुत्सहते ज्ञातु परं नारायणात्मकम्।
विश्वावतारं ब्रह्माय न वेदयति तत्त्वतः ॥२
तत्कर्मविश्वदेवानां तद्रहस्यं महर्षिषु।
स इज्यस्सवयज्ञानां स तत्त्व तत्त्वदर्शिनाम् ॥३
अध्यात्मतध्याविदां नरकं च विकर्मिणाम्।
अधिदैव तद्द वमधिदेवतसज्ञितम् ॥४
अधिभूतं च तद्भूत परं च परमार्थिनाम्।
स यज्ञो वेदनिदिष्ठस्तत्तप: कवयो विदुः ॥५
यः कर्त्ता कारको बुद्धियतः क्षैत्रज्ञ एवच।
प्रणवः पुरुषः शास्ता एकश्चेति विभाव्यते ॥६
प्राणः पञ्चविधश्चैव ध्रुवमक्षरमेव च।
कालः पाकश्च यज्ञश्च यष्टा चाधीनमेव च ॥७

पुलस्त्य महर्षि ने कहा—हे भीष्म ! आपकी जो नारायण के श्रवण करनेकी ऐसी अभिरुचि है वह आपके वंशके अनुरूप ही है। मैंने अपने गृह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
द्वैपायन से जो भी श्रवण किया है उसे आपसे अपनी भक्ति और श्रुति के अनुसार कहता हूँ। मैंने तो हे श्रेष्ठतम! ऋषि मार्ग के द्वारा ज्ञान प्राप्त किया है और भली-भाँति जान लिया है।१।अन्यथा इस विश्वके रक्षक परम नारायण के स्वरूप को कौन ऐसा है जो जान लेने का उत्साह कर सकता है। यह ब्रह्मा भी तत्वतः अर्थात् ठीक रूपसे नहीं जानते हैं।२। विश्व देवों का वह कर्म है, महर्षियों में रहस्य है समस्त यज्ञों का वह यजन करने के योग्य है और तत्वोंका दर्शन करने वालों का वह तत्व है।३।जो अध्यात्म के ज्ञाता अर्थात् आत्मा के सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान रखने वाले हैं उनका वह अध्यात्म विषय हैः जो कुत्सित बुरे कर्मोंके करने वाले पुरुष हैं उनके लिए वह नरक है, वह अधिदेव और अधिदैवत सज्ञा वाला है ।।४।। वह अधिभूत.भूत और परमार्थियों का पर है।देवों के द्वारा निर्दिष्ट किया हुआ वह यज्ञ है तथा कवि लोग उसे तप ही जानते हैं।५। जो कर्ता कारक अर्थात् कराने वाला है क्योंकि वह बुद्धि है और वह ही क्षेत्रज्ञ है, वह प्रणव पुरुष और शासन करने वाला और एक ही विभावित होता है।६। वह पाँचों प्रकार का प्राण है तथा वह ध्रुव और अक्षर हैं वहही काल है पाक है, यज्ञ हैं. यजन करने वाला है तथा वह ही अधीत है ।।७।।

उच्यते विविधैर्भावैं स एवायं त तत्परम् ।
स एव भगवान्सर्वं करोति न करोति च ।।८
सोऽस्मिन्कारयते सर्वं स्थानिनां च कृतिः कृता ।
यजामहे तमेवाद्यं स एवोत्थाननिवृतः ।।९
यत्सत्य यदनृतमादिमध्यभूतं यच्चान्त्य निरवधिक च यद्भविष्या
यत्किञ्चिच्चरमचरं यदस्ति चान्यत्सर्वंतंत्पुरुषवरः प्रधानभूतः।१०
चत्वार्य्यांहु सहस्राणि वर्षाणां तत्कृतयुगम् ।
तस्य तावच्छतो सन्ध्या द्विगुणा कुरुनन्दन ।।११
यत्र धर्मश्चतुष्पादस्त्वधर्मः पादविग्रहः ।
स्वधर्म नरताः शान्ता लायन्ते यत्र मानवाः ।।१२
विप्रा स्थिता धर्मपरा राजवृत्तिस्थिता नृपाः ।
कृष्यामभिरता वैश्याःशूद्राः शुश्रूषवस्तथा ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदा सत्यं च सत्वं च धर्मश्चैव विवर्धत ।
सद्भिराचरितो धर्मोयेन लोकः प्रवर्त्तते ।।

अनेक प्रकार के भावों के द्वारा कहा जाता है और वह ही तत्पर है । वह ही भगवान् सभी कुछ किया करते हैं और कुछ भी नहीं करते हैं ।८। वह ही इस जगत् में सब कुछ कराया करता है और स्थानियों की, की हुई कृति है हम लोग सभी उसका ही भजन किया करते हैं और वह ही उत्थान निर्वृत होता है ।९। जो सत्य है जो आदि और मध्यभूत तथा जो अन्त्य है, अवधि से रहित है और जो भविष्य है, जो कुछ भी चर तथा अचर है ओर अन्य सब है वह ही पुरुषों में परम श्रेष्ठ प्रधान भूत हैं ।१०।हे कुरु नन्दन ! चार सहस्र वर्षों का कृतयुग कहा गया है उस कृतयुग की दुगुनी उतने सैकड़ा सन्ध्ता होती है ।।११।। जिस युग में धर्म चारों पाद वाला होता है ओर अधर्म का विग्रह एक पाद है । जिस युग में मनुष्य अपने धर्ममें निरत रहा करते हैं तथा परम शान्त स्वभाव वाले होते हैं ।।१२।।विप्र सब धर्म में तत्पर होकर स्थित रहते हैं । जो नृप अर्थात् क्षत्रिय वर्ण वाले हैं वे भी सब अपनी ही राजा से जो वृत्ति नियत है उसी में स्थित रहते थे । वैश्यों का काम शास्त्र में कृषि करना बनाया गया है वे उसी काम में सदा अभिरत रहते थे और शूद्र जो थे वे सर्वदा सेवामें सलग्न रहते थे ।१३। उस समय में सत्य-सत्व और धर्म विशेष रूप से बढ़ रहे थे । सत्पूरुषों के द्वारा धर्म का समाचरण किया जाता था जिससे लोक प्रवृत्त होता था था ।।१४।।

एतत्कृतयुगे वृत्तं सर्वेषामेव पार्थिव ।
प्राणिनां धर्मसज्ञानां नराणाँ नीचजन्मन म् ।।।१५
त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेतायुगमिहोच्यते ।
तस्य तावच्छतो सन्ध्या द्विगुणा परिकीर्तित। । १६
द्वाभ्यामधर्मः पादाभ्यां त्रिभिधर्मो व्यनस्थितः ।
यत्र सयं च सत्व ५ क्रिया वर्मो विधोयते ।।१७
त्रेतायां विकृतिं यान्ति वर्णा लोभेन संयुताः !
चातुवर्ण्यस्य वेकृत्यं क्षान्तिदोर्वल्यमेव च ।।१८
एषा त्रेतायुगगतिर्विचित्रा देवनिर्मिता ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वापर द्विसहस्रं तु वर्षाणां कुरुनन्दन ॥१९

तस्य तावच्छती सन्ध्या द्विगुणयुगमुच्यते ।

तत्राप्यतीव:र्थंपरा: प्राणिनो रजसाहृता: ॥२०

शठा नैष्कृतिका: क्षुद्रा जायन्ते कुरुनन्दन ।

द्वाभ्यां धर्मः स्थितः पद्भयामधर्मस्त्रिभिरुत्थितः ॥२१

हे पार्थिव ! कृतयुग में सभी को इस प्रकार से बरताव करना होता था । जो कि प्राणी ऐसे थे जिनका नीच जाति में जन्म हुआ था वे ही नर धर्म का पालन करने वाले थे । यह कृतयुग में सबकी धर्म-प्रवृत्ति रहा करती थी ॥१५॥ तीन सहस्र वर्ष का त्रेता युग कहा जाता है । उस त्रेत युग की भी उतने ही सौ वर्ष द्विगुनी सन्ध्या होती थी ।१६।त्रेतायुग में दो पाद वाला अधर्म था और तीन पादों वाला धर्म व्यवस्थित था । जिस त्रेतायुग में सत्य, सत्त्व, क्रिया और धर्म किये जाते थे ।१७ त्रेतायुग में सभी वर्ष लोभ से युक्त होकर विकृति को प्राप्त हो जाते है । उस समय में चातुर्ण्य की विकृति, शान्ति और दुर्बलता हो गई थी ।१८। इस प्रकार से त्रेतायुग की गति विचित्र ही देव निर्मित थी । हे कुरु नंदन! त्रेताके पश्चात् द्वापर युग आताहै जो दो सहस्र वर्षोंके समय वाला होता है। उस युगकी भी उसनेही सौ वर्षकी द्विगुणित सन्ध्या कही गई है। इस द्वापर युगमेंभी समस्त प्राणी बहुतही अधिक अर्थ परायण और रजोगुणसे समाहृत थे।१९-२०। द्वापरमें शठ, निष्कृति युक्त,क्षुद्र मनुष्य उत्पन्न होते हैं । हे कुरु नन्दन ! इस युग में धर्म तो दो पादों से युक्त था और अधर्म तीन चरणों वाला होकर समुत्थित हो गया था ॥ ॥

विपर्ययशतैर्धर्मय: क्षयमेति कलौ युगे ।

ब्रह्मण्यभावशावते तथास्तिक्यं विवर्ज्यंते ॥२२

व्रतोपवासास्त्यज्यन्ते कलौ वै युगपर्यये ।

तदा वर्षसहस्र तु वर्षाणां द्वे शते तथा ॥२३

सन्ध्यथा महसङ्ख्यातः क्रूरः कलियुगस्तथा ।

यत्राधर्मश्चतुष्पादो धर्मः पादपरिग्रहः ॥२४

कामिनस्तापसा: क्षुद्रा जायन्ते यत्र मानवा: ।

न चावसायिक कश्चित्र साधुर्न च सत्य भाक् ॥२५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नास्तिका ब्राह्मणा भक्ता जायन्ते तत्र मानवाः।
अहकारगृहीताश्च प्रक्षीणस्नेहबन्धनाः।२६
विप्राः शूद्रसमाचारास्सन्ति सर्वे कलौ युगे।
आश्रमाणां विपर्यायः कलौ सम्प्रति वर्तते।२७
वर्णानां चैव सन्देहो युगान्ते कुरुनन्दन।
एषा द्वादशसाहस्री युगाख्या पूर्वनिर्मिता।२८

इसके अनन्तर कलियुग आता हैं। इसमें तो सैकड़ों विपरीत कृत्यों से धर्म पूर्णयता क्षीण हो जाया करता है। ब्रह्मण्य भावना की तो एकदम च्युति हो जाती है और आस्तिकता भी नहीं रहा करती है।२२। इस बिल्कुल विपरीत कलियुग में समस्त व्रत और उपवास छोड़ दिये जाते है।इस युग का समय एक सहस्र वर्ष होता है तथा दो सौ वर्ष की युग-संध्या होती है। संन्ध्या के साथ संन्ध्या किया गया वह कलियुग अत्यन्त ही क्रूर युग होता है। इस युग में अधर्म चार चरणों से युक्त रहता है ओर धर्म केवल एक ही पाद वाला रहा करता है।:२३।२४।। इस कलि-युग में जो तपस्या करने वाले पुरुष होते हैं वे भी कामवासना से सम-न्वित होते हैं और सभी मानव अत्यन्त क्षुद्र मनोवृत्ति वाले उत्पन्न हुआ करते हैं। इस कलियुग में न तो कोई अवसायिक होता है और न कोई साधुवृत्ति वाला सत्यभाषी ही होता है।२५। कलियुग में ब्राह्मण लोग ईश्वर की सत्ता को नहीं मानने वाले नास्तिक हो जाते हैं। इस युग में जो मानव भक्त होते हैं वे बड़े अहङ्कारी होते हैं और स्नेह के बन्धन को क्षीण कर देने वाले हो जाते हैं अर्थात् कलियुग में मनुष्यों में बिल्कुल स्नेह की भावना रहती ही नहीं है।२६। यह कलियुग का समय ऐसा होता है कि सभी विप्र इसमें शूद्र के समान आचरण करने वाले हो जाया करते हैं। कलियुग में चारों आश्रमों में विपरीतता उत्पन्न हो जाया करता है।२७। हे कुरु नन्दन! इस युग के अन्त में तो वर्णों का भी सन्देह होता है। यह युग की आख्या बारह सहस्र वाली एवं निर्मित है।२८।

सहस्रयुगपर्यन्ततदहर्ब्राह्ममुच्यते।
ततोऽहनि गते तस्मिन्सर्वेषामेव जीविनाम्।२९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरी॰निवृत्तिं दृष्ट्वा कालः संहारबुद्धिमान ।
देवतानां च सर्वेषां ब्राह्मणानां महीपते ।३०
दैत्यानां दानवानां च यक्षराक्षसपक्षिणाम् ।
गन्धर्वाणामप्सरसां भुजङ्गाना च पार्थिव ।३१
पवताना नदानां च पशूना चैव सत्तम् ।
तियग्योनिगतानां च क्रिमीणां दशिनां तथा ।।३२
सर्वभूतपतिः पञ्च भू वा भूतानि भूतकृत्
जगत्सहरणार्थाय कुरुते वैशस महत् ।३३
भूत्वा सूर्यचक्षुषी आददानो भूत्वा वायुः प्राणिनां प्राणिजातम्
भूत्वा वह्निर्निर्दहन्सर्वलोकान्भूत्वा मेघो भूय उग्रोऽभ्यवर्षत् ४

एक सहस्र युग पर्यन्त ब्रह्मा का दिन कहा जाता है। उस ब्रह्माजी के दिन समाप्त हो जाने पर समस्त जीवधारियों के शरीर की निवृत्ति को देखकर संहार की बुद्धि रखने वाला काल, हे महीपते ! सब देवताओं समस्त, ब्राह्मणों, दैत्यों दानवों और यक्ष—राक्षस तथा पक्षियों, गन्धर्वों अप्सराओं, भुजङ्गों, पर्वत—नदी—पशुओं, तिर्यग्योनियों में रहने वालों क्रिमियों, दंशियों के भूतों के करने वाला, समस्त भूतों का स्वामी, भूतों को पाँच करके इस जगत के संहार करने के लिए महान वैशस करता है।२९-३३। चक्षुओं का आदान करने वाला सूर्य होकर प्राणियों का प्राणिजात वायु होकर समस्त लोकों का निर्दग्ध करते हुए वह्नि होकर और उग्र मेघ होकर वर्षा की थी।३४।।

भूत्वा नारायणो योगी सर्वमूर्तिर्विभावसुः ।
गभस्तिभिः प्रदीप्ताभिः सशोषयति सागरान् ।।३५
ततः पीत्वार्णवान्सर्वान्नदीकूपांश्च सर्वतः ।
पर्वतानां च सलिलं सर्वमादाय योगवित् ।।३६
भत्वा चैव सहस्त्रार्चिमहीं भित्वा रसातले ।
रमते जलमादाय पिबन्नसमनुत्तमम् ।।३७
मूर्तामूर्त्तं तदन्यच्च यदस्ति प्राणिषु ध्रुवम् ।
तत्सर्वंसर्वविदाक्ष आदत्ते पुरुषोत्तम. ।।३८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायुश्च बलवान्भूत्वा विधुन्वानोऽखिलं जगत् ।
प्राणापानं समासाद्य वायुनाक्रमते हरिः ।३९
ततो देवगणानां च सर्वेषां चैव देहिनाम् ।
पञ्चेन्द्रियगुणास्सर्वेभूतान्येव च यानि च ।।४०
घ्रेयं घ्राणं शरीरं च पृथिवीं संश्रिता गुणाः ।
लोकयात्रा भगवता मुहूर्तेन विनाशिता ।।४१

सब मूर्ति योगी नारायण विभावसु होकर अपनी अत्यन्त तीव्र एवं प्रदीप्त किरणों से सागरों का शोषण करता है ।३५। इसके अनन्तर समस्त समुद्रों को तथा सर्वत्र नदियों और कूपों को पान करने योग का ज्ञाता पर्वतों के सम्पूर्ण जल को लेकर फिर वह सहस्र किरणों वाला होकर इस मही का भेदन करके रसातल में उत्तम रस का पान करके जल को लेकर रमण करता है ।३६-३७। मूर्त्त-अमूर्त में वह प्राणियों में ध्रुव अन्य जो भी है उस सबको अरविन्द के समान नेत्रों वाले पुरुषोत्तम ग्रहण कर लेते हैं ।३८। यह वायु अत्यधिक बलवान होकर इस सम्पूर्ण जगत को कँपाता हुआ हरि प्राणापान का समासादन कर वायुओं को का आक्रमण करता है ।३९। इसके अनन्तर सब देवगणों को और समस्त देहधारियों को सब पाँचों इन्द्रियों के गुण और जो भूत हैं, घ्रेय—घ्राण—शरीर—पृथिवी में संश्रित गुण, भगवान ने एक मुहूर्त मात्र में सब लोक यात्रा का विनाश कर दिया था ।४०-४१।

जिह्वा रसश्च स्नेहश्च संश्रिताः शलिले गुणाः ।
रूपं चक्षुविभागश्चनेत्रं ज्योतिः श्रितागुणः ।४२
स्पर्शः प्राणश्च चेष्टा च पवनं संश्रिता गुणाः ।
शब्दः श्रोत्रं च श्रवणं गगन संश्रिता गुणाः ।४३
मनोबुद्धिश्च चित्तं च क्षेत्रज्ञं चेति संश्रिताः ।
परेण परमेष्ठी च हृषीकेशमुपाश्रिताः ।४४
ततोभगवतश्च रश्मिभिः परिवारिताः ।
वायुना परिनुन्नाश्च भूमिश्शाखामपाश्रिताः ।।४५
तेषां संहरणोद्भूतः पावकः शतधाज्ज्वलन् ।
प्रदहन्नखिलं विश्वं वृत्त स[illegible]ऽनलः ४६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सपर्वतद्रुम न्गुल्मांल्लतावल्लीस्तृणानि च
विमानानि च द्रिव्यानि पुराणीविविधानि च ।४७
यानि चाश्रयणीयानि सर्वाण्यप्यदहद् भृशम् ।
भस्मीकृत्य तु तान्सर्वाल्लोकगुरोर्गुरुः ।४८
स भूति धारयामास युगान्ते लोकसंभवाम् ।
सहस्रवृष्टिः शतधा भूत्वा कृष्णो महाघनः ।४९
दिव्यतोयेन हविषातर्पयामास मेदिनीम् ।
ततः क्षीरनिकाशेन स्वादुना परमाम्भसा ।५०

सलिल से संश्रित गुण जिह्वा- रस—स्नेह तथा ज्योति में संश्रित्त गुण रूप चक्षु-विभाग और नेत्र हैं ।४२। पवन में संश्रय रखने वाले गुण स्पर्श प्राण और चेष्टा हैं । आकाश का समाश्रय करने वाले शब्द—श्रोत और श्रवण हैं ।।४३'। मन—बुद्धि और चित्त ये क्षेत्रज्ञ का समाश्रय करने वाले होते हैं । पद के द्वारा परमेष्ठी ने हृषीकेश का उपाश्रय किया था । इसके पश्चात् उस भगवान् की रश्मियों से परिवारित और वायुके द्वारा परिनुन्न भूमि शाखा का उपाश्रित हुए थे ।'४४-४५।। उनके सहार करने से उत्पन्न होने वाला पावक सैकड़ों प्रकार से जलता हुआ इस सम्पूर्ण विश्व को प्रदग्ध करता हुआ सवर्त्तक अनल हो गया था ।४१। उसमहान ज्वाला वाले अनले ने पर्वत, द्रुम, गुल्म, लता, बल्ली, तृण, विमान, दिव्य अनेक पुर और जो भी आश्रय करने के योग्य स्थल थे उन सभी को अच्छी तरह से जला दिया था । लोकों के गुरु ने उन सम्पूण लोको को भस्मीभूत कर दिया था ।४७-४८। लोकों को जला देने पर जो विभूति हुई थी उस लोक सम्भव भस्म को युग के अन्त में उस प्रभु ने धारण कर लिया । इसके उपरान्त महान् कृष्ण वाला मेघ होकर जो कि सैकड़ों स्वरूप वाला था सहस्र वृष्टि करने वाला हुआ था । ६। उस वर्षा के दिव्य जल से हवि के द्वारा इस भूमि को अत्यन्त स्वादु उत्तम जल जो कि क्षीर के तुल्य था उसने संतृप्त किया था ।५०।

शिशिरेण च पुण्येन मही निर्वाणमागमत् ।
तेन तोयेन सम्पृक्ता पयस्साधर्म्यतो ध . ।५१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकार्णवजलीभू ।ा ' वसत्त्वविवर्जिता ।
महासत्त्वान्यपि विभुं प्रविष्टान्यमितोजसम् ।५२
नष्टार्कपवनाकाशे सूक्ष्मेजगतिसंवृने ।
संशोषतात्मना कृत्वा समुद्राणां च देहिनः ।५३
दग्ध्वा सङ्कोच्य च तथा स्वपित्येकः सनातनः ।
पौराणां रूपमास्थाय स्वपित्यमितविक्रमः ।५४
एकार्णवजले व्यापी योगी योगमुपासितः ।
अनेकानि सहस्राणि युगान्येकार्णवाम्भसि ।५५

उस शिविर और पुण्य से यह मही निर्वाण को प्राप्त हुई थी और समय में यह धरा पय के साधर्म ने जल के द्वारा सम्पृक्त हो गई थी ।५१ उस काल में एक मात्र सागरमयी यह भूमि थी जिसमे कोई भी किसी प्रकार सत्व शेष नहीं रह गया था । जो बड़े-बड़े महा सत्व थे वे भी उस अमित ओज वाले विभु में प्रवेश कर गये थे ।५२। सब समुद्रों का और देहधारियों का अपने द्वारा भली-भाँति शोषण करके सूर्य-पवन और आकाश सब विनष्ट होकर इस सूक्ष्म जगत् में संवृत हो गये थे ।५३। सबको दग्ध करके और संकुचित करके वह सनातन प्रभु अकेला एक ही फिर शयन किया करता है । अमित विक्रम वाला विभु पौरों के रूप में आस्थित होकर शयन करते हैं ।५४। एकमात्र सागर में व्यापक योगी फिर योग की उपासना में सलग्न होते हैं और इस तरह से उसी एक सागर के जल में योग निद्रा में व्यस्त उस विभु को अनेकों सहस्र युग व्यतीत हो जाया करते हैं ।५५।

श्रूयतां तु तदा विप्रो मार्कण्डेयः कुतूहकात् ।
गीर्णो भगवतातेन कुक्षावासीन्महामनिः ।५६
बहुवर्षसहस्रायुस्तस्यैव वरतेजसः ।
अतंस्तीर्थप्रसङ्गेन पृथिवी तीर्थगोचरः ।५७
आश्रमाणि च पुण्यानि देवतायतनानि च ।
देशान्नष्ट्राणि चित्राणि पुराणि विविधानि च ।५८
जपहोमपराः शान्तास्तपोभिरमथाःस्मृता ।
मार्कण्डेयस्ततस्यस्य शनैर्व ।त्राद्विनिर्गतः ।५९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्क्रामन्तं न चात्मानं जानीते देवमायया: ।
निष्क्रम्य तस्य उदरादेकार्णवमथोजगत् ।६०
सर्वतस्तमसाच्छन्नं मार्कण्डेयोऽन्ववैक्षत ।
तस्योत्पन्नं भयं तीव्र व्यत्ययं चात्मजीवितम् ।६१
सुप्रं न्यग्रोधशाखायां बालमेकं निरीक्ष्य च ।
तथैवकाणवजले नीहारेणावृतःन्तरे ।।६२
अव्यक्तक्रीडिते लोके सर्वभतविवर्जिते ।
स मुनिर्विस्मयाविष्टः कौतूहलसमन्वितः ।६३
वालमादित्यसङ्काश न शक्नोत्यभिक्षितुम् ।
सोऽप्यचिन्त्ययदेकान्ते स्थित्वा सलिलसन्निधौ ।६४

अव तुम यह श्रवण करो कि कुतूहल से उन भगवान के द्वारा जीर्ण किए हुए मार्कण्डेय विप्र उस समय उनकी कुक्षि में थे ।५६। उसी वर वाले उस ऋषि की बहुत से वर्षों की आयु है, वह तीर्थों के प्रसङ्ग से सर्वत्र पर्यटन करते रहा करते हैं और समस्त पृथ्वी के तीर्थों में गोचर हुआ करते हैं ।५७। परम पुण्यमय आश्रम और वेदों के आयतन, देश राष्ट्र, अति विचित्र अनेक पुर, जप तथा होम करने में परायण, परम शान्त और तपों के द्वारा अमल कहे गये हैं । इसके उपरान्त उन भगवान के मुख से वह मार्कण्डेय महामुनि धीरे-से बाहर निकल आये थे । ।५८-५९। देव माया के कारण बाहर निकलने हुए अपने आपको उन्होंने नहीं जाना था और भगवान के उदर से बाहर निकलकर इस सम्पूर्ण जगत् को एक सागरमय ही देखा ।६०। यह सारा जगत अन्धकार से समाच्छन्न था । ऐसा मार्कण्डेयजी ने उस समय में इसे देखा । उस मार्कण्डेय को बहुत तीव्र भय उत्पन्न हुआ और उनका अपना जीवन व्यत्यय युक्त हो गया था ।६१। उस समय में उन्होंने एक वट की शाखा में उस एकार्णवी भूत जल में, जो कि नीहार से समावृत अन्तर वाला था, शयन करते हुए बालक को देखा था ।६२। सम्पूर्ण भूतों से विवर्जित और अव्यक्त इस लोक में देखकर उस मुनि को अत्यन्त विस्मय हुआ था और वह विशेष कौतूहल से समन्वित हो गये थे ।६३। वह वट के पत्र पर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
शयन करने वाला बालक इतना तेजस्वी था जैसे कोई सूर्य ही हो। उसको दृष्टि से देख नहीं सकते थे। उन मुनि ने एकान्त स्थल में सन्निधि में समाधिस्थ होकर ध्यान किया था ॥६४॥

पूर्वदृष्टमिदं मेने चाङ्कितो देवमायया।
अगाधे सलिले शेते मार्कण्डेयः सविस्मय ॥६५
पूर्ववृत्तमथो द्रष्टुमव्रजत्त्रस्तलोचनः।
स तस्मै भगवानाह स्वागतं बाल भो इति! ६६
बभाषे मेघतुल्येन स्वरेण पुरुषोत्तमः।
मार्कण्डेय न भेतव्यमागच्छस्व ममान्तिकम् ।६७
को नाम्ना कीर्तयति मां कुर्वन्परिभवं मम।
दिव्यवर्ष सहस्राख्य धर्षयंश्चैव मे वयः।६८
न ह्येष च सदाचारो देवेष्वपि ममोचितः।
मां ब्रह्मापि हि सस्नेहो दीर्घायुरिति भाषते ।६९
कस्तपो घोरमासाद्य ममाद्य त्यक्तजीवितः।
मार्कण्डेयेति मामुक्त्वा मृत्युमीक्षितुमर्हसि ।७०

मैं ऐसा मानता हूँ कि इसको मैंने पहिले कभी देखा था मैं इस समय में देवमाया के द्वारा शङ्कित हो रहा हूँ। वह इससमय में इस अगाध जल में शयन कर रहे हैं। इस प्रकार से मार्कण्डेय विस्मय से युक्त हो गये थे।६५। इसके अनन्तर इस पूर्व वृत को जानने के लिए भयसे परम भीत नेत्रों वाले वह मुनि वहां गये थे। उस समय में उन भगवान ने उससे कहा—हे बाल! आपका स्वागत है।" वह पुरुषोत्तम मेघ के समान स्वर से बोले-हे मार्कण्डेय! तुम डरो मत और मेरे पास चले आओ।६६-६७। मार्कण्डेय मुनि ने कहा था—मेरा परिभव करते हुए यह कौन मुझको मेरे नाम का उच्चारण करके बोल रहा है? किसने मेरी दिव्य सहस्र वर्षों की आयु का घर्षण किया है। ८। देवों में भी मेरे साथ यह सद् आचरण नहीं हुआ है। ब्रह्माजी भी स्नेह से युक्त होकर मुझको दीर्घ आयु वाला कहते हैं।६९। यह कौन है जो इस घोर करे तप को प्राप्त कर आज जीवन को त्यागने वाला है। मुझको 'मार्कण्डेय'—ऐसा कहकर अपनी मृत्यु देखने के योग्य हो रहा है? ॥७०॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं प्रक्षुभितः क्रोधान्मार्कण्डेयो महामुनिः ।
तदनं भगवान्भूयो बभाषे मधुसूदनः ।७१
अहते जनको वत्स हृषीकेशः पितागुरुः ।
आयुः प्रदाता पौराणः किं मां त्वं नोपसर्पसि ।७२
इच्छामि तत्त्वतो ज्ञानुमिमां मायां तवानघ ।
यदेकार्णवमध्यथः शेषेत्वं बालरूपवान् ।७३
किं संज्ञश्चैव भगवांल्लोके विज्ञज्ञायसे प्रभो ।
तर्कयेऽहं महात्मानं को ह्यन्यः स्थातुमर्हसि ।७४
अहं नारायणो ब्रह्मन्सर्वभूतविनाशनः ।
अहं हहस्रशीर्षास्यः सहस्रपदसंयुतः ।७५
आदित्यवर्णः पुरुषो मखे ब्रह्ममयो ह्यदम् ।
अहमग्निर्हव्यवहःसप्त सप्तभिरन्वितः ।७६
अहमिन्द्रपदः शक्र ऋतूनां परिवत्सरः ।
अहं योगिषु साङ्ख्याख्तो युगान्तावर्त एव च ।७७
अहं सर्वाणि सत्त्वानि दैवतान्यखिलानि च ।
भुजगानामहं शेषस्तार्क्ष्योऽहं सर्वपक्षिणाम् ।७८

उस समय में वह महामुनि मार्कण्डेय क्रोध से इस प्रकार प्रक्षुब्ध हो गये थे । तब तो भगवान मधुसूदन पुनः इनसे कहने लगे श्रीभगवान् ने कहा-हे वत्स ! मैं ही तुम्हारा जन्म देने वाली हृषिकेश पिता एवम् गुरु हूँ । मैं ही तुमको आयु के प्रदान करने वाला हूँ । मैं परम पुरुष हूँ । क्या आप इस समय मेरे समीप में नहीं आ रहे हो ? और क्या कारण है जो तुम मेरे निकट नहीं आते हो ? ।७१-७२। मार्कण्ड़ेय मुनि ने कहा—हे अनघ ! मैं तत्व स्वरूप से आपकी इस माया को जानना चाहता हूँ कि इस एकमात्र सागर के जल के मध्य में स्थित होकर शेष की शय्या पर बालक के स्वरूप शयन कर रहे हैं ।७३। हे प्रभो ! आप लोक में किस नाम से जाने जाते हैं ? मैं तो आपको कोई महान आत्मा वाला ही सोचता हूं क्योंकि अन्य कौन इस अवस्था में स्थित हो सकता है ॥७४॥ श्री भगवान ने कहा—हे ब्रह्मन् ! समस्त भूतों का विनाश करने वाला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में नारायण हूँ । मैं सहस्र शीर्ष और मुख वाला तथा सहस्र रुदों से समन्वित हूँ ।७५। मैं आदित्य के वर्ण वाला पुरुष हूँ । मुख मे ब्रह्ममय हूँ । मैं ही अग्नि हूँ जो हव्य वहन करने वाला और सप्त-सप्त अर्चियों से युक्त होता है ।७६। मैं इन्द्र पद वाला और ऋतुओं का परिवत्सर शक्र हूँ । मैं योगियों में सांख्य नाम वाला युगान्तावर्त्त हूँ ।७ । मैं हीं सत्व स्वरूप वाला हूँ और समस्त दैवतमय हूँ । भजगों में शेष हूँ तथा समस्त पक्षियों में गरुड़ मेरा ही स्वरूप है ।७८।।

कृतान्तः सर्वभूतानां विज्ञेयः कालसंज्ञितः ।
अहं धर्मस्तपश्चाह सर्वाश्रमनिवासिनाम् ।७६
अय दयापरो धर्मः क्षीरोदोऽह महार्णवः ।
यत्सत्यं तत्परं त्वेक अहमेव प्रजापतिः ।८०
अहं साङ्ख्यामहं योगो ह्यहं तत्परम् पदम् ।
अहमिज्या क्रिया चाहमरं विद्याधिपः स्मृतः ।८१
अहं ज्योतिरहं वायुरहं भूमिरहं जलम् ।
आकाशोऽहं समुद्राश्च नक्षत्राणि दिशो दश ।८२
अहंवर्षमहं सोमः पर्जन्योऽहंमहं रविः ।
अहं पुराणं परमं तथैवाहं परायणम् ।
भविष्ये चापि सर्वत्र भविष्यत्सवतङ्ग्रहः ।
यत्किञ्चित्पश्यसे विप्र यच्छृणोषि च किञ्चन ।८४

समस्त प्राणियों का कृतान्त काल संज्ञा वाला मुझे ही समझो । मैं ही धर्म जो जो सब आश्रमों में निवास करने वालों के हृदय में रहा करता है ।७६। मैं ही दया में परायण धर्म हूँ तथा महार्णव क्षीरोद भी मैं हूँ । जो सत्य है वह पद है और एक है वह मैं ही प्रजापति हूँ ।८०मैं ही सांख्य हूँ और योग भी मेरा ही स्वरूप है । मैं ही उनसे भी जो परम पद है वह भी हूं । इज्या-क्रिया और समस्त विद्याओं का स्वामी भी मैं ही हूँ ।८१। मैं आकाश हूँ, समस्त समुद्र, नक्षत्र और दशों दिशाएँ भी सब मेरा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हूं स्वरूप है ।८२। मैं दर्प सोम पर्जन्य और रवि हूँ । मैं परम पुराण तथा मैं ही परायण हूँ ।८३। भविष्य में सर्वत्र होने वाला सब का सग्रह हूँ, जिस किसी को भी तुम देखते हो, हे विप्र ! जो कुछ भी तुम श्रवण करते हो वह सभी कुछ मैं ही हूँ ।८४।

यच्चानुभवसे लोके सत्सव मामनुस्मर ।
विश्व सृष्ठं मया पूर्वं सृजेऽद्यापि च पश्यमाम् ।८५
युगे-युगे रक्षामि मार्कण्डेयाखिल जगत् ।
एदेतत्सथितं सर्वंमार्कण्डेयावधारय ।८६
शुश्रूषुरपि धर्मेषु कक्षौ चर सुखं मम ।
मम ब्रह्मा शरीरस्थो देवाश्च ऋषिभिः सह ।८७
व्लक्तमव्यक्तयोगं मामवगच्छ मुरद्विषम् ।
अहमेकाक्षरो मन्त्रस्त्र्यक्षरश्च पितामहः ।८८
परस्त्रिवर्ग ओंकारः परमात्मप्रदर्शनः ।
एवमादिपुराण च वदते मां महामते ।८९
ववत्रमाहृतवानीशी मार्कण्डेयमथो हरिः ।
ततो भगवतः कुक्षि प्रविष्टो मुनिसत्तमः ।९०
यदक्षयं विविधमुपाश्रितं तु तन्महार्णवे व्यपगतचन्द्रभास्करे ।
शनैश्चरन्प्रभूरथ हसव्रतः सिसृजञ्जगद्विहरति कालपयये ९१

इस लोक में जो भी कुछ तुम अनुभव करते हो वह सब मुझको ही समझ लेना चाहिए । मैंने ही पहिले इस सम्पूर्ण विश्व का सृजन किया था और आज भी अब मैं इसका सृजन करता हूँ,आप मुझको देखें ।८५। हे मार्कण्डेय ! इस समस्त जगत् की मैं युग-युग में रक्षा किया करता हूँ। हे मार्कण्डेय ! यह सभी कुछ तुमको बता दिया है । अब इसका ठीक अवधारण कर लो ।८६। धर्मों में शुश्रूषा करने वाला होता हुआ भी मेरी कुक्षि से सुखपूर्वक विचरण करो । ब्रह्मा भी मेरे ही शरीर में स्थित हैं और सब देवगण भी ऋषियों के साथ वहां पर स्थित रहते हैं ।। ८७। व्यक्त—अव्यक्त योग-मुर शत्रु का नाशक मुझको जान लो । मैं ही एकाक्षर मन्त्र हूँ और तीन अक्षर वाला पितामह हूँ ।८८। हे महान मति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
वाले ! परत्रिवर्ग—ओंकार परमात्म प्रदर्शन में ही हूँ । इस प्रकार से मुझको ही आदि पुरुष तथा परम पुरुष कहते हैं ।८९। पुलस्त्य महर्षि ने कहा उन ईश्वर हरि ने इसके उपरान्त मार्कण्डेय मुनि को अपने मुख में समाहृत कर लिया था और फिर वह मुनियों में श्रेष्ठ भगवान की कुक्षि में प्रविष्ट हो गए थे ।९०। जो क्षय नहीं होने वाला है और अनेक स्वरूपों में उपाश्रित होता है महार्णव में जिसमें चन्द्रमा और सूर्य भी व्यपगत हो गए हैं वह प्रभु हंस संज्ञा वाला धीरे-धीरे विचरण करते हुए इस जगत को सृजन करते हुए काल पर्यय्य में विहार किया करते हैं ।९१।

अथचैवं शुचिर्भूत्वा चचार स तु वै तपः ।
छादयित्वाऽमनो देह पयसाम्बजसम्भवः ।।९२
ततो महात्मातिबलोमर्त्यंलोकविसर्जने ।
महतां चैव भूतानां विश्वो विश्वमचिन्तयत् ९३
तस्य चिन्तयमानस्य नियते संस्थितेऽर्णवे ।
निराकाशे तोयमये सूक्ष्मे जगति संक्षये ।९४
ईशः सक्षोभयामास सोऽर्णवं सलिल गतः ।
अथान्तरादपां सूक्ष्ममथच्छिद्रमभुत्पुरा ।९५
शब्दं प्रति ततो भूतो माततश्छिद्रसम्भवः ।
सलब्ध्वान्तरसंक्षोभ व वर्धतः समीरणः ।९६
नभस्वता बलवना वेगाद्विक्षोभितोऽर्णवः ।
तस्यार्णवस्य क्षुब्धस्य त स्मन्नम्भसि महा : ।९७
कृष्णवर्त्मा समभवत्प्रभुर्वैश्वानरो महान ।
ततः संशोषयामास पावकः सलिलं बहुः ।९८

इसके अनन्तर परम शुचि होकर उसने तपस्या का समाचरण किया था । कमल से समुत्पन्न होने वाले ने जल से अपने देह का समाच्छादन किया था ।९२। इसके अनन्तर महान आत्मा वाले अति बलवान् विश्व स्वरूप ने मर्त्यलोक के विसर्जन करने में महान भूतों के विश्व के विषय में चिन्तन किया था ।९३। इस रीति से चिन्तन करते हुए उसको नियत ओर संस्थित सागर में जहाँ कि न तो अकाश ही था ओर इस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूक्ष्म जगत का भी इसमें भली-भाँति संक्षय हो गया था ऐसे जल से वह परिपूर्ण था इस ईश्वर ने जो कि उस सागर के जल में थे उस अर्णव को संक्षुब्ध किया था। सबसे प्रथम इसके अनन्तर जल के मध्य भाग ने एक अति सूक्ष्म छिद्र हुआ था।९४-९५। इसके पश्चात् शब्द के प्रति उस छिद्र से समुत्पन्न वायु हुआ। नभ मध्य में सक्षोभ को प्राप्त करके वह वायु विशेष वृद्धि को प्राप्त होगया था।९६। अति बलवान नभस्वात् के द्वारा वह अर्णव (सागर) वेग से विशेष क्षोभित किया गया था। इस तरह क्षोभ में युक्त उस अर्णव के उस जल के मध्य में कृष्णवर्त्मा महान वैश्वानर प्रभु सम्भूत हुए थे। उस अग्नि ने फिर अपनी ज्वाला से उस सागर के बहुत से जल का भलीभाँति शोषण कर दिया था।९७-९८।

समस्तजलभिश्छिद्रमभवद्विसृतं नभः।
आत्मतेजोभवाः पुण्या आपोऽमृतरसोपमाः।९९
आकाशं छिद्रसम्भूतं वायुराकाशसम्भवः।
अध सङ्घसम्भूत पावर्षक चास्य सम्भवम्।१००
दृष्ट्वा पितामहो देवो महाभूतविभावनः।
दृष्ट्वा भूतानि भगवाँ लोकसृष्ट्यमुत्तमम्।१०१
ब्रह्मणो जन्मसहितं वहुरूपो ह्यचिन्तयत्।
चतुर्युगानां सख्यात महस्रं युगपर्यये।१०२
यत्पृथिव्यां द्विजेन्द्राणां तपसा भावितात्मनाम्।
वहु जन्म विशुद्धात्मा ब्रह्मणो परिरुच्यते।१०३
ज्ञान दृष्ट्वा तु विश्वात्मा योगिनां याति योग्यताम्।
तं योगवन्त विज्ञाय सम्पूर्णश्वर्यमुत्तमम्।१०४
पदे ब्रह्मणि विश्वस्य न्ययोजयत योगवित्।
ततस्तस्मिन्महातोये महेशो हरिरच्युतः।१०५
जलक्रीडां च विधिवत्स चक्रे सर्वलोककृत्।
पद्मं नाभ्युद्भव चैक समुत्पादितवांस्ततः।
सहस्रवर्ण विरजं भास्कराभ हिरण्मयम्।१०६
हुताशनज्वनितशिखोज्ज्वलप्रभ समुत्थित शरदमलार्कतेजसम्।
विराजते कमलमुदारवर्चसं महात्मनस्तनुरुहचारुशैवलम्।१०७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह समस्त जलधि में जो छिद्र था वह एक अति विस्तृत नभ हो गया था। अपने तेज से समुत्पन्न पुण्य जल अमृत रस के समान था ९९ उस छिद्र से समुत्पन्न तो वह आकाश था और फिर उस आकाश सेवायु की उत्पत्ति हुई थी। इसके अनन्तर उस संवर्ष से उत्पन्न होने वाला पावक है जो कि इससे समुत्पत्ति को प्राप्त हुआ था।१००। महाभूतों को समुत्पन्न करने वाले पितामहदेव ने देखकर और भगवान ने भूतोंको सृष्टि के लिए उत्तम जानकर बहुत रूप वाले ब्रह्मा के जन्म के सहित विशेष रूप से चिन्तन किया था। युग पर्याय में चारों युगों की सहस्र संख्या की थी।१०१-१०२। पृथ्वी में तपश्चर्या भावित आत्मा वाले द्विजन्माओं के बहुत जन्म हैं। ब्रह्मा का विशुद्ध आत्मा ही हरि कहा जाता है।१०३। वह विश्वात्मा ज्ञान को देखकर योगियों की योग्यता को प्राप्त होता है। उसको योगवाला समझकर सम्पूर्ण उत्तम ऐश्वर्य होता है॥१०५॥ योग के वेत्ता ने ब्रह्मा के पद पर विश्व का नियोजन किया था। इसके पश्चात् उस महान जल में हरि महेश कहे जाते हैं।१०४। समस्त लोकोंकी रचना करने वाले उसने विधि के साथ जल की क्रीड़ा की थी और उसके उपरान्त उसने नाभि से उत्पत्ति होने वाले पद्मको समुत्पादित कियाथा जो सहस्र वर्णों वाल -विरज भास्कर की आभा के तुल्य आभा वाला और हिरण्मय था।१०६। वह पद्म अग्नि की जलती हुई शिखा के समान उज्जवल प्रभा से युक्तथा और शरत्काल के निर्मल सूर्य के तुल्य तेज वाला था जो कि नाभि से समुत्थित हुआ था। वह उदार वर्चस वाला और महात्माके तनुरुह के सदृश सुन्दर एवम् शैवल था जो कि उस समय में शोभित हो रहा था।१०७॥

अथ योगवतां श्रेष्ठसृजद्भूरिवर्चसम्।
स्रष्टारं सर्वलोकानां ब्रह्माणं सर्वतोमुखम्।१०८
तस्मिन्हिरण्मये पद्मे बहुयोजनविस्तृते।
सर्वतेजोगुणमये पार्थिवैर्लक्षणैर्वृते।१०९
तच्च पद्म पराभूते पृथिवीरूपमुत्तमम्।
नारायणसमुद्भूत प्रवदन्ति महर्षय।११०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्पद्मं सा रसा देवी पृथिवी परिकथ्यते ।
ये पद्मकेशरा मुख्यास्तान्दिव्यान्पर्वताबिन्दुः ।१११
हिमवन्तं च नीलं च मेरुं निषधमेवच ।
कलासं शृङ्गवन्तं च तथाद्रिं गन्धमादनम् ।११२
पुण्यं त्रिशिखिर चैव कान्त मन्दरमेवच ।
उदारं पिञ्जरं चव विन्ध्यमरतं च पर्वतम् ।११३
एत एव गणानां च सिद्धानाँ च महात्मनाम् ।
आश्रयाः पुण्यशीमानां सर्वकामफलप्रदाः ।११५

महर्षि पुलस्त्य ने कहा—इसके अनन्तर योगाभ्यास करने वालों में परम श्रेष्ठ—अत्यधिक वर्चस वाले, सब ओर मुखों वाले, लोकोंकी सृष्टि करने वाले ब्रह्मा का सृजन किया गया था ।१०८। उस हिरण्मय में जो बहुत से योजनों का विस्तार वाला था तथा सबके तेज और गुणों से परिपूर्ण था जिसको महर्षिगण नारायण से समुद्भूत बतलाते हैं ।१०९-११०। जो वह पद्म था वही रसा देवी पृथिवी परिकल्पित की जाती है । जो उस पद्म में केशर मुख्य थे उनको दिव्य पर्वतों के नाम बत-लाये जाते हैं जो उस दिव्य नाभिसे समुत्थित पद्मके केशर थे ।हिमवान नील-मेरु-निषध-कैलास-शृङ्गवान-गन्धमादन-पुण्य त्रिशिखर-कान्त-मन्दर उदार पिंजर और विन्ध्य ये पर्वत हैं ।११२-११३। ये पर्वत समस्त काम-नाओं के फलों के प्रदान करने वाले और सिद्धगण—महात्मा तथा पुण्य-शीलों के आश्रय होते हैं अर्थात इन्हीं पर्वतों पर महापुरुष सिद्ध लोग अपना आश्रम बनाया करते हैं और तपश्चर्या किया करते हैं ।।११४।।

एतेषामन्तरे द्वीपो जम्बूद्वीप इतिस्मतः ।
जम्बूद्वीपस्य संस्थानं यज्ञिया यत्रच क्रियाः ।११५
तेभ्योयद्द्रवते तोय दिव्यामृतरसोपमम् ।
दिव्यतीर्थशताधाराः सरस्यः सर्वतः स्मृताः ।११६
यान्येतानीह पद्मस्य केसराणि समन्ततः ।
ससख्येयाः पृथिव्यां ते वि[illegible]ध.श्चैवपर्वना ।११७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यानि पर्णानि पद्मस्य भूरि पूर्वाणि पार्थिव ।
त दुर्गमाः शलचितास्म्लेच्छदेशाः प्रकीर्तिताः ।११८
यान्यधोभागपत्राणि तानि वासास्तु भागशः ।
दैत्यानामसुराणां च पन्नगानां पार्थिव ।।११९

इन पर्वतों के मध्य में जो द्वीप है वही जम्बूद्वीप नाम से कहा गया है। जम्बूद्वीप वह संस्थान है जहाँ पर यज्ञ सम्बन्धी क्रियाएँ निष्पन्न हुआ करती हैं ।११५। इन पर्वतों से जो जल द्रवित होकर बहता है वह दिव्य अमृत रस के समान होता है। दिव्य तीर्थों की सैकड़ों धाराएँ सर—सी (नदियाँ) सभी ओर कही गई हैं ।।११६।। इन प्रमुख केशरों के अतिरिक्त जो अन्य इस पद्म की केशर हैं वे चारों ओर मे अगणित हैं और वे इस पृथिवी तल में विविध पर्वतों के रूप में विद्यमान हैं ।११७। जो उस दिव्य पद्म के पत्र हैं वे हे पार्थिव ! बहुत अधिक हैं और वे सब शलचित म्लेच्छों के दुर्गम देश कहे गये हैं ।११८। जो उस पद्म के अधोभाग में पत्र हैं वे हे पार्थिव ! भागशः दैत्या के असुरों के और पन्नगों के निवास स्थान हैं ।११९।।

तेषां मध्येऽन्तरं यत्तु तद्रसातलसञ्ज्ञितम् ।
महापातककर्माणो मज्जन्ते यत्र मानवाः ।१२०
पद्मस्य चान्तरे पद्म एकार्णवगता मही ।
चतुर्दिश सु सञ्जाताश्चत्वारः सलिलाकराः ।१२१
एवंनारायणस्यार्थे मही पुष्करसम्भवा ।
प्रादुर्भावोऽप्ययं तस्मान्नाम्ना पुष्करसंज्ञितः ।१२२
एतस्मात्कारणाद्यज्ञ पुराणैः परिभर्षिभिः ।
यज्ञियैर्वेददृष्टान्तैर्यज्ञयूपचितिः कृतः ।१२३
एवं भगवता तेन विश्वं व्याप्य धराचिता ।
पर्वतानां नदीनां च रचना चैव निर्मिता ।१२४
विश्वस्य यश्चाप्रतिमप्रभावः प्रभाकराभो वरुणोऽमितद्युतिः
शनैः स्वयम्भूर्व्यसृजत्सुषुप्तं पद्मनिधिं महार्णवे ।१२५

उन पद्म के पत्रों के मध्य में जो अन्तर हैं वही रसातल नाम वाला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान है। हा। पातक से युक्त कर्मों को करने वाले मनुष्य जहाँ पर जाकर मज्जित हुआ करते हैं। २०। और पद्म के अनन्तर में एकार्णवगता पृथ्वी है। वहाँ चारों दिशाओं में चार सङ्ख्या वाले जलाशय हैं। ।१२१। इस प्रकार से नारायण के लिए पुष्कर से समुत्पन्न होने वाली मही है। इस तरह इसके प्रादुर्भाव के नाम से ही इसकी पुष्कर यह संज्ञा हुई है।१२२।। इसी कारण से ही यज्ञ में परम प्राचीन, याज्ञिक, वेदों के अन्त पर्यन्त द्रष्टा परम ऋषियों के द्वारा यज्ञों मे ये पूजित की गई थी।।१२३। इसी प्रकार से उन भगवान ने विश्व को उत्पन्न करके इस धरा का चित किया है और पार्वतीकी तथा नदियों की रचना निर्माण भी किया है।१२४ जो इस सम्पूर्ण विश्व का अप्रतिम प्रभाव है, प्रभाकर की आभा वाला है, वरुण की अपरिमित द्युति से सम्पन्न हैं, उस स्वयम्भू ने स्वयं जो जगन्मय है उस महार्णव मे पद्मनिधि सुपुप्त जगत का विशेष सृजन किया था।१२५।

।। तारकोत्पत्ति वर्णन ।।

वंशक्षयकरा देवाः सर्वेषामेव दानवाः ।
अस्माकं जातिधर्मेण विरुढ वैरामक्षयम् ।१
वयं तपश्चरिष्यामः सुराणां निग्रहाय तु ।
स्वबाहुबलमाश्रित्य सर्वं एवन संशयः ।२
तच्छ्रुत्वा संमतं कृत्वा परियात्रं ययौगिरिम् ।
निराहारः पञ्चतपा पत्रभुग्वारिभोजनः ।३
शतं शतं समानां तु तपांस्येतान्यथाकरोत् ।
एवं तु कर्शिते देहे तपो राशित्वमागते ।४
ब्रह्माऽऽगत्याह दैत्येन्द्रं वरं वरय सुव्रत ।
स वव्रे सर्वभूतेभ्यो न मे मृत्युर्भवेदिति ।
तमुवाच ततो ब्रह्मा देहिना मरणं ध्रुवम् ।
यतस्ततोऽपि वरय मृत्युं यस्मान्न शङ्कसे ।६
ततः सञ्चिन्त्य दैत्येन्द्रः शिवोर्धे सप्तवासरात् ।
वव्रे महासुरो मृत्युं मोहितो ग्रन्ले ... ।७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दानवों में परम श्रेष्ठ तारक ने समस्त असुरों से कहा—हे समस्त असुरों ! आप सब महान् बल-विक्रम से सम्पन्न है । अब आप सब लोग मेरे वचनों का श्रवण करो । हे दानवों ! जो सब देवता लोग हैं वे सभी हमारे वशों का क्षय करने वाले हैं और इनके साथ जाति के धर्म से ही हमारा अक्षय बैर विशेष रूप से समारूढ़ होगया है।१।अब हम सबको इन सुरों के निग्रह करनेके लिये तपश्चर्या करनी चाहिए और हम सबको अपने ही बाहु-बल का आश्रय ग्रहण करना चाहिए । इसमें बिल्कुल भी संशय नहीं है ।२। पुलस्त्य मुनि ने कहा—तारक के इन वचनों का श्रवण करके समस्त दानवों ने परस्पर में सम्पत्ति की और फिर उन सबके साथ वह परिपात्र नाम वाले पर्वत पर चला गया था । वहाँ पर उसने अपने आहार का त्याग कर दिया था और पाँचों तपोंको करने लगा था । पत्रोंको और जल को ही आहार के स्थान में ग्रहण करता था।१।उसने वहाँ पर सौ-सौ वर्ष तक इस प्रकार की तपस्या की थी । इस रीति से देह के कर्षित हो जाने पर वह रूसके तप की एक महान् राशि सञ्चित हो गई थी ।२। जब तारकासुरकी तपस्या अत्यधिक मात्रामें हो गई तो ब्रह्माजी ने वहाँ उसके पास आकर कहा-हे सुव्रत ! तुम वरदान माँग लो । ब्रह्माजीके इस कथन पर उसने यह वरदान माँगा था कि प्राणियों से मेरी मृत्यु न होवे।५।इस वरदान की याचन करने पर ब्रह्माजी ने कहा था जो भी कोई देहधारी होते हैं उनका मरण तो निश्चित ही है । इसलिये इस अटल नियम को सोचकर ऐसाही वरदान प्राप्त करो जिनसे तुमको अपनी मृत्यु की शंका हो उनसे तुम्हारी मृत्युने होवे।६।इसके अनन्तर अच्छी तरह विचार करके उस दैत्येन्द्र ने सात दिन के शिशु से मृत्यु का वरण माँगा था । यह महान् असुर घमण्ड के कारण उस समय मोहित होगया था ।७।

जगामोमित्युदाहृत्यं ब्रह्मा दैत्यो निजं गृहम् ।
अथाह मन्त्रिणस्तूर्णं बल मे सम्प्रयुज्यताम् ॥८
यदि वो मत्प्रिय कार्यं निग्राह्याः सुरसत्तमाः ।
निगृहीतेषु मेप्रीतिर्जायतेचातुलाऽसुराः ॥९
तारकस्य वचः श्रुत्वा ग्रसना नाम दानवः ।
सनानीदैत्यराजस्य सज्जं चक्रे बल च तत् ॥१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतस्थेऽमरयुद्धाय बहुपत्तिपताकिकम् ।
एतस्मिन्नन्तरे वायुर्देवदूतोऽसुरालये ।।११
दृष्ट्वा तद्दानवबलं जगामेन्द्रस्यशंसितुम् ।
स गत्वा तु सभां दिव्यां महेन्द्रस्यमहात्मनः ।।१२
शशंसमध्ये देवानां तत्कार्यं समुपस्थितम् ।
तच्छ्रुत्वा देवराजस्तु निमीलितविलोचनः ।।१३
बृहस्पतिमुवाचेदं वाक्यं वाक्यं काले महाभुजः ।
सम्प्राप्नोति विमर्दोऽय देवानां दानवैः सह ।।१४

'ओम' अर्थात् ऐसा ही होगा—यह कहकर ब्रह्माजी और दैत्येन्द्र दोनों ही अपने-अपने निवास स्थान पर चले गये थे। इसके अनन्तर अपने गृह पर पहुँचकर उसने अपने मन्त्रियोंसे कहा था कि बहुत शीघ्र सेनाको सम्प्रयुक्त करो।८।यदि आप लोग सब मेरा प्रिय करना चाहते हैं तो सबको यही करना चाहिये कि समस्त सुरगणों को निगृहीत कर लेना है। इन सब देवगणों के निगृहीत हो जाने पर मुझे अतुलनीय प्रसन्नता होगी।६। तारक के इस वचन को सुनकर दैत्यराज की सना का न.यक सेनानी जो ग्रसन नामधारी दानव था उसने अपनी सेना को सुसज्जित कर दिया था।१०। फिर वह देवों के साथ युद्ध करने के लिये बहुत पदाति और पताकाओं वाली सेना रवाना हो गई थी। इसी बीच म देवों के दूत वायु न असुरोंके घर में यह सब संग्रामकी सुसज्जा को देखा था और उस दानवों के दलके विषयमें वह इन्द्र को कहनेके लिये गया था। वह महात्मा महेन्द्र की दिव्य सभा में पहुँच गया और उसने समस्त देवोंके मध्य में उस समुपस्थित कार्य को कह सुनाया था। यह सब सुनकर देवराज इन्द्र ने अपने नेत्र मूँद लिये थे और महान् भुजाओं वाले उसने उस समय में सुरगुरु बृहस्पति से यह वचन कहे थे। इन्द्र ने कहा—अब दानवों के साथ देवों के यह विमर्द अर्थात् झगड़ा सम्प्राप्त होगया है।११-१४।

कार्यंकिमत्र तद्ब्रूहि नीत्युपायोपबृंहितम् ।
यतच्छ्रुत्वा तु वचनं महेन्द्रस्य गिरांपतिः ।।१५
इत्युवाच महाभागो बृहस्पतिरुदारधीः ।
सामपूर्वा श्रुता नीतिश्चतुरङ्गा पताकिनी ।।१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिगीषतां सुरश्रेष्ठ स्थितिरेषा सनातनी ।
सामभेदस्तथादान दण्डश्चाङ्गचतुष्टयम् ।।१
न सान्त्वगोचरेलब्धा नभेद्यास्त्वेकधर्मिणः ।
न दानमात्र संसिद्ध्यैप्रसह्यैवापहारिणाम् ।।१८
एकोऽप्युपायो दण्डोऽत्र भवतां यदि रोचते ।
एवमुक्तः सहस्राक्ष एवमेतदुवाचह ।।१९
कर्त्तव्यतां च सञ्चिन्त्य प्रोवाचामरससदि ।
अवधाने न मे वाचं शृणुध्वं नाकवासिनः ।।२०
भवन्तो यज्ञभोक्तारो दिव्यात्मानो हि सान्वयाः ।
स्वे महिम्नि स्थिता नित्यं जगतः पालने रताः ।।२१

इस विषय में अब क्या करना चाहिए वह नीति के उपाय से वृंहित कोई उपाय आप वतलाइये । इन्द्र के इस वचन को श्रवण कर वाणी के स्वामी महाभाग और उदार बुद्धि वाले वृहस्पति ने यह कहा—।१५। सुरगुरु बोले-चतुरङ्गिणी सेना है और सबसे पूव साम का साधन अपनाना चाहिये-यह नीति बतलाई गई है । हाथी-घोड़े-रथ और पैदल चारों प्रकार के साधन जिस सेना में होते हैं उसे ही चतुरङ्गिणी कहा जाता है ।१६। हे सुरश्रेष्ठ जीतने की इच्छा वालों की यह सनातनी अर्थात् सदा से चली आने वाली स्थिति होती है । साम-भेद-दान और दण्ड-ये चार नीति के अङ्ग होते हैं । समझा-बुझाकर शांतिसे काम निकाल लेना साम है आपस में फूट पैदा करके सिद्धि करना भेद होता है । कुछ दे दिवाकर कार्य सम्हालना दान है और जब तीनों उपाय विफल हों तो अन्तमें दण्ड नीति अपनानी चाहिए ।१७। ये लुब्ध हैं अतः साम से कोई कार्य नहीं बनेगा । ये सभी एक ही धर्म वाले है अतः भेदन के योग्य भी नहीं हैं । बलात् अपहरण करने वाले इनके विषय दान भी सिद्ध करने के लिये पर्याप्त उपाय नहीं बनता है । यहां तो केवल इन चारों में से एक दण्ड ही उपाय है यदि आपको रुचिकर प्रतीत होता हो । इस तरह से कह जाने पर इन्द्र ने इस प्रकार स यह कहा और कर्त्तव्यताका सचिन्तन करके देवोंका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा में बोला। इन्द्रने कहा-१७ समस्त स्वर्गमें निवास करने वाले देव-गण बहुत ही ध्यान पूर्वक मेरे वचनोंको सुनें।१८-२०।आप सब लोग यज्ञो के भोक्ता हैं और वंशों के सहित दिव्यात्मा हैं। अपनी महिमामें नित्य ही स्थित हैं और जगत् के पालन में सर्वदा रति रखने वाले हैं।२१।

क्रियतांसमरोद्योगः सैन्यं संयोज्यतांमम ।
अह्नियन्तांच शस्त्राणि पूज्यन्तां शस्त्रदेवताः ।।२२
वाहनानि विमानानि योजयध्वं ममेश्वराः ।
यमं सेनापतिं कृत्वा शीघ्रमेव दिवौकसः ।।२३
सहस्रदृग्वन्दितपादपल्लवस्त्रि विष्टपेशोभत पाकशासनः ।
तुरङ्गमातङ्गकुलोघसङ्कुला सीतातपत्रध्वजशालिनी च ।
बभूव सा दुर्जयपत्तिसन्तता विभाति नानायुधयोधदुस्तरा।।२४
ततोऽश्विनौ च मरुतः ससाध्याः सपुरन्दराः ।
यक्ष राक्षस गन्धर्वा दिव्यनानास्त्रपाणयः ।।२५
जघ्नुर्दैत्येश्वरं सर्वे सम्भूय तु महाबलाः ।
न चंवास्त्राण्यसज्जन्त गात्रे वज्राचलोपमे ।।२६
अथोरथादवप्लुत्य तारकोदानवाधिपः ।
जघान कोटिशो देवान्करपार्ष्णिभिरवेच ।।२७
हतशेषाणि सैन्यानि देवानांविप्रदुद्रुवुः ।
दिशो भूतानिसन्त्यज्य रणोपकरणानिच ।
दृष्ट्वा तान्विद्रुतान्देवांस्तारको वाक्यमब्रवीत् ।।२८

देवराज इन्द्र ने देवगण से कहा था कि अब तो संग्राम करने का उद्योग आप सभी लोग कर लेवें और मेरी जो सेना है उसे संयोजित कीजिए। समस्त शस्त्रों का आहृत करें तथा उन शस्त्रों के देवताओं को अर्चा करिये।२२।मेरे ईश्वर देवगणों! सब वाहन और विमानों को योजित करो। यमराज को अपनी सेना का अधिपति बनाओ और यह सब कार्य सम्पन्न करनेमें शीघ्रता करो।२३। उस समय में सहस्र नेत्रों वाला इन्द्रदेव जिनके चरण पल्लव वन्द्यमान हैं उस त्रिविष्टप(स्वर्ग)में अत्यन्त शोभा को प्राप्त हुआ था। उसकी सेना भी अश्व-हाथी आदि के समूहों से संकुल थी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सीतात पत्र ध्वजों की शोभा वाली थी। दुर्जय दैत्य सैनिकों से विस्तृत और अनेक प्रकार के आयुधों वाले योधाओं से अत्यन्त दुस्तर वह सेना शोभित हो रही थी।२४।इसके पश्चात् अश्विनीकुमार-मरुत-साध्यगण और पुरन्दर के सहित यक्ष-राक्षस-गन्धर्व जो कि अनेक प्रकार के अस्त्र अपने हाथों में ग्रहण किये हुए थे, सभी महान् बल वालोंने मिलकर दैत्येश्वर पर प्रहार किया था किन्तु उसके वज्रके पर्वतकी भाँति शरीर मे अस्त्रों का कुछ भी प्रभाव नहीं होता था।२५-२६। इसके अनन्तर दानव दल के स्वामी तारकासुर ने स्वय रथ से नीचे उतर कर पार्ष्णियों से ही करोड़ों देवों का हनन कर दिया था।२७। मरने से जो कुछ भी थोड़े-वहुत देवोंके सैनिक शेष बच गये थे वे दिशाओं में भाग गये थे और भूतों को तथा रण करने के सम्पूर्ण उपकरणों को भी वहाँ पर सग्राम स्थल में ही छोड़कर चले गये थे। उन समर स्थल को त्यागकर भागने वाले देवों से तारकासुर ने यह वाक्य कहा था।२८।

माव धिष्टसुरान्दैत्या वज्राङ्गाय च मन्दिरे।
शीघ्रमानीयदर्श्यन्ताम्बद्धान्पश्यत्वयं सुरान् ॥२९
लोकपालांस्ततो दैत्यो बदध्वा चेन्द्रमुखान्रणे।
सरुद्रान्रुदृढं पाशैः पशुपालः पशूनिव ॥३०
स भूयो रथमास्थाय जगाम स्वकमालयम्।
सिद्धगन्धर्वसङ्घुष्ट विपुलाचलमस्तकम्।
स्तूयमानो दितिसुतैरप्सरोभिः सुसेवितः ॥३१

तारक बोला—हे दैत्यो! अब इन सुरो को मत मारो और शीघ्र ही मेरे मन्दिर में लाकर मुझे वज्र के अंग वाले को इन्हें दिखलाओ। मैं सुरों को देखूँ।२९। पुलस्त्य महर्षि ने कहा-इन्द्र जिनमें प्रधान था ऐसे रुद्रों के सहित समस्त लोकपालों को बँधवाकर जैसे कोई पशुओं का पालक पशुओं को सुदृढ़ पाशों से बांध लेता है उसी भाँति दैत्य ने उन सबको बँधवा दिया था। वह फिर अपने निवास स्थान को चला गया था।३०। वहाँ पर वह सिद्धगण और गन्धर्वों के समुदाय के द्वारा संतुष्ट होता हुआ विशाल पर्वत के समान मस्तक वाला दैत्यराज दिति के पुत्र देवों के द्वारा और अप्सराओं के द्वारा भली भाँति सुसेवित होकर समास्थित हो रहा था।३१।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

।। सर्वदेव कृत ब्रह्मस्तोत्र ।।

प्रादुरासीत्प्रतीहारः शुभ्रचीनांशुकाम्बरः ।
सजानुभ्यां महीं गत्वापिहितास्यश्चपाणिना ।।१
उवाचानाविलं वाक्ययमल्पाक्षरपरिष्कृतम् ।
दैत्येन्द्रमकवृन्दाभं बिभ्रतं भास्करं वपुः ।।२
कालनेमिः सुरान्बद्ध्वा प्रादाय द्वारितिष्ठति ।
स विज्ञापयति स्थेयं क्ववन्दिनिचयैः प्रभो ।।३
तन्निशम्याब्रवीद्दैत्यः प्रतीहारस्य भाषितम् ।
यथेष्टं स्थीयतामेभिगृंह मे भुवनत्रयम् ।।४
केवल वासव त्वेकं मुण्डयित्वा विमुच्यताम् ।
सितवस्त्रपरिच्छन्नं शुनः पादेनाचिह्नितम् ।।५
एवं कृते ततो देवा दूयमानेन चेतसा ।
जग्मुर्जगद्गुरु द्रष्टुं शरण कमलोद्भवम् ।।६
विनिर्विष्णास्तमासाद्य शरोभिर्द्धरणींगताः ।
तुष्टुवः सुष्टु वर्णाढ्यैर्वचोभिःकमलमासना ।।७

पुलस्त्य महर्षि ने कहा-इसके अनन्तर वहाँ पर शुभ्र और चीनांशुक वस्त्रों के धारण करने वाला प्रतीहार उपस्थित हुआ था । वह अपने हाथ से मुख को ढक्कर जनुओं के द्वारा भूमि पर चलकर अनाविल वाक्य जिसमें बहुत ही कम अक्षर परिष्कृत हो रहे थे सूर्य के समुदाय की आभा वाले और भास्कर वपु को धारण करने वाले दैत्यराज से कहने लगा कि कालनेमि सुरों को बाँधकर ले आया है और द्वार पर खड़ा हुआ है। उसने प्रार्थना की थी कि हे प्रभो ! उसे अब बन्दी बनाये हुए देवों के समूह को लेकर किस स्थान पर रहना चाहिए।१-३।प्रतीहार के इस कथन को श्रवण कर उस दैत्यराज ने आज्ञादेदी थी कि जहाँ भी इच्छा ही रहे क्योंकि अब तो ये तीनों ही भुवन मेरा ही घर है ।४। केवल एक इन्द्र का मुण्डन कराकर उसे छोड़ दो उसको श्वेत वस्त्रों से परिच्छिन्न कर दो और श्वान के पाद से उसको एक चिह्न लगाकर छोड़ दो ।५। इस प्रकार से किये

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने पर देवगण बहुत ही दुःखित चित्त से युक्त ो हु कमल मे उत्पन्न होने वाले जगत् के गुरु ब्रह्माजी की शरण समझकर उनसे मिलने को गये थे।६। अत्यन्त ही वैराग्य से युक्त होने वा उन देवताओं ने ब्रह्माजी के पास पहुँचकर अपना-अपना मस्तक भूमि पर रख दिया था और उन कमलासन ब्रह्माजी की सुन्दर वर्णों से समन्वित वचनों के द्वारा वे व.ाँ पर स्तुति करने लगे थे।७।

विरेमुरमराः स्तुत्वा ब्रह्माणमितिकारणम् ।
तस्थुर्मनाभिरिष्टार्थं सम्प्राप्ति प्रार्थनास्ततः ।।८
एव स्तुतौ विरिञ्चिस्तु प्रसादं परम गतः ।
अमरान्वरदोऽप्याह वामहस्तेन निर्दिशन् ।।९
पुरहूतमुखाः सबला निमिषा विजिताः प्रसभ किल दैत्यैतैः ।
क्रतवो विहिता भवत स्थितये जगतां च महाद्भुतचित्रगुणा ।।१०
अपि यज्ञाकृतः श्रुतकामफला विहिता ऋषयस्तत एव पुरः ।
अपि नाकमभूत्किल यज्ञभुजां भवतो विनियोगवशात्सततम् ।।११
अपहृत्य विमानगण सकृतो दनुजेन महाकरभूमिसमः ।
कृतवानसि सर्वगुणातिशयं यमशेषमहोधरराजतया ।।१२
अवध्यस्तारको दैत्यः सर्वैरपि सुरासुरैः ।
यस्य वध्यस्सनाद्यापि जातस्त्रिभुवने पुमान् ।।१३
मया स वरदानेन छन्दयित्वा निवारितः ।
तपसः साम्प्रत राजा त्रैलोक्यदहनात्मकः ।।१४
स तु वव्रे वधं दैत्यश्शिशुतः सप्तवासरात् ।
सतु सप्तदिनो बालः शङ्कराद्याभविष्यति ।।१५

पुलस्त्य मुनि ने कहा—ब्रह्माजी की स्तुति करके देवगण तिवर होगये थे और अपने मन में अपने अभीष्ट अर्थ की प्रार्थना करते हुए वहाँ पर स्थित हो गये थे।८। इस प्रकार से स्तवन किये जाने पर ब्रह्माजी परम प्रसन्न हुए थे और फिर बाँये हाथसे निर्देश करते हुए ब्रह्माजी उन देवगणों से बोले।९। आप लोग सब उदास क्यों हैं ? ऐसा ब्रह्माजी के द्वारा पूछे जाने पर समस्त देवों से प्रेरित होकर वायुने कहा सैकड़ों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैत्यों ने बलात् इन्द्र जिनमें प्रमुख हैं ऐसे सबल समस्त देवों को विजित कर दिया है। आपने जगतों के हित-सम्पादन के लिये और स्थिति के लिये महात् अद्भुत एवम् अति विचित्र गुणों वाले यज्ञों को बनाया है। इनके भी पूर्व यज्ञों को करने वाले तथा श्रुत कामनाओं के फलों से युक्त ऋषियों की रचना की थी। आपके विनियोग के वश से यज्ञों के भोग करने वालों का स्वर्ग निरन्तर रहने का स्थान रहता था। उस स्वर्ग को दानव ने महान् कर वाली भूमि के समान कर दिया हैं और सब विमानों का उसने अपहरण कर लिया है। जिस स्वर्ग को आपने समस्त भूमि के राज्यों से भी अधिक समस्त गुणों के अतिशय होने वाला बनाया था।१०-१२। देवगण का यह भाषण श्रवण करके ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा—वह तारक असुर तो आप समस्त देवों तथा असुरों से भी बध करने के योग्य नहीं है। जिसके द्वारा उसका बध किया जा सकता है वह पुरुष तो अभी तक इस त्रिभुवन में समुत्पन्न ही नहीं हुआ है।१३। मैंने ही उसे ऐसा वरदान देकर छन्दित करके निवारित कर दिया है। तपस्या के प्रभाव से इस समय मैं वह राजा इस त्रिलोकी को दहन करने के स्वरूप वाला है।२४। उस दैत्य ने मुझसे ऐसा ही वरदान प्राप्त किया था कि सात दिन का एक कोई शिशु सुत ही उसका वध करने वाला होवे। वह सात दिन का बालक भगवान् शंकर से ही होगा।१५।

तारकस्य निहन्ता स भाष्कराभो भविष्यति।
साम्प्रतं चाप्य पत्नीकः शङ्करो भगवान्प्रभु ॥१६
हिमाचलस्य दुहितायाच देवो भविष्यति।
तस्याः सकाशाद्यः सनुररण्याः पावकोयथा ॥१७
जनिष्यति स तं प्राप्य तारको न भविष्यति।
मयाऽभ्युपायः कथितोयथैष ह्विभविष्यति ॥१८
शेषं चाप्यस्य विभवं विभजध्वमनन्तरम्।
स्तोककालं प्रतीक्षध्वं निर्विशङ्केन चेतसा ॥१९
इत्युक्तास्त्रिदशास्तेन साक्षात्कमलयोनिना।
जग्मुस्ते प्रणिपत्येश यथायोग दिवौकसः ॥२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो यातेषु देवेषु ब्रह्मा लोकपितामहः ।
निशां सस्मार भगवांस्तां देवीं पूर्वसम्भवाम् ॥२१
ततो भगवती रात्रिरुपतस्थे पितामहम् ।
तां विविक्ते समालोक्य ब्रह्मोवाच विभावरीम् ॥२२

इस महान् बली तारक दैत्य का निहनन करने वाला वह बालक भास्कर के समान आभा से युक्त होगा। भगवान् प्रभु शंकर इस समय में आप्य-पत्नीक है।१६। हिमाचल की पुत्री जिस समय में देवी का स्वरूप प्राप्त करेगी उसी के सकाश से जो पुत्र समुत्पन्न होगा वह ऐसे ही होगा जिस तरह से अरणी के द्वारा अग्नि उत्पन्न हुआ करती है।१७। वह जब लोक में समुत्पन्न हो जायगा तो फिर यह दानवेन्द्र तारक नहीं बच सकेगा मैंने आपको यह उपाय बतला दिया है जो कि इसी रीति से होगा।१८। प्राप्त होने के योग्य के शेष विभव का बाद में विभाग कर लेना। आप लोग सब निर्विशंकित चित्त से थोड़े समय तक प्रतीक्षा करें।१६। पुलस्त्य मुनि ने कहा—उन साक्षात् कमलयोनि के द्वारा इस प्रकार से उन समस्त देवगणों से कहा गया था। तब वे फिर सब देवता भगवान् ब्रह्माजी को प्रणाम करके यथायोग स्थान को चले गये थे।२०। इनके उपरान्त न देवगणों के चले जाने पर लोकों के पितामह ब्रह्माजी ने निशा का स्मरण किया था जो कि देवी पूर्व में ही समुत्पन्न हुई थी।२१। इसके बादमें वह भगवती रात्रि पितामह के समक्ष समुपस्थित हुई थी। उस विभावरी को एकान्त स्थान में देखकर ब्रह्माजी ने उससे कहा—।२२।

विभावरिमहत्कार्यं देवानां समुपस्थितम् ।
तत्कर्तव्यं त्वया शृणु कार्यस्यनिश्चयम् ॥२३
तारको नाम दैत्येन्द्रः सुरशत्रु रनिर्जितः ।
तस्याभवाय भगवाञ्जायष्यति चेश्वरः ॥२४
सुतं स भविता तस्य तारकस्यान्तकः किल ।
शङ्करस्याभवत्पत्नी सती दक्षसुता तु या ॥२५
सा पितुः कुपितादेवी कस्मिंश्चित्कारणान्तरे ।
भावित्री हिमशैलस्य दुहिता लोकभाविनी ॥२६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरहेण हरस्तस्या मत्वा शुन्य जगत्त्रयम् ।
स तस्यहिमशैलस्य कन्दरे सिद्धिसेविते ।।२७
प्रतीक्षमाणस्तज्जन्म किञ्चित्कालं निवत्स्यति ।
तयो सुतप्तपसाभवितायोमहान्सुतः ।।२८
भविष्यति दैत्स्य तारकस्य विनाशकः ।
जातमात्रा च सा देवी स्वल्पसंज्ञेव भामिनी ।।२६

ब्रह्माजी ने कहा—हे विभावरि ! इस समय में देवताओं का एक बहुत बड़ा कार्य उपस्थित होगया है । हे देवि ! वह कार्य अब तुमको करना है । तुम मुझसे उस कार्य का जो भी निश्चय है उसको श्रवण करलो २३। एक तारक नाम वाला दैत्यों का राजा है । वह सुरोंका महान् शत्रु है और अनिर्जित हो गया है । उस दैत्येन्द्र के नाश करने के लिये भगवान् ईश्वर एक पुत्र समुत्पन्न करेंगे ।२४। वह उसका पुत्र होगा जो इस तारकासुर का अन्त करने वाला निश्चय ही होगा । जो प्रजापति दक्षकी पुत्री है वह सती भगवान् शंकर की पत्नी हुई थी ।२५। वह सती किसी कारण विशेष के होने पर देवी अपने पिता दक्ष से कुपित हो गई थी वहीं फिर पर्वतोंके राजा हिमवान् की होने वाली पुत्री थी जो लोकों को अत्यन्त करुणा से देखने वाली थी।२६।जब सतीने अपना शरीर त्याग दिया था तो भगवान् शंकर इस त्रैलोक्य को बिल्कुल ही शून्य समझने लगे थे । उस समय में सिद्धोंके द्वारा सेवित एक हिमवान् पर्वतकी कन्दर में वह शिव कुछ समय तक सतीके जन्म की प्रतीक्षा करते हुए निवास करेंगे । उन दोनोंके भली-भांति किये हुए तपसे जो एक महान् प्रभावशाली सुत समुत्पन्न होगा वही शिव-पार्वती का पुत्र इस दैत्येन्द्र तारक का विनाश करने वाला होगा । वह देवी पार्वती उस पुत्र के उत्पन्न होते ही स्वल्प संज्ञा वाली भामिनी की भाँति होगी ।२७-२६।

विरहोत्कण्ठिता गाढ हरसङ्गमलालसा ।
तयोः सुतप्ततपसोः सयोगः स्याच्छुभावहः ।।३०
ततस्ताभ्यां तु जनितः स्वल्पो वाक्कलहोभवेत् ।
ततस्तु संशयां भूयस्तारकस्य च दृश्यते ।।३१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तयोः संयुक्तोस्तस्मात्सुरतासक्तिकारणे ।
विघ्नं त्वया विधात्व्यं यथा ताभ्यां तथा शृण । ३२
गर्भस्थमेव तन्मातुः स्वेन रूपेण संज्ञया ।
ततो विहस्य शर्वस्तां विषण्णो नर्मपूर्वकम् ।।३३
भर्त्संयिष्यति तां देवीं ततः सा कुपिता सती ।
प्रयास्यति तपश्चतुं ततः सा तपसा युता ।।३४
जनयिष्यति त शर्वादमितद्युतिमण्डलम् ।
सम्भविष्यति हन्ताऽसौ सुरारीणामसंशयम् ।।३५

इधर शिव के विरह से पार्वती भी भगवान् शंकर से मिलने के लिये अत्यन्त उत्कण्ठित हो रही थी। पार्वतीके हृदयमें हर के साथ संगम करने की बहुत अधिक लालसा थी। भली-भाँति तप करने वाले उन दोनों का संयोग बहुत ही अधिक शुभावह होगा।३०। इसके अनन्तर उन दोनों का थोड़ा सा वाक्कलह होगया था इससे तो फिर तारक दैत्य के विनाश में संशय होगया था।३१। सुरत क्रीड़ा की आसक्ति कारण से जब उन दोनों का संयोग हो तो तुमको विघ्न कर देना चाहिए। उनसे जिस प्रकार से हो उसका श्रवण करो।३२। उसकी माता के गर्भस्थ को ही अपने रूप से संज्ञा के द्वारा करे। इसके पश्चात् शिव उसको हसकर नर्म विलास-पूर्वक विषादयुक्त होगये थे।३३। वह कुपित होती हुई सती भिर उस देवी के भर्त्संना देगी और इसके पश्चात् तपसे युक्त होती हुई वह तपश्चर्या करने को चली जायगी।३४। अपरिमित द्युति के मण्डल वाले उसको शिव से वह जन्म देगी और वह सुरों के शत्रुओं का निस्सन्देह हनन करने वाला समुत्पन्न होगा।३५।

त्वयापि दानवा देवि हन्तव्या लोकदुर्जयाः ।
यावत्सुरेश्वरी देहसङ्क्रान्तगुणसञ्चया ।।३६
तत्सङ्गमेन तावत्त्वं दैत्यान्हन्तुं न शक्यसे ।
एवं कृते तपस्तप्त्वा त्वयासर्वं करिष्यति ।।६७
समाप्तनियमा देवि यदा चोमा भविष्यति ।
तदा स मेव सारूप शैलजा प्रतिपत्स्य ते ।।३८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदा त्वयापि सहिता भवानी सा भविष्यति ।
रूपांशेनतुसंयुक्ताउमायास्त्वं भविष्यसि ॥३९
एकाऽनंशेति लोकस्त्वां वरदे पूजयिष्यति ।
भेदैबहुविधाकारैः सर्वगांकामसाधिनीम् ॥४०
ओंकारवक्त्रा गायत्री त्वसिति ब्रह्मवादिभिः ।
आक्रान्तैरूर्जिताकाराराजभिश्चमहाभुजैः ॥४१
त्वभूरिति विशां माता शूद्रैश्शैवेति पूजिता ।
क्षान्तिर्मुनीनामक्षोभ्यादयानियमिनामपि ॥४२
त्वं महोपायसन्देहो नीतिर्नयविसर्पिणाम् ।
परिचितिस्त्वमर्थानांत्वमीहाप्राणिहृच्छया ॥४३

हे देवि ! लोक में दुर्जय दानव आपके द्वारा भी हनन करनेके योग्य हैं । आप तो सम्पूर्ण सुरों की ईश्वरी हैं । सभी देवों की देहोंसे गुणों के सचय को संक्रान्त करने वाली हैं ।३६। केवल उससे संगम मात्र से आप दैत्यों का हनन नहीं कर सकती हैं । ऐसा करने पर तपश्चर्या करके आप सभी कुछ कर देंगी ।३७। हे देवि ! सब अपने नियमों को समाप्त कर देने वाली जिस समय में आप होगी और उमा हो जायेंगी ।३८। उस समय में आपके भी साथ वह भवानी हो जायँगी आप उमा के रूपांश से संयुक्त होकर रहेंगी ।३९। हे वरदे ! लोक तुमको एकाअनंशा है—ऐसा कहकर पूजित करेगा । अनेक प्रकार के आकार वाले भेदों से आप सर्वत्र गमन करने वाली और समस्त कामों का साधन करने वाली होंगीं ॥४०॥ जो ब्रह्मवादी पुरुष हैं उनके द्वारा ओंकार के मुख वाली गायत्री हैं । महान् भुजाओं वाले अक्रांत राजाओंके द्वारा आप ऊर्जित आकार वाली हैं ।४१। वैश्यों को आप भूः—माता हैं और शूद्रों के द्वारा शैवा इस नाम से आप पूजित होगी । मुनियों को आप क्षान्ति स्वरूप वाली हैं और नियमों को धारण करने वालों को अक्षोभ्य दया के स्वरूपसे युक्त हैं ।४२। आप महान् उपायका सन्देह हैं और नयविसर्पियों की आप नीति है । अर्थों की आप परिचित हैं और प्राणियों के हृदय में शयन करने वाली ईहा है ।४३।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वं मुक्तिस्सर्वभूतानां त्वं गतिः सर्वदेहिनाम् ।
रतिस्त्वं रतचित्तानां प्रीतिस्त्वं हृदि देहिनाम् ॥४४
त्वं कीर्तिः सत्यभूतानां त्वं शान्तिर्दुष्टकर्मणाम् ।
त्वं भ्रान्तिः सर्वभूतानां त्वं गतिः क्रतुयाजिनाम् ॥४५
जलधीनां महावेला त्वं च लीला विलासिनी ।
प्रियकण्ठग्रहानन्ददायिनी त्वं विभावरी ॥४६
इत्येनेकविधैर्देवी रूपलोकैस्त्वमर्चिता ।
ये त्वां स्तोष्यन्ति वरदे पूजयिष्यन्ति चापि ये ।
ते सर्वकामानाप्स्यन्ति नियता नात्र संशयः ॥४७
इत्युक्ता तु निशादेवी तथेत्युक्त्वा कृताञ्जलिः ।
जगाम त्वरिता तूर्णं गृहं हिमगिरेर्महत् ॥४८
तत्रासीनां महाहर्म्ये रत्नभित्तिसमाश्रयाम् ।
ददर्श मेनामापाण्डुच्छविवक्त्रसरोरुहाम् ॥४९

हे देवि ! आप समस्त प्राणियों की मुक्ति हैं और सब देहधारियों की आप गति हैं । जिनका चित्त रत होता है उनकी रति आप ही का स्वरूप है । देहधारियोंके हृदय में जो प्रीति होती है वह भी आपका स्वरूप ही है ।४४। सत्य का समाश्रय ग्रहण करने वाले प्राणियों की आप कीर्ति हैं और दुष्ट कर्म करने वालों की शान्ति है । समस्त भूतोंकी आप भ्रान्ति हैं तथा जो ऋतुओं के द्वारा यजन वाले पुरुष हैं उनकी आप गति है ।४५। जलधियों की आप महावेला हैं । आप विलास करने वाली लीला के स्वरूप वाली हैं । अपने प्रियतमके कण्ठ को ग्रहण करने में अति आनन्दको प्रदान करने वाली आप विभावरी के स्वरूप वाली हैं ।४६। इन प्रकार से अनेक भाँति के रूपों से देवी आप लोक में समर्चित होती हैं । हे वरदान प्रदान करने वाली!जो मनुष्य आपका स्तवन करेंगे और जो पुरुष आपकी अर्चना करेंगे वे सम्पूर्ण अपनी कामनाओं को प्राप्त कर लेंगे—यह सर्वथा नियत है इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है ।४ । पुलस्त्य महर्षि ने कहा—इस प्रकार से कही गई निशादेवीने 'तथास्तु'—ऐसा ही होगा-यह कहकर वह शीघ्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही हिमवान् का जो गृह था वहाँ पर त्वरायुक्त होती हुई हाथ जोड़कर चली गई थी ।४८। वहाँ पर उसने महान् हर्म्य (भवन) में बैठी हुई और रत्नों द्वारा निर्मित भीत का आश्रय ग्रहण करने वाली तथा थोड़ी पाण्डु वर्ण की छवि से संयुक्त मुख कमल वाली हिमवान् शैलराज की पत्नी मेना को देखा था ।४९।

किंचिदाकुलतां प्राप्ते मेनानेत्राम्बुजद्वये ।
आविवेश मुखे रात्रिः सुद्यमद्भुतसङ्गमा ।।५०
उन्मादाय जगन्मातुः क्रमेण जठरान्तरे ।
आविदेशातुलं जन्म मन्यमाना कदा तु वै ।।५१
अरञ्जयद्गृहंदेव्या गुहारण्ये विभावरी ।
ततो जगत्यनिर्घाणहेतुर्हिमगिरिप्रिया ।।५२
ब्राह्मे मुहूर्ते सुभगे प्रासूयत गुहारणिम् ।
तस्यां तु जायमानायां जन्तवः स्थाणुजङ्गमाः ।।५३
अभवन्सुखिनः सर्वे सर्वलोकनिवासिनः ।
नारकाणमपि तदा सुख स्वर्गसमं महत् ।।५४
तस्मिन्वहोत्सवे प्राप्ते दिव्याः प्रसृतपाणयः ।
सागरास्सरितश्चव समाजग्मुश्च सर्वशः ।।५५
हिमशैलोऽभवल्लोचे तदा सर्वैश्चराचरैः ।
ससेव्यश्चाधिगम्यश्च साश्रयश्चाचलोत्तमः ।।५६
अनुभूयोत्सवं देवा जग्मुः स्वान्निलयांस्तदा ।
देवनागेन्द्रगन्धर्व शैल लीलावती गणै ।।५७
हिमशैलसुतादेवी त्वहम्पूर्विकयाततः ।
क्रमणबुद्धिमानीता विद्यास्वानलसंबंधः ।।५८

मेना के दोनों नेत्र कमलों को कुछ आकुलता प्राप्त होने पर अद्भुत सङ्गम वाली रात्रि ने सुखपूर्वक उसके मुख मे प्रवेश प्राप्त कर लिया था ।५०। क्रम से जठर के अन्दर जगन्माता के उन्माद के लिये किस समय मे यह अतुल जन्म होगा—ऐसा मानती हुई प्रवेश किया था ।५१। देवी के गुहारण्य में विभावरी ने गृह रञ्जित कर दिया था । इसके अनन्तर जगत्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आनिर्वा हेतु हिमवान् गिरि की प्रिय ने परम सुभग ब्रह्म मुहूर्त में गुणारणि का प्रसव किया था। उसके जन्म ग्रहण कर लेने पर चर-अचर समस्त जन्तुगण और सब लोकोंके निवास करने वाले परम सुखी हुए थे। उस समयमें नरकोंमें भी, जहाँ पर-सर्वदा अति तीव्र यातनाएँ रहा करती हैं, स्वर्ग के ही तुल्य महान् सुख समुत्पन्न हो गया था।५२-५४। उस समय में देवीके जन्मपर होने वाले सभी महोत्सवमें सभी ओरसे परम दिव्य अपने हाथों को फैलाये हुए सागर और सरिताएँ वहाँ पर आये थे।५५। उस समय में हिमवान् शैललोक में समस्त चरों और अचरों के द्वारा भली-भाँति सेवन करने के योग्य—अधिगमन करने की योग्यता वाला—आश्रय से सम्पन्न और सब पर्वतों में अत्युत्तम हो गया।५६। देवगण ने भी वहाँ पर उपस्थित होकर उस महोत्सव के आनन्द का अनुभव किया था और इसके पश्चात् वे अपने-अपने निलय स्थानों को लौटकर चले गए थे। देव—गन्धर्व—नागेन्द्र और शैल लीलावती के गणों के द्वारा वह हिमवान् पर्वतराज की पुत्री देवी का अहम्पूर्विका के साथ क्रम से ध्यान किया गया था और आलस्य रहित होकर बुधजनों ने भी उस विद्या को अपनी बुद्धि में ग्रहण किया था।५७-५८।

क्रमेण रूपसौभाग्यप्रबोधैर्भुवनत्रये।
सम्पूर्णलक्षणा जाता हिमालयसुता तथा ॥५९
एतस्मिन्नन्तरे शक्रो नारदं देवसमतम्।
देवर्षिमथ सस्मार कार्यसाधनतत्परः ॥६०
स तु शक्रस्य विज्ञाय काङ्क्षितं भगवांस्तदा।
आजगाम मदा युक्तो महेन्द्रस्य निवेशनम् ॥६१
तं तु दृष्ट्वा सहस्राक्षः समुत्थाय महासानात्।
यथार्हेण तु पाद्यन पूजयामास वासवः ॥६२
शक्रेणाण हृतां पूजां प्रतिगृह्य यथाविधि।
नारदः कुशलं देवमपृच्छत्पाकशासनम् ॥
पृष्टे च कुशले शक्रः प्रोवाच वचनं प्रभुः ॥६३

क्रम से रूप—लावण्य और सौभाग्य तथा प्रबोध के द्वारा तीनों भुवनों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मे वह हिमवान् शैलराजकी पुत्री सम्पूर्ण सुलक्षणों वाली समुत्पन्न हुई थी ।५९। इसी बीचमें देवराज इन्द्रने देवों के वन्दित देवर्षि भगवान नारदजी का कार्य साधन में तत्पर होते हुए स्मरण किया था ।६०। उन देवर्षि ने भी उस समय में इन्द्रदेव की इच्छा को समझकर बड़े ही आनन्द के साथ महेन्द्र के घर पर समागमन किया था।६१। समागत भगवान् श्री नारदजी को देखकर देवराज अपने सिंहासनसे उठकर उनके स्वागत करने के लिए खड़े हो गये थे और फिर इन्द्रदेव ने यथोचित अर्घ्यपाद्य आदि के द्वारा उनका पूजन किया था ।६२। देवराजके द्वाराकी हुई अर्चना को यथाविधि अङ्गीकार करके नारदजी ने पाकशासन इन्द्रदेवसे सर्व प्रथम उनका क्षेम-कुशल पूछा था । जब कुशल प्रश्न समाप्त होगया तो इन्द्रदेव ने नारदजी से यह वचन कहे थे ।६३।

कुशलस्याङ्कुरस्तावत्संवृत्तो भुवनत्रये ।
तत्फलोद्भवसम्पत्तौ त्वं मया वादितो मुने ॥६४
वेत्स्येव तत्समस्तं त्वं तथापि परिचोदितः ।
निर्वृतिं परमां याति निवेद्यार्थं सुहृज्जने ॥६५
तद्यथा शैलजा देवी योगं यायात्पिनाकिना ।
शीघ्रं तथोद्यमः सर्वैरस्मत्पक्षैर्विधीयताम् ॥६६
अवगम्यार्थमखिलं तत आमन्त्र्य नारदः ।
शीघ्रं जगाम भगवान्हिमशैलनिकेतनम् ॥६७
तत्र द्वारे स विप्रेन्द्रश्चित्रवेत्रलताकुले ।
वन्दितो हिमशैलेन निर्गतेन पुरो मुनिः ॥६८
स ह प्रविश्य भवनं भुवो भूषणतां गतम् ।
निवेदिते स्वयं हैमे हिमशैलेन विस्तृते ॥६९
महासने मुनिवरो निषसादातुलद्युतिः ।
यथार्हंहमर्घ्यं पाद्यं च शैलस्तस्मै न्यवेदयत् ॥७०

इन्द्रदेव ने कहा - इस समय मे तीन भुवनो मे कुशल होनेका अंकुर तो समुत्पन्न होगया है । हेमुने! उस अँकुर से जो फल होगा उसकी उत्पत्ति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पत्ति को मैंने आपको ही समझा है।६४। वैसे तो आप सभी कुछ भली भाँति जानते ही हैं तो भी में आपको प्रेरित करने की धृष्टता करता हूँ। ऐसा नियम है कि अपने सुहृतजनों से प्रयोजन का निवेदन कर देने पर निर्वृत्ति की प्राप्ति हो जाया करती है।६५। वह यह है कि हिमवान् की पुत्री देवी भगवान शिव के साथ योग की प्राप्ति करे ऐसा ही हमारे पक्ष वाले सबको अत्यन्त शीघ्र ही उद्यम करना चाहिए।६६।पुलस्त्य महामुनि ने कहा—देवर्षि नारदजी ने सम्पूर्ण अर्थको जानकर और इन्द्रदेव के इस आमन्त्रण को स्वीकार करके वह फिर तुरन्त ही हिमवान् शैलराजके घर पर चले गये थे।६७। चित्र वेत्रलता से घिरे हुए वहाँ द्वार पर विप्रेन्द्र नारद की वन्दना की गई थी और शैलराज हिमवान स्वयं मुनि का स्वागत करने के लिए निकलकर बाहिर आ गये थे ॥ ६८ ॥ इसके अनन्तर देवर्षि नारदजी ने इस भूमि से भूषण स्वरूप हिमवान् के घर में प्रवेश किया था। हिमवान शैलराज के द्वारा निवेदित किये हुए परम विशाल हिम के आसन पर अनुपम कान्ति वाले मुनिवर संस्थित हो गये थे। फिर शैलराज ने यथोचित विधान के सहित अर्घ्य-पाद्य मुनिवर को समर्पित किया था ॥६९-७०॥

मुनिः स प्रतिजग्राह तमर्घ्यं विधिवत्तदा ।
गृहीतार्घम्मुनिश्रेष्टमद्रच्छूलक्षणया गिरा ॥७१
कुशलं तपशः शैलः शनैःफुल्लाननाम्बुजः ।
मुनिरप्यद्रिराजानमपृच्छत्कुशलं तदा ॥७२
अहो धर्मोचितस्तेऽति सन्निवेषो महागिरे ।
पृथत्वं मनसा तुल्यं कन्दराणां तवानघ ॥७३
गुरुत्वं ते गुणौघानां स्थावरादति रच्यते ।
प्रसन्नता च नोतस्त्र मुनिभ्यश्चाधिका तव ॥७४
न लक्षयामः शैलेन्द्र कुत्रविनयता स्थिता ।
नानातपोभिर्मुनिभिर्ज्वलनार्कसमप्रभैः ॥७५
इत्युक्तव्रति देवर्षौ नारदे सादर गिरा ।
हिमशैलस्य महिषीं मेना मुनिदिदृक्षया ॥७६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुदाता दुहित्रा तु स्वल्पालिपरिचारिका ।
लज्जा प्रणयनम्राङ्गी प्रतिवेश निकेतनम् ॥७७

उस समयमें मुनिवर ने विधिपूर्वक उस निवेदित अर्घ्यं को अङ्गीकार किया था जब मुनिवर ने अर्घ्य ग्रहण कर लिया तो शैलराज अपना मुख कमल विकसित करते हुए अति श्लक्ष्णा वाणीके द्वारा धीरे-धीरे तपश्चर्या का क्षेम कुशल मुनिवर से पूछा था । मुनिवर ने भी इसी भांति अद्रिराज से कुशल-क्षेम पूछा था ।७१। श्री नारदजी ने कहा-हे महान् गिरिराज ! आपका यह सन्निवेश धर्म के उचित ही है । हे अनघ ! आपके मन की विशालता कन्दराओं के ही समान है ।७२। आपका गौरव जो आपके गुणों के समूह का है वह स्थावर से भी अत्यधिक है । आपके मन की प्रसन्नता मुनियों के प्रसाद से भी ज्यादा है ।७३-७४। हे शैलेन्द्र ! अनेक भांति के तप करने वाले मुनियों के प्रसाद से जो कि जाज्वल्यमान सूर्य के समान प्रभा वाले हैं अविनयता कहां पर स्थित है—यह हम नहीं देख पा रहे हैं ।७५। पुलस्त्य मुनि ने कहा—आदर के सहित वाणी के द्वारा नारद मुनि ने जब ऐसा कहा तो इस पर हिमवान् पर्वतराज की महिषी मेना ने मुनिवर के दर्शन करने की इच्छासे उस निकेतनसे प्रवेश किया था जिसके साथ में उसकी दुहिता भी थी और वह थोड़ी बहुत सहेली एवं परिचारिकाओं से समन्वित थी तथा लज्जा एवम् प्रणय से विनम्र अङ्गों वाली थी ॥६७-७७॥

यत्रस्थितो मुनिवरः शैलेन सहितो वशी ।
तं दृष्ट्वा तेजसो राशि मुनि शैलप्रिया तदा ॥७८
ववन्दे गूढवदना पाणिपद्मकृताञ्जलिः ।
तां विलोक्य महाभागां देवर्षिरमितद्युतिः ॥७९
आशीर्भिरमृतोद्गाररूपाभिस्तां व्यवर्द्धयत् ।
ततो विस्मितचित्ता तु हिमवद्गिरिपुत्रिका ॥८०
शरीरलक्षणानां च परिज्ञानाय कौतुकात् ।
स्त्रीस्वभावात्स्वदुहितुर्हिश्चन्तां हृदि समुद्वहन् ॥८१
ज्ञात्वा तदिङ्गितं शैला मर्मष्ठा हृदयेन तु ।
अनुदीर्णार्णि मेने रम्यमेतदुपस्थितम् ॥८२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चोदितः शैलमहिषो सख्या मुनिवरस्ततः ।
स्मिताननो महाभागो वाक्यं प्रोवाचनारदः ॥८३
न जातोऽस्याः पतिर्भद्रे लक्षणैश्च विवर्जितः ।
उत्तानहस्ता सततं चरणैर्व्यभिचारिभिः ॥८४
सुच्छायास्या भविष्येयं किमन्यद्बहुभाष्यते ॥८५
श्रुत्वैतत्सम्भ्रमाविष्टो ध्वस्तधैर्यो हिमाचलः ।
नारदं प्रत्युवाचाथ साश्रुकण्ठो महागिरिः ॥८६

जिस स्थान पर शैलराज के साथ वंशी मुनिवर नारदजी संस्थित थे वहाँ पर उन तेज की राशि महामुनि को उस समय से शैलप्रिय मेना ने देखा और गूढ़ वदन वाली उसने अपने कर कमलों की अंजलि बाँधकर उनको प्रमाण किया था । उस महान भाग वाली मेना को देखकर अमित द्युति वाले देवर्षि ने अमृतोद्गार स्वरूप वाले आशीर्वादों से उनका विशेष वर्धन किया था । तब हिमवान् गिरि की पुत्रीका चित्त अत्यन्त ही विस्मययुक्त हो गया था ।७८-८०।उस देवीने अद्भुत स्वरूप से समन्वित नारद मुनि का दर्शन किवा था और ऋषिवर ने भी अपनो स्नेह संयुत मधुर वाणी से उस देवी से कहा था कि हे वत्स! यहा आओ ।८१।स्त्री स्वभाव वश अपनी पुत्री के शरीर के लक्षणों का कौतुक से परिज्ञान प्राप्त करने के लिए मेना के हृदय में चिन्ता हो रही थी ।८२। शैलराज ने भी अपनी महिषी के हृदय की बात को इङ्गित से जान लिया था क्योंकि उस समय मेना अनुदीर्ण आकृति वाली होरही थी । यह वहुत ही सुन्दर समय उपस्थित हो गया था ।८३। इसके पश्चात् शैलराज की महिषी की सखी के द्वारा तब मुनिवर को प्रेरित किया गया था । महाभाग नारद मुनि मुख पर मुस्कराहट करते हुए बोले ।८४। नारदजी ने कहा-हे भद्रे ! इस पुत्री का पति तो उत्पन्न ही नहीं हुआ है और लक्षणों से वह विवर्जित है । व्यभिचारी चरणों स यह उत्तान हस्तों वाली है । इसकी यह सुच्छाया होने वाली है । इससे अधिक और क्या कहा जावे ।८५। यह सुनकर हिमाचल सम्भ्रम से समाविष्ट हो गयाथा और उसका धैर्य छूट गया था । उस समय अश्रुपात करते हुए गद्गद कण्ठ वाले हिमवान् ने नारदजी से कहा था ।।८५।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्रापि श्रेयसो ह्याशा मुने न प्रतिभाति नः ।
शरीरलक्षणाश्चान्ये पृथक्फलनिवेदिनः ॥८७
इत्युक्त्वाविरतेशैले महादुःखविचारिणि ।
स्मितपूर्वमुवाचेदं नारदो देवपूजितः ॥८८
हर्षस्थाने महति त्वया दुःख निरुच्यते ।
अपरिच्छिन्नवाक्यार्थो मोहंयासि महागिरे ॥८९
इमां शृणु गिरं मत्तो रहस्यपरिनिष्ठताम् ।
समाहितो महाशैलमयोक्तस्य विचारणाम् ॥९०
न जातोऽस्याः पतिर्देव्या यन्मोक्त हिमाचल ।
सनजातोमहादेवो भूतभव्यभवोद्भवः ॥९१
शरण्यः शास्वतः शास्ता शङ्करः परमे वरः ।
ब्रह्मरुद्रेन्द्रमुनयो गर्भजन्मजरादिता ॥९२

शैलराज ने कहा—हे मुने ! इसमें भी हमको कोई अच्छी कल्याण कारिणी आंशा नहीं प्रतीत होती है क्यों कि अन्य जो लक्षण हैं वे तो पृथक फल वताने वाले ही होते हैं ।८७। पुलस्त्य मुनि ने कहा—इतना कहकर शैलराज के विरत हो जानेपर यथा महान् दुःख का विचार करने पर उस समयमें देवों में पूजित नारद मुनि मुस्कराने हुए बोले-।८८।श्री महामुनि नारदजी ने कहा—इस अति महान हर्ष के स्थान में आप इतने दुःख पूर्ण होकर यह क्या कह रहे हैं ? हे महागिरे ! मेरे इस वाक्य का अर्थ तो अपरिच्छिन्न है । आप तो इसमें इस समयमें मोहको प्राप्त हो रहे हैं।८९। रहस्य से परिनिष्ठित मेरी वाणीको मुझसे आप श्रवण करें । हे महाशैल! मैंने जो कुछ भी कहा है उसका विचार करने में समाहित होइये ॥९०॥ हे हिमाचल ! मैंने यही तो कहा था कि इसका पति उत्पन्न नहीं है सो इसका अर्थ ठीक ही है । क्योंकि भूत भव्य का उद्भव जिससे होता है वह महादेव कभी उत्पन्न नहीं हुए हैं ॥९१॥ परमेश्वर भगवान् शंकरतो सवके शरण अर्थात् रक्षक हैं-सदा—सर्वदा रहने वाले हैं-सब पर शासन करने वाले हैं । बाकी अन्य ब्रह्मा-रुद्र—इन्द्र और समस्त मुनिगण, गर्भ, जन्म एवं जरा से अर्दित होने वाले होते है ॥९२॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्य ते परमेशस्य सर्वे क्रीडनका गिरे।
ब्रह्माण्डतस्तदिच्छातः सम्भूतो भुवनप्रभुः ॥९३
विष्णुर्युगे युगे जातो नानाजातिर्महातनुः।
मन्यसे मायया जातं विष्णुं चापि युगेयुगे ॥९४
आत्मनो अविनाशो अस्ति स्थावरान्तेऽपि भूधर।
संसारे जायमानस्य भ्रियमाणस्यदेहिनः ॥९५
नश्यते देह एवात्र नात्मनो नाश उच्यते
ब्रह्मादिस्थावरान्तोऽयं संसारो यः प्रकीर्तितः ॥९६
स जन्ममृत्युदुःखार्त्तो ह्यनिश परिवर्तते।
महादेवो अचलः स्थाणुर्नंजातो जनकोऽजनः। ९७
भविष्यति पतिः सोऽस्या जगन्नाथोनिरामयः।
यदुक्तं च मया देवो लक्षणैर्वजितातव ॥ ९८

हे गिरिवर ! उस परमेश के तो वे सब खिलौने ही हैं। उसी की इच्छा से भुवनों का प्रभु ब्रह्मा अण्ड से समुत्पन्न हुआ था।९३। विष्णु तो युग-युगमें नाना जाति वाला और महान् तनु वाला उत्पन्न हुआ हीहै और युग-युग में माया के द्वारा समुत्पन्न हुए विष्णु को आप भी मानते हैं। हे भूधर ! स्थावरान्त में भी इस आत्मा का तो विनाश होता ही नहीं है। जो इस संसार में जन्म ग्रहण किया करता है और उस देही का भी आत्मा तो नित्य ही होता है।९४-९५। यहाँ पर देह का नाश होता है। आत्मा का नाश तो कभी कहा ही नहीं जाता है जो यह ब्रह्मा से आदि लेकर स्थावर के अन्त पर्यन्त है वह सब संसार कहा गया है।९६। यह आत्मा जन्म मृत्यु के दुःख से अत्यन्त आर्त्त होता हुआ निरन्तर परिवर्तन को प्राप्त होता रहता है। महादेव तो अचल स्थाणु हैं। वह कभी उत्पन्न नहीं हुए हैं और न वह जनक हैं तथा वे जरा से रहित हैं।९७। वही महादेव इस पुत्री के पति होंगे जो इस सम्पूर्ण जगत के नाथ हैं और आमय से रहित हैं अर्थात सर्वदा स्वस्थ्य हैं। मैंने जो कहा है वह आप कीं देवी लक्षणों से वर्जित है।९८।

एषा भार्या जगद्भर्तुर्वृषाङ्कस्य महीधर।
जननी सर्वा किस्य सम्भूता भूतभाविनी ॥९९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

शिवेयं पावनायव त्वत्क्षेत्रे पावनाद्युति ।
तद्यथा शीघ्रमेवैषा योगं ययात्पिनाकिनः ॥१००
तथाविधेयं विधिवत्त्या शैलेन्द्रसत्तम ।
अस्त्यत्र हि महत्कार्यं देवानां हिमभूधर ॥१०१
एवं श्रुत्वा तु शैलेन्दो नारदात्सर्वमेव हि ।
स्वमात्मानं पुनर्जातं मेने मेनापतिस्तदा ।
उवाच चापि संहृष्टो नारदं तु हिमाचल ॥१०२
दुस्तरान्नरकाद्धोरदुद्धृतोऽस्मित्वया विभो ।
पातालदहमुद्धृत्य सप्तलोकाधिपः कृतः ॥१०३
हिमाचलोऽस्मि विख्यातस्त्वया मुनिवराधना ।
हिमाचलाच्छतगुणां प्रापितोऽमि समुन्नतिम् ॥१०४

हे महीधर ! यह आपकी पुत्रीतो इस सम्पूर्ण जगत् के स्वामी भगवान् वृषांक की भार्या होगी और यह समस्त लोकों की जननी प्राणियों पर पूर्ण कृपा करने वाली समुत्पन्न हुई हैं।९९।पावन द्युति वाली यह शिवा आः के क्षेत्रमें सबको परम पावन करने के लिएही आई है । सोअब अत्यन्त शीघ्र ही यह भगवान् पिनाकधारी शिव के साथ योग प्राप्त करेगी ।१००। हे शैलेन्द्रों में परम श्रेष्ठ! हे हिमधर! यह आपकी आत्मजा इस प्रकार कीही उत्पन्न हुई है । सो आप विधि-विधान के साथ इस योग को सम्पन्न करें। इसमें तो देवगण का बहुत ही महान् कार्य होगा ।१०१। पुलस्त्य महर्षि ने कहा-इस तरह से देवर्षि श्री नारद जी से शैलराज हिमवान् ने सम्पूर्ण वृत्तान्त श्रवण करके मेना के पति ने अपने आपको पुनः इस संसार में उत्पन्न हुआ माना था । और फिर परम प्रसन्नता से युक्त होकर हिमाचल ने श्री नारद मुनि से कहा ।१०२। हिमाचल बोले--हे विभो ! इस समय में आपने तो मुझे बहुत ही दुस्तर घोर नरक से उद्धार कर बचा लिया है और पाताल के दह से उद्धृत करके सातों लोकोंका स्वामी बना दिया है ।१०३। हे मुनिवर ! इस समय से आप ही प्रसाद से मैं लोक में हिमाचल हूं-ऐसा प्रसिद्ध होगया हूं । मैं हिमाचल से सो गुनी समुन्नति को प्राप्त हो गया हूं ।१०४।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

इत्युक्तवति शैलेन्द्रे स तदः हर्षनिर्भरः।
उवाच नारदो वाक्यं कृतं सर्वमिति प्रभो ।।१०५
सुरकार्ये स एवार्थस्तवापि सुमहत्तरः।
इत्युक्त्वा नारदः शीघ्रं जगाम त्रिदिवं ततः १०६
त गत्वा देवभवनं महेन्द्रं सन्ददर्श ह।
ततोऽनुरूपे स मुनिरुपविष्टो महासने ।।१०७
पृष्टः शक्रेण प्रोवाच गिरजासश्रयां कथाम् ।।१०८
यन्मह्यमुक्तं कर्तव्यं तन्मया कृतमेव हि।
किं तु पञ्चशरस्येषु गोचरत्वमपेक्षितम् ।।१०९
इत्युक्तो देवराजस्तु मुनिना कार्यदर्शिना।
चूताङ्कुरास्त्रं सस्मार भगवान्पाकशासनः ।।११०
सस्मृतस्तु तदा क्षिप्रं सहस्राक्षेण धीमता।
उपतस्ते रतियुतः स विलासो झषध्वजः।
प्रादुर्भूतं च त दृष्ट्वा शक्रः प्रोवाच मन्मथम् ।।१११
उपदेशेन बहुना किं त्वां प्रति रतिप्रिय।
मनोभवोऽसि तेन त्वं वेत्सि भूतमनोगतम् ।।११२
तद्यथानुक्रमं तु त्वं कुरु नाकसदां प्रियम्।
शङ्कर योजय क्षिप्रं गिरिपुत्र्या मनोभव ।।११३
सयुक्तो मधुनानेन गच्छ रत्या सहायवान्।
इत्युक्तो मदनस्तेन शक्रेण स्वार्थसिद्धये ।।
प्रोवाच पञ्चबाणोऽथ वाक्यं भीतः शतक्रतुम् ।।११४

पुलस्त्य महामुनि ने कहा-इतना इस रीति से शैलेन्द्र के कहने पर वह देवर्षि हर्ष से पूर्ण होगये थे और फिर नारद ने यह वाक्य कहा था कि हे प्रभो! मैंने तो सभी कुछ कर दिया है ।१०५। देवों के कार्य में बहुत बड़ा आपका प्रयोजन भी होगा-इतना कहकर नारद ऋषि शीघ्र ही वहां से त्रिदिव को चले गये थे ।।१०६।। फिर नारद जी ने देवों के भवन में महेन्द्र को देखा था और फिर वहाँ पर अपने स्वरूप के अनुरूप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसन पर वह मुनि संस्थित हो गये थे। इन्द्रदेव के द्वारा पूछने पर नारद मुनि ने गिरिजा में संश्रय रखने वाली सम्पूर्ण कथा कह सुनाई थी। नारद मुनि ने कहा—जो आपने मुझसे कहा था कि मुझे यह करना है वह मैंने सभी कुछ पूर्ण कर दिया हैं किन्तु अब पाँच शेरों वाले कामदेव के वाणों के लक्ष्य होने का कार्य आवश्यक है।१०७-१०८। पुलस्त्य ने कहा—कार्यदर्शी मुनि नारद के द्वारा इस रीति से कहे गए इन्द्रदेव ने उसी समय मे आम्राङ्कुर के अस्त्र वाले कामदेव का स्मरण किया था। महेन्द्र के द्वारा याद करते ही उसी समय में शीघ्र अपनी पत्नी रति के सहित विलासयुक्त, मीन की ध्वजा धारण करने वाला मन्मथ वहाँ पर उपस्थित हो गया था और प्रादुर्भाव करने वाले उस अनङ्ग देव को देख कर इन्द्रदेव ने उससे कहा—।१०। महेन्द्र बोले–हे रति-प्रिय ! आप तो स्वयं ही बहुत निपुण हैं अतएव आपको अत्यधिक उपदेश देने की तो कोई आवश्यकता ही नहीं है। आप तो मनोभाव अर्थात् मन में ही जन्म लेने वाले हैं इसलिए आप स्वयं प्राणियों के मन में हुई बात को स्वय ही भली भांति से जानते हैं।१११। इस समय में आप कुछ उस प्रकार का अनुक्रम कीजिए जो स्वर्गवासी देवगण का परम प्रिय हो। हे मनोभव ! आप भगवान शंकर को शीघ्र ही हिमवान की पुत्री के साथ योजित कर दो।११२। इस बसन्त ऋतुराज के साथ संयुक्त होकर रति की सहायता वाले आप शीघ्र ही वहां चले जाओ। इस तरह से इन्द्र के द्वारा मदन को प्रेरित किया गया था जो कि अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए ही यह प्रेरणा दी थी उसे सुनकर कामदेव अत्यत्न भयभीत होता हुआ इन्द्र से कहने लगा ॥११३-११४॥

अनया देवसामग्र्या मुनिदानवभीमया।
दुःसाध्यश्शङ्करो देवः कि न वेत्सि जयत्प्रभो! ॥११५
तस्य देवस्य वेत्थ त्व कारण पदमव्ययम्।
प्रायः प्रसादे कोपेऽपि सर्वं हि महतांमहत् ॥११६
सर्वोपभोगसारं हि सोन्दर्यं स्वर्गसम्भवम्।
विशेषं काङ्क्षतां शक्र सामान्याद्भ्रंशनंफलात्।
श्रुत्वैतद्वचनं शक्रस्तमुवाचामरैर्यतः ॥११७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वयं प्रमाणं ते तत्र रतिकान्त न संशय ।
सन्दंशेन बिना शक्तिरयस्कादस्य नेष्यते ।।
कस्यचिच्च क्वचिद्दृष्टं सामर्थ्यं न तु सर्वतः ।।११८
इत्युक्तः प्रययौ कामः सखाय मधुमाश्रितः ।
रतियुक्तो जगामाशु प्रस्थ तुहिन तुहिनभृभृय ।।११९
स तु प्राप्याकरोच्छिन्तां कार्यस्यापपूर्विकाम् ।
महात्मानो हि निष्कम्भा मनस्तेषां सुदुजयम् ।।१२०
तदादावेव संक्षोभ्य नेत्थं तस्य जयोभवेत् ।
संसिद्धिः प्रायशश्चैव पूर्वं संशोध्य मानसम् ।।१२१

कामदेव ने कहा । हे जगत्प्रभो ! मुनि और दानवों के लिए ही परम भीषण देव सामग्री से भगवान शंकर देव बहुत दुसाध्य हैं अर्थात् इन साधन-सामग्री से शङ्कर के मन में विकार उत्पन्न कर देना बहुत ही कठिन काम है । यह तो साधारण मुनि और दानवों को ही काबू में ले आने वाली सामग्री है । क्या आप इसे नहीं जानते है ? ।११५। उस परम देव का कारण और अव्यय पद भी आप अच्छी तरह से जानते हो हैं, बहुधा महान पुरुषों के प्रमाद और कोष में भी सब महान ही परिणाम हुआ करते हैं ।१६। समस्त उपभोगों का सार स्वर्ग में सम्भव होने वाले सौंदय को विशेष रूप से चाहने वालों का सामान्य फल से भ्रंश हो जाता है । इस कामदेव के द्वारा कहे हुए वचन को सुनकर देवों से संयुक्त इन्द्र ने कहा—।।११७। शक्र बोला—हे रतिकान्त ! वहां पर तेरे लिए हमप्रमाण स्वरूप है सन्देश के बिना अयस्क से इसकी शक्ति नष्ट नहीं होती है । किसीकी सामर्थ्य कहीं पर देखी जाती है ।११८। पुलस्त्य ने कहा—इस प्रकार से सम्प्रेरित हुआ कामदेव अपने मित्र का आश्रय ग्रहण कर रति के सहित हिमाचल के प्रस्थ पर तुरन्त ही वहां से चला गया था ।११९। वह कामदेव वहाँ पर पहुँच तो गया था किन्तु उसने काय का उपाय पूर्व वाली चिन्ता मनमें की थी क्योंकि महादेव के हृदय में विकार उत्पन्न कर देना कोई आसान कार्य नहीं था ; उसने मन में सोचा था कि महान आत्मा वाले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुष तो निष्कम्प होते हैं। और उनका मन भी आसानी से जीत लेने के योग्य नहीं हुआ करता है प्रत्युत उसका जीत लेना अत्यन्त ही कठिन काम है।१२०। सो प्रारम्भ में ही सक्षोभ किया जावे तो इस प्रकार से उनके मन पर जय प्राप्त करना कदापि सम्भव नहीं होगा। प्राय. पहिले मानस का संशोधन करके ही समिद्धि हुआ करती है ॥१२१॥

स तस्य हृदये शुद्धे नाम शाली महाशरः।
पपात पुरुषः प्रांशुः पुष्पबाणो विमोहनः ॥ २२
ततः करणसन्दोहे विद्धे तु हृदये भवः।
बभूव भूतपोऽकम्प्य धैर्योऽपि मदनोन्मुखः ॥१२३
ततः प्रभुत्वाद्भावानावेशं स्वमपश्यता।
वाक्यं बहु बभाषेऽथ प्रत्यूहप्रसवात्कम् ॥१२४
तत कोपानलोदभूतघोरहुङ्कारभीषणे।
बभव वदने नेत्र तृतीयमनलाकुलम् ॥१२५
रुद्रस्य रौद्रवपुषो जगत्सहा भैरवम्।
तदन्तिकस्थे मदने व्यस्फारयत धूर्जटिः ।१२६
तन्नेत्र विस्फुलिङ्गेन क्रोशतां नाकवासिनाम्।
गमितोभस्मतां तूर्णं कन्दर्पः कामदर्पकः ॥१२७
स तु तं भस्मसात्कृत्वा हरनेत्रोद्भवोऽनलः।
व्यजम्भत जगद्दग्धुं ज्ञात्वा हुङ्कारघस्मरम्।१२८

उस कामदेव ने उसके हृदय के शुद्ध हो जाने पर शाली नाम वाला एक महान् शर फेंका था जो कि शर अत्यन्त ही कठोर-प्रांशु और विशेष रूप से मोहन करने वाला पुष्प वाण था।१२२। करण सन्दोह हृदय के विद्ध हो जाने पर भूतों के पति भगवान् भव अकम्प, धैर्यशाली और मदन की ओर उन्मुख होगये थे।१२३। इसके अनन्तर प्रभुत्व होने के कारण से उन्होंने अपने आवेश को देखा था। इसके पश्चात् विघ्नों के प्रसव रूप बहुत से वाक्य वे बोले थे ॥१२३-१२४॥ इसके उपरान्त क्रोध की अग्नि से उत्पन्न जो महान् घोर हुंकार थी उससे उनका मुख अत्यन्त भीषण होगया था उस मुख में तीसरा जो नेत्र था वह उस कोप की अग्नि से आकुल हो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया था ॥१२५॥ भगवान् रुद्र के रौद्रता से परिपूर्ण शरीर में जगत् के संहार करने के लिए महान् भैरव जो वह तीसरा नेत्र था उसको अपने समीप में स्थित कामदेव पर धूर्जटि (शिव) ने खोलकर देखा था। २६। खुले हुए उस तीसरे नेत्र के अग्नि कणों से आक्रोश करते हुए स्वर्गवासियों के समक्ष में ही काम के दर्प रखने वाला कन्दर्प तुरन्त ही भस्मता को प्राप्त कर दिया गया था।१२७।भगवान् हर के नेत्र से उत्पन्न अग्नि ने उस कामदेव को भस्म के तुल्य दग्ध करके हुंकार की ध्वनि को जानकर इस सम्पूर्ण जगत् को दग्ध करने के लिए वह सचेष्ट हुआ था ॥१२८॥

विलोक्य हरहुङ्कारज्वालाभस्मीकृत स्मरम् ।
विललाप रतिः क्रूरं बन्धुना मधुना सह ॥१२९
ततोविलप्य बहुशो मधना परिसान्त्विता ।
जगाम शरणं देवमिन्दुमौलिं त्रिलोचनम् ।।१३०
भविष्यति च कामोऽय काले कान्तेऽचिरादय ।
अनङ्ग इति लोकेषु स विख्यातिं गमिष्यति । १३१
इत्युक्ता शिरसा न्त्य गिरीश कामवल्लभा ।
जगामोपवनं चान्यद्रतिस्तुहिनपर्वते ॥१३२
रुरोद चापि वहुशो दीना रम्ये स्थले स्थले ।
मरणव्यवसायापि निवृत्ता च शिवाज्ञया ।१३३

भगवान् हर की हुंकार की ज्वाला से भस्मीभूत हुए कामदेव को देखकर उसकी पत्नी रति कामदेवके वन्धु मधु के साथ विलाप करने लगी थी ॥१२९॥ इसके अनन्तर बहुत विलाप करके वसन्त ने उस रति को सान्त्वना दी थी और फिर इन्दु को मस्तक में धारण करने वाले भगवान् त्रिलोचन देव की शरण में चला गया था। ३०। भगवान् शंकर ने अपनी शरणागति में समुपस्थित उनको देखकर कहा था कि यह काम शीघ्र ही कान्त काल के उपस्थित होने पर जीवित हो जायगा और फिर यह आज से ही लोकों में 'अनङ्ग' इस नाम से ही प्रसिद्ध को प्राप्त करेगा ।१३१। शिव के द्वारा इस प्रकार से कहो गई कामदेव की पत्नी रति ने शिर से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव को प्रणाम किया था और फिर वह रति हिमवान् पर्वत के अन्य उपवन को चली गई थी ।१३२। वह रति अत्यन्त दीन हीन होकर जो भी कोई रम्य स्थल मिलता था वहीं-वहीं पर रुदन किया करती थी । उसी रति ने तो अपने पति काम के भस्मीभूत होजाने पर स्वयं ही मरने का निश्चय लिया था किन्तु भगवान् शिव की आज्ञा से ही अपने उस निश्चय से निवृत हो गई थी ॥१३३॥

अथ नारदवाक्येन चोचितो हिमभूधरः ।
कृताभरणंसस्करां कृतकौतुकमङ्गलाम् ॥१३४
स्वर्गंपुष्पकृतापीडां शुभ्र चीनां शुकाम्बराम् ।
सखीभ्यां सयुतां शैलोगृहीत्वास्वसुतांततः ॥१३५
जयाम सुभगे योगे तदासम्पूर्णमानसः ।
स काननान्युपाक्रम्य वनान्युपवनानि च ॥१३६
ददर्श रुदतीं नारीमप्रतर्क्या महौजसम् ।
न रूपेणेदृशी लोके रम्येषु वनसानुषु ॥१३७
कौतुकेन परामृष्टस्तांदृष्ट्वा रुदतीं गिरिः ।
उपसृप्य ततस्तस्या निकट सोऽप्यपृच्छत ॥१३८
कासि कस्यामि कल्याणि किमर्थं चापिरोदिषि ।
नैतदल्पमह मन्यकारणलोकसुन्दरि ॥१३९
सा तस्य वचनं श्रुत्वा उवाच मधुना सह ।
रुदन्ती शोकवचन श्वसन्ती दैन्यवर्धनम् ॥१४०

इसके अनन्तर देवर्षि नारद जी ने वचन से प्रेरित होकर भूधर हिमवान् आभूषणों के द्वारा किये हुए संस्कारों से समन्वित-कौतुक मङ्गलमय सूत्र से युक्त--स्वर्गीय पुष्पों की माला के द्वारा शोभित चोटी वाली--शुभ्र चीनांशुकों से समावृत और सखियों के सहित अपनी पुत्री को अपने साथ में लेकर उस समय में सम्पूर्ण चित्त वाला होकर सुन्दर योग मे चल दिया था । उसने कानन, वन और उपवनों को उपक्रमित किया । उसी यात्रा में हिमवान् ने प्रतर्कता के अयोग्य महान् ओज से सम्पन्न रोती हुई नारी को देखा था । वह ऐसी सुन्दरी थी कि लोकमें सुरम्य वनकी शिखरों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ऐसी अन्य कोई नारी नहीं थी ॥१३६- ३७।। उस रुदन करती हुई नारी को देखकर शैलराज ने कौतुक से ही विचार किया था कि इसका परिचय प्राप्त किया जावे। इसके उपरान्त वह उसके समीप मे पहुँचकर उससे पूछने लगे ॥१३८॥ हिमवान् ने कहा हे कल्याणि ! आप कौन हैं और किसकी पत्नी हैं तथा यहाँ आप किस हेतु मे रुदन कर रहीं है ? हे लोक सुन्दरि ! मैं आपके इस करुण क्रन्दन का कोई सामान्य कारण नहीं समझता हूँ अर्थात् आपके रोने का कोई विशेष कारण अवश्य ही होना चाहिए ॥१३९॥ उस रति ने उस शैलराज के वचन को सुनकर मधुके साथ दीनता के बढ़ाने वाले श्वासों को लेती हुई और शोक से वचनों को कहकर रुदन करती हुई वह बोली ॥१४०॥

कामस्य दयितां भार्या रति मां विद्धि सुव्रत ।
गिरावस्मिश्च भगवान्गिरिशस्तपसंस्थितः ॥१४१
तेन प्रत्यूहरुष्टेनकोधाद्विस्फार्यलोचनम् ।
विमुच्याग्निशिखाज्वालांकामोभस्मावशेषितः ॥१४२
शरीरं परिरक्षिष्ये किञ्चित्कालं महाद्युते ।
इत्युक्तस्तु तया रत्या शैलः सम्भ्रमभीषणः ॥१४३
पाणावादाय तनयां गन्तुमैच्छत्स्वकंपुरम् ।
भाविनोऽयश्यभावित्वाद्भवित्रीभूतभाविनो ।
लज्जमाना सखिमुखैरुवाच पितरं गिरिम् ॥१४४
दुर्भगेन शरीरेण किममानेन कारणम् ।
कथं च दशां प्राप्तश्शङ्करो मे पतिर्भवेत् ॥१४५
तपोभिः प्राप्यतेऽभीष्टं नासाध्यन्तु तपस्यतः ।
दुर्भगत्वं वृथालोके विहिते सहि साधने ॥१४६
तपसि भ्रष्टसन्देहा ततः स्वार्थजिगीषया ।
एवन्तपः करिष्येऽह यामीत्युक्तवतीं सुताम् ।
उवाच वाचा शैलेन्द्रो गद्गदस्वरवर्णया ॥१४७

रति ने कहा-हे सुव्रत! कामदेव की प्यारी भार्या मुझको रति समझिये। इस पर्वत में भगवान् गिरीश तपश्चर्या में संस्थित हैं ।१४१। उस

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् शिव ने विघ्न होने के कारण रुष्ट होकर क्रोधावेश में अपने तृतीय नेत्र को खोल दिया था। फिर उस नेत्र से अग्नि की शिखाकी ज्वालाओं को विमुक्त करके कामदेव मेरे पति को तुरन्त ही भस्मावशेषित कर दिया था।१४२। हे महान् द्युति वाले! मैं इस अपने शरीर को कुछ समय पर्यंत रक्षित रक्खूँगी। इस रीति से उस रति के द्वारा कहे जाने पर वह शैलराज भीषण सम्भ्रम से युक्त हो गया था।१४३। फिर अपनी तनयाका हाथ पकड़कर वापिस अपने ही नगर में जाने की इच्छा की थी। होने वाली बात अवश्य ही होती है इस कारण से समस्त भूतों पर कृपा करने वाली पार्वती ने अपनी सखियों के द्वारा पिता शैलराज से कहा।।१४४।। शैल पुत्री ने कहा-मेरे इस भाग्य हीन शरीर से क्या प्रयोजन होगा ? क्या कारण है और क्यों भगवान् शंकर उस दशा को प्राप्त हो गये हैं। इस प्रकार से ऐसी दशा में वे मेरे पति कैसे होंगे ?।।१४५।। मैं समझती हूँ कि तप के द्वारा अभीष्ट वस्तुकी प्राप्ति हो जाया करती है और तपश्चर्या करने वाले के लिए कोई भी वस्तु असाध्य नहीं है। साधनों के करने पर यह जो दुर्भाग्य की बात कही जाती है वह सब व्यर्थ ही है। तात्पर्य यहहैं कि साधनों द्वारा अभीष्ट सिद्धि अवश्य हो जाती है और दुर्भाग्य की चर्चा तो साधनों के न करने वाले ही व्यर्थ में कहा करते हैं।१४६।जो तपमें भ्रष्ट सन्देह वाले हैं वे अपने अर्थ को प्राप्त करने की इच्छा से तप ही किया करते हैं। इस प्रकार से मेरा यह निश्चय है कि मैं अब तप ही करूँगी यथा मैं जा रही हूँ इस रीति से कहने वाली अपनी पुत्री से शैलेन्द्र गद्गद स्वर एवं वर्णों वाली वाणी से बोला।।१४७।।

उमेति चापलं पुत्रि नक्षमंतावकं वपुः।
सोढुं क्लेशानुरूपस्य तपस्यः सौम्यदर्शने ।।१४८
भावन्यपि च कार्याणि पदार्थानि सदैव तु।
भाविनोऽर्था भवन्त्येत्येव वहवोऽनिच्छतोऽपि हि ।।१४९
तस्मान्न तपसा तेऽस्ति बाले किञ्चत्प्रयोजनम्।
भवन चेत्र गच्छामि चिन्तयिष्यामि तत्र वै ।।१५०
इत्युक्ता तु यदानैव गृहमन्वेति शैलजा।
ततोऽद्रिश्चिन्तयाविष्टः स्वसुतां प्रशशंसच ।।१५१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततोऽन्तरिक्षे दिव्या च वागभूद्भुवनत्रये ।
उमेति चापलं पुत्रि त्वयोक्ता तनया यतः ।।१५२
उमेमि नाभि तेनास्या भुवनेषु भविष्यति ।
सिद्धिमूर्तिमतीत्वेषाधयिष्यति चिन्तितम् ।।१५३
इति श्रुत्वा तु वचन स तदाकाशमण्डले ।
अनुज्ञाय सुतां शैलो जगमाशु स्वमन्दिरम् ।।१५४

हिमवान् ने कहा--हे पुत्रि यह तो तेरी चालता है। हे उमे! तेरा यह अतिशय मृदुल एवं मनोहर शरीर तपश्चर्या करने में सक्षम नहीं है। हे सौम्य दर्शन वाली! क्लेश सहन करने के अनुरूप तप करने वाला शरीर ही दूसरा होता है जो उन समस्त क्लेशों को सह लेता है। ४-। जो कार्य और पदार्थ होने वाले होते हैं वे सदाही होने वाले अर्थमें अवश्य ही हुआ करते हैं। उनमें बहुत से ऐसे भी कार्य हुआ करते हैं कि उनको नहीं चाहते हैं तो भी वे अवश्यम्भावी होने कारण हो ही जाया करते हैं ।।१४९।। हे बाले! इसलिए तुझे तपस्या करने का कोई भी प्रयोजन नहीं है अब अपने भवन को ही चलते हैं वहां पहुँचकर विचार करेंगे।१५० इस तरह निषेध पूर्वक कहीं हुई भी वह शैलजा जब वापिस घर पर उन अपने पिता के साथ नहीं गई तो वह शैलेन्द्र हिमवान् बड़ी भारी चिन्तासे समाविष्ट हो गये थे और उन्होंने अपनी पुत्री के इस कार्य की प्रशंसा की थी।१५१। इसके अनन्तर उसी समय में आकाश में तीनों भुवनों में परम दिव्य आकाशवाणी हुई थी कि तूने हे उमे! यह तेरी चपलता है-यह जो पुत्री से कहा था इसीलिए इस तुम्हारी पुत्री की उमा–यह नाम तीनों भुवनों में होगा। यह तेरी पुत्री सिद्ध मूर्ति है और यह अपने अभीष्ट की सिद्धि प्राप्त करेगी। उस समय में आकाश मण्डल में जो यह वचन कहे गये थे उनका श्रवण करके उस शैलराज ने अपनी पुत्री को तपस्या करने की आज्ञा प्रदान करदी थी और आप स्वय अपने निवास स्थान को चला गया था ।।१५२-१५४।

शैलजापि ययो शैलमगम्यमपि दैं तः ।
सखीभ्यामनुयाता तु नियता नगराजजा ।।१५५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शृङ्गं हिमवतः पुण्यं नानाधातुविभूषितम् ।
दिव्यपुष्पलताकीर्णं भ्रमरोद्घुष्टपादपम् ।।१५६
त्यक्तं सूर्यस्य रुचिर्भिन्नसहतपल्लवम् ।
तत्राम्बराणि सन्त्यज्य भूषणानि च शैलजा ।।१५७
सवीतावल्कलैर्दिव्यंदर्भानिर्मितमेखला ।
त्रिःस्नाता पाटलाहारा बभूव शरदाशतम् ।।१५८
शतमेकेनजीर्णे पर्णेनावर्त्तयत्तदा ।
निराहारा शतं साऽभूत्समानाँ तपसोनिधि· ।।१५९
ततउद्वेजिताः सर्वे प्राणितस्तपसोऽग्निना ।
ततः सस्मार भगवान्मुनींन्सप्त शतक्रतुः ।।१६०
ते समागम्य मुदिताः सर्वे समुदितास्तथा ।
पूजितास्ते महेन्द्रेण पप्रच्छुस्तत्प्रयोजनम् ।।१६१

पुलस्त्य महर्षि ने कहा-वह शैल कुमारी देवताओं के द्वारा भी अति अगम्य उस शेल पर चली गई थी। वह नागराज की पुत्री अपने निश्चय पर दृढ़ थी और उसके साथ दो सखियाँ भी गई थीं।१५५। वह हिमवान् का शिखर परम पुण्यमय स्थल था जहाँ पर अनेक प्रकार की धातुओं की शोभा थी। वह स्थान परम दिव्य पुष्प और लताओं से समाकीर्ण था और वहां वृक्षों पर पुष्पों के मकरन्द का आस्वादन करनेके लिए भौंरे उद्घोष कर रहे थे।१५६। वह स्थल लता पादपों के पत्रों से ऐसा सहत हो रहा था कि सूर्य की किरणों का प्रकाश भी वहाँ नहीं पहुँचता था। वहां पर पहुँच कर शैलजाने समस्त अपने भूषण और वस्त्रों का त्यागकर दिया था।१५७।उस शैलेन्द्रकुमारी ने दिव्य वल्कलोंसे अपने शरीर को संवृत किया था और दर्भ की मेखला निर्मित करली थी। वह तीन बार स्नान किया करती थी और पाटलों का आहार करती है। इस प्रकार से उसे तपस्या करते हुए एकसौ वर्ष व्यतीत होगये थे।१५८।इसके पश्चात् उसने एकसौ वर्ष पुराने पत्तों का आहार करके व्यतीत किये थे। फिर इसके उपरान्त एकसौ वर्ष तक बिल्कुल बिना आहार वाली होकर गायत्रीके समान रही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी ।१५६। उस समय उनकी तपश्चर्या की अग्नि ने समस्त प्राणी उद्वेजित होरहे थे । इसके पश्चात् इन्द्रदेव ने सातों मुनियों का स्मरण किया था ।१६०। वे सप्तर्षियों का गण परम आनन्दित एव अत्यन्त प्रसन्न होते हुए वहां पर आगये थे । महेन्द्रदेव ने उनकी पूजा की थी । इसके अनन्तर उन ऋषियों ने उनके वहां पर स्मरण करके बुलाने का प्रयोजन इन्द्रदेव से पूछा था ॥१६१॥

किमर्थं हि सुरश्रेष्ठ संस्मृतास्तु वरं त्वया ।
शक्रः प्रोवाच शृण्वन्तु भगवन्तः प्रयोजनम् ॥१६२
हिमाचले तपो घोर तप्यते भूधरात्मजा ।
तस्याभिमतयोगेन भवन्त कर्तुमर्हथ ।
तपः समाप्त्नं देव्या जगदर्थं त्वरान्विताः ।१६३
तथेत्युक्त्वा ततः शैलं सिद्धसङ्घातसेवितम् ॥१६४
ऊचुरागम्य सुनस्तमथो मधुराक्षरम् ।
पुत्रि कस्ते व्यवसितः कामः कमललोचने ॥
तानुवाच ततो देवी सादरं गौरवान्मुनीन् ॥१६५
तपस्यन्तो महाभागाः प्रोह्य मौनंभवद्दृशाम् ।
वन्दनायनियुक्ताधीर्याचियत्यविकल्पितम् ॥१६६
सुप्रसन्नमुखा यूय गृहीत्वांसनमादितः ।
उपविष्ठाः श्रमं मुक्त्वा ततः प्रक्ष्यक्ष मामनु ॥१६७
त्युक्तास्ते ततश्चक्रुस्तत्रासनपरिग्रहम् ।
साचतान्विधिवत्पूर्वं पूजयित्वा विधानतः ॥१६८
उवाचादित्यसङ्काशान्मुनीन्सप्तऋषीञ्छनः ।
त्यक्त्वाव्रतात्मकंमौनंनत्वाचविविवन्मुनीन् ॥
भगवन्तोऽपि मौनान्ते तस्याः सप्तर्षयोऽप्यथ ।
गौरवाधारचां प्राप्त, पप्रच्छुस्तां पुनस्तथा ॥१६९

सप्तर्षियों ने कहा—हे सुरश्रेष्ठ ! आपने किस प्रयोजन के लिए इन सबका स्मरण किया है ? देवराज ने कहा था कि आप सब महानुभाव उस आगमन का प्रयोजन सुनिये ।१६२। इन्द्रदेवने कहा—इस समय में हिमवान्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैलराज की पुत्री हिमाचल पर्वत पर अत्यन्त घोर तपश्चर्या कर रही है उसका जो अभीष्ट प्रयोजन उस तपस्या का है उसका योग आप लोग ही करने के योग्य होते हैं। जगत् के कल्याणके लिये ही देवीके तप का समापन करिये। आप लोग शीघ्रता से युक्त होकर इस कार्य को करें।१६३। 'तथास्तु' अर्थात् ऐसा ही करेंगे यह कहकर वह सप्तर्षि सिद्धोंके समुदायके द्वारा संसेवित उस शैल पर गये और मुनियों ने उस तप करती हुई देवी से बहुत ही मधुर वचनों में कहा था। हे पुत्रि ! हे कमल के समान लोचनों वाली ! इस अत्यन्त घोर तपश्चर्या करने की क्या कामना हैं जिसका आपने निश्चय किया हैं ? ऐसा प्रश्न मुनियो के द्वारा किये जाने पर उस देवी ने गौरव से बहुत ही आदर के साथ उनको उत्तर दिया था ।।१६४-१६५।। देवी ने कहा—हे महाभागो ! आप सब तपस्वी हैं, आप जैसे महापुरुषों की वन्दना करने के लिए अपना मौन व्रत त्याग कर मेरी नियुक्त बुद्धि अविकल्पित की याचना करती है अर्थात् मेरी याचना ऐसीहै जिसका दूसरा कोई भी विकल्प नहीं है।१६६।आप सब सुप्रसन्न मुख वाले होते हुए सबसे प्रथम आसन को ग्रहण करें। फिर उन आसनों पर संस्थित होकर आप समागमन के श्रम का त्याग कीजिए। इसके अनन्तर फिर मुझसे जो भी कुछ पूछना हो उसे पूछिये ।।१६७।। इस तरह से उस देवी ने सबसे पूर्व उन महर्षियों का विधि के साथ पूजन किया था ।।१६८।। उन भगवान् सप्तर्षियों ने भी उसके मौन के अन्त में गौरव की आधारता को प्राप्त हुई उससे फिर पूछा था। १६९।।

सापि गौरवगर्भेण मनसा चारुहासिनी ।
मुनीन्सर्वांस्तथालोक्य प्रोवाच्छप्रोह्यवाग्यमम् ।।१७०
भगवन्तो विजानींथ प्राणिनां मनसेप्सितम् ।
शरीरादिभिरर्थं कदर्थ्यन्ते ह देहिनः ।।१७१
केचित्त निपुणास्तत्र घटन्तेविविधोद्यमैः ।
उपायैर्दुर्लभान्भावान्प्राप्नुवन्ति ह्यतन्द्रिताः ।।१७२
अपरे तु परिच्छिद्य नानाकारानुपक्रमान् ।
देहान्तरार्थं सारम्भमाश्रयन्ति हि तद्व्रतम् ।।१७३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समत्वाकाशसम्भूतकुसुमस्रग्विभूषितम् ।
विन्ध्यशृङ्गं स्प्रष्टुकामो हस्तः प्रसरते मुहु. ॥१७४
अहं किल भवं देवं पतिं प्राप्तुं समुद्यता ।
प्रकृत्यै दुराराध्यं तपस्यन्तं च सम्प्रति ॥१७५
सुरासुरर्निर्णीत परमार्थक्रियाश्रयम् ।
साम्प्रतं चापि निर्दग्धो मदनो वीतरागिणा ।
कथमाराधयेदीशं मादृशी तादृशं शिवम् ॥१७६

उस देवी ने भी अन्दर में गौरव रखने वाले मन से सुन्दर हास करने वाली होती हुई उन समस्त मुनियों को उस प्रकार से प्रश्न करने वाले देखकर अपने वाणी के संयम का त्याग करके कहा था ।१७०। आप लोग तो प्राणियों के मन की इच्छा को जानते हैं। ये देहधारी शरीरादि के द्वारा अत्यधिक कदर्थित हुआ करते हैं ॥१७१॥ उनमें कुछ लोग तो बहुत कुशल होते हैं जो कि अनेक प्रकार के उद्यमों के द्वारा सम्पन्न होते हैं और उपायों से निस्तन्द्र होकर दुर्लभ भावों की भी प्राप्ति कर लिया करते हैं अर्थात् उन निपुण पुरुषों के उपाय पूरी लगन के साथ ऐसे ही होते हैं। कठिन से भी कठिन वस्तु की भी प्राप्ति उन्हें हो ही जाया करती है।१७२। दूसरे ऐसे भी लोग हैं जो नाना भाँति के उपक्रमों को करके भी देहान्तर केलिये आरम्भ के सहित उस व्रत का समाश्रय लिया करते हैं। इस प्रकार से ये दो तरह के मनुष्य होते हैं ॥१७३॥ मेरा तो यह हाथ विन्ध्याचल की अत्युच्च चोटी के स्पर्श करने की कामना रखकर बार बार प्रसृत होता है जोकि आकाश में समुत्पन्न कुसुमों की माला से विभूषित है अर्थात् असम्भव प्रायः ही है ॥१७४॥ मैं तो भगवान् शङ्कर को अपने पति के स्वरूप में प्राप्त करने के लिये ही इस तपश्चर्या को करने के लिये समुद्यता हुई हूँ जो कि प्रकृति से ही इस समय में तप करने वाले केलिए अत्यन्त दुरासाध्य है।॥१७५।यह परमार्थ क्रिया का आश्रय सुरों एवं असुरों के द्वारा निर्णीत नहीं है। इस समय में तो वीतराग वाले भगवान् शङ्कर ने कामदेव को भी भस्मीभूत कर दिया है। मुझ जैसी अबला उस प्रकार के ईश्वर शिव का आराधन कैसे कर सकेगी? अर्थात् मेरे द्वारा तप से उसका प्राप्त करना तो अत्यन्त ही असम्भव सा है ॥१७६॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्युक्ता मुनयस्ते तु स्थिरतां मनसस्ततः ।
ज्ञातुमस्या वचःप्रोचुः प्रक्रमात्प्रकृतार्थकम् ॥१७७
द्विविध तु सुख तात्पुत्रिलोविभाव्यते ।
शरीरस्यास्य सयोगश्चेतसश्चापितिर्वृतिः ॥१७८
प्रकृत्या तु स दिग्वासा भीमो भस्मास्थिभूषणः ।
कपाली भिक्षुको नग्नो विरूपाक्षोऽस्थिरक्रियः ॥१०९
प्रमत्तोन्मत्तकोकारोबीभत्सोकृतभङ्ग्रहः ।
पत्या न तेन चास्त्यर्योमूर्तनकाङ्क्षितः ॥१८०
यदि स्वस्थ शरीरस्य सुखमिच्छसि शाश्वतम् ।
तत्कथं ते महादेवाद्भूतभाजो जुगुप्सितात् ॥१८१
इत्युक्तवत्सु कुपिता मुनिवर्येषु शैलजा ।
उवाच क्रोवरक्ताक्षी विस्फुरद्दशनच्छदा ॥१८२
ससद्ग्रहस्य का नीतिर्व्यंसनस्य क्व यन्त्रणा ।
विपरीतार्थबोद्धारः सत्पथे केन योजिताः ॥२८३
एवं मांवित्थदुष्प्रज्ञामस्थानासद्ग्रहप्रियाम् ।
न मां प्रति विचारोऽस्मियदहङ्कारमानिनी ॥१८४

पुलस्त्य महर्षि ने कहा—इस रीति से उस देवी के द्वारा कहे गये उन मुनियों ने उसके मन की स्थिरता का ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रक्रम से प्रकृत अर्थ वाले वचन उससे कहे थे।१७७। सप्तर्षियों ने उस देवीसे कहा-हे पुत्रि! इस लोक में दो प्रकार का सुख होता है। एक तो इस शरीरका संयोग प्राप्त करना और दूसरा चित्त की भी निवृत्ति का लाभ करता है।१७८। वैसे देखा जावे तो यह शिव तो प्रकृति से ही ऐसे हैं कि वह निरन्तर नग्न रहा करते हैं-उनकी आकृति भयानक है-वे सर्वदा अपने शरीर पर भस्म धारण किया करते हैं और मृत पुरुषोंकी हड्डियांही उनके शरीर का भूषण हैं। वे मुण्डों की माला पहिनने वाले हैं-भिक्षाचरण किया करत हैं-नग्न रहते हैं-विगत रूप वाले नेत्रों से युक्त और अस्थिर क्रिया वाले रहते हैं।१७९। जैसे कोई प्रमत्त या उन्मादयुक्त हो वैसा ही उनका आकार है। वे बहुत ही वीभत्स तथा संग्रह न करने वाले देव हैं। ऐसे उनको

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति के स्वरूप में चाहना तो बिल्कुल ही एक साक्षात् मूर्त्त अनर्थ की ही आकांक्षा करना है।१८०। हे देवि! यदि तुम सर्वदा स्थिर रहने वाले अपने शरीर के सुखको प्राप्त करने की इच्छा करती हो तो महादेव को पति रूप में प्राप्त करने से कदापि वह प्राप्त नहीं हो सकता है जो महादेव सदा भूतों के साथ रहते हैं और अत्यन्त निन्दित हैं। उनसे कैसे यह शारीरिक सुख मिल सकता है? १८१: पुलस्त्य मुनि ने कहा-जब उन सप्तर्षियों ने उस देवी से इस तरह कहा तो वह शैल पुत्री उन मुनियों पर अत्यन्त क्रोधित होगयी थी और क्रोध से लाल आंखोंको करते हुए अपने ओष्ठ और फूदशनों को विस्त्तं करके उसने उनसे कहा ।।८२।। शैल पुत्री बोली—असद् के ग्रहण करनेकी क्या नीति है और व्यसनकी यन्त्रणा कहां पर है? आप लोग तो बिल्कुल विरुद्ध अर्थ के जानने वाले हैं। आप लोगों को सत्पथ पर किसने योजित किया है?।१८३। आप लोग अनुचित एवं असद् वस्तु की प्राप्ति की इच्छा वाली तथा दुष्ट बुद्धि से युक्त इस तरह मुझको समझते हैं आप लोग मेरे प्रति कुछ भी विचार प्रकट न करें क्योंकि मैं तो अपने अभीष्ट लक्ष्य के प्राप्त करने के अभिमान वाली हूँ।१८४।

जाते लोकविधाने तु मत्यं तत्त्वार्यमुत्तमम् ।
प्रायः प्रालेयशैलस्य शङ्कातत्काल रूपिणः ।।१८५।
सत्य मुत्कस्ठिनाः सर्वे ये ये कार्यार्थमुघताः ।
तेषांत्वरन्तेचेतांसि किन्तु नाममहात्मनाम् ।।१८६
लोकयात्रानुगन्तव्या विशेषेणविवक्षितैः ।
यतस्मद्धर्ममेधन्ते तत्प्रामाण्यं परें घृताः ।।१८७
इत्युक्त्वा मुनयो जग्मुस्त्वरितातुहिनाचलम् ।
तत्र ते पूजितास्तेन हिमशैलेन सारदम् ।
ऊचमुंनिवराः प्रीताः स्वल्पंक तु त्वरान्विता ।।१८८.
देवो दुहितर साक्षात्पिनाकी तव मार्गते ।
तच्छीघ्रं पावयात्मानमाहुत्येवानलेहुतम् ।।१८९
कार्यं हि तच्च देवानां सुचिरं वरिवर्तते ।
जगदुद्धारणाशेष विधातव्यः समुद्यमः ।।१९०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्तर्षियों ने कहा—इस लोक के विधान में जो कार्य उत्तम है वही सत्य होता है। बहुधा हिमवान् शैल की शङ्का उस समय के अनुरूप ही है। हम सब लोग तो सत्य के लिए उत्कण्ठित हैं जो कि यहाँ पर कार्य करने के लिए इस समय में समुद्यत हुए हैं। उन महान् आत्मा वालों के चित्त ऐसा कार्य करने की शीघ्रता किया करते हैं १८५-१८६ विशेष रूप से विवक्षित के द्वारा लोकयात्रा का अनुगमन करना चाहिए जिससे धर्म की वृद्धि होती है और इसका प्रमाण तो वे ही महापुरुष है जिन्होंने महाव्रत धारण कर रखा हैं।१८७। पुलस्त्य मुनि ने कहा—इतना कहकर वे मुनिगण शीघ्रता से हिमाचल के समीप में चले गये थे। वहाँ पर हिमवान् शैलराज के द्वारा वे परम समादर के साथ पूजित हुए थे। उन मुनिवरों ने त्वरा से युक्त होते हुए प्रसन्नता के साथ थोड़ा-सा ही उस हिमवान् से कहा था।१८८। मुनियों ने कहा—साक्षात् भगवान् पिनाकी देव आपकी पुत्री को चाहते हैं सो अग्निमें हुतकी हुइ आहुतिकी भाँति आप अति शीघ्र अपने आपको पावन करिये इससे देवों का कार्य चिरकाल में परिवर्तित होता है। यह यत्न ऐसा है जिससे समस्त जगत् का उद्धार होता है अतः इसे निष्पन्न करने के लिए अति शीघ्र उद्यम आपको करना चाहिए ॥१८९ १९०॥

इत्युक्तस्तु तदा शैलो हर्षाविशवशान्मुनीन् ।
असमर्थोऽभवद्वक्तुमुत्तरं प्रार्थयन्निप ॥१९१
ततो मेना मुनीन्वन्द्य प्रोवाच स्नेहविह्वला ।
दुहितुस्तान्मुनींश्चैववचनं स्वयमर्थवत् ॥१९२
यदर्थं दुहितुर्जन्म चेच्छन्त्यपि महाफलम् ।
तदेवोपस्थितं सर्वं प्रक्रमेणैव साम्प्रतम् ॥१९३
कुलजन्मवयोरूप विभुत्वंस्सहितोऽप्रियः ।
·रस्तस्यापिनाहूय सुता देया ह्ययाचतः ॥१९४
दिग्वासा जटिलः शूली दग्कामोऽपि कामदः ।
स तु मत्सुतया घोरः कथं न म उपास्यते ॥१९५
ऐश्वर्यमवगज्छस्व शङ्करस्य सुरासुराः ।
आराध्यमानपादाब्जयुगलाश्च मुनिर्वृताः ॥१९६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यस्योपयोगि यद्रूपं तेन तत्थार्थ्यते चिरम् ।
घोरं तपस्यते वाला तेन रूपेण निर्वृता ॥१९७
यत्सा व्रतानि दिव्यानि नयिष्यति समापनम् ।
तदत्रावहिता तावदस्मास्वेव भविष्वति ॥१९८

पुलस्त्य मुनि ने कहा—इस तरह जब मुनियों के द्वारा वह शैलराज कहा गया था तो वह इतना प्रसन्न होगया था कि उस हर्ष के आवेश से प्रार्थना करते उनको उत्तर देने में भी असमर्थ होगया था अर्थात् प्रसन्नता के आधिक्य के कारण हिमवान् से कुछ भी बोला न जा सका था ।१९१। इसके अनन्तर शैलराज की पत्नी मेना ने मुनियों की वन्दना की थी और पुत्री के वह स्नेह से विकल होती हुई उन मुनियों से बोली और स्वयं ही अर्थवान् वचन कहे॥१९२॥मेना ने कहा—जिस कार्य की निष्पत्ति के लिये मेरी पुत्री का यह जन्म हुआ है मैं उसी महान् फल की इच्छा करने वाली हूँ। वह ही इस समय में सब कुछ प्रक्रम से उपस्थित हो गया है ।१९३। कुल, जन्म, अवस्था, रूप और विभुत्व से जो युक्त हो ऐसा ही वर होतो उसका समाह्वान करके भी बिना याचना किये ही अपनी पुत्री को उसे दे देना चाहिए ॥१९४।दिशाओं के वसन धारण करने वाला अर्थात् नग्न—जटाजुट धारण करने वाला-त्रिशूलधारी-कामदेव को भस्म कर देने वाला भी कामनाओं को प्रदान करने वाला शिव है। ऐसा महान् घोर शंकर है किन्तु मेरी पुत्री के द्वारा वही न मालूम क्यों उपासित किया जा रहा है? ॥१९५॥ मुनियों ने कहा-आप उनके ऐश्वर्य को समझो। समस्त सुर और असुर उन शंकर के चरण युग की आराधना करने वाले हैं और उस आराधना से वे परम आनन्द एव शान्ति प्राप्त किया करते हैं ।१९६। जिसको जो रूप उपयोगी होता है उसी रूप से वह चिरकाल पर्यन्त प्रार्थित किया जाता है। वह आपकी वाला उसके घोर स्वरूप कीही प्रार्थना कर रहीहै और उसी उनके स्वरूप से उसे सुनिर्वृति प्राप्त होती है ।१९७। वह अपने दिव्य व्रतों की समाप्ति करेंगी वैसे ही हम वहाँ पर सावधानता से स्थित हैं यह सब हमारे ही ऊपर सम्पन्न होगा ॥१९८॥

द्रष्टुं वयमिहायाताः शङ्करं गुणनायकम् ।
त्रिलोचनं विजानीहि सुरकार्यप्रचोदिताः ॥१९९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वमेव नो गतिस्तत्र यथाकालानतिक्रमः ।
स्यात्प्रार्थनैषा प्रायेण प्रतीहारमयी प्रभो ॥२००
इत्युक्तो मुनिभिः सोऽथ गौरवात्तानुवाचह ।
स वनस्यापरां सन्ध्यां कर्तुं मन्दाकिनीं गतः ॥१०१
क्षणेन भाविता विप्रास्ततो द्रक्ष्यथ शूलिनम् ॥२०२
इत्युक्ता मुनयस्तस्थुर्यत्नात्कार्य विचक्षणाः ।
गम्भोराम्बुध्रर प्रावृट्तृषिश्चातका यथा ॥२०३
तथा क्षणेन निष्तन्नसमाचारक्रियाविधिम् ।
वीरासनकृतोद्देश मृगचर्मनियासितम् ॥२०४
ततो विनीतो जानुभ्यामवलम्ब्य महीं मुदा ।
उवाच वीरकी देवं प्रणयैकसमाश्रयम् ॥१०५

ऋषियों ने कहा —हम सब यहां पर भगवान् शंकर का दर्शन करनेके लिए हो उपस्थित हुए हैं जो गुणों के नायक है। ऋषियों ने शकरसे मिलने केलिए हिमाचल के शिखर पर पहुँचकर यह कहाकि हम सवतो देनताओं के कार्य के लिए ही प्रेरित होकर यहाँ पर उपस्थित हुए हैं । अतएव भगवान् शंकर की सेवा में यह हमारा निवेदन कर दीजिए।१६६। ऋषियों ने वीरक से कहा था कि हमारी तुम ही एक गति हो, ऐसा ही जिससे काल का अतिक्रदण न हो । हे प्रभो! यह प्रतिहार मयी हमारी प्राय: प्रार्थना है ।२००।पुलस्त्य मुनि ने कहा--मुनियों के द्वारा जिस समय में उस वीरक से इस भांति कहा गया तो फिर वीरक गौरव से उन मुनियों से बोला--वीरक ने कहा--इस समय में भगवान् शंकर अपना संध्या करने के लिए मन्दाकिनी पर गये हुए हैं ।२०१। एकक्षण के पश्चात् ही हे विप्रगण! आप सब लोग भगवान् शूली के दर्शन प्राप्त कर लेगे ।२०२। इस तरह से कहे जाने पर पुलस्त्य मुनि ने कहाकि वे सब मुनिगण वहाँ पर स्थित होगये थे क्योंकि ये सब यत्नपूर्वक अपना कार्य करने में बहुत ही कुशल थे । वे सब लोग उस समय इस भाँति भगवान् शंकर के दर्शन की प्रतीक्षा कर रहे थे जिस तरह वर्षा ऋतु में तृषित चातक गम्भीर मेघ की प्रतीक्षा किया करते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं ।२०३। इसके पश्चात् क्षणभर में ही भली-भाँति आचार की क्रिया-विधि को निष्पन्न कर लेने वाले, वीरासन से संस्थित, मृग के चर्म को लपेटे हुए तथा प्रणय के एकमात्र आश्रय वाले देव से भूमि पर अपने दोनों घुटनों को टेककर परम विनीत भाव से प्रसन्नता के साथ वीरक ने निवेदन किया था ।।२०४-२०५।।

सम्प्राप्ता मुनयः सप्त द्रष्टु त्वां दीप्ततेजपम् ।
विभो समादिशद्रष्टुं ततो ध्यानमिहार्हसि ।।२०६
इत्युक्तो धूर्जटिस्तेन वीरकेण महात्मना ।
भ्रूभङ्गसंज्ञया तेतां द्रवेशाज्ञां प्रवेशाज्ञां ददौ तदा ।।२०७
मूर्द्धकम्पेन तान्सप्त वीरकोऽपि महामुनीन् ।
आजुहाव विदूरस्थान्दर्शनाय पिनाकिनः ।।२०८
त्वराबद्धजटास्ते च लम्बकृष्णाजिनाम्बराः ।
विविशुर्वेदिकांदिव्यांगिरिशस्यविभोस्ततः ।।२०९
बद्धपाणिपुटाक्षिप्तनाक पुष्पोत्करास्ततः ।
पिताकिपादयुगलं वन्द्य नाकनिवासिनः ।।२१०
ततः स्निग्धेक्षिताः सन्तो मुनयः शूलपाणिना ।
यिरीमं तु ततो दृष्ट्वा ते सम तुष्टुवुर्मुदा ।।२११

वीरक बोला-हे विभो दीप्त तेज वाले आपका दर्शन प्राप्त करने के लिए सात मुनि आये हुए हैं। आप दर्शन प्रदार करने की आज्ञा देवें और आप इस ओर अपना ध्यान देने के योग्य होते हैं ।।२०६।।पुलस्त्य मुनि ने कहा-जब महात्मा वीरक ने भगवान् धूर्जटि से इस तरह कहा तो शंकर ने अपनी भ्रू-भङ्ग की संज्ञा से उस समय उनके प्रवेश की आजा प्रदान कर दी थी ।।२०७।। फिर वीरक ने भी अपने मस्तक को कम्पित करने के संकेत से बिना कुछ शब्दों के समुच्चारण किये हुए अधिक दूरी पर समास्थित उन मुनियों को भगवान् पिनाकी के दर्शन प्राप्त करनेके लिये आह्वान किया था।२०८।उन मुनियों ने भी शीघ्रता से अपनी जटाओं को बाँधकर लम्बे कृष्ण मृग चर्म के अम्बरों को धारण किये हुए विभु गिरीश की दिव्य वेदिका में प्रवेश किया था ।।२०९।। उन मुकियों के दोनों हाथों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अञ्जलि बंधी हुई थीं और उनमें स्वर्गीय पुष्पों की राशि भरी हुई थी अर्थात् दोनों हाथों में स्वर्ग के पुष्प लिये हुए थे जिन पुष्पों को स्वर्गवासियों के वन्दनीय शंकर के चरण युगले में उन्होंने समर्पित कर दिया था।२१०। भगवान् शूलपाणि के द्वारा वे सब मुनिगण स्नेह भरी दृष्टि से देखे गये थे। उन्होंने भी गिरीश के दर्शन प्राप्त करके परमानन्द के साथ शिव का स्तवन करना आरम्भ कर दिया था ॥२११॥

अहो कृतार्था वयमेव सम्प्रतं सुरेश्वरैर्वन्दितपादपल्लवम् ।
विलोकयामो गुणगोरवर्द्धिभिः समादिशेःकार्यमशेषरक्षणम्॥२१२
ततः प्रहस्य सर्वज्ञ उवाच मुनित्तमान् ॥२१३
भवतां यद्धृदि गतं कार्यं तत्कुरुताधुना ॥२१४
इत्युक्ता मुनयस्तूर्णं ययूर्यत्र च शैलजा ।
बभाषिरे विभागज्ञा गिरिजां गिरिगह्वरे ॥२१५
रम्यं प्रियमनोहारि मा रूपं तपसा दह ।
प्रीतस्ते शङ्करः पाणिमेष प्रतिग्रहीष्यति ॥२१६
वयमर्थितवन्तस्ते पितरं पूर्वमागताः ।
पित्रा सह गृहं गच्छ वयं यामः स्वमन्दिरम् ॥२१७

मुनिगण ने कहा—अहो भाग्य हमारा है, हम सब लोग आज सुरेश्वरों के द्वारा वन्दित आपके चरण युगल को देखने का सुअवसर प्राप्त कर रहे हैं। अब आप गुणोंके गौरवको बढ़ाने वाले वचनों के द्वारा सबकी रक्षा करने के कार्य के लिए आज्ञा प्रदान कीजिए ॥२१२॥ पुलस्त्य मुनि ने कहा-इसके अनन्तर सब कुछ ज्ञाता भगवान् शंकर हँसकर उन समस्त मुनियों से बोले।२१३।भगवान् शंकर ने कहा आप लोगों के हृदय में रहने वाला जो भी कुछ कार्य है उसे अब करिये।२१४पुलस्त्य मुनि ने कहा—जब इस भाँति भगवान् शंकर ने मुनियों को आदेश दे किया तो वे समादिष्ट होकर शीघ्रही वहाँ पर पहुँचे जहाँ पर शैलजा तपश्चर्या कर रहीथीं और विभागके ज्ञाता उन्होंने गिरिकी कन्दरा में देवी गिरिजा से कहा था ॥२१५॥ऋषियों ने कहा-हे देवी ! अब आप अपने इस परम रम्य, प्रिय और मनोहारी रूप को इस प्रकार की कठिन तपश्चर्या से नष्ट मत करो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् शंकर अब आप पर प्रसन्न हो गये हैं और वे आपका पाणिग्रहण करेंगे।२१६।हमने पहिले ही आकर आपके पिताजी से भी प्रार्थना करदी है सो अब आप पिताजी के साथ अपने घर को चली जाओ और हम भी सब अपने निवास स्थान को जा रहे हैं ।।२१७।।

इत्युक्ता तपसः सत्यं फलमस्तीति चिन्त्य सा ।
त्वरमाणा तयौ वेश्म पितुर्दिव्यं सुशोभितम् ।।२१८
सा तत्र रजनीं मेने वर्षायुतसमां सती ।
हरदर्शनसञ्जातसमुत्कण्ठा हिमाद्रिजा ।।२१९
ततो मुहूर्त्ते ब्राह्मे तु तस्याश्चक्रुः सुहृत्क्रियाम् ।
नानामङ्गलसन्दोहान्यथावत्क्रमतुर्वकम् ।२२०
अभवन्मुनयो नागा यथागन्धर्वकिन्नराः ।
शङ्करस्यापि विवधागन्धमानपर्वते ।।२२१
सज्जमण्डनसम्भारास्तस्थुर्निर्मलमूर्त्तय ।
शर्वस्याथ जटाजूटे चन्द्रखण्ड पितामहः ।।२२२
बवन्ध प्रणयोदारविस्फारितविलोचनः ।
कमलमालां विपुलां चामुण्डा मूर्ध्निबध्नती ।।२२३
उवाच गिरिशं काली पुत्रं जनय शङ्कर ।
यो दैत्येन्द्रकुलं हत्वा मां रक्त स्तपयिष्यति ।।
वायवश्चववुस्तीक्ष्ण हिमगिरिप्रभम् ।
वृषं विभूषयामासुर्हरयानं मदोजवम् ।।२२४

पुलस्त्य मुनि ने कहा-इस प्रकार से मुनियों के द्वारा कही गई उस गिरिजा ने तपस्या का फल बिल्कुल सत्य है-ऐसा विचार किया और फिर शीघ्रता से संयुत्त होती हुई वह अपने पिता के अत्युत्तम एवं शोभा से सम्पन्न घर में तपोभूमि से गई थी ।।२१८।। वहाँ पर उस सती ने उस रात्रि को दश हजार वर्ष के तुल्य मांना था क्योंकि उस हिमाद्रि की पुत्री को तो भगवान् शिवके दर्शन प्राप्त करनेकी अत्यन्त उत्कण्ठा उत्पन्न हो रही थी।।२१९।।इसके अनन्तर ब्राह्म मुहूर्त में उसकी सुहृत्क्रिया की थी और उचित रीति से क्रमपूर्वक अनेक प्रकार के मङ्गल कार्यों के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समूह भी किये गये थे।२२०।इधर भगवान् शंकर के गन्धमादन पर्वत पर भी विवाहोत्सव में सम्मिलित होने के लिये देववन्द मुनिगण, नाग, यक्ष, गन्धर्व और किन्नर सभी वहाँ आये थे।२२१।मण्डन के सम्भारों ले सुसज्जित होकर सब लोग निर्मल मूर्ति वाले हो धये थे। भगवान् शंकर के जटाजूट में पितामह ब्रह्माजीने चन्द्रखण्ड की बाँध दिया था। ब्रह्माजी उस समयमें प्रणय से अत्यंत उदार और खिले हुए नेत्रों वाले होरहे थे। चामुण्डा देवी ने विशाल कमलों की माला शिव के कण्ठ में बाँध दी थी अर्थात् पहिनाकर कण्ठ की सज्जा सम्पन्न की थी।२२२-२२३।उस समयमें काली ने शंकर से कहा था भि हे शंकर ! अब आप पुत्र को जन्म दो जो समस्त दैत्येन्द्रों के कुल का हनन करके उनके रक्त से तृप्त कर देवे। उस समय में तीक्ष्ण वायु चहन करने लगे और हिमगिरि की प्रभा के तुल्य प्रभा वाले तीक्ष्ण वृष को भी विभूषित किया था जो कि मक के समान वेग वाला हर का यान (सवारी) था अर्थात् शिव के समारूढ़ होने की सवारी थी ।।२२४।।

उपविष्टः क्रमाद्धाता विश्वकृद्भगनेत्रहा।
चक्रौद्वाहिकं कृत्यं पत्न्यासह यथोदितम् ।।२२५
दत्ताघ्यो गिरिराजेन सुरवृन्दैर्विनोदितः।
अवसत्तां क्षपां तत्र पत्न्यासह पुरान्तकः ।।२२६
ततो गन्धर्वगीतेन नृत्येनाप्सरसामपि।
स्तुतिभिर्देववर्न्यानां विबुद्धो विबधाधिप ।।२२७
आमन्त्र्य हिमशैलेन्द्रं प्रभाते जाययासह।
जगाम मन्दरगिरि वायुवेगन शृङ्गिणा ।।२२८
तषो गते भगवति नीललोहिते सहोमयारतिमनुभूतभूधरः।
सबान्धवो भवति हि कस्यनो मनो विश्रृङ्खलं जगति हि
कन्यका पितुः ।।२२९

इस विश्व की रचना करने वाले धाता क्रम से वहाँ आकर बैठ गये थे और भग के नेत्रों को हनन करने वाले ने पत्नी के साथ यथोदित वैवाहिक कृत को पूर्ण किया था।२२५। शैलों के राजा हिमवान् के द्वारा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव को अर्घ्य प्रदान किया था और देवों के समूह के द्वारा शिव को विनोद से समन्वित किया गया था। फिर पुर दैत्य के निहन्ता शिव ने उस रात्रि में अपनी पत्नी के साथ वहाँ पर ही निवास किया था ।।२२६।। इसके उपरान्त गन्धर्वों के द्वारा गाये गए गीतों से, अप्सराओं ने नृत्य से, और देवगण तथा दैत्यगण के द्वारा की गई स्तुतियों से वह विबुधों के अधिप जगाये गये थे।२२७। प्रातःकाल जब हो गया था तब हिम शैलेन्द्र का आमन्त्रित करके अपनी जाया (भार्या के साथ शिव वायु के तुल्य वेग वाले शृङ्गी के द्वारा फिर मन्दर पर्वत पर चले गये थे।२२८।उमाके साथ भगवान् नील-लोहित के चले जाने पर अर्थात् वहाँ से विदा हो जानेके बाद में हिमवान् भूधर अपने बान्धवों के सहित अरति का अनुभव करने लगे थे इस जगत् में किस कन्या के पिता का मन ऐसा है जो कम्पित और विशृंखल न होता हो अर्थात् सभी का मन कन्या को विदाई देने पर उदास हो ही जाता है। यह स्वाभाविक नियम है ।।२२९।।

।। कार्तिक का जन्म और विजय ।।

उक्ता वै शैलजा प्राह भवत्वेवमनिन्दिताः ।
ततस्तुहर्षसम्पूर्णाः पद्मपत्रस्थित पयः ।।
तस्यै ददुस्तया चापि तत्पीत क्रमशो जलम् ।।१
पीते तु सलिले चैव तस्मिन्नेन णणे वरः ।
विपाट्य देव्याश्चततो दक्षिणं कुक्षिनुद्गतः ।।२
निश्चक्रामोद्भुतो बालो रोगशोकविनाशनः ।
प्रभाकरकरव्रात प्रकारप्रकरप्रभु- ।।३
गृहीतनिर्मलोदग्रशक्तिशूलाङ्कुशोऽनलः ।
दीप्तो मारयितु दैत्यानुत्थितः कनकच्छविः ।।४
एतस्मात्कारणादेव कुमारश्चापि सोऽभवत् ।
वामं विदार्य निष्क्रान्तस्ततो देव्याः पुनः शिशुः ।।५
स्कन्दोऽथवदनाद्वह्नेः शुभ्रात्षड्वदनोऽरिहा ।
कृत्तिकासलिलादेवशाखाभिः सविशेषतः ।।६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाखाः शिवाः समाख्याताः षट् सु वपुवत्रं विस्तृताः ।
यतस्ततो विशाखोऽसौ ख्यातो लोकेषु षण्मुखः ।।७

पुलस्त्य मुनि ने कहा इस प्रकार से कृत्तिकाओं के द्वारा कही हुई गिरिजा ने कहा था कि ऐसा हो जावे । उस समय में उसके समस्त शरीर के अवयव आनन्दित हो रहे थे और इसके पश्चात् सब अवयव हर्ष से परिपूर्ण थे । फिर पद्म पत्र में स्थित जो जल था उसे कृत्तिकाओं ने उस गिरिजा को दे दिया था और उसने क्रम से उसका पान कर लिया था।१।उस जल के पीने पर उसी क्षण में वह वर देवी की कुक्षि का विपाटन करके दक्षिण कुक्षिमें वह उद्गत होगया थी।२।फिर एक अद्भुत बालक जो रोग और शोक का विनाश करने वाला था निकला । उस बालक की प्रभा प्रभाकर की किरणों के समूह के समान था।३। उस शिशु ने निर्मल उदग्र शक्ति. शूल, अकुश और अनल को ग्रहण कर रखा था, अत्यन्त दीप्ति से युक्त था । वह सुवर्ण के समान छवि वाला समस्त दैत्यों को मारने के लिये उठकर खड़ा हो गया था।४।इसी कारण से वह कुमार हुआ था । वामभाव को विदीर्ण करके फिर देवी से शिशु निकला था ।५। वह्नि के शुभ्र वदन से स्कन्द हुआ जिसके छैमुख थे और वह शत्रुओं के हनन करने वाला था । कृत्तिका के सलिल से ही विशेषकर वह शाखाओं से युक्त था ।।६।। उसके छः मुखों से वे विस्तृत शाखाएँ शिवा नाम से पुकारी गईं थीं । यही कारण है कि वह षण्मुख लोकोंमें विशाख इस नाम से प्रसिद्ध हुआ था ।।७।।

स्कन्दो विशाखः षड्वक्त्रः कार्तिकेयश्च विश्रुतः ।
पक्षे चत्रस्त्रयहुलेपञ्चदश्यांमहाबलौ ।।८
सम्भूतावर्कसदृशा विशाले शरकानने ।
सिते पक्षे तु पञ्चम्यां तथैतौ पावकानलौ ।।९
बालकाभ्यां चकारैक सन्ध्ययामेव भूतये ।
तस्यामेव ततः षष्ठ्यामभिषिक्तो गृहः प्रभुः ।।१०
सर्वैरमरसङ्घातैर्ब्रह्मोपेन्द्रेन्द्र भास्करैः ।
गन्धमाल्यैः शुभैर्धूपस्तथाक्रीडनकैरपि ।।११

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छत्रैश्चामरजालैश्च भूषणैश्च विलेपनैः ।
अभिशिक्तो विधानेन यथावत्षणमुखः प्रभुः ॥१२
सुतामस्मै ददौ शक्रो देवसेनेति विश्रुताम् ।
पत्न्यर्थं देवदेवेशो ददौ विष्णुरथायुधम् ॥१३
यक्षाणां दशलक्षाणि ददावस्यधनाधिपः ।
ददौहुताशनस्तेजो ददौवायुश्च वाहनम् ॥१४

उस बालक के स्कन्द, विशाख, षड्वक्त्र और कार्त्तिकेय ये नाम प्रसिद्ध हैं। चैत्र मास के बहुल पक्ष में पञ्चदशी की तिथी में महान् बल सम्पन्न और सूर्यके समान प्रभावाले विशाल शरों के वनमें उत्पन्न हुएथे। शुक्ल पक्ष में पञ्चमी तिथि में उसी प्रकार से ये पावक-अनल हुए थे। बालकों में से एक को सन्ध्या में ही भूति के लिए किया था। फिर उसी षष्ठी प्रभु का अभिषेक विधी पूर्वक समस्त देवगण— ब्रह्मा उपेन्द्र, इन्द्र, भास्कर के द्वारा गन्ध, माल्य, शुभ धूप, क्रीड़नक छत्र, चामरों का समूह, भूषण और विलेपनों से किया गया था।११-१२।देवराज इन्द्र ने अपनी पुत्री देव सेना नाम से प्रसिद्ध होने वाली को इस षण्मुख प्रभु को दे दिया था। देवदेवेश ने अपनी कन्या को पत्नी के स्वरूप में इनको प्रदान की थी। भगवान् विष्णुने आयुध दिया था।१३।धन के स्वामी कुबेर ने इनको दश लाख यक्षों की सेना प्रदान की थी। हुताशन देव ने तेज दिया था तथा वायु ने वाहन प्रदान किया था॥१४॥

ददौक्रीडनक त्वष्टा कुक्कुट कामरूपिणम् ।
एवं सुरास्तु ते सर्वे परिवारमनन्तकम् ॥१५
ददुर्मुदितचेस्का स्कन्द्रायादित्यवर्चसे ।
जानुभ्यामवनौ स्थित्वा सुरसङ्गास्तमस्तुवन् ।
स्तात्रेणानेन बरदं षण्मुखं मुख्तशः सुराः ॥१६
कं वः काशं वप्रच्छमि भवन्यो ब्रूत निवृता ।
यद्यप्यसाध्य कृत्यं नो हृदये चिन्तितं चिरम् ॥१७
इयुक्तास्तु सुरास्तेन प्रोचुः प्रणतमौलयः ।
सर्वएव महात्मानगुहं मुदिमानसाः ॥१८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैत्येन्द्रतारको नाम सर्वामरकुलान्तकृत् ।
बलत्वाद्दुर्जयस्तीक्ष्णो दुराचारोऽतिकोपनः ॥१६
तमेव जहि दुर्धर्षं दैत्यं सर्वविनाशनम् ।
उपस्थितः कृत्यशेषो ह्यस्माकं च भयावह ॥२०
हिरण्यकशिपुश्चोग्रो ह्यवध्यो देवतागणैः ।
यज्ञघ्नः पापकर्मा वै ये न ब्रह्माणि तापितः ॥
एतौ हरस्व भद्रं ते तारकं च महाबलम् ॥२१

त्वष्टा देव ने कामरूपी कुक्कुट क्रीड़नक प्रदान किया था । इस प्रकार से वे समस्त सुरगण उसका अनन्त परिवार था। ५।भगवान् सूर्य के सदृश वर्चस वाले भगवान् स्कन्द के लिये सब देवताओं ने बहुत ही प्रसन्न चित्त से युक्त होकर ये वस्तुएं प्रदान की थीं । सब देवता भूमि पर घुटनों से स्थित होकर उससे बोले और सुरो से मुख्यतया वरद का स्तोत्र के द्वारा स्तवन भी किया था।१६।कुमार ने कहा-मे आपकी किस कामना को पूर्ण एवम् सफल करूँ । आप सब लोग सुनिवृत्त होते हुए मुझे बतलादो । चाहे वह कार्य असाध्य ही क्यों न हो आपने जिसको चिरकाल से हृदय में सोच रक्खा हो उसे ही मुझसे कह दो। ७।पुलस्त्य मुनि ने कहा-इस तरह से स्कन्द के द्वारा जब देवगण से कहा गया तो समस्त देवताओं ने अपना मस्तक उनके आगे झुका दिया था और फिर बहुतही अधिक प्रसन्न मन वाले होकर महाम् मात्म वाले भगवान् गुह से बोले।१८।देवोंने कहा हे भगवन् ! तारक नाम वाला एक दैत्यों का राजा । वह समस्त देवताओं के कुल का विनाश करने वाला है । वह बहुत ही अधिक बलवान् दुर्गम, अत्यधिक तीक्ष्ण और बहुत ज्यादा क्रोध वाला है।१९। उसी दुष्ट दुर्धर्ष और सम्पूर्ण देवोंके नाशक दैत्य का बध कर दीजिए । हम लोगों का अत्यत भयावह यही एक कृत्य शेष हे जो इस समय उपस्थित हैं ।२०। हिरण्यकशिपु भी अत्यंत उग्र और देवगणों के द्वारा अवध्य है वह यज्ञों के नाश करने वाला और पाप कर्मों के करने वाला हैं । वह ऐसा भीषण दैत्य है कि जिसने ब्रह्माजी को तारित कर दिया था । इसका अपहरण कीजिए क्योंकि आपका तो महान् बल है ॥२१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवमुक्तस्तथेत्यमुक्त्वा सर्वामरपदानुगः ।
जगाम जगतां नाथः स्तूययमानोऽमरेश्वरैः ॥२२
तारकस्य वधार्थाय जगतां कण्टकस्य च ।
ततश्चप्रेषयामास शक्रो लब्धसमाश्रयः ॥२३
दूतं दानवसिंहस्य पुरुषाक्षरवादिनम् ।
स तु गत्वाऽब्रवीद्दैत्यमभयो भीमदर्शनम् ॥२४
शक्रस्त्वामाह देवशो दैत्यकेतुं दिवस्पतिः ।
तारकासुर तच्छक्त्या घटयस्व यथेच्छया ॥२५
यच्चजगज्ज्वलतोद्दीप्त किल्बियं च त्वया कृतम् ।
तस्याहं सादकस्तेऽद्य राजाऽस्मि भुवनत्रये ॥२६
श्रुत्वैतदद्भूतं वाक्यं कोपसरक्तलोचनः ।
उवाच दूतं दुष्टात्मा नष्टप्रायविभूतिकः ॥ २७
दृष्टं ते पौरुषं शक्रं शतशोऽथ महारणे ।
निस्त्रपत्वान्न ते शान्तिर्विद्यते शक्र दुर्मते ॥२८

पुलस्त्य ने कहा—इस रीति से देवों के द्वारा प्रार्थना करने पर ऐसा ही किया जायगा—यह षण्मुख ने कहा था । उस समय समस्त देवता उनके चरणों में गिरकर प्रणाम करने लगे थे । इस तरह देवेश्वर के द्वारा स्तुति होकर वह जगत् का स्वामी चला गया था ॥२२॥ उसने जगत् के कण्टक स्वरूप दुःखदायी तारक के वध करने के लिए गमन किया था । इसके अनन्तर षण्मुख का समाश्रय प्राप्त करके इन्द्र ने दानवों में सिंह के समान तारक के पास एक दूतको भेज दियाथा जो बहुत ही कठोर भाषण करने वाला था । वह दूत उसके पास पहुँचा और निर्भय होकर उसने दैत्य से कहा-।२३-२४।दूत बोला-स्वर्गलोक के स्वामी देवराज इन्द्र ने दैत्यकेतु आपके समीप में यह सन्देश कहलाकर भेजा है कि हे तारकासुर ! अब आप अपनी पूर्ण शक्ति का इच्छापूर्वक प्रयोग कर लीजिए ।२५। आपने इस सम्पूर्ण जगत् को ताप दग्ध करके जो अत्यन्त उद्दीप्त पाप किया है मैं उसका सादक हूँ और आज ही उस पाप का फल मैं दूँगा क्योंकि इन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीनों भुवनों का राजा हूँ ।२६। पुलस्त्य ने कहा-दूत के द्वारा कथित इस अद्भुत वाक्य को सुनकर वह तारक क्रोध से लाल नेत्रों वाला होगया था और अपनी सम्पूर्ण विभूति को प्रायः नष्ट करने वाला वह दुष्ट आत्मा वाला दूत से बोला ।२७। तारकासुर ने कहा—उस इन्द्र का मैं एक बार नही सैकड़ों बार संग्राम भूमि में पौरुष देख लिया है । हे दुष्ट बुद्धि वाले इन्द्र ! तू तो बहुत ही निर्लज्ज है और अभी तक भी तुझे शान्ति नहीं हुई है इसका कारण तेरी लज्जाशून्यता ही है ।२८।

एवमुक्ते गते दूते चिन्तयामास दानव ।
नालब्धसंश्रयश्शक्रो वक्तुमेवमिहार्हति ॥२९
जातः स्कन्दोऽधुना शर्वाज्ज्ञायते समुपाश्रयः ।
निमित्तौघांस्तदा दुष्टान्सोऽपश्यन्नाशवेदिन- ॥३०
पांसुवर्षमसृक्पात गगनादवनीतले ।
वामनेत्रप्रकम्पं च वक्त्रशोषं मनोभयम् ॥३१
स्वकानां वक्त्रपद्मानां म्लानतां च व्यलोकयत् ।
दुष्टाश्च प्राणियो रौद्रान्सोऽपश्यद्दुष्टवादिनः ॥३२
तदचिन्त्यैवदितिजोऽन्यस्तचित्तोऽभवत्क्षणात् ।
यावद्गजगट घण्टाघनत्कारवोत्कटाम् ॥३३
तद्वत्तुरङ्गसङ्घातहेषोत्साहविभूषिताम् ।
सैन्यैस्सेनान्तरोदग्रध्वजराजैर्विराजिताम् ॥३४
विमानैश्चाद्भुताकारैश्चलितामलचामरैः ।
विभूषणपिनद्धां च किन्नरोद्गीतनादिताम् ॥३५

पुलस्त्य मुनि ने कहा-ऐसा कहने के पश्चात् दूत के चले जाने पर उस दैत्येन्द्र ने विचार किया था कि विना किसी बड़ी शक्ति का समाश्रय पाये यह इन्द्र इस प्रकार से निडर होकर कहने के योग्य नहीं हो सकता है । ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् शङ्कर से इस समय में स्कंद का जन्म होगया है और वही इस इन्द्र का समाश्रय हो सकता है।२९। उस समय में नाश के ज्ञापन करने वाले अत्यन्त दुष्ट निमित्तों के समूहों को उस तारकासुर ने देखा था ।३०। आकाश से धूलि की वर्षा और भूमि पर रक्त का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पात उस समय में होने लगा था। उन तारक के वाम नेत्र प्रकम्पित होने लगे तथा उसके मुखमें शुष्कता आगई थी और मनमें महान् भय समुत्पन्न होगया था।३१। उसने अपने मुख पर पद्मों में म्लानता देखी थी। तारक दैत्येन्द्रने दुष्ट प्राणियों को अत्यन्त रोद्र रूप वाले और दूषित भाषण करने वाले देखा था।३२। इन सब बुरे कुशगुनों की तथा बुरे निमित्तों की कुछ भी परवाह न करके एक ही क्षणमें न्यस्त चित्त वाला होगया था। जितने भी उसकी सेना में हाथी थे उनके समूहों के घण्टाओं की ध्वनि से उत्कट उसकी सेना वहाँ उसने देखी थीं।३३। इसी भाँति वह सेना अश्वों के समुदाय की हिनहिनाहट के उत्साह से समन्वित होगई थी। समान्तर के उदग्र ध्वजराओं से सयुत सैनिकों से भी वह शुशोभित हो रही थी।३४। अद्भुत आकार वाले और जिनमें निर्मल चमर ढुराये जा रहे थे ऐसे विमानों से उसकी सेना समन्वित थी। बहुत से भूषणों से पिनद्ध उसकी सेना थी और उन सेना मे किन्नरों के द्वारा गाये हुए गीतों की ध्वनि की गूँज छाई हुई थी।३५।

नानानाकतरूत्फुल्लकुसुमापीडधारिणीम्।
विशोकास्त्रपरिस्फार चर्म निर्मलदर्शिनीम्॥३६
विद्युत्पुष्टद्युतिधरां नानावाद्यविनादिताम्।
सेनां नाक्रमदांदैत्यः प्रासादस्थोव्यलोकयत्॥३७
संचिन्तयामास तदा किञ्चिद्विभ्रान्तमानसः।
अपूर्वः को भवेद्योद्धा योमयान विनिर्जितः॥३८
ततश्चिन्ताकुली दैत्याः शुश्राव कटुकाक्षरम्।
सिद्धबन्दिभिरूद्घुष्टमिद हृदयदारूणाम्॥३९
श्रुत्वैतत्तारकः सर्वमुद्घुष्ट देवबन्दिभिः।
सस्मार ब्रह्मणो वाक्य वधंवालादुपस्थितम्॥४०
स्मृत्वा धर्मोघावध्व मीसदा वीरपदानुगः।
मान्दरान्निजगामाशुशोकग्रस्तेन चेतसा॥४१
कालनेमिमुखादैत्याः सन्त्रस्ता भ्रान्तचेतसः।
स्त्रेष्वनीकेषु तदात्वराविस्मितचेतसः।
हिरण्यकशिपु प्राह दानवानां धुरन्धरः॥४२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेक प्रकार के स्वर्ग के वृक्षों के विकसित पुष्पों के आपीड़ को धारण करने वाली वह तारक की सेना थी। विशोकास्त्र के परिस्फार, चर्म से निर्मल दिखाई देने वाली थी। विद्युत की परिपुष्ट द्युति को धारण करने वाली-विविध प्रकार के वाद्यों से निनादित होतीहुई सेनाको स्वर्गवासियोंके प्रमाद में स्थित उस दैत्येन्द्र तारक ने देखा था।३६।उस समय उस सुविशाल अपनी सेना को सुसज्जित देखकर उस दैत्यराज ने कुछ विशेष रूपसे भ्रांत मन वाला होकर चिन्तन किया था कि ऐसा कौन अपूर्व योधा है जो मेरे द्वारा नहीं जींता जा सकता हो।६७।इसके अनन्तर फिर चिन्ता से व्याकुल हुए उस दैत्येन्द्र ने यह अति कटु अक्षरों वाले-हृदय को दारुण लगने वाले और सिद्धगण तथा वन्दिगण के द्वारा उद्घुष्ट वचन सुने थे जो कि भगवान् स्कन्द के जय-जयकार को सूचित कर रहे थे।३७।पुलस्त्य मुनिने कहा उस तारक असुर ने इस देवगण तथा वन्दिगणके द्वारा उद्घोषित किये हुए वचनों का श्रवण करके फिर ब्रह्माजी के उन वचनों का स्मरण किया था जो वर-दान प्रदान करने के समय मे किसी सात दिन के बालक से वध होने के विषय में कहे गये थे।३९।सर्वदा जिसके वीर लोग पदानुगमन करने वाले रहते हैं ऐसे धर्म के समूह का विध्वंस करने वाला वह तारक असुर शोक से ग्रस्त चित्त से संयुत होकर अतिशीघ्र ही अपने मंदिर से निकल गयाथा।४०।कालनेमि जिनमें प्रधान था ऐसे सभी दैत्यगण बहुत ही भयभीत और भ्रान्त चित्त वाले हो रहे थे। अपनी-अपनी सेनाओं में समास्थित होकर उस समय में त्वरा (शीघ्रता) से विस्मित चित्त वाले होते हुए वहाँ पर समुपस्थित थे। दानवों में धुरन्धर हिरण्यकशिपु से बोला ।।४१-४२।।

त्रपाकरं भवेन्मह्यं बलादस्मात्पलायनम्।
यद्यहं हन्तवे यामि सोऽपि कमलाश्रितः ।।४३
हत्वाऽहं बालकंचैनं दुस्स्पर्शं स्यामकारणम्।
यात धावत गृह्णीत योजयध्वंवरूथिनीम् ।।४४
कुमारं तारको दृष्ट्वा बभाषे भीषणाकृतिः।
किं बाल योद्धुकामोऽसि क्रीड कन्दुकलोलया।
यैरसि विसृष्टोऽत्र सङ्गरे ते हि भीरवः ।।४५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालत्वादथ ते बुद्धिरेव स्वल्पार्थदर्शिनी ।
कुमारोऽपि तमग्रस्थं इह नैव निरूप्यते ।४६
शृणुतारकशास्त्रार्थं इह नैव निरूप्यते ।
शस्त्रैरर्था दृश्यन्ते समरे निर्भरं भये ॥४७
शिशुत्वं मावमंस्थामे शिशुः कष्टो भुजङ्गमः ।
दुष्प्रेक्षो भास्करो वालस्तथाहंदुर्जयः शिशुः ।
अल्पक्षरो न मन्त्रः किं सस्फुरो दैत्य दृश्यते ॥४८

तारकासुर ने कहा-इस वर्त्तमान समय में इस सेना में मेरा भाग जाना तो मेरे लिए अत्यन्त ही लज्जाजनक होगा । यदि मैं उस हनन करने वाले के सम्मुख जाता हूँ तो यह भी कमलाश्रित है । मैं इस बालक को मारकर बिना ही किसी कारण के दुःस्पर्श हो जाऊँगा ? आओ, दौड़ो, पकड़ लो और सेना को योजित करो ।४३। पुलस्त्य मुनि ने कहा—इस तारकासुर ने जवकुमार को देखा थातो उस समयमें वह अत्यन्त ही भीषण आकृति वाला होकर कुमार से बोला-तारक ने कहा-हे बालक ! क्या तू मुझ से युद्ध करने की इच्छा वाला होकर इस रणभूमि में उपस्थित हुआ है ? अभी तो तू वहुत ही छोटा बच्चा है । गेंद के खेल से अपना दिल वहला । जिन लोगों ने तुम छोटे से वालक को यहाँ पर युद्ध करने के लिए भेज दिया है वे तो इस संग्राम से स्वयं बहुत ही भयभीत रहने वाले हैं।४४। तू अभी वहुत ही छोटा वच्चा है इसलिये बचपन के कारण होनेसे ही तेरी वुद्धि इस प्रकार से स्वल्प अर्थ को ही देखने वाली है । इसके पश्चात् आगे स्थित और अत्यन्त हर्षयुक्त उस दैत्येन्द्र से कुमार ने भी कहा था ।४५। कुमार बोले-हे तारक ! सुनिये, इस समय में शास्त्रोंके अर्थ नहीं निरूपित किये जाते हैं, यह तो संग्राम स्थल है इस समरभूमि में भय में निर्भय व्यक्ति को शस्त्रों से अर्थ नहीं दिखलाई दिया करते हैं।४६।हे दैत्यराज ! आप मुझे छोटा-सा एक शिशु मत समझो । यह शिशु अत्यन्त कष्टप्रद भुजंगम है । भास्कर भी यड़ी कठिनाई से जिसको देख सकता है ऐसा मैं दुर्जन शिशु बालक हूँ । क्या अल्प अक्षरों वाला मन्त्र नहीं होता है ? हे दैत्य ! वह भी स्फुरण से युक्त दिखलाई दिया करता है ॥४७-४८॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुमारे प्रोक्तवत्येवं दैत्यश्चिक्षेप मुद्गरम् ।
कुमारस्तं तु चिच्छेद चक्रेणामोघवर्चसा ।।४६
ततश्चिक्षेप दैत्येन्द्रो भिन्दिपालमयोमयम् ।
करेण तं च जग्राह कर्तिकेयोऽमरारिहा ।।५०
गदां मुमोच दैत्याय समुत्थाय खरस्वनाम् ।
तया हस्ततो दैत्यश्चकम्पेऽचलराडिव ।।५१
मेने च दुर्जयं दैत्यस्तदा वालं सुदुःसहम् ।
चिन्तयामास बूद्धयावै प्राप्तकालो नसंशयः ।। २
कम्पितं च समालोक्य कालनेमि पुरोगमाः ।
सर्वे दैत्येश्वराः जघ्नुः कुमारं रणदारुणम् ।।५३
स तैः प्रहाररस्पृष्टस्वथा क्लेशर्मंमहाद्युतिः ।
स बालो बलिभिर्वंगैरयुध्यद्दानवै रणे ।।५४
रणशौण्डाश्च दैत्येन्द्राः पुनर्जघ्नुःशिलीमुखैः ।
कुमारं समरे दैत्याः बलिनो देवकण्टकाः ।।५५
कुमारस्य व्यथा नाभूदंत्यास्त्र निहतस्य तु ।
प्राणान्तकरणं जातं देवानाँ दानवावम् । ५५
देवान्निपीडिदान्दृष्द्वा कुमाइ- क्रोपमाविशत् ।
ततोऽस्त्रैर्दारयामास दानावानामनीकिनीम् ।।५७

पुलस्त्य महर्षि ने कहा—कुमार ने जब इस प्रकार से कहा तो इस कहने पर ही दैत्यराज ने कुमार पर मुद्गर का प्रहार कर दिया था। कुमार ने अपने अमोघ वर्चस वाले चक्र से उस मुद्गर को छिन्न कर दिया था ।४६। इसके पश्चात् दैत्येन्द्र ने लौह से हरिपूर्ण भिन्दिपाल नामक अस्त्र का प्रक्षेप किया था । देवों के शत्रुओं का हनन करने वाले कार्त्तिकेय ने उस भिन्दिपाल अस्त्र को अपने हाथ से ही ग्रहण कर लिया था।५०। फिर कुमार ने अत्यन्त खरध्वनि वाली गदा को उठाकर उस दैत्य पर उसको छोड़ दिया था । उस गदा के प्रहार से हत हुआ दैत्य एक महान् पर्वत की भाँति काँप उठा था ।५१। इस गदा के प्रहार से चोट खाकर उस तारक दैत्य ने उस बालक कुमार को दुर्जय और दु:सह मान लिया था । उसने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर तो अपनी बुद्धि से विचार किया था कि अब मेरा काल आ ही गया है—इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है ।।५२। दैत्येन्द्र तारक को कम्पमान देखकर समस्त दैत्यों ने जिनमें कालनेमि प्रमुख था रण में परम दारण कुमार पर हनन करने के लिए प्रहार किये थे।५३। किन्तु उन समस्त किए हुए प्रहारों से वह कुमार बालक अस्पृष्ट हो रहे थे अर्थात् उन प्रहारों का स्पर्श भी उनके शरीर से नहीं हुआ था। उन क्लेशों से महान् दयुति वाले वह कुमार वेग वाले और अत्यन्त बलधारी दानवों से उस रणभूमिमें युद्ध करने लगे थे।५४। रण में शौण्ड अर्थात् अत्यन्त तेजस्वी वीर दैत्येन्द्रों ने फिर कुमार पर बाणों के द्वारा प्रहार किए थे। वे दत्य समर में अत्यन्त बलशाली थे और देवों के कण्टक अर्थात् दुःख देने वाले थे।५५। विविध भाँति में अस्त्रों के प्रहारों से भी कुमार को कुछ भी व्यथा नहीं हुई थी और दैत्य बराबर अपने अस्त्रों से उन्हें निहित करते चले जारहे थे। यह दानवों का महान् युद्ध देवों के प्राणों का अन्त करने वाला ही हुआ था ।५६। देवों को अत्यन्त उत्पीड़ित देखकर कुमार को बड़ा भारी क्रोध आ गया था। इसके पश्चात् उसने दानवों की सेना को अपने अस्त्रोंसे विदीर्ण कर दिया था ।।५७।।

तैरस्त्रैर्निष्प्रतीकारस्ताडितास्सुरकण्टका ।
कालनेमिमुखाः सर्वे रणेह्यासन्पराङ्मुखाः ।।५८
विद्रुतेषु च दैत्येषु प्रहतषु समन्ततः ।
किन्नरोद्गारगीतैश्च हास्यसंन्यस्तचेतनः ।।५९
जघ्ने कुमारं गदया निष्टप्तकनकत्विषा ।
शरैर्मयूरं शित्रैश्च चकार विमुखं रणे ।।६०
दृष्ट्वा पराङ्मुखो देवो मुक्तहक्तं स्ववाहनम् ।
जग्राह शक्ति विमलां रणे कनकभूषणाम् ।।६१
बाहुना हेमकेयूररुचिरेण षडाननः ।
ततोऽब्रवीन्महासेनस्तारक दानवाधिपम् ।।६२
तिष्ठतिष्ठ सुदुर्बुद्धे यमलोक बिलोकय ।
हतोह्यसि मया शक्त्या स्मरस्वं दैत्यचेष्टितम् ।।६३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विना प्रतीकार होने वाले उन अस्त्रों से ने सुरों के कण्टक दुःख देनेवालेकालनेमि प्रमुख समस्त दैत्य उस संग्राममैं पराङ् मुख होगये थे और हार मान गये थे, क्योंकि जिन-जिन अस्त्र-शस्त्रों का वे स्कन्द कुमार पर प्रक्षेप कर प्रहार करते थे उनका उसको शरीर पर स्पर्श तक न होकर कोई भी परिणाम नहीं होता था और वे सभी व्यर्थ चले जाया करते थे ।५८।जब सभी ओर से दैत्य भाग खड़े हुए और मारे गये थे तो किन्नरों के द्वारा गाये गये जो गीत थे उनमें उसका हास्य किया था। उस हास्य से संन्यस्त चेतना वाले दैत्येन्द्र ने संतप्त सुवर्ण के समान कान्ति वाली गदा से कुमार पर प्रहार किया था और विचित्र शरों से उस रणभूमि में स्कन्द के वाहन मयूर को विमुख कर दिया था।५९-६०।स्कन्द देव ने देखा कि उनका अपना वाहन मयूर युद्ध स्थल में पराङ् मुख होगया है और उसके शरीर से रक्तपात हो रहा है तो फिर उस स्कन्द देव ने कनक भूषण शक्ति को जो विमल थी ग्रहण किया था।६१।भगवान् षडानन ने हेम के मयूर (अंगद) से सुशोभित एवं परम सुन्दर भुजा से उस शक्ति को लेकर फिर वह महासेन दानवों के अधिप तारकासुर से बोले।६२।महासेन प्रभुने कहा-हे अत्यन्त दुष्ट बुद्धि वाले दैत्यराज ! खड़ा, रह, खड़ा रह, और अब तू यमलोक की ओर अपनी दृष्टि डाल ले। अब तू मेरी इस महती शक्ति से समझ ले, मारा जा रहा है। अब तू अपने दैत्यों द्वारा किये हुए चेष्टितों (कर्मों) का अच्छी तरह से स्मरण करले ।।६३।।

इत्युक्त्वा तु ततः शक्ति मुमोच दितिजं प्रति ।
सा कुमारभुजोत्सृष्टा तत्केयूररवानुगा ।।६४
बिभेद दैत्यहृदयं वज्रशैलेन्द्र कर्कशम् ।
गतासुः स पपातोर्व्या प्रलये भूधरो यथा ।।६५
विकीर्णं मुकुटोष्णीषोविस्रस्ताखिलभूषणः ।
तस्मिन्वनिहते दैत्ये दानवानां धुरन्धरे ।।६६
नाभूत्कश्चित्तदा दुःखी नरकेष्वपि पापकृत ।
स्तुवन्तः षण्मुखं देवाः प्राक्रीडन्नागतस्मिताः ।।६७
जग्मुः स्वानेवभुवनान्निरस्या संस्तथोत्सुकाः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ददुश्चापि वरं सर्वे देवास्ते षण्मुखाय तु ।
तुष्टाः सम्प्राप्तसर्वार्थास्सह सिद्धैस्तपोधनैः ॥६८
यः पठेत्स्कन्दसम्बन्धां कथामेतां महामतिः ।
शृणुयाच्छ्रावयेद्वापि स भवेत्कीर्तिमान्नरः ॥६९
बह्वायुः सुभगः श्रीमान्कीर्तिमाञ्छुभदर्शनः ।
भूतेभ्योनिर्भयश्चापि सर्वदुःखविवर्जितः ॥७०
सन्ध्यामुपास्य यः पूर्वां स्कन्दस्य चरितं पठेत ।
सयुक्तः किन्नरैः सर्वैर्महाधनपतिर्भवेत् ॥७१

पुलस्त्य महर्षि ने कहा—इतना कहकर फिर स्कन्द देव ने उस शक्ति को उस दिति के पत्र पर छोड़ दिया था। उस सुवर्ण के केयूर को धारण करने वाली भुजा से छोड़ी हुई शक्ति ने वज्र के पर्वत के तुल्य अत्यंत कर्कश दैत्येन्द्र के हृदय का भेदन कर दिया था। वह फिर प्राणों के त्याग कर जाने वाला दैत्यराज प्रलय काल में पर्वत की भांति भूमि पर गिर पड़ा था।६४-६५।जब मरकर भूमिपर गिर गया था, तोउसके मस्तक का मुकुट और उष्णीय पाग) तिकीर्ण होगये थे तथा अन्य सम्पूर्ण भूषण भी टूट-फूटकर इधर-उधर फैल गये थे। उस दानवों के महान धुरन्धर दैत्यराज तारक के मर जाने पर उस समय मे कोई पापों के करने वाला नरकों में भी दुःखित नहीं हुआ था। सब देवता लोग हंसते और प्रसन्न होते हुए भगवान् षण्मुख की स्तुति करके हुए वहाँ पर आकर आनन्द में क्रीड़ा करने लगे थे।६६।फिर वे सब अपने भवनोंको छोड़कर वहाँपर बड़ी उत्सुकता वाले होकर चले गयेथे। वहाँ पर सब देवगणोंने भगवान् षण्मुख के लिये वरदान दिया था। सिद्ध लोग तथा तपस्वीजनों के साथ सभी लोग परम सन्तुष्ट हुए थे और उनके सभी अर्थ निष्पन्न होगये थे।६९। देवों ने कहा—जो कोई भी महान् मति वाला पुरुष इस भगवान स्कन्दसे सम्बन्ध रखने तारकासुर के वध की कथा का अध्ययन करेगा या इसका श्रवण करेगा अथवा इस कथाको किसी को श्रवण करायेगा वह मनुष्य अत्यधिक कीर्ति वाला हो जायगा। वह बहुत अधिक आयु वाला, सौभाग्य-सम्पन्न,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमान्–कीर्ति समन्वित शुभ दर्शन वाला– समस्त प्राणियों से भय रहित और समस्त प्रकार के कष्टोंसे रहित होजायगा। यह ऐसी परम पुण्यमयी कथा है कि इसके भक्तिपूर्वक पढ़ने-सुनने और सुनाने से ये सभी उपर्युक्त फल वाले होजाते हैं। जो कोई भी मनुष्य अपनी प्रातःकालीन संध्या की उपासना करके इस स्कन्द देव के द्वारा किये गये तारकासुर के वध किये जाने वाले चरित्र की कथा को पढ़ता है वह समस्त किन्नरों से समन्वित होकर महान् धनपति हो जाता है ॥६८-७१॥

॥ नृसिंहावतार वर्णन ॥

इदानीं श्रोतुमिच्छामि हिरण्यकशिपोर्वधम् ।
नरसिंहस्य माहात्म्यं तथा पापविनाशनम् ॥१
पुरा कृतयुगे राजन्हिरण्यकशिपुः प्रभुः ।
दैत्यानामादिपुरुषश्चकार सुमहत्तपः ॥२
दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च ।
जलवासी समभवत्स्नानमौनधृतव्रतः ॥३
वृतः शमदमाभ्यां च ब्रह्मचर्येण चैव हि ।
ब्रह्मा प्रीतोऽभवत्तस्य यपसा नियमेन च ॥४
ततः स्यम्भूर्भगवान्स्वयमागत्य तत्र हि ।
विमानेनार्कवर्णेन हंहयुक्तेन भास्वता ॥५
प्रोतोऽस्मि तव भक्तस्त तपासनेन सुव्रत ।
वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥६

भीष्मदेव ने कहा—हे भगवन्! अब में हिरण्यकशिपुका वध किस प्रकार से हुआ था—यह श्रवण करने की इच्छा करता हूँ। मेरी यह भी इच्छा है कि भगवान् नरसिंह का, पापों को विनष्ट करने वाला माहात्म्य भी आपसे सुनूँ।१। पुलस्त्य मुनि ने कहा—प्राचीन समय में कृतयुग में हे राजन्! दैत्यों के आदि पुरुष प्रभु हिरण्यकशिपु ने महान् तप किया था।२। स्नान और व्रत को धारण करने वाला होकर उस हिरण्यकशिपु ने ग्यारह हजार वर्ष तक जल में ही निवास किया था।३। उसने शम और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दम का व्रत धारण किया था और ब्रह्मचर्य के महाव्रत से युक्त वह रहा था। इस तरह के अत्यन्त दुष्कर तप से और नियमों के धारण करने से उन पर ब्रह्माजी बहुत अधिक प्रसन्न होगये थे।४। इसके अनन्तर सूर्य के समान वर्ण वाले भासमान हंस से युक्त विमान के द्वारा भगवान् स्वयम्भू वहाँ पर आये थे, जहाँ वह दैत्यराज हिरण्यकशिपु घोर तपश्चर्या कर रहा था।५। ब्रह्माजी ने कहा—हे सुव्रत! मेरे परम भक्त तुम्हारे इस घोर तप से मैं बहुत प्रसन्न होगया हूँ। अब तुम कोई भी वरदान मुझसे प्राप्त कर लो जिससे तुम्हारी यथेष्ट कामना पूर्ण होजावे—तेरा कल्याण हो॥६॥

न देवाः सुरगन्धर्वाः न यक्षोरगराक्षसाः।
न मानुषाः पिशाचाश्च हन्युर्मां देवसत्तम॥७
ऋषयो मानवाः शापैर्नशतेयुः पितामह।
यदि मे भगवान्प्रीतो वर एष वृतो मया॥८
न शस्त्रेण न चास्त्रेण गिरिणा पादपेन वा।
न शुष्केण न चार्द्रेण न स्याच्चान्येन मे वधः॥९
भवेयमहमेवार्कः सोमो वायुर्हुताशनः।
सलिलं चान्तरिक्षं च नक्षत्राणि दिशो दश॥१०
अहं क्रोधश्च कामश्च वरुणो वासवो यमः।
धनदश्च धनाध्यक्षो यक्षः किम्पुरुषाधिपः॥११
एष दिव्यो वरस्तात मया दत्तस्तवाद्भुतः।
सर्वकामप्रदो वत्स प्राप्स्यसि त्वं न संशयः॥१२
एवमुक्त्वा स भगवाञ्जगामाकाशमेव हि।
वैराज ब्रह्मसदनं ब्रह्मसदनं ब्रह्मर्षिगणसेवितम्॥१३
ततो देवाश्च गन्धर्वाः ऋषिभिः सह चारथाः।
वरप्रदानं श्रुत्वैवं पितामहमुपस्थिताः॥१४

हिरण्यकशिपु ने कहा—हे देवों में परम श्रेष्ठ! यदि आप मुझ पर परम प्रसन्न है तो मैं यह वरदान चाहता हूँ कि मुझे देव, गन्धर्व, सुर, यक्ष, उरग, राक्षस, मनुष्य और पिशाच इनमें कोई भी न मार सकें। हे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पितामह ! ऋषिगण और मुनिवृन्द मुझे किसी प्रकार के शाप न दे सकें। किसी भी अस्त्र-शस्त्र, गिरि और पादक शुष्क तथा गीले के द्वारा मेरा वध न हो।७-६। मैं ही सूर्य-सोम-वायुअग्नि-सलिल-अन्तरिक्ष-समस्त नक्षत्र, दश दिशाएं क्रोध-काम-वरुण-वासव और यम हो जाऊँ।१०। मैं धनद जो कि सम्पूर्ण धन का स्वामी है और किम्पुरुषों का अधिपति यक्षराज हो जाऊँ-ऐसा ही वरदान मुझे दीजिए।११। ब्रह्माजी ने कहा-हे तात ! यह वरदान बहुत ही दिव्य है और अत्यन्त अदभुत है किन्तु मैं तो तुझ पर इतना प्रसन्न हो गया हूँकि मैंने आज देही दिया है। यह वरदान तो तेरी सम्पूर्ण कामनाओं के प्रदान करने वाला होताहै। हे वत्स ! तूइसे अवश्य ही प्राप्त करेगा। इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है।१२। पुलस्त्य मुनिने कहा--इस प्रकार से वह भगवान् ब्रह्माजी उस हिरण्यकशिपु से कहकर आकाश में जो वैराज-ब्रह्मर्षिगण के द्वारा सेवित ब्रह्म-सदन है वहाँ पर चले गये थे। इसके अनन्तर समस्त देवता-गंधर्व और ऋषियों के साथ चारण लोग इस हिरण्यकशिपु को दिये गए वरदान का श्रवण कर पिता-मह के समीप में समुपस्थित होगये थे ॥१३-१४॥

वरप्रदानाद्भगवन्वधिष्यति स नोऽसुरः।
तत्प्रसादश्च भगवान्वधोऽप्यस्यविचिन्त्यताम् ॥१५
भगवान्सर्वभूतानामादिकर्त्ता स्वयं प्रभुः।
स्रष्टा च हव्यकव्यानामव्यक्तप्रकृतिः परः ॥१६
सर्वलोकहितं वाक्यं श्रुत्वा देवः प्रजापतिः।
आश्वासयामास तदा सुशीतैर्वचनाम्बुभिः ॥१७
अवश्यं त्रिदशास्तेन प्राप्तव्य तपसः फलम्।
तपसोऽन्तेऽस्य भगवान्वधं विष्णुः करिष्यति ॥१८
तच्छ्रुत्वा विबुधाः वाक्यं सर्वे पङ्कजजाननात्।
स्वानि स्थानानि दिव्यानि विप्र जग्मुर्मुदान्विताः ॥१९
लब्धमात्रे वरे सोऽथ प्रजास्सर्वा अबाधत।
हिरण्यकशिपुर्दैत्यो वरदानेन गर्वितः ॥२०
आश्रमेषु महाभागान्मुनीन्वै शंसितव्रतान्।
सत्यधर्मपरान्दान्तान्धर्षयामास दानव- ॥२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवगणों ने कहा—हे भगवान् ! आपने तो उस असुर को ऐसा वरदान दे दिया है कि इससे तो वह किसी भी प्रकार से वध को प्राप्त नहीं होगा। आप भगवान् का इस प्रकार का उस पर प्रसाद तो है किन्तु इस दुष्ट असुर का बध तो आप सोचिए कि इसका मरण कैसे हो सकेगा?।१५। पुलस्त्य मुनिने कहा—देवों ने प्रार्थना कीथी कि आप तो स्वयं प्रभु हैं और समस्त भूतों के आदि—कर्ताहैं तथा सम्पूर्ण हव्य और कव्योंके सृजन करने वाले हैं। आप परम पुरुष और अव्यक्त प्रकृति के हैं। इस तरह से की गई देव प्रार्थना कों सुनकर जो कि सभी के लिए परम हितके करने वाली थी प्रजापति देव ने उसी समय में अपने अत्यन्त सुशीतल वचन रूपी जलों के द्वारा उन सबको समाश्वासन प्रदान किया था। ७। ब्रह्माजी ने कहा-हे देवगणो ! उस हिरण्यकशिपुने बड़ी घोर तपश्चर्या की थी इसलिये से इस तप का फल तो अवश्य ही प्राप्त करना ही था, किन्तु इस तप के फल प्राप्त करने के अन्त में इसका वध भी होगा, जिसे भगवान् विष्णु ही करेंगे।१८।पुलस्त्य मुनि ने कहा—उस समय में विबुध गणों ने पङ्कज ब्रह्माजीके मुख से इस प्रकारके वाक्य का श्रवण कियाथा और इसके पश्चात् वे सभी परम प्रसन्न होते हुए अपने दिव्य स्थानों को चले गयेथे।१६।इसके अनंतर उस असुर ने वरदान के प्राप्त होते ही समस्त प्रजागणों को बाधित करना आरम्भ कर दिया था क्योंकि वह दैत्य हिरण्यकशियु वरदान प्राप्त कर उससे बहुत ही अभिमानी हो गया था।२०। उस महादानव ने आश्रमों में निवास करने वाले महाभाग मुनियों को भी हर्षित किया था जो अपने-अपने व्रतों और नियमों को धारण करके रहते थे, सत्य धर्म में तत्पर थे और अत्यन्त दमनशील थे ॥२१॥

देवांस्त्रिभुवनस्थांश्च पराजित्य महासुरः ।
त्रैलोक्य वशमानीय स्वर्गे वसति दानवः ॥२२
यदा वरमदोत्सिक्तश्चोदितः कालधार्मिणा ।
यज्ञियावकोद्दैत्यानयज्ञियांश्च दैवतान् ॥ ॰३
तदा दैत्याश्च साध्याश्च विश्वे च वसवस्तथा ।
रुद्रा देवगणा यक्षा देवद्विजमहर्षय- ॥२४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरण्यं शरण विष्णुमुपतस्थुर्महाबलम् ।
देवदेवं यज्ञमयं वासुदेवं सनातनम् ।।२५
नारायण महाभाग देवास्त्वां शरणं गताः ।
त्रायस्व जहि दैत्येन्द्रं हिरण्यकशिपुं प्रभो ।।२६
त्वं हि नः परमो दाता त्वंहिन परमोगुरुः ।
त्वं हि नः परमोदेवो ब्रह्मादीनांसुरोत्तमः ।२७
भयंत्यजध्वममराः अभयं वो ददम्ययम् ।
तथैवत्रिदिवं देवाः प्रतिपद्यत मा चिरम् ।।२८
एनं हि सगण दैत्यं वरदानेन गवितम् ।
अवध्यममरेन्द्राणां दानवेन्द्रं निहन्म्यहम् ।।२९

वह महासुर हिरण्यकशिपु त्रिभुवन में स्थिति देवों को पराजित करके और तीनों लोकों को अपने वश में करके स्वर्ग में निवास करने लगा था ।२२। जिस समय में कालधर्मों के द्वारा प्रेरित होकर वह वरदान प्राप्त करने के मद से अत्यन्त उत्सिक्त हो गया तो फिर उसने गर्वमें भर-कर दैत्यों को यज्ञोंके भोक्ता बना दिया था और जो यज्ञोंके उपभोग करने वाले देवता थे उनको अयज्ञिय अर्थात् यज्ञों के भोग से रहित कर दियाथा । तात्पर्य यह है कि यज्ञों के भाग से देवताओं को वाञ्चित करदिया था२३ उस समय में दैत्य साध्य- विश्वेदेवा–वसुगण–रुद्र–यक्ष–देवगण–देव–द्विज- और महर्षिगण ये सब शरण में जाने के योग्य, रक्षक–महान् बल वाले-- यज्ञमय–सनातन–देवों के भी देव विष्णु भगवान् वासुदेव के समीप में उप-स्थित हुए थे ।२४।देवगणों ने कहा–हे भगवान् नारायण ! हे महान् भाग वाले! हम समस्त देवता लोग इस समयमें आपकी शरणागति में आये हुए हैं । हे प्रभो ! आप हमारी रक्षा करो और दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु का वध करो।२५।हे भगवान् ! आप ही हम सबके दाता हैं, आप ही हमारे सबसे बड़े गुरु हैं, आपही ब्रह्मा आदि सबके हमारे सुरों में परम श्रेष्ठ सबसे बड़े देव हैं । देवगण की इस करुण प्राथना को सुनकर भगवान् विष्णु ने कहा- विष्णु बोले–हे देवगण ! आप सब लोग भय का त्यागकर दो, हम आप सबको अभय का दान देते हैं आप सब लोग पूर्व की भांति उसी प्रकार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से त्रिविधि की प्राप्ति कर लेंगे इस कार्य के होने से अब अधिक विलम्ब नहीं है। अर्थात् आप सब देवता शीघ्र ही स्वर्ग के स्वामी हो जायेंगे।२७। इस तरह ब्रह्माजी से वरदान प्राप्त कर अत्यन्त गर्व में भरे हुए औप वध करने के अयोग्य, अमरों में द्वारा गणों के सहित उस दैत्य हिरण्यकशिपु को मैं मार दूँगा ॥२८-२९॥

एवमुक्त्वा तु भगवान्विश्वपो विष्णुरव्ययः।
हिरण्यकशिपुस्थान जगाम हरिरीश्वरः ॥३०
तेजसा भास्कराकारः शशी कान्त्येव चापरः।
करस्य कृत्वार्धतनु सिंहम्याद्धतनुं तथा ॥३१
नारसिंहेनवपुषा पाणि सङ्गृह्यपाणिना।
ततोददश विस्तीर्णां दिव्याँ रम्वांमनोरमाम् ।३२।
सर्वकामयुतां शुभ्रां हिरण्यकशिपोः सभाम्।
विस्तार्णा योजनशतं शतमध्यर्द्धमायताम् ॥३३
वहायसीं कागमां पञ्चयोजनमुच्छ्रिताम्।
जराशोकक्षत्रापेतां निष्प्रकम्प्यां शिवां सुखाम् ॥

पुलस्त्य मुनि ने कहा—इस समस्त विश्व के पालन करने वाले भगवान् अव्यय विष्णु ने इस रीति से उन देवगण को कहकर फिर वह ईश्वर हरि हिरण्यकशिपु के निवास स्थानमें चले गये थे। उस समय मेंवह भगवान् विष्णु तेज से सूर्य के समान आकार व लेथे और शरीर की कांति उसकी ऐसी थी मानों वह दूसरे चन्द्रमा ही हों। उन्होंने अपना आधा शरीर तो मनुष्य का-सा धारण कियाथा और आधा शरीर शेर जैसा बनालिया था। अर्थात् नरसिंह स्वरूपधारी अद्भुत बन गये थे जो कि नर और सिंह दोनों का ही एक मिश्रित स्वरूप था।३०।उस नरसिंह वपुधारी भगवान् ने अपने हाथ से उसका हाथ पकड़ लिया था और फिर उसकी परम विस्तीर्ण अत्यन्त मनोरम—रम्य एवं दिव्य सभा का निरीक्षण किया था ॥१३॥ उसकी वह सभा सम्पूर्ण कामनाओं से समन्वित थी और अत्यन्त शुभ्र वर्ण वाली थी। हिरण्यकशिपु की उस सभा का विस्तार सौ योजन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का था और शतमध्यद्ध उसका आयतन था।३२।आकाश में अपनी इच्छा एवम् कामना के अनुसार ही गमन करने वाली वह उसकी सभा थी। एक योजन चार कास का होता है इस प्रमाण से पाँच योजन की उस दैत्यराज की सभा की ऊँचाई थी। जरा (वृद्धता), शोक और क्षमासे वह रहित थी अर्थात् उस सभा में जो भी कोई स्थित रहते थे उन पर जरा और शोक का कुछभी प्रभाव नहीं होता था। उसकी सभा प्रकम्पनके योग्य नहीं थी अर्थात् उसे कोई भी प्रकम्पित नहीं कर सकता था। हिरण्यकशिपु की सभा परम मगलमयी और सुख प्रदान करने वाली थीं।।३३-३४।।

महाराज महाबाहो दैत्यानामादिसम्भव।
न श्रुत नैव मे दृष्टं नारसिंमिदं वपुः ।।३५
अव्यक्त परमं दिव्य किमिदं रूपमागतम्।
दैत्यान्तकरणं घोर शंसतीव मनो मम ।।३६
अस्यदेवाः शपीरस्थाः सागराः सरितस्तथा।
हिमवान्पारियात्रश्च ये चान्येकुलपर्वताः ।।३७
चन्द्रमास्सहनक्षत्रै रादित्यो रश्मिभि- सह।
धनदो वरुणश्चैव यमः शक्रः शचीपतिः ।।३८
मरुतो देवगन्धर्वाः ऋषयश्च तपोधनाः।
नागायक्षाः पिशाचाश्च राक्षसाः भीमविक्रमा ।।३९
ब्रह्मादेवा- पशुपतिर्ललास्थाः भ्रमन्ति हि।
स्थावराणि च सर्वाणि जङ्गमानि तथैव च ।।४०
भवांश्च सहितोऽस्माभिः सर्वदैत्यगणैर्वृतः।
विमानशतसङ्कीर्णा सर्वा या भवतः सभा ।।४१
सर्वं त्रिभुवनं राजल्लोकवर्मश्चशाश्वतः।
दृश्यन्ते नरसिहेऽस्मिस्तथेदं निखिलं जगत् ।।४२

प्रह्लाद ने कहाराज ! हे महान् बाहुओं वाले ! आप तो दैत्यों के आदि सम्भव हैं अर्थात् दैत्योंमें सबसे आदिमें आपके जैसे स्वरूप वाले हुए हैं। ने तो आज तक न कही कभी श्रवण किया है और न मैंने अभी तक आपके जैसे नारसिंह शरीर का अवलोकन ही किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह प्रथम अवसर ही है जो आधे नर और सिंह के स्वरूप को मैं इस समय में देख रहा हूँ।३५। यह आपका परम दिव्य और अव्यक्त क्या रूप आया है ? मेरा मन यह कहता है कि यह आपका स्वरूप जो कि अत्यन्त घोर है समस्त दैत्यों की समाप्ति कर देने वाला है ।।३६।। आपके इस स्वरूप को समस्त देवासागर नदियाँ शरीर में स्थित हैं। हिमवान्-परिपात्र और अन्य कुल पर्वत भी स्थित हैं।३७। समस्त नक्षत्रों के साथ चन्द्रमा और रश्मियों के साथ सूर्य, धनद, वरुण, पिशाच और भीम पराक्रम वाले राक्षस-ब्रह्मा देवगण, मरुत गन्धर्व, तप के ही धन वाले ऋषिगण, नाग, यक्ष,यम, शची का पति इन्द्र, पशुपति ये सब आपके ललाट में स्थित होकर भ्रमण किया करते हैं। समस्त स्थावर तथा सब चर—आप जो कि हमारे सबके सहित हैं और समस्त दैत्यगणों से वृत हैं इसके स्वरूप में स्थित हैं। सैकड़ों विमानों से संकीर्ण यह आपकी पूरी सम्पूर्ण त्रिभुवन और हे राजन् ! शाश्वत लोक धर्म सभी कुछ तथा यह पूरा जगत् इन भगवान् नृसिंह के स्वरूप में दिखलाई दे रहा है ।।३८-४२।।

प्रह्लादस्य वचः श्रुत्वा हिरण्यकशिपुः प्रभुः।
उवाच दानवान्सर्वान्गणांश्च सगणाधिपः ।।४३
मृगन्द्रो गृह्यतामेष अपूर्वा यनुमास्थितः।
यदि वा सशय कश्चिद्वध्यतां वनगोचरः ।।४४
ते दानवगणास्सर्वे मृगेन्द्रं भीमविक्रमम्।
परिक्षिपन्तो मुदितास्त्रासयामासुरोजसा ।।४५
सिंहनाद विमुच्याऽथ नरसिंहो महाबलः।
बभञ्ज तां सभां सर्वां व्यादितास्यइवान्तकः ।।४६
सभायां भज्यमानायां हिरण्यकशिपुः स्वयम्।
चिक्षेपास्त्राणिसिंहस्य रोषव्याकुललोचनः ।।४७
सर्वास्त्राणामथश्रेष्ठं दण्डमस्त्र सुदारुणम्।
कालचक्रं तथा घोरं विष्णुवज्रं तथापरम् ।।४८
पैतामह महात्युग्रं त्रैलोक्यनिर्मित महत्।
विचित्रामशनिंचैव शुष्कार्द्रं चाशनिद्वयम् ।।४९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुलस्त्य मुनि ने कहा -- प्रह्लाद के इस वचन का श्रवण करके प्रभु हिरण्यकशिपु जो कि सभी गणों का अधिप था अपने समस्त गणों से और दानवों से बोला ।।४३।। हिरण्यकशिपु ने कहा-इस मृगेन्द्र को पकड़ लो जो अपने इस अद्भुत शरीर में समास्थित होकर आया है । अथवा यदि कोई संशय हो तो इस वन में भ्रमण करने वाले को मार डालो ।।४४।। पुलस्त्य मुनि ने कहा-- हिरण्यकशिपु के ऐसा कहने पर वे समस्त दानव भीषण पराक्रम वाले मृगेन्द्र पर परिक्षेप करते हुए वहुत ही प्रसन्न हुए थे तथा अपने ओज से भगवान् नरसिंह को त्रास देने लगे थे ।।४५।। इसके अनन्तर महान् बलवान् नरसिंह ने सिंहनाद किया था और फैलाये हुए मुख वाले अंतक की भांति उस पूरी दैत्यराज की सभा को भंग कर दिया था ।।४६।। उस अपनी सभा के भंग हो जाने पर हिरण्यकशिपु ने स्वयं ही क्रोध से व्याकुल लोचनों वाला होकर नरसिंह भगवान् पर अस्त्रों का प्रक्षेप किया था ।।४७।। उन अस्त्रों में परम श्रेष्ठ एवम् सुदारुण दण्ड अस्त्र था । काल चक्र तथा दूसरा परम घोर विष्णु-चक्र था । महत् त्रैलोक्य में निर्मित अत्यन्त उग्र पितामह अस्त्र था । विचित्र अशनि और शुष्कार्द्र अशनि ये दोनों अशनि थे ।।४८-४९।।

हिरण्कशिपुं दैत्या विषण्णाश्शरणं ययुः ।
ततः प्रज्वलितः क्रोधात्प्रहन्निव तेजसा ।।५०
तस्मिन्क्रुद्धे तुदैत्येन्द्रे तमोभूतमभूज्जगत् ।
आवहः प्रवहश्चैव विवहोऽथ समीरणः ।।५१
परावहस्संवहश्च उद्वहश्च महाबलः ।
तथा परिवहः श्रीमानुत्पातभयशंसिन ।।५२
इत्येवं क्षुभिताः सप्त मरुतो गगनेचराः ।
ये ग्रहास्सवलोकस्य क्षये प्रादुर्भवन्ति हि ।।५३
ते सर्वे गगने हृष्टा व्यचरंश्च यथासुखम् ।
अयोगतश्चाप्यचरद्योग निशि निशाचरः ।।५४
सग्रहः सहनक्षस्ताराात्रैपतिरिंदम् ।
विवणतां च भगवान्गतो दिवि दिवाकरः ।।५५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णः कवन्धश्च तदा लक्ष्यते सुमहान्दिवि ।
असृजच्चासितां सूर्योधूमवत्तां वभावसु ॥५६

उस समय में दैत्यगण एकदम त्रस्त होकर परम विषाद को प्राप्त होगये थे और सबने हिरण्यकशिपु की शरण ली थी। इसके पश्चात् तेजसे प्रदग्ध-सा होते हुए वह क्रोध से एकदम प्रज्वलित होगया था ॥५०॥ उस दैत्येन्द्र के इस प्रकारसे क्रुद्ध होने पर सम्पूर्ण जगत् अन्धकारमय होगया था। समीरण (वायु) आवह-प्रवह और विवह हो गया था ।५१।महान् बलवान् वायु परावह, संवह, उद्वह और परिवह के स्वरूप वाला होकर उत्पातों के भय का करने वाला था ।५२। इस प्रकारसे सात प्रकारके क्षुभित वायुआकाश में सञ्चार करने वाले हो रहे थे। जो समस्त लोकों के ग्रह थे वे क्षय में प्रादुर्भूत हुए थे ।५३। वे सब गगन में यथासुख हृष्ट होते हुए विचरण कर रहे थे। अयोग से निशा में निशाचर भी योग का आचरण कर रहा था। ।५४। हे अरियों के दमन करने वाले ! समस्त ग्रहों के साथ और सब नक्षत्रों के सहित तारापति और दिन में भगवान् दिवाकर विवर्णता को प्राप्त होगये थे ।५५। उस समय में दिव में महान् कृष्ण कवन्ध दिखलाई दे रहा था। विभावसु सूर्य असित धूमवत्ता का सृजन कर रहा था ।५६।

गगनस्थश्च भगवानभीक्ष्ण परिविष्यते ।
सप्तधूमनिभा घोराः सूर्याः दिवि समुत्थिताः ॥५७
सोमस्य गगनस्थस्य ग्रहास्तिष्ठन्ति शृङ्गगाः ।
वामे च दक्षिणे चैव स्थितौ शुक्रवृहस्पती ॥५८
शनैश्चरो लोहिताङ्गो लोहिताङ्गसमद्युतिः ।
सम समधिरोहन्त सर्वे वं गगनेचराः ॥५९
शृङ्गाणिशनकैर्घोराः युगान्तावर्त्तनग्रहाः ।
चन्द्रमाश्च सनक्षत्रो ग्रहै सह तमोनुदः ॥६०
चराचरविनाशाय रोहिणीं नाभ्यनन्दत ।
गृहीतो राहुणा चन्द्र उल्काभिरभिहन्यते ॥६१
उल्काः प्रज्जलिताश्चन्द्रे व्यचरन्त यथासुखम् ।
देवानामधिपोदेवः सोऽप्यवर्षतशोणितम् ॥६२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकाश में स्थित रहने वाले भगवान् अभीक्षा में परिविष्ट होरहे थे। दिव में सात घूम के सदृश सूर्य जिनका महान् घोर स्वरूप था समुदित हो गये थे।५७। अन्तरिक्ष में स्थित चन्द्रमा के ग्रह शृङ्गगामी होकर स्थित थे और वामभाग तथा दक्षिण भाग में शुक्र और वृहस्पति स्थित हो गये थे ।।५८।। शनैश्चर जो ग्रह था उसका वर्ण लोहित अङ्ग वाला हो गया था जो रक्ताङ्ग के समान द्युति वाला था। समस्त गगनेचर ग्रह समरूप से समाविरोहण कर रहे थे।५९। युगान्त के आवर्त्तन करने वाले ग्रह घोर रूप वाले होते हुए शनैः शनैः श्रृंगों को समाधिरोहण कर रहे थे और नक्षत्रों के सहित चन्द्रमा समस्त ग्रहों के साथ तम का नोदन करने वाला था ।।६०।। वह सम्पूर्ण चर और अचर के विनाश के लिये रोहिणी का अभिनन्दन नहीं कर रहा था। राहु के द्वारा ग्रहण किया गया चन्द्रमा उल्काओं के द्वारा अभिहन्यमान किया जा रहा था।६१। प्रज्वलित उल्का चन्द्रमा में सुखपूर्वक विचरण कर रहे थे। देवों के स्वामी जो देव थे वे भी शोणित (रुधिर) की वर्षा कर रहे थे ।।६२।।

दृश्यन्ते विविधोत्पाताः घोराः घोरनिदर्शनाः।
एते चान्ये च बहबो घोररूपाः समुत्थिताः ।।६३
दैत्येन्द्रस्य विनाशाय दृश्यन्ते रणशासिनः।
मेदिन्यां कम्पमानायां दैत्येन्द्रेण महात्मना ।।६४
महोधराः नागगणाः निपेतुरमितौजसः।
विषज्वालाकुलैवक्त्रैर्विमञ्चतो हुताशनम्। ६५
चतुःशीर्षा पञ्चशीर्षाः सप्तशीर्षाश्च पन्नगाः।
वासुकिस्यक्षकश्चैव कर्कोटकधनञ्जयौ। ६६
एलामुखः कालियश्च महापद्मश्च वीयवान्।
सहस्रशोर्षरशुद्धाङ्गो हेमतालध्वजः प्रभुः ।।६७
शेषोऽनन्तो महानागो ह्यप्रकम्प्यश्च कम्पिताः।
दोप्यन्तेऽन्तजलस्थानि पृथिवीविराणि वै ।।६८
सप्तदैत्येन्द्रकोपेन कम्पितानि समन्ततः।
नानातेजोधराश्चापि पातालतलचारिणः ।।६९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

पातालेसहसा क्षुब्धे दुष्प्रकम्प्याः प्रकम्पिताः ।
हिरण्यकशिपुर्दैत्यस्तदासस्पृष्टवान्महीम् ।।७०

इस प्रकार से उस समय में अनेक प्रकार के अत्यन्त घोर उत्पात जो भी ये बतलाये गये हैं तथा इनके अन्य भी बहुत से घोर स्वरूप वाले दिखलाई दे रहे थे।६३। ये सब उत्पात दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु के द्वारा यह भूमि कम्पमान होरही थी और उस प्रकम्पित भूमि पर बड़े-बड़े ओज वाले जो नागगण एवं महीधर (पर्वत) थे वे गिर रहे थे जो कि अपने मुखों से विष की ज्वाला से समाकुलित अग्नि का मोचन करते जारहे थे।६४-६५। अब उन नागगणों के नामों का उल्लेख किया जाता है कि उनमें चार शीर्षों वाले थे—पाँच मस्तक वाले थे - सात शिरों वाले थे ऐसे सर्प थे। उनमें वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, धनंजय, काला मुख, कालिय, वीर्यवान् महापद्म सहस्र शीर्षों वाला, शुद्धाग, हेमताल, ध्वज, शेष, अनन्त और महानाग ये सभी सपराज ऐसे ये जो कभी भी कम्पायमान होने योग्य नहीं हैं, किन्तु उस घोर समय में वे भी कम्पित हो उठे थे और जल के अन्दर स्थित हुए तथा पृथ्वी के विवरों में संस्थित होकर दीप्त होरहे थे।६६-६८। सातों भुवन दैत्येन्द्र के कोप से सभी ओर कम्पित हो गये थे। जो अनेक प्रकार के तेज को धारण करने वाले पाताल लोक के तलचारी थे और सदा दुष्प्रकम्पा अर्थात् कभी नहीं कँपाये जाने के योग्य थे वे भी जिससमय में पाताल लोक में क्षोभ हुआ था तो उसके क्षुब्ध होने पर प्रकम्पित हो गये थे। उस समय दैत्य हिरण्यकशिपु ने मही का संस्पर्श किया था। ।।६९-७०।।

गदी शूली करालश्च हिरण्यकशिपुस्तथा ।
जीमूतघननिर्घोषो जीमूत इव वेगवान् ।।७१
देवारिर्दितिजो दृप्तो नृसिंह समुपाद्रवत् ।
स तु तेन ततस्तीक्ष्णैर्मृगेन्द्रेण महानखैः ।
तदोङ्कारासहायेन विदार्य निहतो युधिः ।।७२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महो च कालश्च शशी नभश्च ग्रहाश्च सूर्याश्च दिशश्च सर्वाः ।
नद्यश्च शैलाश्च सहार्णश्च गताः प्रसादं दितिपुत्रनाशात् ॥७३

ततः प्रमुदिताः देवाः ऋषयश्च तपोधनाः ।
तुष्टुमुर्नामभिर्दिव्यैरादिदेवं सनातनम् ॥७४

यत्वया विधृतं देव नारसिंहमिदं वपुः ।
एतदेवार्चयिष्यन्ति परारविदो जनाः ।७५

गदी, शूली, कराल, हिरण्यकशिपु, जीमूत, घननिर्घोष जो कि जीमूत के समान वेगवान् था-देवारि-ग्रदितिज और दृप्त इन सबने भगवान् नृसिंह के ऊपर आक्रमण किया था, किन्तु वह हिरण्यकशिपु मृगेन्द्र के द्वाराअपने अत्यन्त तीक्ष्ण महान् नखों से ओङ्कार की सहायता से विदीर्ण करके युद्ध में मार दिया गया था ।। ७१-७३ ।। उस दिति के पुत्र हिरण्यकशिपु के नाश से अर्थात् मर जाने से मही, काल, चन्द्रमा, नभ, सब ग्रह, सूर्य, सम्पूर्ण दिशाएँ, नदियाँ, शैल और समस्त महार्णव प्रसाद (प्रसन्नता) को प्राप्त होगये थे ।।७४।। इसके उपरान्त सब देवगण और तप को ही धन समझने वाले ऋषि लोग बहुत ही प्रसन्न हुए थे और दिव्य नामों के द्वारा उन सबने उस सनातन आदि देव की स्तुति की थी। उन्होंये नृसिंह भगवान् से कहा था—हे देव ! आपने इस समय में जो यह नृसिंह स्वरूप वाला शरीर धारण किया है, आपके इस शरीर का परापर के ज्ञाता लोग समर्थन करेंगे ।।७५।।

भवान्ब्रह्माचरुद्रश्च महेन्द्रो देवसत्तमः ।
भवान्कर्त्ता विकर्त्ता च लोकानां प्रभवोऽव्यय ।।७६

परां च सिद्धि च परं च सत्वं परं रहस्यं परम हविश्च ।
परं च धर्मं परमं यशश्च त्वामाहुरग्र्यं परम पुराणम् ।।७७

परं च सत्यं परम तपश्च परं पवित्र परम च मार्गम् ।
परं च यज्ञं परम च होत्रं त्वामाहुरग्र्यं परमं पुराणम् ।।७८

परं शरीरं परम च ब्रह्म परं च योग परमां च वाणीम् ।
परं रहस्यं परमां गति च त्वामाहुरग्र्यं परमं पुराणम् ।।७९

एवमुक्त्वा तु भगवान्सर्वलोकपिताभहः ।
स्तुत्वा नारायणं देवं ब्रह्मलोकं गतः प्रभुः ।।८०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो नदत्सु तूर्येषु नृत्यन्तीष्वप्सरः सु च ।
क्षीरोदस्योत्तर कूल जगाम हरिरीश्वरः ।।८१
नारसिंह वपुर्देवः स्थापयित्वा सुदीप्तिमान् ।
पौराण रूपमास्थाय प्रययौ गरुडध्वजः ।।८२
अष्टचक्रेण यानेन भूतियुक्तेन भास्वता ।
अव्यक्तप्रकृतिर्देवः स्वस्थानं गतवान्प्रभु ।।८३

ब्रह्माजी ने कहा—हे नृसिंह देव ! आप ही ब्रह्मा—रुद्र और देवों में परम श्रेष्ठ महेन्द्र है । आप इन समस्त लोकों के सृजन करने वाले—विकर्त्ता अर्थात् विघटन करने वाले और प्रभु हैं तथा आप नाश रहित हैं ।।७७।। आप ही परासिद्धि, परम सत्व, परम रहस्य, परम हवि, परम धर्म, परम यश अग्रय और परम पुराण कहे गये हैं । ६। हे दव! आपको परम सत्य-परम तप-परत पवित्र-परम मार्ग-परम यज्ञ परम ोत्र और आपको ही परम पुराण आदि होने वारे कहते हैं ।७८। परम शरीर, परम ब्रह्म,परम योग,परम वाणी,परम रहस्य,परमागति और परम पुराण अग्रय आपको ही कहते हैं ।।७९।। पुलत्स्य मुनि ने कहा—समस्त लोकों के पितामह भगवान् ब्रह्माजी इस प्रकार से नृसिह देव से प्रार्थना करके और नारायण देव का स्तवन करके ब्रह्माजी फिर अपने ब्रह्मलोक को चले गयेथे ।।८०।। इसके अनन्तर हर्षातिरेक के कारण सूर्यों के बजाये जाने पर और अप्सराओं के नृत्य किये जाने पर भगवान् हरि ईश्वर क्षीर सागर के उत्तर तट पर चले गये थे ।।८१।। देव ने अपना नारसिंह शरीर यहाँ पर स्थापित करके फिर सुदीप्तिमान भगवान् गरुड़ध्वज अपने पुराने स्वरूप में समास्थित होकर वहाँ से चले गये थे ।८३। अव्यक्त प्रकृति वाले प्रभु आठ पहिए वाले-विभव से समन्वित देदीप्यमान यान के द्वारा अपने स्थान को चले गये थे ।।८३।।

।। ब्राह्मण के लक्षण और महिमा ।।

कश्चपूज्यतमो विप्रो ह्यपूज्यो वाऽथ को भवेत् ।
विप्रस्य लक्षणं ब्रूहि यथार्थ्यं गुरोऽपि ।।१

CC-0. Gurukul Kangri Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूज्यः श्रोत्रियको नित्यं सदाचारसमन्वितः ।
सद्वृत्तः कलुषैर्मुक्तस्तीर्थभूतोजनोऽनघः ॥२
जातः क श्रोत्रियस्तात सत्कुले वाप्यसत्कुले ।
सदसत्कर्म कर्त्ता वा कः पूज्यो भुवि वाडवः ॥३
सच्छ्रोत्रियकुले जातो ह्यक्रियो नैवपूजितः ।
असत्क्षेत्रकुले पूज्यो व्यास वैभाण्डकौ यथा ॥४
क्षत्रियाणां कुले जातो विश्वामित्रोऽस्ति मत्समः ।
वेश्यापुत्रो वसिष्ठश्च अन्ये सिद्धाः द्विजादयः ॥५
तस्मात्सच्छ्रोत्रियादीनां शृणु पुत्रक लक्षणम् ।
धरायां तीर्थभूतानां सर्वपापहराय च ॥६
जन्मनाब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विजउच्यते ।
विद्ययायातिविप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रिय लक्षणम् । ७

श्री देवर्षि नारदजी ने कहा—इस लोक में सबसे अधिक पूज्यम विप्र कौन-सा होता है और अपूज्य कौन-सा विप्र होता है ? नारद मुनिने ब्रह्मा-जी से पूछा था कि गुरुजी ! विप्र का ठीक-ठीक लक्षण मुझे बतलाइये । । ब्रह्माजी ने कहा—जो विप्र श्रोत्रिय हो और नित्य ही सदाचार से समन्वित हो, सत् चरित्र वाला हो, समस्त प्रकार के कलुषों के मुक्त जो अनघ विप्र होता है वह तीर्थ स्वरूप हुआ करता है ।२। नारदजी ने कहा - हे तात ! सत्कुल में अथवा असत्कुल में भी कौन श्रोत्रिय समुत्पन्न हुआ है ? सत्कर्म अथवा असत्कर्म का करने वाला कौन है ? और इस भू मण्डल पूजा के योग्य वाड़व कौन है ? श्री ब्रह्माजी ने कहा—जो सत् और श्रोतिय कुल में उत्पन्न हुआ हो और क्रिया से हीन हो तो वह कभी भी पूजित नहीं हो सकता है । जो असत्कुल में तथा असत् क्षेत्र में समुत्पन्न हुआ हो वह भी पूज्य होता है जिस तरह व्यास तथा वैभाण्डक पूज्य हो गये हैं ।। ४ ।। विश्वामित्र महर्षि तो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुए थे किन्तु उनकी तपश्चर्या की क्रिया ऐसी उच्चस्तर की थी कि वह मेरे समान ही जगत्पूज्य एवम् वन्दनीय होगये हैं । वसिष्ठ महामुनि वेश्या से समुत्पन्न पुत्र है—और इनके अतिरिक्त अन्य भी द्विज आदि सिद्ध हैं ।।५।। इसलिए हे पुत्र ! इस धरा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंडल में सम्पूर्ण प्रकार के पापों के हरण करने के लिए तीर्थ स्वरूप श्रोत्रिय आदि के लक्षण तुम मुझसे श्रवण करलो।६। ब्राह्मण तो जन्म से होता है अर्थात् ब्राह्मण के यहाँ उत्पन्न होने से ब्राह्मण कहलाता है किन्तु वह द्विज तभी होता है, जब कि उसके समुचित संस्कार किये जाते हैं। जब उसे विद्या प्राप्त होती है तो उसको विप्रत्व का पद मिलता है। ये तीनों प्रकार के लक्षण प्राप्त होने पर ही श्रोत्रिय कहलाता है। ब्राह्मण कुल में उत्पत्ति-संस्कारों से सम्पन्न और विद्वत्ता का लाभ ये तीनों ही होने पर श्रोत्रिय का लक्षण घटित है ।।७।।

विद्यापूतो मन्त्रपूतो वेदपतस्तथैव च ।
तीर्थस्नानादिभिर्मेध्यो विप्रः पूज्यतमः स्मृतः ।।८
नारायण सदा भक्तः शुद्धान्तःकरणस्तथा ।
जितेन्द्रितो जितक्रोधस्समः सर्वजनेषु च । ९
गुरुदेवातिथेभक्तः पित्रोः शुश्रूषणेरतः ।
परदारे मनो यस्य कदाचिन्नैव मोदपे ।।१०
कामक्रोधादिनिर्मुक्त इन्द्रियैरमितः पुमान् ।
परदारान्न गृह्णाति मनसाऽपि गृहागतान् ।।११

विद्या अर्थात् वेद विद्या से पवित्र, मन्त्रों से अर्थात् सभी प्रकार के सुसंस्कारों के द्वारा पूत और वेद से पवित्र तथा तीर्थों के स्नान आदि से पवित्र विप्र ही परम पूज्य कहा गया है।८। भगवान् नारायण के चरणों में सर्वदा भक्ति रखने वाला अत्यन्त शुद्ध अन्तःकरण वाला-इन्द्रियों के अपने वश में रखकर उन्हें जीत लेने वाला—क्रोध पर नियन्त्रण करके कभी भी क्रोध को न करने वाला और समस्त मनुष्यों को समान दृष्टि से देखने वाला अर्थात् सबको प्यार करने वाला जो विप्र होता है वह सबका परम पूज्य होता है।९। अपने श्री गुरुचरण-देवगण और अतिथियों में जो भक्ति-भाव रखने वाला है अपने माता—पिता की सेवा में सर्वदा जो रति रखता है और पराई स्त्री में जिसका मन कभी भी मुदित नहीं होता है वही विप्र सबका पूज्यतम होता है।१०। जो काम, क्रोध आदि छः शत्रुओं से सर्वदा मुक्त रहता है और जिसके ऊपर इन्द्रियों का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई भी प्रभाव नहीं होता है अर्थात् जो पुरुष इन्द्रियों को जीय लेता है तथा पराई स्त्रियों को कभी भी ग्रहण नहीं किया करता है और घर में आकर स्वयं समुपस्थित हो जावें तब भी उनकी ओर जिसके मनसे भी कोई विकार समुत्पन्न नहीं होता है वही पुरुष सबसे अधिक पूज्यतम होता है ॥११॥

गायत्र्या लक्षण किं वा प्रत्येकाक्षरजंगुणम् ।
कुक्षि चरण गोत्राणां तस्याब्रूहिसुनिश्चयम् ॥१२
छन्दो गायत्रीगायत्र्याः सविता ध्रुवम् ।
शुक्लवर्णा त्वग्निमुखा विश्वामित्रऋषिस्तथा ॥ १३
ब्रह्मणशिर आरूढ़ा रुद्रविष्णुहृदि स्थिताः ।
उपनयने नियोगः स्थात्साङ्खय्यायनसगोत्रजा ॥१४
त्रैलोक्यचरणा ज्ञेया पृथिवीकुक्षि संस्थिवा ।
चतुर्विंशतिस्थाने च पादादौ मस्तकन्तके ॥१५
चतुर्विंशत्यक्षरं न्यस्य ब्रह्मलोकं स विन्दति ।
प्रत्यर्णंदेवतांज्ञात्वाविष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥१६
अपर च प्रवक्ष्यामि गायत्र्या लक्षणं ध्रुवम् ।
सप्त पञ्च तथा ब्रह्मा यजुरष्टादशाक्षरम् ॥१७
ज्वलनादिकारान्तं जले स्थित्वा शतं जपेत् ।
उपपातककोटया तु तथातिपातकैरपि ॥१८
ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुक्ता यान्ति ममालयम् ।
ॐ अग्नेर्वाक्युंसि यजुर्वेदेन जुष्टात्सोमं पिव स्वाह ॥१९

पितामह श्री ब्रह्माजी ने देवर्षि से कहा—छन्द गायत्री हैं और उस गायत्री का देवता सविता है। उसका शुक्ल वर्ण है, अग्नि मुख वाली है तथा विश्वामित्र उसके ऋषि हैं ॥१२-१३॥ ब्रह्मा के शिर पर समारूढ़ हैं तथा रुद्र और विष्णु हृदय में स्थित रहते हैं । साख्यांयन सगोत्रजा हैं और उपनयन में विनियोग होता है ॥१४॥ उसके त्रैलोक्य चरण जानने चाहिए। वह पृथिवी की कुक्षि में संस्थित रहती है। पाद से आदि लेकर मस्तक के अन्त तक चौबीस स्थान में होती है ॥१५॥ इस प्रकार से इसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन चौवीस अक्षरों का न्यास करने वाला पुरुष ब्रह्मलोक को प्राप्त किया करता है। प्रत्येक वर्ण के देवताओं का ज्ञान करने वाला पुरुष ब्रह्म सायुज्य की प्राप्ति करने का लाभ किया करता है।१६। अब दूसरा गायत्री का सुनिश्चित लक्षण बतलाते हैं। सप्त तथा पञ्च ब्रह्मा तथा अष्टादशाक्षर यजु ज्वलन आदि लेकर हकार के अन्त पर्यन्त जलमें संस्थित होकर एक सौ बार जप करे तो करोड़ों उपपातक तथा अति पातकों से भी मुक्त हो जाता है ॥१७-१८।, ब्रह्म हत्या आदि के जो महान् पाप होते है, उनसे भी मुक्त होकर फिर वह जाप करने वाले पुरुष सीधे मेरे आलय ब्रह्मलोक को ही प्राप्त होते हैं। मन्त्र का आकार यह है—'ॐ अग्ने वाँक् पुंसि यजुर्वेदेन जुष्टात् सोमं पिब स्वाहा' ॥१६॥

गायत्रीं यो जपेन्नित्यं प्राणायाम समन्विताम् ।
प्रत्यक्षरामरैर्युक्तां स्वाङ्गे विन्यस्यतामपि ।२०
सर्वपापद्विदिमुक्तो जन्मकोटिकृतादपि ।
ब्रह्मणः पदवीं प्राप्य स गच्छेत्प्रकृतेः परम् ॥२१
प्राणायाम्युतां तस्म द्वायत्रीं जप नारद ॥२२
प्राणायामाः कथं ब्रह्मन्प्रत्येकाक्षरदेवताः ।
तेषां न्यासं जथाङ्गेष वद तात यथाक्रमम् ॥२३
गुददेशेत्वपानःस्याद्धृदिप्राणोऽस्तिदेहिनः ।
तस्माद्गुदंसमाकुञ्चय प्राणेनसहयोजयेत् ॥२४
परकेण तदा पुत्र कृत्वा कुम्भकमुत्तमम् ।
प्राणायामत्रय कृत्वा गायत्रीं सञ्जपेद्द्विजः ॥२५
अनेनैव जपेद्यस्तु महापातकसञ्चयः ।
सकृदुच्चारितेनैव क्षय यात्युपपातकम् ।२६
प्रतिवर्णस्वरं ज्ञात्वा विन्यसेद्यः कलेवरे ।
स जनो ब्रह्मतामेति फलं वक्तुं न शक्नुमः ॥२७
प्रत्यक्षरस्य यद्दैवं शृणु पुत्र वदाम्यहम् ।
यज्जप्त्वा च पुनर्मातुः स्तन न पिवति द्विजः ॥२८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पुरुष प्राणायाम पूर्वक गायत्री का जाप नित्य करता हैं, जिस गायत्री के प्रत्येक अक्षरों के देवताओं का भी स्मरण करते हुए जप करे तथा उन प्रत्यंक अक्षरों का विन्यास भी अपने समुचित अङ्गों पर यथा-विधि करके ही गायत्री का जप करना चाहिए ।२०। इस रीति से गायत्री का जप करने वाला पुरुष समस्त पापों से विनिर्मुक्त होजाता है, चाहे वे पाप करोड़ों जन्मों में क्यों न किये हों। गायत्री के जाप को करने वाला पुरुष ब्रह्मा की पदवी को प्राप्त करके प्रकृति से भी पर को चला जाया करता है ।२१। देवर्षि श्री नारदजी ने ब्रह्माजी से पूछा था-हे ब्रह्मन् ! अब आप कृपा कर यह बतलाइये कि जो आपने प्राणयामों का बहुत अधिक महत्व बतलाया है वे किस विधि से किये जाते हैं ? और जिस वेद जननी भगवती गायत्री देवी के चौबीस अक्षर हुआ करते है, उन अक्षरों के देवता कौन-कौन होते हैं तथा उनका अक्षरों का न्यास अपने शरीर के अङ्गों में किस प्रकार से और किस विधि से किया जाता है ? हे तात ! यह सब क्रमपूर्वक मुझे बतलाइये ।।२२-२३।। इस रीति से नारद के प्रश्न करने पर ब्रह्माजी ने कहा-मानव के शरीर क जो अङ्ग हैं उनमें गुद देश में तो अपान वायु रहता है और देहधारी के हृदय में प्राण वायु निवास किया करता है । इसलिये गुदा का समाकुञ्चन करके उसको प्राण के साथ योजित करे ।।२४।। उस समय में हे पुत्र ! पूरक के द्वारा फिर उत्तम कुम्भक करे। प्राण वायु को ऊपर खीचने को पूरक और उसे रोककर रखने को कुम्भक कहते हैं । इस रीति से द्विज को चाहिए कि तीन बार प्राणायाम करे और उस प्राणायाम में गायत्री का जाप करता रहे कुम्भक के पश्चात् जो प्राणायाम में श्वांस को शनैः शनै छोड़ा जाता है उसका नाम रेचक होता है ।२५। इसी रीति से जो जप किया करता है उसके एक ही बार उच्चारित करने से उपपातक का क्षय हो जाता है ।२६। प्रत्येक वर्ण और स्वर का ज्ञान प्राप्त करके जो पुरुष अपने शरीरावयवों में उनका विन्यास किया करता है वह मनुष्य तो ब्रह्मा के स्वरूप को ही प्राप्त हो जाता है। उसका और विशेष जो भी फल होता है उसे तो हम वर्णन करने की शक्ति ही नहीं रखते हैं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

।२७। गायत्री के प्रत्येक अक्षर के जो देवता होते हैं हे पुत्र ! उनको मैं तुम्हें वतलाया हूँ तुमश्रवण करो । इन सब गायत्री के अक्षरों के देवताओं का ज्ञान प्राप्त कर लेने वाला पुरुष फिर इस संसार में जन्म ग्रहण कर माता का स्यन नहीं पिया करता है । तात्पर्य फिर उसका जन्म ही नहीं होता हैं ॥२८॥

आग्नेय प्रथमं ज्ञेयं वायव्यं तु द्वितीयकम् ।
तृतीयं सूर्यदैवत्यं चतुर्थं गै (यु) तं तथा ॥२९
पञ्चम यमदैवत्य वारुणं षष्ठमुच्यते ।
सप्तमं बार्हस्पत्य तु पार्जन्यं चाष्टमं विदुः ॥ ०
ऐन्द्रं च नवम ज्ञेय गान्धर्वं दशमं तथा ।
पौष्णमेकादशं विद्धि मैत्र द्वादशक स्मृतम् ॥३१
त्वाष्ट्रं त्रयोदश ज्ञेयं वासव तु चतुर्दशम् ।
मारुत पञ्चदशक साम्यं षोडशकं स्मृतम् ॥३२
आङ्गिरसं सप्तदश वैश्वदेवमतः परम् ।
आश्विन चैकोनविंश प्राजापत्यं तु विंशकम् ॥
सर्वदेवमयं ज्ञेयमेकविंशकमक्षरम् ।
रौद्रं द्वाविंशकं ज्ञेयं ब्राह्मं ज्ञेयमतः परम् ॥३३
वैष्णवं तु चतुर्विंशमेता अक्षरदेवताः ।
जपकाले तु सञ्चिन्त्य तासु सायुज्यतां व्रजेत् ॥३४
ज्ञात्वा तु देवतास्तस्य वाङ्मय त्रिदितं भवेत् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मणः पदवीं ब्रजेत् ॥३५

गायत्री का जो प्रथम अक्षर है उसे आग्नेय ही समझना चाहिए अर्थात् उस प्रथम अक्षर का देवता अग्नि होता है । दूसरा अक्षर वायव्य है अर्थात् गायत्री के दूसरे अक्षर का देवता वायु है । तृतीय अक्षर का देवता सूर्य है और चतुर्थ अक्षर का भी सूर्य ही देवता होता है ।२९। पंचम वर्ण का यम देवता है—छठे अक्षर का वरुण देवता है—सप्तम वर्ण का बृहस्पति देवता है-गायत्री के आठवें वर्ण का पर्जन्य देवता है ।३०। नवम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्षर का देवता इन्द्र होता है। दशम अक्षर का गन्धर्व देवता है। एकादश अक्षर का पूषा देवता होता है, बारहवें अक्षर का देवता मित्र होता हैं। ऐसा बतलाया गया है।३१। तेरहवें अक्षर का दवता त्वष्टा है। चौदहवें अक्षर का देवता वासव है। पन्द्रहवें वर्ण का मरुत देवता है। सोलहवें वर्ण का देवता सोम होता है ऐसा कहा गया है ॥३२॥ सत्रहवें वर्ण का देवता अङ्गिरा है–अठारहवें वर्ण का विश्वेदेवा देवता है। उन्नीसवें अक्षर का देवता अश्विनीकुमार है। बीसवें वर्ण का देवता प्रजापति होते है ॥३३॥ गायत्री का जो इक्कीसवाँ अक्षर है उसके सभी ऊपर बताये हुए देवता हुआ करते हैं। बाईसवें वर्ण के देवता रुद्र हैं तथा तेईसवें वर्ण के देवता ब्रह्मा होने हैं।३४। गायत्री देवी का जो चौबीसवाँ अक्षर है उसके देवता भगवान् विष्णु होते हैं। इस रीति से चौबीसों अक्षरों के ये देवता हुआ करते हैं जिस समय में गायत्री मन्त्र का जाप किया जावे उस समय में इन अक्षरों के बताये हुए देवों का भी ध्यान करते हुए जप करे। ऐसा करने पर वह जापक उनमें सायुज्यता को प्राप्त किया करता है। गायत्री के देवताओं के ज्ञान को प्राप्त करके जो जप किया करता है उसे सम्पूर्ण वाङ्मय विदित हो जाता है और वह फिर सब पापों से छुटकारा पाकर अन्त में ब्रह्मा की पादवीं को प्राप्त कर लेता है ॥३५॥

गायत्रीं विन्यसेत्पूर्वं शरीरे चात्मनो बुधः।
चतुर्विंशतिस्थानेषु आपादमस्तकेष च ॥३६
तत्कारं विन्यसेद्योगो पादाङ्गुष्ठे विचक्षणः।
सकारं गुल्फदेशे तु विकारं जङ्घयोर्न्यसेत् ॥३७
तुकारं जानुमध्ये च वकारं चोरुदेशतः।
रेकारं गुह्यदेशे तु णिकारं वृषणे न्यसेत् ॥३८
यङ्कारं कटिदेशे तु भकारं नाभिमण्डले।
गोकारं जठरे न्यस्य देकारं स्तनयोर्न्यसेत्।
वकारं हृदये न्यस्य स्यकारं करदेशतः।
धीमारं वदने न्तस्य मकारं तालुके न्यसेत् ॥४०
हिकारं नासिकाग्रे च धिकारं चक्षुषोर्न्यसेत्।
योकारं त भ्रुवोर्मध्ये योकारं च ललाटके ॥४१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न: कारं तु मुखे पूर्वं प्रकारं दक्षिणे मुखे।
चोकारं पश्चिमे न्यस्य दकारं चोत्तरे न्यसेत् ।।४२

गायत्री मन्त्र में चौबीस अक्षर होते हैं और उन चौबीस अक्षरों के पृथक्-पृथक् प्रत्येक अक्षरके देवता हुआ करते हैं जिनका वर्णन ऊपर किया गया है। गायत्री जप के समय में उनका ध्यान करते हुए ही जप करना चाहिए अव उन चौबीसों अक्षरों का अपने अंगों में न्यास करने का विधान बतलाया जाता है। बुध पुरुष को सर्व प्रथम अपने शरीर में उन अक्षरों का न्यास करना चाहिए। पद से लेकर मस्तक पर्यन्त शरीर के चौबीस स्थान हैं, उनमें ही उन चौबीस अक्षरों का विन्यास करे।३६। विचक्षण योगी पुरुष को गायत्री का जो यथम अक्षर "तत्"-- है। उसका अपने शरीर के चरण अँगूठे में त्यास करना चाहिए। इसके पश्चात् गायत्री का दूसरा अक्षर "स"– है उसका न्यास गुल्फ में करे। "वि" इसका न्यास दोनों जाघों में करे।३७। 'तु'--इसका न्यास जानुओं के मध्य में करे। 'व' का न्यास ऊरु देश में करना चाहिए। "रे"-का न्यास गुह्य देश में करे। 'णि'-का न्यास दोनों वृषणों में करना चाहिए।३८। 'यं'-इस अक्षर का विन्यास शरीर के कटि (कमर) देश में करे। "भ"—इस वर्ण का न्यास नाभि मण्डल में करना चाहिए। 'गो'-इसका विन्यास अपने जठर (पेट) में करे। "दे"—का न्यास स्तनों में करे।३९। "व"– इस वर्ण का न्यास हृदय में करना चाहिए। "स्य"–का न्यास करों में करे। "धी— का विन्यास वदन में करे। "म"—का तालु में विन्मास करना चाहिए ।४०। 'हि'—-इस वर्ग का विन्यास नासिका के अग्रभाग में करे। 'धि'— इसका न्यास दोनों नेत्रों में करे। "यो"—इसका न्यास दोनों भौंहों के मध्य में करना चाहिये। दूसरे "यो" का न्यास ललाट में करे।४१। "न"—इसका न्यास मुख में करे अर्थात् मुख के पूर्व भाग में करना चाहिए। "प्र"—का मुख के दक्षिण भाग में "चो"—का मुख क पश्चिम भाग में और "द"—का न्यास मुख के उत्तर भाग में करना चाहिए।४०।

यात्कारं मूर्ध्नि विन्यस्यसवं यापी व्यवस्थितः।
एतान्विन्यस्य धर्मात्मा ब्रह्मविष्णुसिवात्मकः ।। २

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महायोगी महाज्ञानी परं निर्वाणकं व्रजेत् ।
सन्ध्याकाले पुनर्न्यासं शृणु त्व तद्यथार्थतः ।।४४
ॐ भूरिति हृदये न्यस्य ॐ भुवश्शिरसि न्यसेत् ।
ॐ स्वःशिखायै तत्सवितुर्वरेण्यमिति कलेवरे ।।४५
ॐ भर्गोदेवस्य धीमहीति नेत्रयोः ।
ओं धियो योनः प्रचोदयादिति करयोर्न्यसेत् ।।४६
ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरोम् ।
इत्युदकस्पर्शमात्रेण प.पात्पतो व्रजेद्धरिम् ।।४७
ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ।
ॐतत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचयादयात् ।
ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ।।४६
इति सव्याहृतिं सप्रणवां दशोङ्कारां सन्ध्याकाले कुम्भकेन
वारत्रयं जप्त्वा सूर्योपस्थाने सावित्रीं चतुर्विशंशत्यक्षरा जप्त्वा
महाविद्याधिको भवति । ब्रह्मत्व लभते ।।
षटकुक्षिलक्षां पुत्र गायत्रींशृणू यत्नतः ।
यां ज्ञात्वा तु परं ब्रह्मस्थान गच्छवि वै द्विजः ।।
ओंतत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः
प्रचोदयात् ।।५०

'यात्-इसका न्यास मस्तक में करे और सर्वव्यापी व्यवस्थित होवे । ब्रह्मा, विष्णु और शिव के स्वरूप वाला धर्मात्मा इस उक्त विधि से गायत्री के वर्णों का अपने शरीर के अंगों में विन्यास करे ।४३। इस तरह न्यास करने वाला महान् योगी और महान् ज्ञानी होता है और परम निर्वाण पद को प्राप्त किया करता है । सन्ध्योपासना के समय जो न्यास करना आवश्यक है उसको भी यथार्थ रूप से श्रवण करलो ।४४। यह गायत्री की व्याहृतियों का न्यास करके फिर पूरे मन्त्र का न्यास होता है । "ॐ भूः" "ॐ स्वः"-इसका न्यास शिखा में करना चाहिए । इसके अनन्तर "तत्पवि वंरेण्यम्"-इसके न्यास पूरे कलेवर में करे ।४५। 'ॐ भर्गोदेवस्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीमहि'-इसका न्यास दोनों नेत्रों में करना चाहिए। 'ॐ धियो यो नः प्रचोदयात्''-इसका न्यास दोनों हाथों में करे।४६। 'ॐ आपो ज्योती-रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्''-इससे उदक के केवल स्पर्श करने से ही पाप से पूत होकर भगवान् हरि की सन्निधि में न्याय करने वाला पहुँच जाता है।४७।गायत्री का पूरा स्वरूप—ॐ भूः, ॐ भुवः, ॐ स्वः, ॐ मह, ॐ जनः, ॐ तपः, ॐ सत्यम्, ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्, ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्''यह है।४८-४६।इस प्रकारसे समस्त व्याहृतियों से समन्वित-प्रणवों से युक्त, दश ओकारों वाली गायत्री को सन्ध्योपासना करने के समय में प्राणायाम के कुम्भक में तीन बार जाप करे। सूर्योपस्थान में चोवीस अक्षरों वाली सावित्री का जाप करके द्विज महाविद्यासे अधिक सम्पन्न हो जाया करता है। और ब्रह्मत्व की प्राप्ति कर लेता है। हे पुत्र! छै कुक्षिओं के लक्षणो वाली गायत्री की तुम यत्न पूर्वक श्रवण करो जिसका ज्ञान प्राप्त करके द्विज परम ब्रह्म स्थान को प्राप्त करता है। गायत्री का साधारण स्वरूप—''ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्'' यह होता है।५०।

एवं विप्रो न जानाति स एव ब्राह्मणाधमः।
न तस्य क्षीयते पाप्मा भवेद्भूरि प्रतिग्रहः।।५१
इमां यो वेत्ति गायत्रीं सर्ववीजसमन्विताम्।
स वेत्ति चतुरो वेदान्योगज्ञानं जपत्रयम्।।५२
य एनां नैव जानाति सशूद्रात्परतः स्मृतः।
तस्यापूतस्य विप्रस्य न देयं पितृपार्वणम्।।५३
न स्नानफलदः कश्चित्सर्वंच निष्फल भवेत्।
विद्यावितं तथा जन्मद्विजत्वकारणंयतः।।५४
निष्फलं सकलं तस्य मेध्यं पुष्पं यथाऽशुचौ।
चतुर्वेदाश्च गायत्री पुरा व तुलिता मया।।५५
चतुर्वदात्परागुर्वी गायत्री मोक्षदा स्मृता।
दशभिर्जन्मजानतं शतेन च पुराकृतम्।।५६
त्रियुग तु सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्विषम्।
गायत्रीमक्षमालायां सायं प्रातश्च यो जपेत्।।५७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार से जो विप्र नहीं जानता है वह ही अधम ब्राह्मण होता है। उस ब्राह्मण के पापों का कभी क्षय नहीं हुआ करता है और वह जो प्रतिग्रह लेता है उससे वह पाप और भी अधिक हो जाता है।५१।जो विप्र इस वेद जननी गायत्री को समस्त बीजों से समन्वित होने वाली भलीभाँति से जानता वह चारों वेदों का ज्ञान रखता है अर्थात् चारों वेदों के ज्ञान का फल उसे प्राप्त होता है और योग का ज्ञान तथा तीनों जपों का फल उसे मिल जाता है।५२। जो विप्र इस परादेवी गायत्री का यथार्थ ज्ञान नहीं रखता है वह शूद्र से भी अधिक नीच है-ऐसा बताया गया है। ऐसे अपूत अर्थात् पवित्रता से हीन विप्र को कभी भी पितृ पार्वण श्राद्ध नहीं देना चाहिए अर्थात् पितृगण के पार्वण श्राद्ध के योग्य पात्र नहीं होता है।५३। कोई भी स्नान के फल का प्रदान करने वाला नहीं होता है। उसका सभी कुछ निष्फल होता है क्योंकि द्विजत्वं प्राप्त करने के कारण ब्राह्मण कुल मे जन्म-विद्यावित होता है।५४। ऐसे संस्कार हीन ब्राह्मण का सभी कुछ निष्फल होता है जिस प्रकार से पवित्र पुष्प किसी अपवित्र स्थान में पड़ जाने पर बेकार हो जाया करता है। ब्रह्माजी ने नारद से कहा कि मैंने पहिले चारों वेद और गायत्री को तुला में रखकर तोला था।५५। चारों वेदों से गायत्री गौरव वाली हुई थी जो कि पर मोक्ष के प्रदान करने वाली है। यह वेद जननी गायत्री दश जन्मों में उत्पन्न हुए और सौ जन्म में पहिले किये हुए, तीन युग और सहस्र जन्म में किये हुए भी पाप का नाश कर दिया करती है। इसकी इस प्रकार की महिमा है। जो विप्र नित्यप्रति अक्षमाला से सायकाल और प्रातःकाल में गायत्री का जप किया करता है उसको पाप कभी भी नहीं लगता है तथा वह परमार्थ मोक्ष की प्राप्ति कर लेता है जो इस संसार में जन्म-मरण का दुःख कभी नहीं है।५६-५७।

॥ सदाचार वर्णन ॥

ब्राह्मणस्यसदाचार क्रमं ब्रूहि च कमणाम् ।
इतरेषां च वर्णानां प्रवृत्तमखिलवद ॥१

आचाराल्लभते चायुराचाराल्लभतेसुखम् ।
आचारोत्स्वर्गमोक्षं च आचारोहन्त्यलक्षणम् ॥२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनाचारो हिपुरुषो लोकेभवतिनिन्दितः ।
दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेव च ।३
नरकेनियतंवासो ह्यनाचारान्नस्य च ।
आचाराच्च परं लोकमाचारं शृणुतत्त्वतः ।।४
गोमयेन गृहेनित्यं प्रकुर्य्यादुपलेपनम् ।
प्रक्षालयेततःपीठं काष्ठ पात्रं शिलातलम् ।।५
भस्मना कांस्यपात्रं तु ताम्रमम्लेन शुद्धयति ।
शिलापात्रं तु तैलेन भांलं गोवालकेनतु ।।६
स्वर्णरौप्यादिपात्रं तु जलमात्रेणशुध्यति ।
अग्निनालोहपात्रं तु पाकप्रक्षालनेन तु ।।७

देवर्षि नारदजी ने ब्रह्माजी से पूछा—हे भगवन् ! आप मुझे कृपाकर ब्राह्मण का सदाचार क्या होता है और उनके कर्मों का क्रम किस प्रकार का हुआ करता है—यह बतलाइये । ब्राह्मणों के अतिरिक्त क्षत्रिय-वैश्य और शूद्र जो इतर वर्ण होते हैं उनके विषय में भी बतलाने का सभी कुछ क्रम कहिए ।१। ब्रह्माजी ने कहा—हे नारद ! आचार की बहुत बड़ी महिमा है । आचार से पुरुष आयु की अधिकता का लाभ प्राप्त किया करता है । आचारसे मनुष्यको सुख मिलता है । यह आचारही एक ऐसा महत्त्वशाली होता है कि इससे मनुष्य को स्वर्ग तथा मोक्ष की भी प्राप्ति हो जाती है । आचार बुरे लक्षणों का विनाश कर देता है ।२। जो पुरुष आचार से हीन होता है वह लोक में निन्दित हो जाता है । आचार शून्य पुरुष को सर्वदा दुःख ही दुःख भोगने पड़ा करते हैं और रोगी तथा छोटी आयु वाला भी हो जाया करता है।३।जो आचारसे रहित मनुष्य होता है उसका नरकमें नियत रूप से वास हुआ करता है । जो आचार से युक्त होता है वह परम श्रेष्ठ लोक की प्राप्ति किया करता है अब तात्त्विक रूप से तुम आचार का श्रवण करो ४। सर्व प्रथम आचार का अंग जो शुद्धि एवं शुचिता है उसे बतलाया जाता है।नित्यप्रति घरमें गोमय से उपलेपन करना चाहिए ।५इसके उपरान्त जल से पीठ–काष्ठ–पात्र और शिला तल को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रक्षालन करे। पीठादि की शुद्धि जल के प्रक्षालन से ही हो जाती है ।५। कांसे के पात्र की शुद्धि भस्म से होती है और ताम्र के पात्र खटाई डालकर शुद्ध किये जाते है। शिला के अर्थात् पत्थरके जो पात्र होते हैं उनकी शुद्धि तेलसे तथा फाल को शुद्धि गोपालों के जरिये से होती है ।६। स्वर्ण और रौप्य अर्थात् चाँदी के जो पात्र होते हैं उनकी शुद्धि केवल जल के प्रक्षालन से ही हो जाती है लोहपात्र की शुद्धि अग्नि और पाक प्रक्षालन से हुआ करती है ।७।

खननाद्दाहनाच्चैव उपलेपनधावनात् ।
पर्जन्यवर्षणाच्चैव भूरमेध्या विशुध्यति ।।८
तैजसानां मणीनाश्च सर्वस्याश्ममयस्य च ।
भस्मभिर्मृत्तिकाभिश्च शुद्धिरुक्ता मया पुरा ।।९
शय्या भार्या शिशुर्वस्त्रमुपवीत कमण्डलुः ।
आत्मनःकथिताश्शुद्धा न परेषां कदाचन ।।१०
न भुञ्जीतैकवस्त्रेण न स्नायादेकवाससा ।
न धारयेत्परस्यैवं स्नानवस्त्रं कदाचन ।।११
संस्कारं केशदन्तानां प्रातरेव समाचरेत् ।
गुरूणां च नमस्कारं नित्यमेव समाचरेत् ।।१२
हस्तपादे मुखेचैव पश्चाद्रो भोजनंचरेत् ।
पश्चाद्रकस्तु भुञ्जान शत वर्षाणि जीवति ।।१३
देवतानां गुरोराज्ञां स्नातकाचार्ययोरपि ।
नाक्रामेत्कामतश्छायां विप्रस्य दीक्षितस्य च ।।१४

जो अपवित्र एवम् अशुचि भूमि का भाग होता है उसकी शुद्धि कई प्रकार से होती है। खोदकर ऊपर की मिट्टी अलग कर देने मे भूमि पर काष्ठ फूंस आदि डालकर जला देने से, गोमय आदिसे लीपनेसे और धावन से और मेघ के द्वारा वृष्टि हो जाने से अमेध्य भूमकी शुद्धि हो जाती है। उक्त विधानों में से कोई भी एक विधान भूमि का शोधक होता है ।८। मैंने पहिले भी तुमको बता दिया था कि जो पदार्थ तेज से युक्त होते हैं उनकी और मणियों की तथा अश्ममय पदार्थों की शुद्धि भस्म से या मृत्तिका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से होती जाती है ।९। शय्या-भार्य्या-शिशु-वस्त्र-उपवीत और कमण्डलु ये पदार्थ अपने ही शुद्ध कहे गये हैं दूसरों के शुद्ध नहीं होते है । तात्पय यह है कि दूसरे के उपर्युक्त पदार्थ कभी सेवन नहीं करने चाहिए क्योंकि वे अशुचि बताये गये हैं।१०।एक वस्त्र धारण करके कभी भी भोजन न करे भोजनके अवसरपर दूसरा कोई वस्त्र अवश्य ही शरीर पर होना चाहिए। इसी तरह एक ही वस्त्र धारण करके स्नान भी नहीं करे। स्नानके समय में भी दूसरा कोई वस्त्र होना आवश्यक है और किसी दूसरे का स्नान वस्त्र कभी भी धारण नहीं करना चाहिए।११।मनुष्यको अपने केशों और दाँतों का संस्कार प्रातःकालके समयमें ही करना चाहिए। प्रत्येक का सद्-आचार के अनुसार कर्त्तव्य है कि नित्य-प्रति प्रातःकाल में अपने गुरु के चरणों में नमस्कार करे ।१२। दोनों हाथ, चरण और मुख इन पाँचों अंगों को गीला करके ही भोजन करना चाहिए । जो पुरुष इन पाँचों को भोजन के समय में भीगा हुआ रखता है वह सौ वर्ष तक जीवित रहा करता है । तात्पर्य यह है कि इनके भीगे हुए रहने से भोजन करने पर आयु की वृद्धि होती हैं ।१३। अपने इष्ट देवताओं की गुरु की और स्नातक तथा आचार्य की आज्ञा का कभी उल्लंघन नही करना चाहिए । किसी भी विप्र की और दीक्षित पुरुष की छाया का स्वेच्छा से आक्रान्त नहीं करे ।१४।

गोगण दैवत विप्रं घृतं मधुचतुत्पथम्
प्रदक्षिणं प्रकुर्वीत प्रख्यातांश्च वनस्पतीन् ।।१५

गोविप्रावग्निविप्रौ च विप्रौ द्वौ दम्पती तथा ।
तयोर्मध्ये न गच्छेत स्वर्गस्थोऽपि पतेद् ध्रुवम् ।।१६

उच्छिष्टो न स्पृशेदग्निं ब्राह्मणं दैवत गुरुम् ।
स्वशीर्षं पष्पवृक्षंच यज्ञवृक्षमधार्मिकम् ।।१७

त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट उदीक्षेत कदाचन ।
सूर्याचन्द्रमसावेव नक्षत्राणि च सर्वशः ।।१८

नेक्षेद्विप्रं गुरुं देवं राजानं यतिनां वरम् ।
योगिनं देवकर्माणं धर्माणां कथकं द्विजम् ।।१९

नदीनां प्रतीरे पत्युश्च सरितां तथा ।
यज्ञवृक्षस्य मूले च उद्याने पुष्पवाटिके ।।२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीरस्य मलत्याग न कुर्याज्जीवने तथा ।
विप्रस्यायतने गोष्ठे रम्ये राजपथेषु च ।।२१

गायों का समुदाय–देवता---विप्र—घृत—मधु और चतुष्पथ की दाहिनी ओर करके चले अथवा इनकी प्रदक्षिणा करके चले तथा जो परम प्रख्यात वनस्पति हों उनको भी प्रदक्षिणा करे।१५। गौ और विप्र–अग्नि और विप्र–दो विप्र और दम्पति अर्थात् पति पत्नी इनके मध्य में होकर कभी नहीं जाना चाहिए । इनके मध्य मे होकर जाने वाला व्यक्ति स्वर्ग में रहने वाला भी हो तो भी उसका पतन हो जाता है यह सुनिश्चित है ।१६। यदि स्वयं उच्छिष्ट अवस्था में हो तो उसे अग्नि, ब्राह्मण, देवता, गुरु, अपना मस्तक, पुष्पों वाला वृक्ष, यज्ञ वृक्ष और ऐसा पुरुष जो धार्मिक न हो, इनका कभी भी स्पर्श नहीं करना चाहिए । कुछ भी खान-पान करने पर जब तक कुल्ली कर मुँह तथा हाथ, पैरों को नहीं धो लेता है मनुष्य उच्छिष्ट पुरुष किसी भी दशा में निम्नलिखित तीन तेजों का दर्शन न करे । उन तीन तेजोंमें सूर्य चन्द्रमा और सभी नक्षत्र हैं ।१८। उच्छिष्ट रहते हुए गुरु, देवता, राजा, यतिवर, योगी, देवों के कर्म करने वाले और धर्मों का कथन करने वाले द्विजका भी दर्शन नहीं करना चाहिए।१६। अपने शरीर का जो मल है उसका त्याग नदियों के तट पर-सागर के तीर पर-यज्ञ वृक्ष के मूल में-उद्यान के अन्दर-पुष्पों की वाटिका में-जल के मध्य में— विप्र के आयतन में–गोष्ठ में–रम्य स्थल में और राज-पथ में कभी नहीं करना चाहिए ।२०-२१।

न क्षौर कारयेद्धीरः कुजस्याह्नि कदाचन ।
मलं न धारयेद्दन्ते नखं न वदने क्षिपेत् ।।२२
तैलाभ्यङ्ग न कुर्वीत वासरे रविभौमयोः ।
स्वगात्रासनयोर्वाद्य गुरोरेकासनादनम् ।।२३
न हरेच्छ्रोत्रियस्वं च देवस्यापि गुरोरपि ।
राज्ञस्तपस्विनां चैव पङ्गोरन्धस्य योषितः ।।२४
पन्था देयो ब्राह्मणाय गोभ्यो राजभ्य एव च ।
रोगिणे भारतप्ताय गुर्विण्यै दुर्बलाय च ।।२५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवादं न च कुर्वीत नृपविप्रचिकित्सकैः ।
ब्राह्मणं गुरुपत्नीं च दूरतः परिवर्जयेत् ॥२६
पतितं कुष्ठसंयुक्तं चाण्डालं च गवाशिनम् ।
निर्धूतं ज्ञानहीनं च दूरतः परिवर्जयेत् ॥२७
स्त्रियं दुष्टां च दुर्वृत्तामपवादप्रदायिनीम् ।
कुकर्मकारिणीं दुष्टां सदैव कलहप्रियाम् ॥२८
प्रमत्तामधिकाङ्क्षोञ्च निर्लज्जां वाह्यचारिणीम् ।
व्ययशीलामनाचारां दूरतः परिवर्जयेत् ॥२९

भौमवार के दिन में धीर पुरुष को किसी भी दशा में क्षौर कर्म नहीं कराना चाहिए । दाँतों में कभी मैल नहीं रक्खे अर्थात् दांतों की सफाई सर्वदा रहनी चाहिए । अपने मुँह में नाखून कभी न लगावे । दाँतों से नखोंके काटते रहनेका स्वभाव बहुत दूषित होता है जो कि सदाचार के विरुद्ध है ।२२। रविवार और भौमवार के दिनों में तैल शरीर पर नहीं लगाना चाहिए। अपने गात्र और अपने पर वाद्य न रखे तथा अपने गुरु चर के साथ एक ही आसन पर स्थित न होवे।२३।किसी भी श्रौत्रिय विप्र काण धन-देवता का धन-गुरु का धन-राजा-तपस्वी-पगला-अंधा और स्त्री के धनका हरण नहीं करना चाहिए । ऐसा करना सदाचारके विपरीत होता है ।२४। मार्ग गमन करने के समय में यदि कोई राजा-ब्राह्मण और गौ सामने से आ जावे तो स्वयं एक तरफ हटते हुए रुककर इनको जाने के लिये मार्ग खाली कर देना चाहिए । मार्ग में कोई रोग से ग्रस्त मनुष्य-बोझ लादकर लाने—ले जाने वाला पुरुष—गर्भिणी स्त्री और शक्तिहीन दुर्बल पुरुष आ जावे तो पहिले इनको गमन करनेके लिये मार्ग छोड़ देना चाहिए ।२ । राजा-विप्र-चिकित्सा करने वाला ब्राह्मण—गुरु की पत्नी इनके साथ किसी भी विषय पर विवाद (बहस)नहीं करना चाहिए । यदि कोई अवसर भी उपस्थित हो तो इनको दूरसे ही वर्जित कर देवे ।२६। पतित—कोढ़ से युक्त—चाण्डाल—गो-माँस का भक्षण करने वाला—निर्धूत—ज्ञान से हीन पुरुष को भी दूर ही से त्याग देना चाहिए

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अर्थात् इनके साथ किसी भी तरह का सम्पर्क न रक्खें क्योंकि यह ऐसा करना सदाचरण के विरुद्ध है।२७। जो स्त्री दुष्ट प्रकृति वाली हो-बुरे चरित्र वाली-अपवाद (अयश—बदनामी) की देने वाली हो—बुरे कर्मों के करने वाली—दूषित-सदा ही कलह से प्यार करने वाली हो-प्रमोद से युक्त रहने वाली—अधिक अंग वाली—लज्जा से रहित -वाह्य चारिणी अर्थात् सर्वदा बाहिर ही संचरण करते रहने वाली हो—अधिक खर्चा करने के स्वभाव वाली और जो आचार से रहित हो ऐसी स्त्री का दूर से ही त्याग कर देना चाहिए क्योंकि ऐसी स्त्री के साथ रहने से सदाचार की सुरक्षा में बाधा होती हैं।२८-२९।

मलिनां नाभिवन्देत गुरुपत्नीं कदाचन ।
न स्पृशेत्तां च मेधावी स्पृष्ट्वा स्नानेन शुद्ध्यति ॥३०
वधूं पुत्रस्य भ्रातुश्च स्व पुत्रीं युव्रती ध्रुवम् ।
अन्यां च गुरुपत्नीं नेक्षेत्स्पर्शं न कारयेत् ॥३१
ताभिः सह कथालापं तथा भ्रूभङ्गदर्शनम् ।
कलहं निस्त्रपां वापा सदैव परिवर्जयेत् ।३२
न दद्याच्च सदापादं तुषाङ्गारास्थिभस्मषु ।
कार्पासास्थिषु निर्माल्योचितिकाष्ठेचितौ गुरौ ॥३३
शुष्कं मीनं न भक्षेत् पूतिगन्धिममेध्यकम् ।
विघसं चान्यदुच्छिष्टं पाकार्थं च परस्य च ॥३४
नस्थातव्यं नगन्तव्यं क्षणमप्यसता सह ।
न तिष्टेच्च क्षणंधीरो दीपच्छाये कलिद्रुमे ॥३५

अपने गुरु की पत्नी भी यदि मलिनावस्था में हो तो उस दशा में उसकी भी वन्दना नहीं करनी चाहिए। मेधा सम्पन्न पुरुष को उचित हैं कि उस दशा में गुरु पत्नी का स्पर्श न करे और यदि भूल स्पर्श हो भी जावे तो स्नान कर लेवे। मलिन दशा से यहाँ रजस्वला होने की अवस्था का तात्पर्य है।३०। अपनी भी स्त्री यदि मलिना हो तो उसके साथ कन्दप केलि कभी न करे। गुरु की पत्नी जो भी कुछ कहे उसके वचनों का तो उस दशामें श्रवण कर लेवे किन्तु उसका दर्शन नहीं करना चाहिए।१०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पुत्र की वधू भाई की वधू —अपनी पुत्री जो युवती हो—ऐसी ही अन्य कोई युवती—गुरु की पत्नी इनको न देखे और न इनका स्पर्श ही करे।३२। इनके साथ कथा लाप—भ्रू ओं के भङ्ग का देखना-कलह और लज्जा से रहित वाणी का सदा ही परिवर्जन कर देवे।३३। तुषाङ्गार—अस्थि—भस्म—कपाल की अस्थियों में—निर्माल्य—चिता का काष्ठ और गुरु चिति में सदा ही पाद नहीं देवे। शुष्क—दुर्गन्ध से युक्त—अपवित्र—विघस-दूसरे के द्वारा अच्छिष्ट की हुई और दूसरे के लिए पाक करने को लाई हुई मीनको कभी नहीं खाना चाहिए ३४। जो असत् पुरुष हो उसके साथ कभी नहीं रहना चाहिए और ऐसे पुरुष के साथ में कहीं पर गमन न करना चाहिए। धीर पुरुष को दीपक की छाया में और कलिद्रुम में एक क्षणमात्र भी नहीं ठहरना चाहिए।३५।

अस्पृश्यैः सह चालापं पतितैः कुपितैः सह।
न कुर्यात्क्षणमात्रं तु कृत्वा गच्छेच्च रौरवम् ॥३६
कनिष्ठ नाभिवन्देत पितृव्य मातुलं तथा।
उत्थाय चासनं दद्यात्कृताञ्जल्यग्रतः स्थितः ॥३७
तैलाभ्यक्तं ततोच्छिष्टमार्द्रं वस्त्रं च रोगिणम्।
पारावारगतोद्विग्नं वहन्तं नाभिवादयेत् ॥३८
यज्ञस्यान्तगत नष्टं क्रीडन्तंस्त्रीजनैः सह।
वालक्रीडागतं चापि पुष्पयुक्तं कुशैर्युतम् ॥३९
शिरः प्रावृत्य कर्णौ वा अप्सु मुक्तिशिखोऽपि वा।
अकृत्वा पादयोः पूजां नाचामेद् दक्षिणामुखः ॥४०
उपवीतविहीनश्च नग्नको मुक्तकच्छकः।
एकवस्त्रपिधानश्च आचान्तानैव शुद्ध्यति ॥४१
मध्यमाभिमुख पूर्वंतिसृभिः समुपस्पृशेत्।
अङ्गुष्ठदेशिनीभ्यां च नासां च तदनन्तरम् ॥४२

जो पुरुष स्पर्श करने योग्य न हो उनके साथ तथा जो पतित एवं कुपित पुरुष हों उनके साथ कभी भी एकक्षण मात्रके लिए वार्तालाप न करे। जो भी कोई ऐसे पुरुषोंके साथ सम्भाषण करते हैं वे रौरव नरकमें गिरते

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हैं ।३७। जो सबसे छोटे पितृव्य (चाचा) और मातुल हों अर्थात् अपनी अवस्था से बहुत ही छोटे हों तो उनके चरणों में वन्दना नहीं करे। जब भी वे आवें तो गात्रोत्थान उन्हें देवे अर्थात् उन्हें देखकर खड़ा हो जावे और उनके बैठने के लिये आसन देकर हाथ जोड़कर उनके सामने संस्थित होवे—यही उनका पर्याप्त सत्कार सदाचार समन्वित होता है।३७।वन्दनीय पुरुषों में भी कुछ अवसर ऐसे हैं जबकि वन्दना नहीं करनी चाहिए। जो कोई तैल से व्यक्त हो अर्थात् जिसके शरीर में तैल लगा हुआ हो—उच्छिष्ट दशामें स्थित हो-गीले वस्त्र पहिने हुए हो--रोग से ग्रस्त हो—पारावारगत और उद्विग्न हो तथा कुछ वहन कर रहा हो, ऐसी अवस्थाओंमें अवस्थित पुरुष का अभिवादन नहीं करना चाहिए। जब शुद्ध स्थिति में हो जावें तभी अभिवादन करे—यही सदाचार युक्त है ।२८। जो यज्ञ के अन्तर्गत हो, नष्ट हो गया हो, स्त्रीजनों के साथ जो क्रीड़ा कर रहा हो, बाल क्रीड़ा में रत और पुष्पों से युक्त तथा कुशा से समन्वित हो उसका भी अभिवादन न करे ।३९। शिर और कानों को प्रावृत करके जलमें स्थित होकर तथा चोटी खोलकर चरणों की पूजा न करके दक्षिण दिशाकी ओर मुख करने वाला होकर आचमन नहीं करना चाहिए ।४०। यज्ञोपवीत से रहित—नग्न और मुक्त कच्छ वाला तथा वस्त्र पहिने हुए जो आचमन करता है वह कभी शुद्ध नहीं होता है ।४१। पहिले तीन मध्यमा अँगुलियों से मुख का समुप्र स्पर्श करे फिर इसके अनन्तर अँगूठा और देशिनी अँगुलि से नासिका समुप्र स्पर्श करे ।४२।

अंगुष्ठानामिकाभ्यां च चक्षुषी समुपस्पृशेत् ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठतश्श्रोत्रे नाभिमङ्गुष्ठकन तु ।।४३
तलेन हृदय न्यस्य सर्वाभिर्मस्तकोपरि ।
बाहूचाग्रेण संस्पृस्य ततः शुद्धो भवेन्नरः ।।४४
अनेनाचमनं कृत्वा मानवः प्रयतो भवेत् ।
सर्वपापैर्विनिर्मुक्तः स्वर्गं चाक्षयमश्नुते ।।४५
प्राणस्त्रिपुटशृङ्ग्या च व्यानोऽपानश्च मुदया ।
समानस्तु समस्ताभिरुदानस्तर्जनींविना ।।४६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाग:कूर्मश्च कृकरो देवदत्तो धनञ्जय: ।
उपप्रोणन्तु ते प्रीता येभ्यो भूमौ प्रदायते ।।४७
शयनं चार्द्र पादेन शुष्कपादेन भोजनम् ।
नान्धकारे च शयनं भोजनं नैव कारयेत् ।।४८
पश्चिमे दक्षिणे चंव न कुर्याद्दन्तधावनम् ।
उत्तरे पश्चिमेचैव न स्वपेद्धि कदाचन ।।४६
स्वप्नादायु:क्षय याति ब्रह्महा पुरुषो भवेत् ।
न कुर्वीत तत:स्वप्नशस्तं च पूर्वदक्षिणम् ।।५०

इसके उपरान्त अंगुष्ठ और अनामिका से दोनों नेत्रों का समुस्पर्श करना चाहिए । कनिष्ठिका और अगुष्ठ से श्रोत्र में, अंगूठा से नाभि को तल से हृदय पर न्यास करके फिर सभी से मस्तक के ऊपर न्यास करे और अग्र भाग से दोनों बाहुओं का संस्पर्श करके फिर मनुष्य शुद्ध हो जाता है ।४३-४४। इस उक्त विधिसे आचमन करके मनुष्य प्रयत्न होवे तो समस्त प्रकार के पापोंसे छुटकारा पाकर वह स्वर्गमें अक्षय निवास प्राप्त किया करता है।४ । त्रिपट शृङ्गी से प्राण वायु-मुद्रासे व्यान और अपान वायु—तर्जनी के त्रि ा अन्य समस्तों से समान वायु—नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनञ्जय जिनके लिये भूमि प्रदानकी जाती हैं वे सभी प्रसन्न और उनप्रीणित होवें।४६-४७।भीगे हुए पादोंसे युक्त होकर शयन करना—सूखे हुए पैरों वाला होकर भोजन करना—अन्धेरे स्थान में शयन करना और अन्धकारपूर्ण स्थान में भोजन करना—ये काम कभी भी नहीं करने चाहिये।इनसे हानि होतीहै और सदाचार के विपरीतहै ।४८। पश्चिम दिशा और दक्षिण दिशा की ओर मुख करके कभी दन्तधावन नहीं करे और उत्तर तथा पश्चिम की ओर मुख करके कभी शयन नहीं करना चाहिए ।४६। इस रीति से सोने से आयु की क्षीणता होती है और जो पुरुष इस रीति से शयन किया करता है वह ब्रह्म हत्या के पाप का भागी होता है। अतएव उक्त विधि से भूलकर भी कभी शयन नहीं करना चाहिए । पूर्व और दक्षिण की ओर शयन करना प्रशस्त बताया गया है ।५०।

आयुष्यं प्राङ्मुखो भुंक्ते यशस्य दक्षिणामुख: ।
श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुंक्ते यशोभुक्तं उदङ्मुख: ।।५१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राच्यां नरो लभेदायुर्याम्यां प्रेतत्वमश्नुते ।
वारुणे च भवेद्रोगी आयुर्वित्तं तथोत्तरे ॥५२
देवानामेकभुक्तं तु द्विभुक्तस्यान्नरस्य च ।
त्रिभुक्तं प्रेतदैत्यस्य चतुर्थंकोणपस्य तु ॥५३
निरामिषं हविर्देवा मत्स्यमांसादि मानुषाः ।
पूतिपर्युषित दुष्टमन्ये भुञ्जन्त्यनावृताः ॥५४
स्वर्गस्थितानामिह जीवलोके चत्वारि तेषां हृदये वसन्ति ।
दानं प्रशस्तं मधुरा च वाणी देवार्चनं ब्राह्मणतर्पणं च ॥५५
कार्पण्यवृत्तिः स्वजनेषु निन्दा कुचैलता नीचजनेषु भक्तिः ।
अतीवरोषा कटुका च वाणी नरस्य चिह्नं नरकागतस्य ॥५६
नवनीतोपमावाणी करु .ाकोमलं मनः ।
धमवीजप्रसूतानामेतत्प्रत्यक्षलक्षणम् ॥५७
दयादरिद्रहृदय वचः क्रकचकर्कशम् ।
पापवीजप्रसूतानामेत्प्रत्यक्षलक्षणम् ॥५८
श्रावपेच्छ्रृणुयाद्वापि सदाचारादिकंनरः ।
आचारादेःफललब्ध्वा पापात्पूतोऽच्युतोदिवि ॥५९

जो पूर्व दिशा की ओर मुख करके भोजन करता है वह आयु की वृद्धि करने वाला होता है । दक्षिण की ओर मुख करके भोजन करने से यशकी वृद्धि होती है । प्रतीची अर्थात् पश्चिम की ओर मुख करके भोजन करनेसे श्री की वृद्धि का नाश होता है और जो उत्तर की ओर मुखकरके भोजन किया करता है उसका यश विनष्ट हो जाता है ।५१। पूर्व दिशा में नर आयु का लाभ करता है और याम्य दिशा में प्रेतत्व की प्राप्ति किया करता है । वारुण दिशा में रोगी होता है तथा उत्तर में आयु और वित्त दोनों का लाभ करता है ।५२। देवताओं का भोजन एकबार होता है—मनुष्यों का भोजन दो बार दिन-रात में होता है—प्रेत और दैत्यों का भोजन तीन बार होता हैं और चार बार का भोजन जो होता है वह कौणप का ही हुआ करता है ।५३। देवगण आमिष से रहित हवि का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपभोग क्रिया करने हैं—मनुष्य मत्स्य—मांसादि से समन्वित का भोजन किया करते हैं और अन्य जो अनावृत हैं वे दुर्गन्धसे युक्त तथा वासीं दोष युक्त हविका उपभोग करते हैं ।५४। इस जीव लोक में स्वर्गवासियों की चार बातें हैं जो कि उनके हृदय में निवास किया करती हैं प्रशस्त दान, मधुर वाणी, देवगण का पूजन और ब्राह्मणों को तृप्त एवम् सन्तुष्ट करना ये चार गुण जो मनुष्यो में विद्यमान हैं वे स्वर्गीय लोगोंके ही हुआ करते हैं ।५६। नरक में निवास करने वाले प्राणी के चिह्न कृपणता के साथ व्यवहार करना, स्वजनों में निन्दा करना, बुरे मलिन वस्त्र धारण करना, नीचे वृत्ति के मनुष्यों में भक्ति-भाव रखना, अत्यधिक क्रोध करना, सदा कड़वी एव कठोर वाणी का बोलना आदि होते हैं ।५७। जो पुरुष धर्म बीज से प्रसूत हुए हैं उनके लक्षण ये हैं—उनकी जो वाणी होती हैं वह नवनीत (मक्खन) के समान अत्यन्त प्रिय एवं मधुर वाणी होती हैं करुणा से पूर्ण कोमल उनका मन होता है, यही उनका प्रत्यक्ष लक्षण है जोर यह प्रमाणित क्रिया करता है कि उनकी उत्पत्ति धर्म के ही बीज से यहाँ हुई है ।५७। जो मनुष्य इन सदाचार आदि के लक्षणों का स्वयं श्रवण करता है या इनका श्रवण दूसरोंको कराया करता है वह आचार आदिका सम्पूर्ण फल प्राप्त करता है और पापों से छुटकारा पाकर परम शुद्ध हो जाता है तथा स्वर्ग से फिर उसकी च्युति नहीं होती है ।५९।

।। पितृ सेवा माहात्म्य ।।

यत्पुण्यमधिकंलोके सर्वदा सर्वसंमतम् ।
तद्वदस्वेच्छया विप्र यत्कृतं पूर्वपूर्वकैः ।।१
एकदा तु द्विजाः सर्वे व्यासशिष्यास्सहादरात् ।
व्यासं प्रणम्य पप्रच्छुर्धर्मं मां च यथा भवान् ।।२
पुण्यात्पुण्यतम लोके सर्वधर्मेषु चोत्तमम् ।
किं कृत्वा मानवाः स्वर्गं भुञ्जते चाक्षयंवद ।।३
लभ्यंचाकण्टकं शुद्धं वर्णानां मर्त्यवासिनम् ।
गुरूणां च लघूनां च साध्यमेकक्रनु वद ।।४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यत्कृत्वा च देवानां पूज्योनाके भवेन्नरः ।
तत्तद्वद च नो ब्रह्मन्प्रसादो भवधर्मतः ॥५
पञ्चाख्यानं वदिष्यामि शृणुध्व तत्रपूर्वतः ।
पञ्चनामेककं कृत्वा विन्दन्मोक्षं दिव यशः ॥६
पित्रोरर्चाऽथ पत्पुश्च साम्य सर्वंजनेयु च ।
मित्राद्रोहो विष्णुभक्तिरेतेपञ्च महासखाः ॥७

भीष्म पितामह ने पुलस्त्य मुनि से कहा—हे विप्रवर ! इस संसार में सदा सर्वदा सबके द्वारा माना हुआ जो पुण्य सबसे अधिक होता हो और जिसको पहिले होने वाले सभी पूर्व पुरुषों ने किया हो उसके विषय में आप अपनी इच्छासे ही कुछ वर्णन कीजिए।१।पुलस्त्य मुनिने भीष्म के ऐसे प्रश्न के पूछे जाने पर कहा—एकबार व्यासदेव के समस्त शिष्यों ने बहुत ही आदर पूर्वक महर्षि व्यासजी के समीप में उपस्थित होकर उन्हें प्रणाम किया था और फिर सब द्विजगण ने उनसे ऐसा ही प्रश्न किया था और इसका उत्तर उनसे पूछा था जैसा आज आप मुझसे पूछ रहे हैं ।२। द्विजों ने कहा था हे भगवन् ! इस लोक में समस्त पुण्यों से भी अत्यधिक श्रेष्ठ पुण्य तथा जो समस्त प्रकार के धर्मों से अत्युत्तम माना जाने वाला हो वह कौन-सा है जिसको लोक में मनुष्य करके अक्षय स्वर्ग के निवास का सुख भोगा करते हैं ? आप हम लोगों को यह बतलाइये ।३। ऐसा ही कोई एक क्रतु बतलाइये जिसका बड़े और छोटे सभी लोग कर सकें और सभी के द्वारा साध्य होवे । जिसके सम्पादन करने में कोई विशेष कष्ट न होता है तथा सबके द्वारा प्राप्त करने के भी योग्य हो । इस मर्त्यलोकमें निवास करने वाले समस्त वर्णोंके लोगों के लिए शुद्ध भी हो।४।ऐसे किसी परम श्रेष्ठ पुण्यमय कर्मके विषय में आप इस समयमें हम लोगोंको बतलाने की कृपा कीजिए जिसको करके मनुष्य स्वर्ग में देवगण का भी पूज्य हो जावे । हे ब्रह्मन् ! आप प्रसन्न होकर ऐसे संसारमें किये जाने वाले धर्म की व्याख्या कीजिए । । इस प्रकार के शिष्यों द्वारा की हुई प्रश्नमयी प्रार्थना को सुनकर महर्षि वेद व्यासजीने कहा--हे द्विजगण! मैं पञ्चाख्यान बतलाऊँगा । उसें आप लोग उनको पूर्व से ही सुनें ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

इन पाँचों में से किसी भी एक को करके मनुष्य दिवलोक का निवास—यश की प्राप्ति और मोक्षका लाभ प्राप्त किया करता है। वे पाँच महान् मख ये हैं—अपने माता-पिता की परम भक्ति भावसे पूजा, अपने पतिकी अर्चना, समस्त प्राणियों के साथ समान प्रेमादर पूर्वक व्यवहार, मित्रगण के साथ कभी भी द्रोह न करना और भगवान् विष्णुके चरणोंमें निष्काम अनन्य भक्ति—ये पाँच सबसे श्रेष्ठ एवं महान् यज्ञ है जिनको सभी लोग बिना किसी कष्ट के कर सकते हैं और सभी धर्मों में इनको माना एवं किया जा सकता है। इनका परमाद्भुत फल प्राप्त होता है जो अन्य किसी का भी नहीं हो सकता है।६-७।

प्राक्पित्रोरर्चया विप्रा यद्धर्मं साधयेन्नरः।
न तत्क्रतुशतैरेव तीर्थयात्रादिभिर्भुवि ॥८
पिताधर्मं पिताः स्वर्गः पिता हि परम तपः।
पितरि प्रीतिमापन्ने प्रीयन्ते सर्वदेवताः ॥९
पितरो यस्य तृप्यन्ति सेवया च गुणेन च।
तस्यभागीरथीस्नानमहन्यहनि वर्तते ॥१०
सर्वतीर्थमयी माता सर्वदेवमयः पिता।
मातरं पितरं तस्मात्सर्वयत्येन पूजयेत् ॥११
मातरं पितरं चैव यस्तु कुर्यात्प्रदक्षिणम्।
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपावसुन्धरा ॥१२
जानुनो च करौ यस्य पित्रोः प्रणमतः शिरः।
निपतन्ति पृथिव्यां च सोऽक्षयां लभते दिवम् ॥१३

सर्व प्रथम अपने माता-पिता की अर्चना करके विप्र को जिस महान् धर्म की सिद्धि होती है वैसी इस भू-मण्डलमें सैकड़ों यज्ञों के करने से तथा महान् तीर्थों की यात्रा आदि के करन से भी नहीं हो सकती है। अतएव ब्राह्मणों का यही परम कर्त्तव्य है कि माता-पिता की पूजा एव शुश्रूषा भक्ति-भाव पूर्वक करे।। समार में पिता ही साक्षात् धर्म का स्वरूप है, पिता की आराधना से धर्म प्राप्त हो जाता है। पिता ही स्वर्ग है अर्थात् पिता की पूजा-सेवा से ही स्वर्गीय सुख प्राप्त हो जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता की सेवा कर उन्हें सन्तुष्ट करना सबसे बड़ी तपश्चर्या है । जब पुत्र पर उसके पिता प्रसन्न हो जाते हैं तो उस पर सभी देवगण प्रसन्न होकर कृपा किया करते हैं ।६। जिसके पितर सेवा भाव से और गुण-गरिमा से पूर्ण तप्त एवं सन्तुष्ट होजाते हैं उसको प्रति दिन भागीरथी गङ्गा के स्नान के समान परम पुण्य प्राप्त हुआ करता है ।१०। माताके अन्दर सभी तीर्थ विराजमान रहा करते हैं और पिता समस्त देवोंके समान होता हैं अतएव सब कुछ का त्याग करके पूर्ण प्रयत्नों से अपने माता-पिता की पूजा एवं सेवा करनी चाहिए ।११। जो अपने माता-पिताकी प्रदक्षिणा करता है उस पुरुष को सात द्वीपों वाले सम्पूर्ण भू-मण्डल की परिक्रमा के फल प्राप्त करने का लाभ होता है जिसके घुटने हाथ और शिर अपने माता-पिता को प्रणाम करने के लिए पृथ्वी में गिरते है वह कभी न क्षीण होने वाले स्वर्ग का निवास प्राप्त करता है ।११-१३।

तयोश्चरण योर्यावद्रजश्चिह्नानि मस्तके ।
प्रतीके च विलग्नानि तावत्पूतः सुतस्तयोः ।।१४
पादारविन्दसलिल यः पित्रोः पिवतेसुतः ।
तस्य पापं क्षय याति जन्मकोटिशतार्जितम् ।।१५
धन्योऽसौ मानवो लोके पूतोऽसौ सर्वकल्मषात् ।
विनायकत्वमाप्नोति जन्मनैकेन मानवः ।।१६
पितरौलङ्घयेद्यस्तु वचोभिः पुरुषाधमः ।
निरये च वसेत्तावद्यावदाभूतसम्प्लवम् ।। ७
पित्रोरनर्चन कृत्वा भुङ्क्ते यस्तु सुताधमः ।
कृमिकूपेऽथनरके कल्पान्तमुपतिष्ठति ।।१८
रोगिणं चापि वृद्धं च निरतरवृत्तिकर्शितम् ।
विकलनेत्रकर्णाभ्यात्यक्त्वागच्छेच्चरौरवम् ।।१९
अन्त्यजातिषु म्लेच्छेषु चाण्डालेष्वपिजायते ।
पित्रोरपोषण कृत्वासवपुण्यक्षयोभवेत् ।।२०
नाराध्य पितरौ पुत्रस्तीर्थदेवान्भजन्नपि ।
तयोर्न फलमाप्नोति कीटवद्भ्रमते महीम् ।।२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस समय पुत्र अपने माता-पिता के चरणों में भूमि पर शिर रखकर प्रणाम करता है तो उसके मस्तक पर जो रजकण के चिन्ह लग जाते हैं और प्रतीक स्वरूप रहा करते हैं वे यही बतलाते हैंकि उतनेसमय तकके लिए उनका पुत्र पवित्र हो गया है।१४।जो कोई पुत्र अपने माता-पिता के चरणों को धोकर उस जल का पान कर लेता है उसके सैकड़ों करोड़ों जन्मों के संचत हुए भी पाप क्षीण हो जाया करते हैं।१५।ऐसा पुरुष बहुत भाग्यशाली और धन्य है जो इस लोक मेंअपने माता पिता की अर्चना तथा भक्ति-भाव समन्वित सेवाके द्वारा समस्त कल्मषोंसे छुटकारा पाकर पवित्रात्मा बन जाता है। ऐसा मानव तो फिर एक ही जन्म में विनायकत्व पद को प्राप्त कर लेता है।१६। जो मनुष्य अपने माता-पिता को वाणियों के द्वारा लङ्घन किया करता है अर्थात् वचनों को कहकर तिरस्कार करता है वह बहुत ही अधम पुरुष होता है। वह नीच पुरुष जब तक भूत-संप्लव होता है तब तक नरक में निवास किया करता है। ।१७। जो अधम पुत्र माता-पिता की पूजा न करके स्वयं भोजनकर लेता है वह नरक में कृमियों से पूर्ण रूपमें कल्प के अन्त पर्यन्त निवास किया करता है।१८। जो पुरुष रोगों से ग्रस्त, वृद्ध, जीविका से कर्शित अर्थात् कुछ भी जीविका न रखने वाला, नेत्र और कानों से विकल पिता का त्याग कर देता है वह रौरव नरक में जाकर यातना भोगता है।१९। जो अपने माता-पिता का पोषण नहीं किया करता है वह दूसरे जन्म में अन्त्यज जातियों में—म्लेच्छों में तथा चाण्डालोंमें जाकर जन्मग्रहण करता है और उन नीच जघन्य जातियों के दूषित कर्मों को कर तीव्र यातनाय भोगता है। ऐसे मनुष्य के समस्त पुण्यों को क्षय होजाता है ॥२०॥ जो अपने माता-पिता की तो कभी आराधना करता नहीं है और देवों का अर्चन तथा तीर्थाटन किया करता है वह पुत्र इन देवार्चन और तीर्थाटन दोनों का कुछ भी फल प्राप्त नहीं किया करता है और एक कीट की भाँति भूमि में रमण किया करता है। माता-पिता की सेवा—समर्चा की बहुत बड़ी महिमा है जिसका अतुल पुण्य एवम् प्रभाव मनुष्य को प्राप्त होता है ॥२१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलाधार चरित

तुलाधारस्य चरितं प्रभावमतुलं प्रभो ।
वक्तुमर्हस्यशेसेण यदि मय्यस्त्यनुग्रहः ॥१
सत्यभावादलोभाच्च दद्याद्योवै त्वमत्सरात् ।
नित्यंयज्ञशत्ततस्य सुनिष्पन्नं सुदक्षिणम् ॥२
सत्येनोदयते सूरो वाति वातस्तथैवच ।
न सिन्धुर्लङ्घद्वेलां धतेकूर्मोधरां तथा ॥३
सत्येन लोकास्तिष्ठन्ति सर्वे च वसुधाधराः ।
सत्याद् भ्रष्टोऽध यःसत्वोऽप्यधोवासी भवेद् ध्रुवम् ॥४
सत्यवाचि रतो यस्तु सत्यकार्यंरतः सदा ।
स शरारेण स्वर्लोकमागत्याच्युततां व्रजेत् ॥५
सत्येन मुनयः सर्वे मां च गत्वा स्थिरास्थितः ।
सत्याद्युधिष्ठिरो राजा सशरीरो दिवंगतः ॥६

द्विज ने कहा—हे प्रभो ! आपका यदि मुझ पर पूर्ण अनुग्रह है तो मेरी प्रार्थना है कि आप कृपाकर तुलाधार का चरित्रऔर उसका अनुपम प्रभाव पूर्ण रूप से वर्णन करने के योग्य होते हैं ।१। भगवान् बोले—सत्य भावना से और लोभ के अभाव से तथा मात्सर्य दृष्टि से रहित होकर तुम जो कुछ भी दान करते हो उसका इतना अधिक फल होता है कि मानो नित्य ही दक्षिणा के सहित सौ यज्ञ उसने पूर्ण कर लिए हैं ॥२॥ सत्य के ही प्रभाव से सूर्य उदित होता है और इस सत्य के प्रभाव से वायु वहन किया करता है । यह सागर सत्य के ही प्रभावसे अपनी मर्यादाका उल्लंघन नहीं किया करता है और सत्य के बल से ही कूर्म इस भूमि को अपने ऊपर धारण किया करता है ॥३॥ सत्य ही की शक्ति से ये समस्त लोक स्थित रहते हैं और सत्य के ही प्रभाव से सब वसुधार (पर्वत) संस्थित हैं । जो सत्त्व सत्य से भ्रष्ट हो जाता है वह निश्चित रूप से अधोवासी हो जाया करता है अर्थात् पतन हो जाता है ।४।जो पुरुष सदा सत्य वचन में रति रखने वाला है अर्थात् सर्वदा सत्य भाषण किया करता है औरकिसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी दशा में कभी भी मिथ्या वचन नहीं बोलता है, जो पुरुष सत्यता से समन्वित ही कार्य किया करता है और कभी भी कोई असत् कार्य नहीं करता है, वह पुरुष इसी शरीर से स्वर्गलोकमें जाकर अच्युतता को प्राप्त करता है।५।यह सत्य का ही अनुपम प्रभाव है कि समस्त मुनिगण उसकी शक्तिसे मुक्तको प्राप्त करके स्थिर होकर रहा करते हैं। सत्य की सामर्थ्य से ही राजा युधिष्ठिर इसी पाँच भौतिक शरीर से स्वर्गलोक को चले गये थे क्योंकि युधिष्ठर सर्वदा सत्य व्रत का पालन करने वाले थे ॥६॥

सर्वशत्रु गणं जित्वा लोको धर्मेण पालितः।
अकरोच्च मख शुद्धं राजसूयं सुदुर्लभम् ॥७
चतुरशातिहस्राणि ब्राह्मणां च नित्यशः।
भोजयद्रु क्मपात्रेषु राजोपकरणेषु च ॥८
भोजयित्वोपकरणांस्तेभ्योदत्त्वा विसर्जयेत्।
यदभीष्टं द्विजातीनामतोऽन्यद्दापयेद्धनम् ॥९
अदरिद्रं ततो ज्ञात्वा द्विजव्यूहं परित्यजेत्।
.थैव स्नातकानां तु सहस्राणि तु षोडशः ॥१०
नित्य सम्भोजयेद्वाजा सत्येनैव विमत्सरः।
अतिष्ठम्ते गृहे पूर्वं चिर तस्य जिगीषया ॥११
जितं तेन जगत्सर्वं प्राणानुग्रहकारणात्।
सत्येन चासुरो राजा वलिरिन्द्रो भविष्यति ॥१२
पातालस्थस्य तस्यैव भूयस्तिष्ठामि वेश्मनि।
निरन्तरं च तिष्ठामि स्वान्तेपुण्यैककर्मण: ॥१३
यद्वा पुरा मया दंद्धो वैत्ययोनेर्विमीक्षणात्।
तलं चैदामरत्व हि शक्रत्व प्रददाम्यहम् ॥१४

राजा युधिष्ठर ने सत्य के प्रभाव से अपने सब शत्रुओं को जीतलिया था और फिर लोक का धर्म नीति के साथ पालन किया था। इसके उपरान्त राजा युधिष्ठिरने अत्यन्त दुर्लभ और प्रति शुद्ध राजसूय यज्ञ किया था ॥७॥ राजा युधिष्ठिर राजा के योग्य उपकरणों में सुवर्ण से निर्मित पात्रों में नित्य ही चौरासी हजार ब्राह्मणों को भोजन कराते थे ॥८॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन ब्राह्मणों को पहिले भोजन कराकर फिर राजोचित समस्त उपकरण उनको दान में देकर विदा किया करते थे। उन द्विजातियों जोकुछ अन्य व तु भी अभीष्ट होती थी वह भी उनको दिला दिया करते थे और विशेष धन का दान करते थे।६। जब यह समझ लिया था कि द्विज में कोई भी दरिद्र नहीं रहा है तभी उन द्विजों को विदाई करते थे। इसीप्रकार से सोलह सहस्र स्नातकों को भी राजा नित्य प्रति मत्सरता रहित होकर सत्य भाव से ही भोजन कराया करते थे। वे पहिले बहुत समय तक उसकी जिगीषा से उसके घर में स्थित रहा करते थे ।१०-११। प्राणियों पर पूर्ण रूप से अनुग्रह करने के कारण से ही उस राजा युधिष्ठिर ने सम्पूर्ण जगत् को जित कर लिया था। सत्य की बहुत महिमा है इसी के प्रभाव से असुर वलि राजा इन्द्र हो जायगा ।१२। वह पाताल में स्थित है। किन्तु उसके सत्य के प्रभाव से मैं यहाँ पर उसके घर में स्थित रहा करता हूं। वह अपने हृदयमें बहुत पुण्य कर्मोंके करने की भावना रखता है इसीलिए मैं उसके घर में निरन्तर स्थित रहा करता हूँ।१३।यद्यपि मैंने उसको दैत्ययोनिसे छुटकारा पानेके लिए बांध लिया था किन्तु उसे तल-लोक में वास दिया हैं। उसे अमरत्व और इन्द्र का पदमैं दे रहा हूँ।१४।

हरिश्चन्द्रो नृपस्सत्यात्मवाहनपरिच्छदः।
स्वशरीरेण शुद्धेन सत्यलोके प्रतिष्ठितः।।१५
राजानो वहवश्चान्ये ये च सिद्धा महर्षयः।
ज्ञानिनो यतयश्चैव सर्वे सत्येऽच्युताभवन् ।।१६
तस्मात्सत्यरतो लोके संसारोद्धरणक्षमः।
तुलाधारो महात्मावै सत्यवाक्ये प्रतिष्ठितः।।१७
लोके तत्सदृशो नास्ति सत्यवाक्यस्य कारणात्।
अश्वमेधसहस्रेण सत्यं तु तुलया धृतम् ।।१८
अश्वमेधसहस्राद्धि सत्यमेव विशिष्यते।
सर्वं सत्याद्भवेत्साध्यं सत्यो हि दुरतिक्रमः ।।१६
सत्यवाक्येन सा धेनुर्बहुला स्वर्गगामिनी
सर्वंराष्ट्रं समाधाय पुनरावृत्तिदुर्लभा ।।२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

तथाऽय सर्वदा साक्षी मृषा नास्ति कदाचन ।
बहुत्वमल्पमर्घं च क्रयविक्रयणे सुधीः ॥२१
सत्यवाक्यं प्रशस्तं न विशेषात्साक्षिणो भवेत् ।
साक्षिणः सत्यमुक्त्वा च अक्षयं स्वर्गमाययुः ॥२२

सत्य के ही प्रभाव से राजा हरिश्चन्द्र अपने समस्त वाहन और परिच्छद के सहित अपने शुद्ध शरीर से ही सत्यलोक में प्रतिष्ठित हुए थे ।१५। बहुत से अन्य राजा, सिद्ध और महर्षिगण तथा ज्ञानी एव यति वर्ग सत्यके प्रभाव से सप्य लोक में च्युत न होने वाले होकर प्रतिष्ठित हो गये हैं ।१६। इसलिए सत्य में रति रखने वाला और लोक में सांसरिक वाधाओं से उद्धार करने में समर्थ महान् आत्मा वाला तुलाधार सत्य वचन में प्रतिष्ठित हुआ था।१७।लोक में उस तुलाधार के समान सत्य वाक्य के कारण से अन्य कोई भी नहीं है। सौ अश्वमेध यज्ञों को सत्य के साथ तुला में रखा गया था ।१८। जिस समय में तोला गया तो एक सहस्र अश्वमेघ से भी अधिक गौरवशाली सत्य ही हुआ था । सत्य पालन में ऐसी अद्भुत शक्ति है कि इससे सभी कुछ साध्य हो जाया करता है किन्तु यह सत्य ही दुरतिक्रम होता है।१९।सत्य वाक्य से वह धेनु बहुला स्वर्ग में गमन करने वाली हुई थी। सम्पूर्ण राष्ट्र को समाधान करके वह इस लोक में जन्मवृत्ति से रहित होगई थी ।२०। इस रीति से सत्य सर्वदा इस बात का साक्षी है और मिथ्या कुछ भी नहीं है। बहुत अर्थ (मूल्य) और अल्प अर्थ तथा क्रय और विक्रय करने में सुधी-सत्य वाक्य और प्रशस्त विशेष रूप से साक्षी होते हैं, वे सत्य कहकर अक्षय स्वर्ग का निवास प्राप्त किया करते हैं ॥२१-२२॥

वावदूकः सभांप्राप्य सत्यं वदति वाक्यतिः ।
सयाति ब्रह्मणो गेह यज्ञै रन्यैश्च दुर्लभम् ।।२३
सभांया यो वदेत्सत्यमश्वमेध फलं लभेत् ।
लोभाद्द्वेषामृणोक्त्वा च रौरवं नरकं व्रजेत् ॥२४
सर्वसाक्षी तुलाधारो जनानां शूरएव च ।
विशेषाल्लोभसन्त्यागान्नाके निर्जरतां व्रजेत् ॥२५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कश्चिच्छूद्रो महाभागो न लोभे वर्तते क्वचित् ।
वृत्तिश्शाकेनं दुःखेन तथा शिलोञ्छतो भृशम् ।।२६
जर्जरं वस्त्रयुग्मं च कटौगात्रे च सर्वदा ।
सदापि लोभविरहो न परस्वं गृहीतवान् ।।२७
तस्य जिज्ञासयैवाहं गृहीत्वा वस्त्रयुग्मकम् ।
अवकोटे नदीती स्थितस्संस्थाप्य सादरम् ।।२८

वावदूक (अधिक बोलने वाला) सभा में प्राप्त होकर वाणी का स्वामी सत्य ही बोला है । ऐसा सत्य वचन बोलने वाला वह ब्रह्मा के लोक को प्राप्त किया करता है जो कि अन्य यज्ञों के द्वारा भी कठिन हैं ।२३। सभा में उपस्थित होकर जो सत्य वचन बोलता है वह अश्वमेघ यज्ञ के पुण्य फल को प्राप्त किया करता है । किसी लोभ के वशीभूत होकर अथवा द्वेष के कारण से जो सभा में मिथ्या भाषण करता है वह पुरुष रौरव नरक को प्राप्त किया करता है।२४।सबका साक्षी तुलाधार है और वह जनों में शूरवीर ही है । विशेष लोभ का भली-भाँति त्यागकर देने से वह स्वर्ग में जाकर देवत्व के पद को प्राप्त हुआ था ।।२५।। कोई महान् भाग्य वाला शूद्र है जो कभी भी लोभ में लिप्त नहीं होता है । वह अपनी वृत्ति शाक से और शिलोञ्छ से बड़े ही दुःख के साथ किया करता है ।२६।उसके पास दो वस्त्र हैं जो बहुत ही जर्जर हैं । उनमें से एक तो वह कटि में धारण किया करता है और दूसरा शरीरपर डाले रहा करता है । ऐसी उसकी आर्थिक दयनीय दशा है तो भी सर्वदा उसमें लोभका अभाव रहता है और पराये धन को वह कभी ग्रहण नहीं करता था ।२७।उसकी इस प्रकार की वृत्ति कहां तक सत्यता रखती है-इसके जानने की इच्छा से मैंने दो वस्त्र लेकर नदी के तट पर अवकोट में जाकर फिर मैं वहां आदर के साथ उनको रखकर स्थित होगया था ।।२८।।

स दृष्ट्वा वस्त्रयुग्मं तन्नलोभे कुरुते मनः ।
इतरस्य परिज्ञाय तत्क्षान्त्या स्वगृहं ययौ ।।२६
ततो विचिन्तयित्वा तु हृदा स्वल्पमिति द्विज ।
उदुम्बरं हेमगर्भं मपातत्रेव पातितम् ।।३०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीकटे च नदीतीरे विकोणे जनवर्जिते ।
तस्य य तस्य देशे तु दृष्टं तेन तदद्भुतम् ।।३१
अलं विधानमेतत्तु कृत्रिमं चोपलक्ष्यते ।
ग्रहणेवाधुना चास्य अलोभं नष्टमेव मे ।।३२
एतद्विमृश्य शूद्रोऽसौ परित्यज्य गृहं गतः ।
स्वस्था देवा मुद्रा तत्र साधु साध्विति चाब्रुवन् ।।३३
निर्ग्रन्थिरूपमादाय तस्यान्तिकगृहं तथा ।
गत्वाऽहं दैवसवादमवदं भूतवर्तनम् ।।३४
ततोऽभ्यासप्रसङ्गाच्च जनानां च परिप्लवात् ।
तस्य योषा तदागत्य पप्रच्छ देवकारणम् ।।३५
ततोऽहमवदं तस्य यद्वाचेतोगतं द्रुतम् ।
निभृतोऽथ निनादस्त कापण कथितं मया ।।३-

उसने उन दोनों वस्त्रों को देखकर यह समझ लिया था कि ये किसी अन्य पुरुष के हैं उसके मनमें किंचित मात्र भी लोभ उत्पन्न नहीं हुआ था और वह शान्ति से अपने घर को चला गया था ।२९। हे द्विज ! मैंने हृदय में सोचा था कि शायद यह बहुत ही स्वल्प मूल्य की वस्तु है ऐसा विचार कर तो नहीं छोड़ गया है, इसलिए मैंने फिर वहीं पर एक हेम जिसके मध्य में था ऐसा उदुम्बर गिरा दिया।३०।कीकठ में और नदी के तीर पर जनों से रहित विकोण में उसने उस अद्भुत वस्तु को देखा था । यह विधान पर्याप्त है किन्तु यह बनावटी दिखलाई देता है । उसने सोचा कि यदि मैं इसे ग्रहण करता हूँ तो इसी समय में मेरे अलोभ अर्थात् लालच का न करना जो एक अत्यावश्यक धर्म है वह नष्ट ही हो जायगा ।।३१-३२।।इस भाँति से उस शूद्र ने विचार करके उसका त्याग कर दिया और वह अपने घर को चला गया था । देवगण यह देखकर परम स्वस्थ होते हुए परम प्रसन्न हुए और सब "साधु-साधु"—अर्थात् बहुत अच्छा-अच्छा मुँह से कहने लगे ।३३। फिर निग्रन्थि स्वरूप को लेकर मैं उसके घर पर गया और फिर मैंने भूतवर्तन दैव सम्वाद उससे कह दिया था ।।३४

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके उपरान्त अभ्यासके प्रसङ्गसे और जनों के परिप्लव से उसकी स्त्री ने उस समय में आकर इस दैवकरण को पूछा था।३४ इसके अनन्तर जो भी चित्त में था वह मैंने शीघ्र ही उससे कह दिया था और निभृत होते हुए निनाद का जो भी कारण था मैंने बता दिया था ॥३६॥

हृदगतं पतिना तेऽद्य विधिना दत्तमज्ञवत् ।
परित्यक्तं महाभागे पुनर्नास्तीह ते वसु ॥ ७
यावज्जीवति दौर्विध्यं तस्य भक्ता न संशयः ।
गच्छमातगृहं शून्यमलब्धं तत्प्रपृच्छतम् ॥३८
श्रुत्वा तद्वै शिवं सा च वचनंपत्युरन्तिके ।
गत्वाप्रोवाचदुवृत्तं तच्छ्रुत्वाविस्मयंगतः ॥३९
स विचिन्त्य तया सार्धमागतोऽसौममान्तिकम् ।
निभृतं मामुवाचेदं क्षपणत्वंचकीर्तय ॥४०
चाक्षुषं चिरसशुद्धं हेलयातृणवत्तथम् ।
त्वया त्यक्तं यतस्तात नास्तिमाग्यमकण्टकम् ॥४१
ऐश्वर्यमतुलं शौर्यं शीर्यतेभावुक पुनः ।
स्वबन्धूनां महद्दुःखमाजन्ममरणान्तिकम् ॥४२
द्रक्ष्यसे चात्मना नित्यं मृतानां गतिध्रुवम् ।
तस्मात्तद्गृह्यतां तूर्णं भुङ्क्ष्व भोग्यमकण्टकम् ।
ऐश्वर्यमतुलं शौर्यं लोकानां विस्मयं वरम् ॥४३

हे महाभागे ! यज्ञ की भाँति विधि के द्वारा प्रदत्त आज तेरे पति ने हृदगत का त्याग कर दिया था फिर वहाँ पर तेरा धन नहीं है।३६।जब तक जीवित है यह दौर्विध्य है अर्थात् दुर्भाग्य है । उसके भक्त हैं— इसमें संशय नहीं है । हे माता ! गृह को जाओ । अलब्ध शून्य गृह को देखकर यह उससे पूछा था ।३८। उसने यह सब वचन श्रवण कर जो कि एक मङ्गल सम्वाद था उसने अपने पतिदेव के समीप में पहुंचकर दुर्वृत्त कह दिया था । पति को यह सब सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ था ॥३९॥उसने सभी कुछ सुनकर फिर उसी को साथ ले लिया और मेरे पास उपस्थित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगया निभृत में वह मुझसे बोला—हे क्षपणक ! आप मुझे सब बतलाइये ४०।क्षपणक बोला-चक्षुओं के समक्ष जो प्रत्यक्ष था उसे आपने हेलावश होकर तृण की भाँति क्यों त्याग दिया था ? हे तात ! यही कारण है । भाग्य अकण्टक नहीहै।४१।अतुल ऐश्वर्य औरतेरा भावुक शौर्य शीर्ण होता है । अपने बन्धुओं का महान दुःख जन्म से लेकर मरण पर्यन्त है ।४२।तू नित्य ही अपने द्वारा मृत पुरुषों की जो निश्चित गति है वह देखता है । इसलिए उसे शीघ्र ही ग्रहण करो और अकण्टक भोग्य का उपभोगकरो। अतुल ऐश्वर्य और शौर्य लोकों का विस्मय वर हैं ।४३।

अकामाच्च व्रतं सर्वमक्रोधात्तीथसेवनम् ।
दया जप्यसमा शुद्ध सन्तोषो धनमेव च ॥४४
अहिंसा परमा सिद्धिः शिलोञ्छवृत्तिरुत्तमा ।
शाकाहारः सुधातुल्य उपवासः परन्तप ॥४५
सन्तोषो मे महाभोग्यं महादानं वराटकम् ।
मातृवत्परदाराश्च परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥४६
परदारा भुजङ्गाभाः सर्वे यज्ञा इदं मम ।
मस्मादेनं न गृह्णामि सत्यं सत्यं गुणाकर ॥
प्रक्षालनाद्धि पङ्कस्य दरादस्पशन वरम् ॥४७
इत्युक्ते तु नरश्रेष्ठ पुष्पवर्यं पापत ह ।
मूर्ध्नि देश तनौ तस्य सर्वदेवेरितं द्विज ॥४८
देवदुन्दुभयो नेदुनृत्यन्त्यप्सरसां गणाः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो विमानं चापतद्दिवः ॥४९
ऊचुर्देवणास्तत्र विमानमिदमारुह ।
सत्यलोकं समासाद्य भुङ्क्ष्व भोग्य महेन्द्रवत् ॥५०

वह शूद्र बोला—मैंने बिना किसी भी कामना के यह सब व्रत किया हैं और क्रोध से रहित होते हुए ही तीर्थों का सेवन किया है । जो यह दया हैं वही मन्त्र—जाप के समान है औ शुद्ध सन्तोष ही धन हैं ॥४४॥ किसी भी प्राणी को मन-वाणी और शरीर से हिंसा न करना सबसे बड़ी श्रेष्ठ सिद्धि है । खेतों में शिला बीनकर अपने उदर की पूर्ति करना सबसे उत्तम वृत्ति है । शाकों का आहार कर लेना अमृत पान के तुल्य है

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उपवास करना ही सबसे बड़ा श्रेष्ठतप है।४५।सन्तोष ही मेरा महा भाग्य है और एक वराटक (कौड़ी) ही महान् दान है। पराई स्त्रियों को माता के समान समझना तथा पराये द्रव्यको मिट्टी के ढेलेकी तरह मानना श्रेष्ठ व्रत है।४६। पराई स्त्री तो भुजङ्ग के समान भयानक हैं—ये ही मेरे समस्त यज्ञ हैं। इसलिये हे गुणाकार! मैं इसका ग्रहण नहीं करूँगा-यह सर्वथा सत्य है और पुनः सत्य है। कीच को लगाकर फिर उसका प्रक्षालन करने से तो पहिले ही उससे दूर रहकर उस कीच का स्पर्श न करना ही श्रेष्ठ होता है जो फिर उसके प्रक्षालन करने का कभी अवसर ही उपस्थित न होवे।४७।भगवान्‌ने कहा-हे नरश्रेष्ठ! उस शूद्र के द्वारा इतना कहने पर आकाश से पुष्पों की वृष्टि हुई थी और हे द्विज! सब देवों के द्वारा की हुई फूलों की वर्षा उसके मस्तक पर उस स्थान पर और उसके शरीर पर पड़ी थी। उस समय में देवगण दुन्दुभि बजाने लगे थे। अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं—गन्धर्भ पति गान करने लगे थे। उसी समय में स्वर्ग से एक विमान नीचे आया था ।।४८-४९।। फिर सब देवता उससे बोले कि आप इस विमान पर समारूढ़ होइये और अब इस पर चढ़कर सत्य लोक को प्राप्त करें और वहाँ पर महेन्द्र के समान सम्पूर्ण भोगों का सानन्द उपभोग करें ।।५०।।

धात्री और तुलसी माहात्म्य

अपरस्थापि पृच्छामि फलस्य पूततां तरोः।
सर्वंलोकहितार्थाय वद नो जगदीश्वर ।।१
फात्रींफल परं पूतं सर्वलोकेषु विश्रुतम्।
यस्यरोपान्नरो नारी मुच्यते जन्मबन्धनात् ।।२
पावनंवासुदेवस्य फलप्रीतिकरं शुभम्।
अस्य भक्षणमात्रेण मुच्यते सर्वंकल्मषात् ।।३
भक्षणे च भवेदायुः पाने वै धर्मसञ्चयः।
अलक्ष्मीनाशनं स्नाने सर्वेश्वर्यंमवाप्नुयात् ।।४
यस्मिन्गृहे महासेन धात्री तिष्ठति सर्वदा।
तस्मिन्गृहे न गच्छन्ति प्रेता दैतेयराक्षसाः ।।५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न गङ्गा न गया चैव न काशी न च पुष्करम् ।
एकैव हि नृणां धात्री सम्प्राप्ते हरिवासरे ॥६
एकादश्यां पक्षयुगे धात्रीस्नानं करोति यः ।
सर्वपाप क्षय याति विष्णलोके महीयते ॥७

श्री स्कन्द ने कहा-हे जगदीश्वर ! दूसरे तरु के फल की भी पूतता मैं आपसे पूछता हूं । आप समस्त लोकों के हित सम्पादन के लिए कृपा-कर हमको बतलाइये ।१। ईश्वर ने कहा-धात्री (आंवला) का फल सम्पूर्ण लोकों में सबसे अधिक पवित्र फल होता है—यही प्रसिद्ध है । इसलिये आँवले के वृक्ष के समारोपण करने का बड़ा महत्व होता है । इसके लगाने से नर और नारी सांसारिक जन्म मरण के दुःखप्रद बन्धव से छुटकारा पा जाया करते हैं।२।भगवान् वासुदेव को यह धात्रीफल परम पावन तथा शुभ और प्रसन्नता देने वाला होता है । इस फलके भक्षण मात्र से मनुष्य सब कलमशों से मुक्त हो जाता है।३।इसके भक्षण करने से आयु की वृद्धि होती है और इसके रस के पान करने से धर्म का सञ्चय होता है । इसके साथ स्नान करने से अलक्ष्मी का नाश होता है और उसे सब प्रकार के ऐश्वर्य की प्राप्ति हुआ करती है।४।हे महासेन ! जिस घर में सर्वदा यह धात्री स्थित रहता है उस घर में प्रेत, दैत्य और राक्षस कभीं नहीं जाया करते हैं ॥५॥ हरिवासर के दिन में धात्री के ही एकमात्र हो जाने पर इतना महान् पुण्य होता है कि जितना गङ्गा-गया-काशी और पुष्कर के स्नान से भी नहीं होता ।६। पक्ष युग में अर्थात् दोनों कृष्ण और शुक्ल पक्ष में एकादशी तिथि में जो कोई भी पुरुष धात्री स्नान किया करता है उसके सभी पाप क्षीण हो जाते हैं और वह विष्णु लोक में अन्त में निवास कर महिमान्वित होता है ॥७॥

धात्रीफलं सदा सेव्यं भक्षणे स्नाने एव च ।
नियतपारणे विष्णोः स्नानमात्रेहरेर्दिने ॥८
संयते पारणे चैव धात्र्येकस्पर्शने नरः ।
भुक्त्वा तु लङ्घतेद्यस्तु एकादश्यां सितासिते ॥९
एकेनैवोपवासेन कृतेन तु षड़ानन ।
सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्षय्यं लभते स्वर्गं विष्णुसायुज्यमाव्रजेत् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन धात्रीव्रतं समाचर ॥११
धात्रीद्रवेण सततं यस्य केशाः सुरञ्जिताः ।
न पिबेत्स पुनर्मातुः स्तनं कश्चित्षडानन ॥१२
धात्रीदर्शनसंस्पर्शान्नाम्न उच्चारणेऽपि वा ।
वरदः सम्मुखो विष्णुः सन्तुष्टोभवति प्रियः ॥१३
धात्रींफलं च यत्रास्ते तत्रतिष्ठति केशवः ।
तत्रब्रह्मास्थिरापद्मा तस्मात्तां तु गृहेन्यसेत् ॥१४

धात्री का फल (आँवला) सर्वदा सेवन करना चाहिए इसका भक्षण करे और इससे स्नान भी करे। विष्णु के पारण में नियत रूपसे इसका प्रयोग करे और हरि के दिन में स्नान मात्र में धात्री का प्रयोग करे।८। संयत पारण में और धात्री के स्पर्श में मनुष्य को इसका प्रयोग करना चाहिए। इसको खाकर जो कृष्ण और शुक्लपक्षमें एकादशींके दिन लंघन करता है-हे षड़ानन ! ऐसे एक ही उपवास का ऐसा महान पुण्य होता है कि इससे ही सात जन्मों में किये हुए पाप से मनुष्य मुक्त हो जाता हैं—इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है।९-१०। इसके प्रभाव से अक्षय स्वर्ग-वास प्राप्त होताहै जिससे वह कभी भी च्युत नहीं होता है। मनुष्य इसके सेवन के प्रभाव से भगवान् विष्णु के सायुज्य की प्राप्तिकर लेता है। इस लिये सभी प्रकार के प्रयत्नों से धात्री-व्रत का समाचरण करना चाहिए।।११।धात्री फल (आंवला) के स्वरस से जिस पुरुष के केश सुरञ्जितहोते हैं, हे षड़ानन ! इस केश-रञ्जन का ऐसा विशाल पभाव होता है कि वह फिर इस संसार में जन्म ग्रहण करके माता का स्तन नहीं पीता है अर्थात् उसकी मुक्ति हो जाती है और जन्म मरण के आवागमन से ही छुटकारा पा जाता है।१२। धात्री के दर्शन से, स्पर्श से और केवल इसके नाम के उच्चारण मात्र से ही प्रभु विष्णु अत्यन्त सन्तुष्ट और प्रसन्न होकर उस व्यक्ति के सम्मुख वरदान देने को प्रस्तुत हो जाया करते हैं।१३। धात्री का फल जिस स्थान पर रहता है वहां पर केशव भगवान स्थित रहा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं। वहाँ पर ब्रह्मा भी उपस्थित रहते हैं और लक्ष्मी तो सुस्थिर होकर विद्यमान रहती है अतएव धात्री फल को सर्वदा अपने घर में रखना ही चाहिए ॥१४॥

अलक्ष्मीर्नश्यते यत्र तत्र धात्री प्रतिष्ठति ।
सन्तुष्टास्सर्वदेवाश्च न त्यजन्त क्षणं मुदा ॥१५
धात्रीफलेन नैवेद्यं यो ददाति महाधनम् ।
तस्यतुष्टो भवेद्विष्णुर्नान्यैः क्रतुशतैरपि ॥१६
स्नात्वा धात्रीद्रवेणव पूजयेद्यस्तु माधवम् ।
सोऽभीष्टफलमाप्नोति यद्वा मनसि वर्तते ॥१७
तथैव लक्षणं स्मृत्वा पूजयित्वा फलेन तु ।
सुवर्णशतसाहस्रं फलमेति नरोत्तमः ॥१८
या गतिर्ज्ञानिनां स्कन्द मुनीनां योगसेविनाम् ।
गति तां समवाप्नोति धात्रीसेवारतो नरः ॥१९
तीर्थसेवाभिगमने व्रतैश्च विविधैस्तथा ।
सा गमिर्लभ्यते पुंसां धात्रीफलसुसेवथा ॥२०
प्रीतिश्च सर्वदेवानां देवीनां नो गणस्य च ।
सम्मुखा वरदा स्थाने धात्रीफलनिषेवणे ॥२१
ग्रहादुष्टाश्च ये केचिदुग्राश्च दैत्यराक्षसाः ।
सर्वे न दुष्टतां यान्ति धात्रीफलसुसेवनात् ॥२२
सर्वयज्ञेषु कार्ये शस्त चामलकीफलम् ।
सर्वदेवस्यपूजायां वर्जयित्वा रविं सुत ! ॥२३
तस्माद्रविदिने तातसप्तम्यां च विशेषतः ।
धात्रीफलानि सततं दूरतः परिवर्जयेत् ॥२४

जिस स्थान पर धात्री प्रतिष्ठित होता है वहां पर अलक्ष्मी का नाश होजाता है। सभी देवता धात्री के रहने से अत्यन्त सन्तुष्ट हो जाया करते हैं और वे मुदित होकर वहां पर स्थिर रहते हैं तथा एक क्षण को भी उस स्थान का त्याग नहीं किया करते हैं।१५।जो पुरुष धात्री के फल के साथ नैवेद्य समर्पित करता है वह महाधन है। इससे भगवान् विष्णु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम सन्तुष्ट होते हैं जो कि अन्य सैकड़ों किये हुए यज्ञों से भी नहीं होते हैं।१६।धात्री के स्वरससे स्नान करके जो भगवान् माधव की पूजा करता है वह अपने अभीष्ट फल की प्राप्ति किया करता है जो भी उसके मन में होता है।१७।उसी प्रकार के लक्षण का स्मरण करके और फल के द्वारा पूजन करके नरों में उत्तम मनुष्य शत-सहस्र सुवर्ण के फल को प्राप्त कर लेता है।१८।हे स्कन्द ! जो उत्तम गति ज्ञान वाले महा पुरुषोंकी होती हैं और सद्गति योगाभ्यास करने वाले मुनियों की हुआ करती है वही परम श्रेष्ठ गति धात्रीजी सेवामें रत रहने वाले मनुष्य की होती है।१९। तीर्थों के सेवन तथा तीर्थों में अभिगमन करने से और अनेक प्रकार के व्रतों के करने से जो सुगति प्राप्त होती है वही गति मनुष्य की धात्री के फलों के सुसेवन से प्राप्त होजाती है।२०।समस्त देवगण और सब देवियों की तथा गण की प्रसन्नता इसके सेवन से होती है। धात्रीफल के सेवन और स्नान से सब देवी देवता वरदान प्रदान करने का उसके सामने उपस्थित रहा करते हैं।२ ।जो कोई दुष्ट ग्रह और जो उग्र राक्षस तथा दैत्य हैं वे सभी धात्री फल के सुसेवन करने से दुष्टता नहीं किया करते हैं.२२।सब प्रकार के यज्ञों में और समस्त शुभ कार्यों में आमलकी का फल प्रशस्त माना जाता है। हे सुत ! केवल रतिदेव को छोड़कर अन्य सभी देवताओं के पूजन में धात्री फल की बहुत बड़ा महिमा बताई गई है।२३।इसीलिए हे तात ! रविवार के दिन में और सप्तमी तिथि में विशेष रूप से धात्री के फलों का सदा दूर से ही त्याग देना चाहिए ॥२४॥

सर्वेभ्यःपत्रपुष्पेभ्य.सत्तमा तुलसोशिवा ।
सर्वकामप्रदा शुद्धा वष्णवा विष्णुसुप्रिया ॥२५
भुक्तिमुक्तिप्रदामुख्या सवलोकपरा शुभा ।
यामाश्रित्यगताःस्वगमक्षय मुनिसत्तमाः ॥२६
हिताथ सर्वलोकानां विष्णुना रोपिता पुरा ।
तुलसीपत्रपुष्पं च सवधर्मप्रतिष्ठितम् ॥२७
यथाविष्णो प्रियालक्ष्मीर्यथाऽहं प्रिय एव च ।
तथेयं तुलसीदेवी चतुर्थो नोपपद्यते ॥२८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसीपत्रमेकं तु शतहेमफलप्रदम् ।
नान्यैः पुष्पैस्तथा पत्रैनन्यैर्गन्धानुलेपनैः ॥२९
तुष्यते दैत्यहा विष्णुस्तुलस्याश्च दलैर्विना ।
अनेन पूजिता येन हरिर्नित्यं पराशया ॥३०

भगवान् ईश्वर ने कहा—समस्त प्रकार के पत्र और पुष्पों में तुलसीपत्र सबसे श्रेष्ठ है।यह तुलसी मानवकी सम्पूर्ण कामनाओंके प्रदान करने वाली होती है । यह परम शुद्ध है,वैष्णवी है और भगवान विष्णु की अत्यन्त प्रिय होती है।२५।तुलसी भगवान् की भक्ति और संसार से मुक्ति दोनों ही को देने वाली है और इनके प्रदान करने में इसका मुख्य स्थान माना जाता है । समस्त लोकों में यह परा एवम् अति शुभ मानी जाती हैं । इस तुलसी का समाश्रय ग्रहण करके श्रेष्ठ मुनिगण अक्षय स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं।२६।पहिले समय में समस्त लोकों के हित सम्पादन करने के लिये ही भगवान् विष्णु ने इस तुलसी का आरोप किया था । तुलसी पत्र और पुष्पों में सभी धर्म प्रतिष्ठित होते हैं । ७। जिस प्रकार से विष्णुकी प्यारी लक्ष्मी है और जिस भांति में उनका प्रिय हूँ उसी प्रकार से यह तुलसी देवी हैं । चौथा विष्णु भगवान का कोई भी प्रिया नहीं है ।२८। तुलसी का एक पत्र शत हेम के फल को प्रदान करने वाला है । अन्य प्रकार के पुष्पों से-पत्रों से तथा अन्य गन्धानुलेपनों से दैत्यों के हनन करने वाले भगवान् विष्णु सन्तुष्ट नहीं होते हैं जब तक कि तुलसी के दल उनके साथ न हों । तुलसी दल के द्वारा पूजित हरि भगवान् नित्य ही पराश के पूर्ण करने वाले होते हैं ॥२९-३०॥

तेन दत्तं हुतं ज्ञातं कृतं यज्ञव्रतादिकम् ।
जन्मजन्मनि भासित्वं सुखंभाग्यं यशःश्रियम् ॥३१
कुलंशील कलत्रं च पुत्रं दुहितरं तथा ।
धनं राज्यमरोगत्वं ज्ञानंविज्ञानमेव च ॥३२
वेदवेदाङ्गशास्त्रं च पुराणागमसंहिताः ।
सर्वं करगतं मन्य तुलस्याभ्यर्चनेहरेः ॥३३
यथागङ्गा पवित्राङ्गी सुरलोकं विमोक्षदा ।
यथा भागीरथीपुण्या तथेयतुलसी शिवा ॥३४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किं च गङ्गाजलेनैव किं च पुष्करसेवया ।
तुलसीदलमिश्रेण जलेनैव प्रमोद्यते ॥३५
माधवःसम्मुखोयस्य जन्मजन्मसु धीमतः ।
तस्य श्रद्धा भवेच्छ्रुत्वा तुलस्या हरिमर्चितुम् ॥३६

तुलसी के द्वारा दत्त (दिया हुआ दान)—हुत (किया हुआ हवन)—ज्ञात (प्राप्त किया हुआ ज्ञान) कृत (किया हुआ कर्म यज्ञ और व्रत आदि सब जन्म-जन्मों में भासमान होते हैं तथा सुख भाग्य, यश श्री, कुल शील, कलत्र, पुत्र, पुत्री, धन, राज्य, निरोगता ज्ञान, विज्ञान, वेद, वेदाङ्ग, शास्त्र, पुराण, आगम सहिता सभी कुछ तुलसी दल के द्वारा हरि का अभ्यर्चन करने से हस्तगत होजाया करते हैं-ऐसा मैं मानता हूँ । त्रैलोक्य की कोई भी वस्तु तुलसी द्वारा हरि की पूजा करने पर अलभ्य नहीं रहती है।३१-३३।जिस तरह भागीरथी गंगा परम पवित्र अंग वाली हैं और सुर लोक में मोक्ष प्रदान करने वाली होती है तथा भागीरथी परम पुण्य-मयी है उसी भाति यह तुलसी परम शिवा होती है ।३४। गंगा के जल से क्या और पुष्कर के जल सेवन से भी क्या विशेष फल होता हैं जो कि तुलसी दल के मिश्रित केवल साधारण जल से ही भगवान् प्रसन्न होजाते हैं।३५।जो तुलसी दल से सुसम्पन्न जल से भगवान् का समर्चन करता है उस धीमान् मनुष्यके जन्म-जन्मों में भगवान् माधव सम्मुख स्थित रहा करते हैं । तुलसी के द्वारा भगवान् हरि का अर्चना श्रवण करके उसकी श्रद्धा हो जाती है ॥३६॥

यो मञ्जरीदलैरेव तुलस्या विष्णुमर्चयेत् ।
तस्य पुण्यफलस्कन्द कथित नैवशक्यते ॥३७
तत्र केशवसान्निध्य यत्रास्ति तुलसीवनम् ।
तत्र ब्रह्मा च कमला सर्वदेवगणै सहः ॥३८
तस्मात्तां सनिकृष्टे तु सदा देवीं प्रपूजयेत् ।
स्तोत्रमन्त्रादिक यद्वा सर्वमानन्त्यमश्नुते ॥३९
ये च प्रेताश्च कूष्माण्डाः पिशाचा ब्रह्मराक्षसाः ।
भूत दैत्यादयस्तत्र पलायन्ते सदैव हि ॥४०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलक्ष्मीर्नाशिनीघूर्णा या डाकिन्यादिमातरः ।
सर्वा सङ्कुचितायान्तिदृष्ट्वातुतुलसीदलम् ॥४१
ब्रह्महत्यादयः पापव्याधयः पापसम्भवाः ।
कुमन्त्रिणा कृता ये च सर्वेनश्यन्ति तत्र वै ।४२
भूतले वापि ते येन हर्यर्थं तुलसीवनम् ।
कृतं क्रतुशत तेन विधिवत्प्रियदक्षिणम् ॥४३

जो तुलसी की मञ्जरी के दलों के द्वारा भगवान् विष्णु की अर्चना किया करते हैं हे स्कन्द ! उससे जो पुण्य का फल प्राप्त होता है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।३७।जहाँ पर तुलसी का वन होता है वहाँ पर केशव का सान्निध्य रहा करता है । वहाँ पर ब्रह्मा-लक्ष्मी और अन्य समस्त देवगण भी केशव भगवान् के साथ में रहते हैं।३८।इसीलिये उसको सनिकृष्ट होने पर सदा देवी का पूजन करना चाहिए । इसके समीप में स्थित होकर किसी भी स्तोत्र का पाठ तथा मन्त्र का जाप किया जाता है वहसभी अनंत फल के प्रदान करने वाला हो जाता है।३९।जो भी प्रेत कूष्माण्ड-पिशाच राक्षस-ब्रह्मराक्षस-भूत-दैत्य आदि दुष्ट योनियों वाले हैं वे वहाँ से सदा ही पलायमान हो जाया करते हैं।४०।अलक्ष्मी-नाशिनी-घूर्णा और डाकिनी आदि माताएँ ये सभी संकुचित होकर तुलसी दल का दर्शन करते ही वहां से चली जाया करती हैं।४१।ब्रह्म हत्या प्रभृति, पापों से उत्पन्न होने वाली पाप व्याधियों तथा कुमन्त्र वाले के द्वारा जो भी की गई हैं ये सब तुलसी दान से विनष्ट होजाती हैं।४२। इस भूतल में भी जिसने हरि की समर्चना के लिये तुलसी का वन लगा दिया है उस पुरुष ने पूर्ण विधि विधान के साथ प्रिय दक्षिणा से समन्वित सौ क्रतु कर लिए हैं तात्पर्य यह है कि सौ यज्ञ के समान उसका पुण्य फल होता है ॥४३॥

हरिलिङ्गेषु चान्येषु शालग्रामशिलासु च ।
तुलसीग्रहण कृत्वा विष्णोःसायुज्यमाव्रजेत् ॥४४
नन्दन्तिपुरुषास्तस्य माधवार्थं क्षितौ तु यः ।
तुलसीं रोपयेद्धीरः सयाति माधवालयम् ॥४५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूजयित्वा हरिदेवं निर्माल्यं तुलसीदलम् ।
धारयेद्यः स्वशीर्षे तु पापात्पूतोदिवं व्रजेत् ।।४६
पूजने कीर्त्तने ध्याने रोरणे धारणे कलौ ।
तुलसी दहते पापं स्वर्गं मोक्षं ददाचि च ।।४७
उपदेश दिशेदस्याः स्वयमाचरते पुनः ।
स याति परमं स्थानं माधवस्य निकेतनम् ।।४८
हरेः प्रियकरं यच्च तन्मे प्रियतरं भवेत् ।
सर्वेषामपि देवानां देवोनां च समन्ततः ।।४९
श्राद्धेषु तज्ञकार्येषु पर्णमेक षडाग्न ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन तुलसीसेवनं कुरु ।।५०
तुलसीसेविता येन तेन सर्वं तु सेवितम् ।
शिखायां तुलसी कृत्वा यस्तु प्राणान्परित्यजेत् ।
दुष्कृतौघाद्विनिर्मुक्तिः स्वर्गमेति निरामयम् ।।५२

भगवान् हरि के चरणों तथा हरिके विग्रहों पर एवं अन्य शालग्राम शिलाओं पर जो कोई पुरुष तुलसी दल ग्रहण कराता है अर्थात् चढ़ाता है वह भगवान् विष्णु के सायुज्य को प्राप्त होजाता है।४५।जो कोई मीपुरुष इस पृथ्वी में भगवान् माधव की पूजा के लिए तुलसी के पौधों का समारोपण किया करता है वह धीर पुरुष निश्चय ही माधव के निवास स्थान में चला जाता है औरवे पुरुष महान् आनन्दित होते हैं ।४५। भगवान श्रीहरि देव की पूजा करके उनके चरणों में चढ़ी हुई तुलसी के दल को जो कि निर्माल्य स्वरूप होगया है उसे अपने मस्तक पर धारण करता है वह समस्त पाप से छुटकारा पाकर परम पवित्र एवं शुद्ध होजाता है और फिर अंत में उसको स्वर्ग का निवास प्राप्त होता है।४६।इस घोर कलियुग में तुलसी का पूजन-तुलसी की महिमा का कीर्तन-तुलसी का ध्यान—तुलसी के विरवा का आरोपण और तुलसी का रूप धारण करता है वह तुलसी उस पुरुष के पापों को दग्ध कर देती है और अंतकाल में उसे स्वर्गलोक का निवास और मोक्ष प्रदान कर देती है।४६।इस तुलसी की महिमा का उपदेश अन्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों को जो देता है और स्वयं भी उसी प्रकार के समाचरण को करता है वह पुरुष श्री भगवान् माधव के निवास स्थान को जो कि सबसे उत्तम परम स्थान है प्राप्त होजाता है ॥४५॥ श्रीहरि का जो प्रिय है वह मुझे अधिक प्रिय है। समस्त देवों को और देवियों को सभी ओर प्रिय है।४६। श्राद्धों में तथा यज्ञ कार्यों में हे षडानन ! तुलसी का एक दल प्रयुक्त करे। इसमें सब प्रकार के प्रयत्नों से तुलसी का दलसेवन करो।५०। जिस पुरुष ने इस लोक में तुलसी का सेवन कर लिया है उसने सभी की सेवा करली है हे षण्मुख ! तुलसी के सेवन करने वाले ने अपने गुरु—विप्र और देव तथा तीर्थों के सेवन करने के फल प्राप्त कर लिए हैं। इसलिए तुम भी तुलसी का सेवन करो।५१। अपनी शिखायें जो तुलसी के दल में देखकर प्राणों का परित्याग करता है वह जीवन में किये हुए सम्पूर्ण दुष्कर्मों के समूह से छुटकारा पाकर निराभय होता हुआ सीधा स्वर्गलोक को चला जाता है ॥५२॥

॥ गङ्गा माहात्म्य कथन ॥

गतिं चिन्तयतां विप्रास्तूर्णं सामान्यजन्मनाम् ।
स्त्रीपुंसामीक्षणाद्यस्माद् गङ्गा पापं व्यपोहति ॥१
गंगेति स्मरणादेव क्षय याति च पातकम् ।
कीर्तनादतिपापानि दर्शनाद्गुरुकल्मषम् ॥२
स्नानात्पानाच्च जाह्नव्यां पितॄणां तर्पणात्तथा ।
महापातकवृन्दानि क्षय याति दिने दिने ॥३
अग्निना दह्यते तूलं तृणं शुष्कं क्षणाद्यथा ।
तथा गंगाजलस्पर्शात्पुंसां पाप दहत्क्षणात् ॥४
सम्प्राप्नोत्यक्षयं स्वर्गं गंगास्नानेन केशवम् ।
यशो राज्य लभेत्पुण्य स्वर्गमन्ते परां गतिम् ॥५
पितॄनुद्दिश्य गंगायां यस्तु पिण्ड प्रयच्छति ।
विधिना वाक्यपूर्वेण तस्य पुण्यफलं श्रृणु ॥६
अन्नैकेन तु साहस्रं वर्ष पूज्यः सुरालये ।
तिलेन द्विगुणं विद्धि तथा मेध्यफलेन च ॥७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गव्येन विधिना विप्राः स्वर्गस्यान्तो न विद्यते ।
एव पिण्डप्रदानेन नित्यं क्रतुशत भवेत् ॥८

महर्षि व्यास देव ने विप्रों स कहा-हे विप्रगण ! जो साधारण जन्म वाले पुरुष हैं और अपनी सद्गति होनेका चिन्तन किया करते हैं उन पुरुष और स्त्रियों को चाहिए कि गङ्गा का दर्शन करें क्योंकि भागीरथी गङ्गाकेवल उसके दर्शन करने सेही पाप का विनाश कर देतीहै।१।भगवती गङ्गा के स्मरण मात्र से ही समस्त पातकों का क्षय हो जाता है । गङ्गा की महिमा का कीर्तन करने से जो अति पाप होते हैं उनकानाश होता है और गंगा के दर्शन से इससे भीं बड़े भारी कल्मषों का विनाश होता है ।२।गंगा के जल में स्नान करने से, गगाजल का पान करने से, गगाजल में पितृगण का तर्पण करने से महान् जो पातकों के समुदाय होतेहैं वे दिन-दिन में क्षय को प्राप्त हो जाते हैं ।।३।।जिस प्रकार से अग्नि के द्वारा रुई और सूखा हुआ तृण क्षण भर में दग्ध हो जाता है उसी भाँति भागीरथी गगा के जल से केवल स्पर्श करने से ही मनुष्यों के पाप क्षण भर मे दग्ध हो जाया करते हैं।४।गंगा के जल मैं स्नान करने की वहुत बड़ी महिमा है । इसके करने से कभी नाशको न प्राप्त होने वाला स्वर्गलोक का निवास मिल जाता है, भगवान् श्री केशव के चरणों की प्राप्ति होती है, संसार में उत्तम यश प्राप्त होता है,राज्य का लाभ होता है घोर महान् पुण्य मिलता है तथा अन्त समय में स्वर्गलोक और परागति होती है।५।अपने पितृगण का उद्देश्य लेकर जो गगा में पिण्ड देता है और विधि-विधान के साथ वाक्य पूर्वक पिण्डदान करता है उसका जो पुण्य फल होता है उसका श्रवण तुम करो ।।६।। जो केवल एक अन्न का ही पिण्ड बनाकर देता है वह एक सहस्र वर्ष पर्यन्त सुरालय मे पूज्य होता है । जो कोई तिलों के सहित पिण्डदान करता है उसके उक्त स्वर्ग निवास के समय से दुगुना समय होता है । मेध्य (पवित्र) फल एवं गव्य से युक्त पिण्डों का दान किया करता है हे विप्रो ! उसे जो स्वर्गलोग का निवास मिलता है उसका कभी अन्त नहीं होता है । इस प्रकार से पिण्डों का प्रदान करने से नित्य ही सौ ऋतुओं का पुण्य फल होता है ।।७-८।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एको गच्छति गङ्गां यः पूयन्ते तस्य पूरुषाः ।
एतदेव महापुण्य तरते तारयत्यपि ॥९
गङ्गाकृत्स्नगुण वक्तु न शक्तश्चतुराननः ।
अतः किञ्चिद्वदाम्यत्र भागीरथ्या द्विजा गुणम् ॥१०
मुनयः सिद्धगन्धर्वा ये चान्ये सुरसत्तमाः ।
गङ्गातीरे तपस्तप्त्वा स्वर्गलोकेऽच्युताभवन् ॥११
पारिजातसमाः पुष्पवृक्षाः कल्पद्रुमोपमाः ।
गङ्गातीरे तपस्तप्त्वा तत्रैश्वर्यं लभन्ति हि ॥१२
तपोभिर्बहुभिर्यज्ञैर्व्रतैर्नानाविधैस्तथा ।
पुरुदानैर्गतिर्या च गङ्गां संसेवतां च सा ॥१३

जो कोई केवल एक ही बार भागीरथी गंगा पर स्नानादि करनेके लिये जाताहै उसके समस्त पूर्व पुरुष पवित्र होजाते हैं। यह ही एक महान् पुण्य है ! वह गंगा पर स्नान करने वाला स्वयं ही तर जाता है और अपने पूर्व पुरुषों को भी तार देता है।९। हे द्विजगण ! गंगा के पूर्ण जो गुण हैं उनको अन्य कोई तो क्या साक्षात् भगवान ब्रह्मा भी जिनके चार मुख हैं स्वयं उनका वर्णन नहीं कर सकते हैं। इसलिये मैं भी यहाँ कुछ थोड़े से भागीरथी के गुण तुमको बतलाता हूँ ।१०। मुनिगण–सिद्ध लोग–गन्धर्व वन्द और जो अन्य देवोंमें परम श्रेष्ठ है वे गङ्गाके तट पर तपस्या करके स्वर्गलोक में स्थायी रूप से निवास प्राप्त कर अच्युत होते हुए ही वहाँ रहते हैं।११।गङ्गाके तट पर तपश्चर्या करके वहाँ पर परम ऐश्वर्य का लाभ लिया करते हैं क्योंकि वहाँ पर जो पुष्पों वाले वृक्ष हैं वे पारिजात (देवतरु) के समान हैं और समस्त मनोकामना पूर्ण करने वाले कल्प वृक्षों के तुल्य होते हैं ।११।बहुत प्रकारके तपों से यज्ञ और नाना प्रकार के व्रतों से तथा अधिक दोनों से जो मनुष्य को गति प्राप्त होती है वही गति भागीरथी गङ्गा के जल में स्नानादि से प्राप्त होती हैं अतः इस गङ्गा का भली-भांति सेवन करना चाहिए ॥१३॥

लारजं पतितं दुष्टमन्त्यजं गुरुघातिनम् ।
सर्वद्रोहेण संयुक्तं सर्वपातकसंयुतम् ॥१४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यजन्तिः पितरं पुत्राः प्रियं रत्न्यः सुहृद्गणाः ।
अन्ये च वान्धवाः सर्वे गंगा तु न परित्यजेत् ।।१५
यथा माता स्वयं जन्म मलशौच च कारयेत् ।
कोडीकृत्य तथा तेषां गंगाप्रक्षालयेन्मलम् ।।१६
भवन्ति ते सुविख्याता भोग्यालङ्कारपूजितः ।
दर्शने क्रियते गगा सकृद्भक्त्या नरैस्तुयैः ।।१७
तेषां कुलानां लक्ष तु भवत्तारयते शिवा ।
स्मृतार्तिहर्त्रीयैर्ध्याता संस्तुया साधुमोदिता ।।१८
गंगा तारयते नृणामुभौ वंशौ भवार्णवात् ।
सङ्क्रान्तिषु व्यतीपाते ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।।१९
पुष्ये स्नात्वा तु गंगायां कुलकोटि समुद्धरेत् ।
शुक्लपक्षे मर्त्या गगायामुत्तरायणे ।।२०
धन्या देहं विमञ्चन्ति हृदिस्थे जनार्दने च ।
अनेन विधिना यस्तु भागीरथ्या लले शुभे ।।२१
प्राणांस्त्यक्त्वा व्रजेत्स्वर्गं पुनरावृत्तवर्जितम् ।
यो गंगानुगतो नित्यं सर्वदेवानुगो हि सः ।।२२

जार (उपपति) से समुत्पन्न - पतित (दूषित कर्मों के करने से जो अपनी जाति–धर्म और वर्ण से गिर गया)–दुष्ट(दूषित कर्म करने वाला–अन्त्यज (सबसे नीच जाति में समुत्पन्न) गुरु का घात करने वाला–सभी लोगों के साथ द्रोह करने से युक्त और सब प्रकार के पातकों से समन्वित पिता को पुत्र भी त्याग दिया करते हैं तथा पत्नियाँ भी अपने परम प्रिय पति का त्याग कर दिया करती हैं, ऐसे उपर्युक्त लोगों को उसके सहृत्गण और वान्धव भी छोड़ दिया करते हैं किन्तु गङ्गा ही एक ऐसी है जो ऐसे व्यक्ति का भी कभी त्याग न कर अपना लेती है ।।१४-१५।। जिस प्रकार से बच्चे की माता स्वयं उसको जन्म देती है और उसका मल मूत्र का परिष्कार भी किया करती है और उसे गोद में बिठाती है उसी भाँति गङ्गा माता भी मनुष्य चाहे कैसा भी नीच से नीच और पापी क्यों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न हो उसके मल का प्रक्षालन कर उसे परम पवित्र बना दिया करती है ।१६। जो एकबार ही भक्तिभाव स गङ्गा का दर्शन करते हैं वे नर भोगने के योग्य पदार्थों से तथा अनेक अलकारों से पूजित और सुविख्यात होजाते हैं ।।१७।।उम पुरुषों के लाख कुलों को यह गङ्गा संसार के कष्टों से तार दिया करती है । जो पुरुष इसका ध्यान करते हैं तथा भली-भाँति स्तवन किया करते हैं उनसे अच्छी तरह से प्रसन्न होती हुई यह गगा स्मरण की हुई होकर दुःखों का हनन करने वाली होती है ।१८। राशियों पर सूर्य के सङ्क्रमण होने वाले दिनों में और चन्द्र तथा सूर्य के ग्रहण के समय में एवं व्यतीपात के दिन में गगा के जल में स्नान करने से यह मनुष्यों के दोनों वंशों को संसार रूपी समुद्र से तार दिया करती है ।।१६।। पुण्ड नक्षत्र में गंगा के जल में स्नान करने से एक करोड़ कुलों का उद्धार हो जाता है । उत्तरायण सूय के हो जाने पर शुक्लपक्ष में और दिन के समय में जो मनुष्य गगा में अर्थात् गंगा के समीप स्थल अथवा तट पर हृदय में भगवान् जनार्दन का ध्यान करते हुए देह का त्याग करते हैं अर्थात् मृत्युगत होते हैं और इस विधि से जो भागीरथी के शुभ जल में प्राणों का त्याग किया करते हैं वे स्वर्गलोक को प्राप्त हो जाते हैं जहाँ से फिर इस संसार में आवृत्ति नहीं होता है । जो नित्य ही गंगा पर रहता है उसके पीछे सभी देवगण रहा करते हैं ।।२१-२२।।

सर्वदेवमयो विष्णुर्गंगा विष्णुमयी यतः ।
गंगायां पिण्डदानेन पितृणां वै त्रिलोदकैः ।।२३
नरकस्था शिव यान्ति स्वर्गस्था मोक्षमाप्नुयुः ।
परदारपरद्रव्यबाधाद्राहपरस्य च । २४
गतिमनुष्यमात्रस्य गंगैव परमा गतिः ।
वेदशास्त्रविहीनस्य गुरुनिन्दापरस्य च ।।२५
समयाचारहीनस्य नास्ति गंगा समागतिः ।
किं यज्ञं बहुवित्ताढ्यैः किं तपोभिः सुदुष्करैः ।।२६
स्वर्गमोक्षप्रदा गंगा सुखसोभाग्यपूजिता ।
नियमैनित्य कीं योगैश्चित्तरोधकैः ।।२७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भुक्तिमुक्तिप्रदा गङ्गा सुखमोक्षाग्रतः स्थिता ।
अनेकजन्मसङ्घातपाप पुंसांविनश्यति ॥२८

भगवान् विष्णु समस्त देवगण से परिपूर्ण होते हैं अर्थात् विष्णु में सभी देवताओं का निवास रहता है और भागीरथी गङ्गा में उन्हीं सर्वदेव मय भगवान् विष्णु का नित्य निवास रहता है। ऐसी विष्णुमयी गँगा के जल में तिलोदक के सहित पितृगण के पिण्डदान से जो पितृगणों में कोई भी पितर अपने दुष्कर्मों के कारण नरक में यातनाएँ भोगा करते हैं वे तुरन्त ही नरकों से छुटकारा पाकर स्वर्गलोक में गंगाजल में पिंड देनेके प्रभाव से जाकर निवास करने वाले हो जाते हैं और जो पहिले ही पितर स्वर्गलोक के निवासी होते हैं उनका फिर गंगा के प्रभाव से मोक्ष होजाया करता है। पराई स्त्री-पराये धन से जो बाधा होती है और दूसरे के साथ द्रोह करने से जो मनुष्य मात्र को पाप होता है ऐसे मनुष्य की परम गति करने वाले एकमात्र गंगा हीहोती है। जो पुरुष वेद और शास्त्रों के सद्-ज्ञान से शून्य होता है और जो अपने गुरु की निन्दा करने में रति रखता है तथा जो समय पर किये जाने वाले आचार से विहीन होता हैं ऐसे पुरुष को सद्गति प्रदान करने वाली गङ्गा के समान अन्य कोई भी नहीं है। अत्यधिक धन का व्यय होने वाले बहुत से यज्ञों के करने से क्या लाभ है और अत्यन्त घोर कष्ट देने वाले तपश्चर्या करने से भी क्या प्रयोजन है जब कि सुख और सौभाग्य से पूजित हुई एक मात्र गङ्गा ही स्वर्गलोक का निवास और संसार के बारम्बार जन्म-मरण के बन्धनों से छुटकारा दिलाने वाली भागीरथी गंगा उपस्थिति है। फिर नित्य ही परम नियमोंके पालन करने से और चित्त का निरोध करने वाले योग के अभ्यास से क्या लाभ है कि इनके करने का व्यर्थ ही कष्ट भोंगा जावे।२३-२६।मनुष्यों के समक्ष में भुक्ति और मुक्ति प्रदान करने वाली सुख से ही कोक्ष कारिणी गंगा स्थित है। इस महा महिमामयी गंगा के प्रभाव से मनुष्यों के अनेक जन्मों के पापों का सङ्कट नष्ट हो जाता है ॥२८॥

स्नानमात्रेण गंगायां सद्यः स्यात्पुण्यभाङ् नरः ।
प्रभासे गोसहस्रस्य राहुग्रस्ते दिवाकरे ॥२९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लभते यत्फलं दाने गंगास्नानाद्दिने दने ।
दृष्ट्वा तु हरते पापं स्पृष्ट्वा तु लभते दिवम् ।। ०
प्रसगादपि सा गगा मोक्षदा त्ववगाहिता ।
सर्वेन्द्रियाणां चापल्यं वासनाशक्तिसम्भवम् ।३१
निधू णत्वं ततो गगा दर्शनात्प्रविनश्यति ।
परद्रव्याभिकाङ्क्षित्व परादाराभिलाषिता ।।३२
परधर्मे रुचिश्चव दर्शनादेव नश्यति ।
यदृच्छालाभसन्तोषस्स्वधर्मेषु प्रवतने ।।२३
सवं भूतसमत्वं च गगायां मज्जनाद्भ वेन ।
यस्तु गगा समाश्रित्य सुखतिष्ठति मानवः ।।२३
जीवन्मुक्तस्स एवेह सर्वेषामुत्तमोत्तमः ।
गगा सश्रित्य यस्तिष्ठेतस्य कार्यं न विद्यते ।:५

भागीरथी गंगा के जल में सेवल स्नान करलेने हीसे मनुष्य तुरन्त ही पुण्यात्मा बन जाया करता है । राहु से ग्रस्त सूर्य के होने पर अर्थात् सूर्य का ग्रहण पड़ने पर प्रभास क्षेत्र में एक सहस्र गौओं के दान का जो फल प्राप्त होता है वह पुण्य-फल गंगाके जल में स्नान करने से प्रतिदिन हो जाया करता है । केवल गंगाके दर्शन करने से वह मनुष्य के पापोंका हरण कर लेती है और गंगाजल का स्पर्श करने से वह स्वर्गलोक का निवास प्रदान करती है।२९-३०।किसी अन्य कार्य से भी कोई प्रसगवश गंगा तटपर पहुँच जावे और खास तोरसे गंगाके स्नान का उद्देश्य लेकर न जावे तो भी वहाँ पर उसके जल में स्नान करने से मोक्ष प्रदान कर देती है । समस्त इन्द्रियों में जो चचलता होती है, अर्थात् इन्द्रियां अपने विषय की ओर जो दौड़ लगाया करती हैं उस चञ्चलता को जो कि जन्मान्तरीय वासना के कारण समुत्पन्न होती है उसे और निघृ णत्व को गंगा दर्शन से ही विनष्ट कर दिया करती है । मनुष्य में जो दूसरे के धन को प्राप्त करने की अभिकाङ्क्षा रहा करती है तथा पराई स्त्रियों केसाथ रमण करनेकी जो अभिलाषा मन में रहती है एवं दूसरे धर्म में जो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुचि होती है—येसभी विकृतियाँ गङ्गा के दर्शन मात्र से ही स्वतः नष्ट हो जाता करती हैं। गङ्गा का ऐसा प्रभाव होता है कि इससे मनुष्य यदृच्छा लाभ से ही संतोष कर लिया करता है और फिर उस पुरुष की अपने ही परम्परागत धर्ममें प्रवृत्ति रहती है।३१-३२।गंगा के जलमें मज्जन करनेसे मनुष्य के हृदय में समस्त प्राणियों को समभाव से देखने का गुण समुत्पन्न हो जाता है जो पुरुष भगवती गगा का समाश्रय ग्रहण करके सुख पूर्वक वहाँ पर ही स्थित रहता है वह पुरुष जीवित रहते हुए मुक्त हुए के समान होना है और सभी पुरुषों में परम श्रेष्ठ होता है। गंगा का समाश्रय ग्रहण करके अर्थात् उसी को अपना परमाराध्य इष्टदेव समझकर उसी के बल-भरोसे पर पड़ा रहने वाला पुरुष जो उसके तट पर स्थिति रहता है उसका फिर कोई भी कार्य नहीं रहता है ॥३४-३५॥

गंगायांच मृतो मर्त्यःस्वर्गं मोक्षंचविन्दति ।
या गतिर्योगयुक्तस्य सत्वस्थस्यमनीषिणीः ॥३६
सा गतिस्त्यजतः प्राणान्गङ्गायां तु शरीरिणः ।
चान्द्रायणसहस्राणि यश्चरेत्कायशोधनम् ।३७
पानं कुर्याद्ययेच्छ च गङ्गाम्भः स विशिष्यते ।
तावत्प्रभावस्तीर्थानां देवानां तु विशेषतः ॥३८
तावत्प्रभावो वेदानां यावन्नाप्नोति जाह्नवीम् ।
तिस्र कोट्योऽधकोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत् ॥३९
दिविभुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्तिजाह्नवि ।
विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि ॥४०
धर्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि ।
विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुपूजिता॥ ४१
त्राहिमामेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात् ।
श्रद्धया धर्मसम्पूर्णे श्रीमतारजसा च ते ॥४२
अमृतेन महादेवि भागीरथि पुनीति माम् ।
त्रिभिःश्लोकवरैरेभिर्यः स्नाया ज्जाह्नवीजले ॥४३
जन्मकोटिकृतात्पापान्मुच्यते नात्रशयः ।
मलमन्त्रं प्रवक्ष्तामि जाह्नव्या हरिभाषितम् ॥४४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और मुक्त हो जाता है। ऐसा मनुष्य जीवन्मुक्त ही कहा जाया करता है। यज्ञ—दान—तप—जाप—श्राद्ध और देवगण का पूजन जो भी कुछ गगा के तट पर यदि किया जाता है तो वह सब नित्य ही करोड़ों से अधिक गुण वाला होता है · गंगा के समीप में मृत्यु को प्राप्त होने वाला मनुष्य स्वर्ग का निवास और मोक्ष दोनों का लाभ प्राप्त किया करता है। जो गति योगाभ्यास में निरन्तर निरत एक योगी पुरुष की होती है और सत्व में संस्थित एक महा मनीषी पुरुष की गति हुआ करती है वही गति उस पुरुष की भी होती है जो गंगा के तट पर अपने प्राणों का त्याग किया करता है। एक सहस्र चान्द्रायण महाव्रत करके जो काया की शुद्धि की जाती है उससे भी अधिक यथेच्छ रूप से गंगा के जल का पान करने से होती है। समस्त देवों का प्रभाव तथा सब तीर्थों का प्रभाव विशेष रूप से और वेदों का प्रभाव तभी तक रहता है जब तक मनुष्य गंगा की प्राप्त नहीं किया करता है। वायु ने बताया है कि साढ़े तीन करोड़ तीर्थं हैं। दिवलोक, भुलोक और अन्तरिक्ष में ये सब तीर्थं विद्यमान हैं। हे जाह्नवि ! हे गंगे ! आपका प्रादुर्भाव तो भगवान् विष्णु के चरणों से हुआ है और त्रिपथ में गमन करने वाली हैं।३५-४०। आपका नाम 'धर्म प्रव'—ऐसा लोकों में विख्यात है। हे जाह्नवि ! आप मेरे पापों को हरण कीजिए। आप विष्णु के चरणों से समुत्पन्न हुई हैं। आप परम वैष्णवी है और भगवान् विष्णु के द्वारा समर्चित हुई हैं। इसलिए आप पापों से मेरी रक्षा कीजिए जो कि जन्म से लेकर मरण पर्यन्त मैंने किये हैं, श्रद्धा से, धर्म से परिपूर्ण श्री सम्पन्न आपकी रज से जो कि अमृत के तुल्य है हे भागीरथि ! मुझे अब आप हे महादेवि ! पवित्र कर दीजिए इन तीन पद्यों को पढते हुए जो पुरुष गंगा के जल में स्नान करता है वह निश्चय ही करोड़ों जन्मों के किये पापों से मुक्त हो जाता है— इनमें किञ्चन्मात्र भी संशय नहीं है। ये तीनों श्लोक गंगा के स्तवन के लिये परम श्रेष्ठ हैं अब मैं उस मूल मन्त्र को भी बतलाता हूँ जो गंगा का भगवान् श्रीहरि ने भाषित किया है ।।४१-४४।।

सकृज्जापान्नरः पूतो विष्णु देहे प्रतिष्ठति ।
मन्त्रश्चायम् । ॐ नमो गंगायै विश्वरूपिण्यै नारायण्यै नमोनमः ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृद मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
सर्वपापविनिर्मुक्तो गंगास्नानं विना नरः ॥४६
गगाजलोर्मिनिर्धूतपवनं स्तृश्यते यदि।
स पूयः कल्मषाद्घोरास्वर्गं चाक्षयमश्नुते ॥४७
यावदस्थिमनुष्यस्य गंगातोये प्रतिष्ठति।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीतते ॥४८

इस भगवान् के द्वारा कहे हुए गंगा के मूल मन्त्र का एकवार भी जाप कर लेने से मनुष्य परम पवित्र हो जाया करता है और वह विष्णुके देहमें प्रतिष्ठित होता है वह मन्त्र यह—"ओं नमो गंगायै विश्व रूपिण्यै नारायण्यै नमो नमः" इसका अर्थ है विश्व रूप वाली साक्षात् नारायण स्वरूपा भगवती गंगा के लिए मेरा बारम्बर प्रणाम है।४५।गंगा तट पर समुत्पन्न हुई गंगोटी मृत्तिका को जो पुरुष अपने मस्तक पर धारण किया करता है वह मनुष्य गंगा के जल में स्नान के बिना ही सब प्रकार के घोराति घोर पापों से विमुक्त हो जाया करना है।४६। गंगा की लहरों से उत्पन्न हुई वायु का भी यदि कोई स्पर्श कर लेता है तो वह घोर कल्मषों से छुटकारा पाकर पवित्रात्मा हो जाया करता है और अन्त में कभी क्षीण न होने वाला स्वर्ग का निवास उसे मिलता है।४७। मनुष्य की अस्थियाँ जितने समय तक गंगा के जल में रहा करती हैं उतने ही सहस्र वर्षों तक वह प्राणी स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित रहा करता है इसीलिये मृत प्राणी की हड्डियों को गंगा जल में प्रवाहित किया जाता है क्योंकि उसका महान् पुण्य फल मृतात्मा को प्राप्त होता है ॥४८॥

॥ गणेश द्वारा त्रैपुरि वध ॥

चतुर्भिस्तुरगंर्जुष्टं रथं सूर्यसमप्रभम्।
त्रैपुरिः सरुरौहाथाब्रवीद्वाक्यं गणाधिपम् ॥१
पिता मे निहतः पित्रा तव यस्माद्गणाधिपः।
तस्मात्वामद्य विशिखैर्नयामि यमसादनम् ॥२
ततस्तमब्रवीद्देवो गणेशस्त्रिपुरात्मजम् ॥३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तव तातेन दुष्टेन सुराणामहितं पुरा ।
कृत कर्म महत्पापं श्रुत नो जनकेन हि॥४
पापकर्मरत दुष्टं ज्ञात्वा ज्ञानबलेन च ।
अवधीत्त शरैकेन पितर ते वलेन च ॥५
पङ्कात्प्रतारितो मोहात्प्रेषितो यममन्दिरम् ।
त्वां चाहं तत्पथ दैत्य प्रेषयामि क्षणादिह ॥६
उक्तवन्त महाप्राज्ञं सुराणां च गणाधिपम् ।
दिव्याधशभिस्तीक्ष्णः कालानलसमप्रभेः ॥७
ततः शरसहस्रैस्त दैत्यं बिव्याध माहसात् ।
यमदण्डसमैर्बाणक्षुरप्रैश्च शिलीमुखैः ॥८

महर्षि व्यासदेव ने कहा—चार अश्वों से युक्त सूर्य के समान प्रभा वाले रथ में त्रैपुरि समारूढ़ होगया था और रथ पर चढ़कर उसने गणोंके स्वामी से कहा था—त्रैपुरि बोला हे गणाधिप ! क्योंकि आपके पिता शिव ने मेरे पिता का वध किया था इसलिए अपने पिता का वदला लेनेके लिए आज मैं इस रणस्थल में अपने बाणों के द्वारा तुमको यमपुर भेजूंगा अर्थात् तुम्हारा वध करूंगा ॥१-२॥ व्यासजी ने कहा-इसका श्रवण कर फिर गणेश भगवान् ने उस त्रिपुर दैत्य के पुत्र से यह कहा था ।३। गणेश देव बोले—मैंने अपने पूज्य पिता से सुना है कि तेरे पिता ने पहले अपनी दुष्ट प्रकृति के कारण देवों का बहुत अधिक अहित किया था और महान् घोर पाप कर्म किये थे।४। इस तरह पाप पूर्णकर्मों मे रत उस तेरे पिता को महान् दुष्ट समझकर ही जो कि उन्होंने अपने ज्ञान के बल से जान लिया था, उन्होंने बलपूर्वक एक ही बाण से तेरे दुष्ट पिता का वध कर दिया था।५। मेरे पिताजी ने इस मोह के बीच से उसका उद्धार करके ही यमलोक भेजा था । हे दैत्य ! मैं अब आज एक ही क्षण में उसी मार्ग में तुझको भेजता हूँ ।६। महर्षि वर व्यास ने कहा—इस प्रकार से कहने वाले देवगण में महान् बुद्धि वाले भगवान् गणाधिप को कालाग्नि के समान प्रभा वाले अत्यन्त तीक्ष्ण दश बाणों से उस दैत्य ने भेदन किया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
था।७।इसके अनन्तर साहस पूर्वक एक सहस्र शरों से गणपति ने उस दैत्य जो भेद दिया था। ये गणपति के द्वारा छोड़े हुए वाण बहुत ही तीक्ष्ण थे और यमराज के दण्ड के समान ही भीषण थे ।।८।।

कङ्कपत्रैर्महातीक्ष्णर्वज्रानलसमप्रभैः ।।
विचकर्त शरांश्चास्य लम्बोदरः सुरार्चितः ।।९
पुनर्विव्याध विशिखैः सहसा भिदुरोपमैः ।
शरैरर्दितसर्वांगो मूर्छितस्त्वपतद्भुवि ।।१०
ततो भद्रश्च सौभद्रो भीषणो विर्जरान्तकः ।
स्वां स्वां गदां समादाय दुद्रुवुस्त विनायकम् ।।११
शरैः सम्पातयामास धरण्यां गणनायकम् ।
लाघवात्तु रथं चान्यं गत्वा त्रिपुरनन्दनः ।।१२
विशिखैर्वज्रसङ्काशैः शंविभेद गणाणिपम् ।
रुधिरेणावसिक्तांगो रुषा घोरयमप्रभः ।।१३
ललाटे च त्रिभिर्वाणैस्सप्तभिश्च स्तनान्तरे ।
चतुर्भिर्नाभिदेशे च षश्चभिर्मुष्टिमस्तके ।।१४
सविभेद महाक्रोधो बालन शम्भुनन्दनः ।
शरैरर्दितसर्वांगः स तत्यो रणमूर्धनि ।।१५
कश्मलं पर परमं गत्वा सम्पपात रथोपरि ।
ततः सूतेन धोरेण अपनीतो रणाजिरात् ।।१६

देवगण के द्वारा पूजित गणपति ने इस दत्य के वाणों को जो कि उसने इन पर छोड़े थे अपने कङ्कपत्र और अत्यन्त तीक्ष्ण तथा वज्र और अनल के तुल्य सभा वाले वाणों से छेदन कर दिया था अर्थात् दैत्य के द्वारा प्रयुक्त वाण सभी काट डाले थे।९।और फिर वज्र के समान बाणोंसे सहसा गणेशजी ने वह दैत्य वेध दिया था। उन वाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर समस्त अंग जिसके छिन्न भिन्न हो गये थे ऐसा वह दैत्य मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा था।१०।इसके उपरान्त भद्र–सौभद्र–भीषण दैत्य जो कि देवों के नाश कर देने वाले थे अपनी-अपनी गदा लेकर एक साथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबके सब उन विनायक पर पड़े थे।११।शरों के द्वारा गणनायकों को भूमि पर गिरा दिया था पर बहुत ही फुर्ती से वह त्रिपुर दैत्य का पुत्र दूसरे रथ पर जाकर वज्र के तुल्य वाणों से उसने गणोंके स्वामीकी भेदन अच्छी तरह से किया था । रुधिर से अवसिक्त अंगों वाला-क्रोधसे महान् घोरयम के तुल्य, महान क्रोध से युक्त होकर शम्भु के पुत्रने उस बलवान् दैत्य को तीन वाणों से फिर ललाट में साथ वाणों से स्तनों के मध्य छाती में-चार शरों से नाभि के भाग में और पाँच वाणों से मुष्टि मस्तक में भेदन किया था । इस प्रकार से वाणों के द्वारा अर्दित अंगों वाला वह दैत्य रण भूमि मे परम दुःखित होकर रथ के ऊपर गिर गया था और फिर रथवाहन ने धीरे से उस रणक्षेत्र से उसे हटा दिया था ।।१२-१६।।

विमुख नाहनच्छूरो विनायकः सुरार्चितः ।
चिरात्सज्ञा समालभ्य यन्तारं चाप्रवीद्वचः ।।१७
गच्छ सूत रणे भीरुं विनायकं हरात्मजम् ।
ततो यन्ताऽब्रवीद्वाक्यं सत्यं पथ्यं च कोमलम् ।।१८
हरात्मजशरान्सोढुं लस्समर्थो रणाजिरे ।
तस्मात्मोहगतंस्त्वं च मयानीवः प्रभासुतः ।। १
एतज्ज्ञत्वा त्विदानीं भो यद्युक्तं तद्विधीयताम् ।।२२

सुरों के द्वारा वन्दित विनायक ने जब देखा कि वह रणभूमि से विमुख हो गया हैतो फिर उसका हनन उसने नहीं किया था । बहुत समय के पश्चात् जब होश आया तो अपने रथ के यन्ता से यह वचन बोला।१७।त्रैपुरिने कहा—हे सूत ! रणमें चलो जहाँ पर वह डरपोक शिव का पुत्र विनायक विद्यमान है । महर्षि व्यासजीने कहा—इसके पश्चात् उस रथ वाहक ने सत्य, हितकर और अति कोमल वचन कहा।१८।सारथि ने कहा-इस रणभूमि में भगवान् हर के पुत्र के शरों को सहन करने कीकिस की सामर्थ्य है—अर्थात् उनके वाणों के प्रहारों को कोई भी सहन नहीं कर सकता है । इसीलिये वहाँ पर वेहोश हो गये थे । वहाँ से मैं ही प्रभासुत आपको यहाँ ले आया था ।।१९।। यह जानकर इस समय जो भी आप उचित समझें वही करें ।।२०।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतस्मिन्नन्तरे राज्ञा प्रेरितः कविसत्तमः ।
औषधादिप्रयोगेण गजः संज्ञामबोधयत् ॥२१
अकारयच्छतगुणप्राणं च जयमादिशत ।
प्राग्जलं मन्द्धित दत्वा रुरोध स्याँगकव्रणान् ॥२२
स गजोदशनंरेव स्फोटयामास वै गिरिम् ।
एवशतसहस्राणि सैन्यानि सैन्यपालकान् ।ः ३
पातया ास समितौ गजः परमदुर्जयः ।
सदैत्यस्तस्य पृष्ठस्थः शरैः कालानलप्रभैः ॥२४
हत्वा त्वपातयच्चोर्व्यां मुख्यमुख्यान्सुराधिपाप ।
शदैत्यस्तस्य तदा देवायमदण्डसममुभैः ।' २५
निपतन्ति महावीर्या रुधिरौघपरिप्लुतः ।
यस्मिन्यस्मिश्च मार्गे तु सदैत्य: सगजो गताः ॥२६
तत्र तत्र चकाराणुभीषणं सञ्चितं शरैः ।
गजेन पतिताः केचिद्गजारोहेण चापरे ।.२७
वेगेन भ्रमणेनैव सुराः केचित्प्रतापिताः ।
एवं सुरगणाध्यक्षाः शस्त्रास्त्रैर्विविधैश्च तम् ।२८

व्यास जी ने कहा—इसी बीच में राजा के द्वारा श्रेष्ठ कविराज वहाँ भेजा गया था । औषध आदिके प्रयोगसे गजने संज्ञा को प्राप्त किया था । उसके प्राण की शतगुण वाला कर दिया था और जप का आदेश दिया था । पहिले उसे अभिमन्त्रित जल दिया गया था और उसके अंगों के व्रणों का रोध किया था।२१-२२। वह गज अपने दाँतों से ही गिरि का स्फुटित कर देता था । इस प्रकार से सैकड़ों—सहस्रों सेनाओं और सेना के पाल को उस परम दुर्जय गजने समिति में गिरा दिता था । वह दैत्य उसके पीठपर स्थित था। उस दैत्यने कालाग्नि के तुल्य शरों के द्वारा जो मुख्य-मुख्य सुराधिप थे उनको मारकर भूमि पर गिरा दिवा था । उस समयमें उस दैत्य के शरों से जो कि यम के दण्ड के तुल्य भीषण थे देवगण महान् वीर्य वाले भी होते हुए रक्त के ओघ से लथपथ होकर गिर रहे थे जिस जिस मार्ग में वह दैत्य उस गजं के सहित गया था वही पर देव निपतित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाते थे ।२३-२६।उन-उन स्थानों पर शीघ्रता से शरोंके द्वारा अत्यन्त भीषण सञ्चार किया था । कुछ लोग तो गज ने गिरा दिये थे और दूसरे लोग गजारोह के द्वारा गिराये गये थे । बड़े भारी वेग से जो वहाँ पर भ्रमण किया था उससे कुछ देवता प्रताड़ित हो गये थे । इस प्रकार उस युद्ध स्थल में लड़ाई होनेपर फिर समस्त सुरगणोंके अध्यक्षोंने अपने नाना भाँति के शस्त्र तथा अस्त्रों से उस पर प्रहार किया था ॥२७-२८॥

स गजं युद्धनिर्भीता निजघ्नुर्बहुभिः शरैः ।
तथापि तद्गजं योद्धुं न शक्तास्ते वहाबलाः ॥२९
क्षिप्रं तांस्तु गजो दन्तैस्त्रैपुरोऽपातयच्छरैः ।
न गता ये धरण्यां च देवा जर्जरविग्रहाः ॥३०
धरण्यां नणपं जग्मुर्भीतास्ते वेदनातुराः ।
देवानां कदनं दृष्ट्वा गणाधीशः प्रतापवान् ॥३१
स गजं ताडयामा वज्रानलसमैः शरैः ।
स गंजोवेगसरुद्धः शरेण च समुत्थितः ॥३२
अथो तौ द्वौ शरैरेव विभिदाते परस्परम् ।
उभौ तौ नर्दमानौ च अन्योन्यं जयमैच्छताम् ॥३३
शोणितैर्लिप्तसर्वांगौ वीरमुख्यौसुरासुरौ ।
अथाखुं स गजो मत्तो विभेद दशनैः स्वकैः ॥३४
आखुनाऽभिद्रुतो नागो घोरयुद्धं तयोः परम् ।
अधोर्ध्वं सविभागे च चतुर्भियुद्धमद्भुतम् ॥३५

उन्होंने युद्ध से निर्भीत होते हुए उस गज पर बहुत से वाणों से प्रहार किये थे तो भी वे महान् बल वाले उस गज के साथ युद्ध करने में समर्थ न हो सके थे ।२९। उस त्रैपुर गज ने बहुत ही शीघ्र उनको अपने दांतों से और त्रिपुर के पुत्र ने वाणों से नीचे गिरा दिया था । जो देवता धरणी में नहीं गिरे थे वे जर्जरित शरीर वाले होगये थे।३०।धरणी पर वे सब बहुतही डरे हुए होकर वेदनासे अत्यन्त आतुर होते हुए गणोंके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
स्वामी के समीप में पहुंचे थे। देवताओंके इस कदम को प्रताप वाले गण पति ने देखा था ॥३१॥ तत्र गणपति ने अपने वज्राग्नि के तुल्य शरों से उस गज को ताड़ित किया था। यह गज शर के द्वारा वेग सरुद्ध होगया था और फिर वह बढ़ा था।३२।इसके अनन्तर वे दोनों परस्पर में विशेष रूप से शरों के द्वारा भेदित हुए थे। वे दोनों एक दूसरे पर विजय प्राप्त करने की इच्छा रखते हुए नर्दमान हुये थे।३३। वे सुर और असुर दोनों मुख्य वीर रक्तसे लिप्त अगों वाले होगये थे। इसके उपरान्त उस मजमत्त गज ने अपने दांतों से आखु (मूषक) को भेदित किया था।३४। फिर उस आखु ने भी उस गज को अभिद्रुत किया था। उन दोनों का परम घोर युद्ध हुआ था। नीचे ऊपर और संविभाग में चारों के द्वारा उस समय में अद्भुत प्रकार का युद्ध हुआ था।३५।

स शब्दं तुमुलं युद्धं सर्वलोभयङ्करम्।
दशनैर्दशनैरेव शरैरेव शरोत्तमैः ॥३६
तद्घोरमभवद्युद्धं देवदानव संगरे।
आखुको भेदयाञ्चक्रे महानाग महाबलम् ॥३७
शशुंनापृष्टवंशाग्रे स्थित्वा तेनाहनत्पुनः।
दैत्यस्य दशनद्वारे हृदिस्कन्धेऽथ लाघवात् ॥३८
स गजः सपपातोर्व्यां गतासुर्लोहितं वमन्।
शशंसुमुनयो देवास्साधुसाध्विति चाब्रुवन् ॥३९
गणपं पुष्पगन्धैश्च गन्धधूपरपूजयन्।
दुद्रुवुर्दैत्यसङ्घाश्च भीताश्च प्राणकातराः ॥४०
तथैव सह पार्वत्या सुरानाह महेश्वरः ॥४१
अत्रान्येऽस्त्रैरमोघैश्च दैत्यानाजघ्नुराहवे।
यावत्तु सेनयोर्नैव जययुद्ध समापयेत् ॥४२

उस समय शब्द के सहित महान् तुमुल युद्ध हुआथा जो समस्तलोकों के लिए अत्यन्तही भयानक था। उस युद्ध में दाँतों से दांतोंके द्वारा और शरों से शरों के द्वारा युद्ध किया गया था अर्थात् दातोके प्रहारका जवाब दाँतों से दिया गया और जब बाणोंसे प्रहार किया गया था, उसका उत्तर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरो से किया गया था ॥३६॥ उस देवगण और दानव वृन्द का जो युद्ध हुआ था वह महान् घोर संग्राम हुआ था। उस आखु ने महान् बलशाली नाग (गज) को भेदित कर दिया था।३७ फिर उसने पृष्ठ वंशाग्रमें स्थित होकर पशु के द्वारा उसका हवन किया था और बहुत ही फुर्ती के साथ दैत्य के दर्शन द्वार में—हृदय और स्कन्द में भेदन किया था ॥३८॥ वह गज मुख से रुधिर का वमन करता हुआ गत प्राण वाला होकर भूमि पर गिर गया था। यह देखकर मुनिगण और समस्त देवता लोग'साधु-साधु' अर्थात् 'बहुत अच्छा हुआ—बहुत अच्छा हुआ'—ऐसा मुख से बोलते हुए प्रशंसा करने लगे थे ॥३९॥ फिर सबने भगवान् गणपति का पुष्प—गन्ध-धूप आदि उपचारों के द्वारा पूजन किया था और दैत्यों के समुदाय प्राणों के नाश से भयभीत होकर वहाँ से भागने लगे थे।४०। भगवान् महेश्वर अपनी प्यारी पत्नी पार्वती देवी के साथ वहां आकर सुरों से बोले।४१। महेश्वर ने कहा—यहां पर अन्यों ने अपने अमोघ अस्त्रों के द्वारा इस युद्ध में दैत्यो का हनन किया है और जब तक दोनों सेनाओं का जय युद्ध समाप्त न हो तब तक हनन करते रहो ॥४२॥

॥ सूर्य माहात्म्य वर्णन ॥

प्रभवत्ययमाकाशे नित्यं द्विजवर प्रभो।
कोऽयं का वा प्रभावोऽस्य कुत्रजाती घृणीश्वरः ॥१
किं करोति हि कार्यं वै यतो रश्मिमयोभृशम्।
देवैमुनिवरै स्सिद्धैश्चारणैर्दैत्यराक्षसैः ॥२
निखिलैर्मानुषैः पूज्यः सदैवः ब्राह्मणादिभः ॥३
परमं ब्रह्मणस्तेजो ब्रह्मदेहाद्विनिस्सृतम्।
साक्षाद्ब्रह्ममयं विद्धि धमकामार्थमोक्षदम् ॥४
मयूखैर्निर्मल कूटमतिचण्ड सदुःसहम्।
दृष्ट्वा प्रदुद्रुवुर्लोकाः करश्चण्डैः प्रपीडिताः ॥५
ततश्च सागराः सर्वे वरनद्यो नदादयः।
शुष्यन्ति जलवस्तत्र म्रियन्ते चातुराजनाः ॥६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ शक्रादयो देवा ब्रह्माणं समुपागताः ।
इममर्थं तदा प्रोचुर्देवांश्च विधिरब्रवीत् ।।७

श्री वैशम्पायन मुनि ने कहा—हे प्रभो ! हे द्विजों में परम श्रेष्ठ! यह जो नित्य ही इस नभ मण्डल मे उदित होता है यह घुणीश्वर कौन है, इसका क्या प्रभाव है और इसका जन्म कहाँ हुआ था ? ।।१।। यह क्या कार्य किया करता है, क्योंकि यह बहुत तीक्ष्ण किरणों से परिपूर्ण रहता है । इसकी क्या ऐसी महान् महिमा है कि सभी देवगण-मुनिवृन्द-सिद्धों का समुदाय—जारणगण-दैत्यवर्ग—राक्षस और सम्पूर्ण मनुष्यो के द्वारा तथा ब्राह्मण आदि सब वर्णों के द्वारा सर्वदा ही इसकी बड़ी भारी पूजा की जाया करती है, महर्षि व्यास ने कहा-यह ब्रह्मा का परमो कृष्ट तज है जो कि ब्रह्मा के देह से ही निकला था । इसको साक्षात् ब्रह्ममय ही समझना चाहिए । यह धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष चारों पदार्थों का प्रदान करने वाला हैं ।४।इसकी अत्यन्त निर्मल किरणों से यह बहुत ही तेजयुक्त है और इसका ऐसा तीक्ष्ण तेजहै जिसको सहन करना महान् कठिन होता है । जब यह निकला था तो इस इतने तीव्र तेजस्वी को देखकर लोग भागने लग गये थे और इसकी अत्यन्त तीक्ष्ण किरणोंसे सभीलोग प्रपीड़ित एवम् संतप्त होगये थे।५।इसका उस समय में फिर ऐसा प्रभाव हुआ था कि समस्त सागर, सभी नदियाँ और नद आदि जितनेभी जलाशय थे सूख गये थे और जो जल में रहने वाले जन्तु थे वहीं पर अत्यन्त दु खित होकर मरने लगे थे । इनके अतिरिक्त अन्य भी सब प्राणी संतापसे पीडित होते हुए प्राण त्यागने लगे थे।६। उस समय में ऐसी संहारमयी दशा को देखकर देवराज इन्द्र आदि सभी देवता पितामह ब्रह्माजीके समीप में उपस्थित हुए थे और उस समयमें लोकों की इस दुदशा का हाल उन्होंने ब्रह्माजी से कहा था । तब ब्रह्माजी ने उन देवताओं को बतलाया था ।७।

आदिर्ब्रह्मतनार्देवाः सत्वगो जनक प्रभुः ।
अय रजोमयः साक्षात्सुधांशुस्तनुमध्यगः ।।८
एताभ्यां पालितालोकास्त्रैलोक्ये सचराचराः ।
दिव्योपपादका देवा येवात्रैव जरायुजाः ।।९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डजास्स्वेदजाश्चैव ये वाऽत्रोद्भिज्ज।दयः ।
सूर्यस्यास्यप्रभावं तु वक्तुमेव न शक्नुमः ।।१०
अनेनरक्षिता लोका जनिता पालिताध्रुवम् ।
अस्यैवसदृशो नास्ति सर्वेषां परिरक्षणात् ।।११
यं च दृष्ट्वाप्युषः काले पापराशिः प्रलीयते ।
तमाराध्य जना मोक्षं साधयन्ति द्विजातयः ।।१२
सन्ध्योपासनाकाले तु विप्रा ब्रह्मबिदः किलः ।
उद्धाहवो भवन्त्येव ने च देवप्रपूजिताः ।।१३
अस्यैव मण्डलस्या च देवीं सन्ध्यास्वरूपिणीम् ।
समुपास्य द्विजास्सर्वे लभन्ते स्वर्गमोक्षकौ ।।१४

पितामह ब्रह्मा बोले—हे देवगण सत्व में गमन करने वाला ब्रह्म-तनु का आदि जनक प्रभु है। यह तनुके मध्यमें गमन करनेवाला रजोमय साक्षात् सुधांशु है ।८। इन दोनों के द्वारा ही ये समस्त लोक जो भी इस त्रिभुवन में चर और अचर हैं पाले गये हैं। दिव्य उपपादक देवता और जो यहाँ पर ही जरायुज प्राणी हैं तथा अण्डज स्वेदज एवम् उद्भिज आदि सभी प्रकार के प्राणीं जो हैं वे कोई भी इस सूर्य के प्रभाव को बतलानेमें समर्थ नहीं होते हैं।९-१०।इसने ही समस्त लोकों की रक्षा की है, इसीसे सबकी उत्पत्ति हुई है और इसके द्वारा ही निश्चित रूपसे सम्पूर्ण त्रिभुवन का पालन एवं पोषण भी होता है। सबके परीक्षण करने में इसके समान यहां अन्य कोई भी नहीं है ।११। आयु के काल में इसका दर्शन करके पापों का समुदाय प्रलीन हो जाया करता है। इसकी समाराधना करके द्विजाति लोग अपने यहां पर बार-बार जन्म लेना और मरने के आवागमन के कष्ट से छुटकारा प्राप्त करने की सिद्धि प्राप्त करते हैं ।१२।सन्ध्यावन्दन के समय में ब्रह्म के वेत्ता विप्र लोग अपनी बाहुओंको ऊपरकी ओर उठाते हुई इसकी आराधना किया करते हैं जोकि देवों के भी द्वारा वन्द्यमान होते हैं ।।१३।। इसी सूर्य के मण्डल के मध्य में संस्थित सन्ध्या स्वरूप वाली देवी है जिसको गायत्री—सावित्री तथा वेद जननी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
आदि शुभ नामों से पुकारा करते हैं इसकी भली-भाँति आराधना एवम् उपासना करके समस्त द्विजगण स्वर्ग का निवास और परम पुरुषार्थमोक्ष की प्राप्ति किया करते हैं ॥१४॥

धरायांपतितोच्छिष्टा पूतास्तेचास्यरश्मिभिः ।
सन्ध्योपासनमात्रेणकल्मषात्पूततांव्रजेत् ॥१५
नेष्ट्वा चाण्डालक गोघ्नं पतित कुष्टसङ्गतम् ।
महापातकसङ्कीर्णमुपपातकसंवृतम् ॥१६
पश्यन्ति ये नरास्सूरं ते पूता गुरुकिल्विषात् ।
अस्योपासनमात्रेण सर्वरोगात्प्रमुच्यते ॥१७
नान्धत्व न च दारिद्र्यं न दुखं न च शोच्यताम् ।
लभते च इहामुत्र समुपास्य विरोचनम् ॥१८
प्रदृष्टा नैव लोकेश्चा देवा हरिहरादयः ।
ध्यानरूपप्रगम्यास्ते दृष्टो देवो ह्ययं स्मृतः ॥१९
अस्तु प्रसादनाराध्यश्चास्तूपासनपूजनम् ।
अन्यौव दर्शनं ब्रह्मन्प्रलयानलयं मतम् ।२०
सर्वं नरादयस्सत्त्वा मृतावस्थांगता भुवि ।
अस्य तेजः प्रभावेण प्रनष्टास्सागरादयः ।२१
न समर्था वयं सोढुं कथमन्ये पृथग्जनाः ।
तस्मात्तवप्रसादाच्च पूजयामो यथा रविम् ।
यजन्ति च नरा भक्त्या तदुपायो विधीयताम् ॥२२

धरा में पतित होकर उच्छिष्ट जो भी हैं वे इसकी किरणों से ही पवित्र होते हैं। सन्ध्या की उपासना मात्र से ही कल्मषों से पवित्रता हो जाती है। अर्थात् केवल एक मात्र सन्ध्या समय में नियम से विधिपूर्वक उपासना करने का एक ऐसा प्रभाव होता है कि इसीसे समस्त कल्मषोंका क्षय हो जाया करता है ॥१५॥ चाण्डाल को देखकर गाय का वध करने वाले—पतित—कुष्ठ रोग से ग्रस्त—महा पातक से युक्त तथा उपपातकों से युक्त को देखकर जो पाप होता है उस महान् किल्विषे से मनुष्य सूर्य का दर्शन करके मुक्त हो जाते हैं। सूर्य की केवल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपासना से ही मनुष्य सब प्रकार के रोगों से मुक्त होजाया करते हैं।१६। ।१७। इस संसार में भगवान् सूर्यदेव की उपासना का महान् प्रभाव होता है। इसकी उपासना से नेत्रों की दृष्टि हीनता—दरिद्रता—दुःख औरशोक आदि नहीं होता है ॥१८॥ हरि और हर आदि अन्य महान् देवताओं के दर्शन लोकों ने कभी साक्षात् रूप में नहीं किये हैं। इन सभी देवगणोंका तो केवल ध्यान ही किया जाता है और उस ध्यान के द्वारा ही उनका ध्यानमय दर्शन लोग किया करते हैं, किन्तु यह भगवान् सूर्य तो प्रत्यक्ष देव हैं जो साक्षात् सबको अपना दर्शन दिया करते हैं ।१९।देवगणने कहा हे पितामह ! आपने जो सूर्यदेव की आराधना की महिमा बतलाई है वह बहुत ठीक है कि इस देव को प्रसन्न किया जाय और यह सबकी आराधना के योग्य है, इसकी उपासना तथा पूजा भी करनी चाहिये। किन्तुहे ब्रह्मन् ! इस देव के दर्शन तो साक्षात् प्रलयकाल की महान् भीषण एवम् असह्य अग्नि के समान् हैं। इसकी महान् तीक्ष्ण किरणों के कारण कैसे इसके कोई दर्शन करे ?।२०। इस समयमें भू मण्डलमें समस्त प्राणी इसके प्रतप्त किरणोंके तेजसे मृतावस्था को प्राप्त होरहे हैं। इतना भीषण उग्र तेज है कि ताप से सभी सागर आदि विशाल जलाशय भी प्रनष्ट हो गये हैं ।२१। जब हम सब देवगण भी इसके तेज को सहन करनेमें समर्थ नहीं होरहे हैं तो विचारे अन्य क्षूद्र जन्तु कैसे इसे सहन कर सकते हैं?इसलिये आप इस समयमें ऐसी कृपा कीजिये कि इस सूर्यदेव की हमसब समर्चना करने में समर्थ हो सकें। सभी मनुष्य भक्ति की भावना में सूर्यदेव की पूजा-यजन किया करें वही कोई आप उपाय बताइये ।।२२।।

देवानां वचनं श्रुत्वा गतो ब्रह्मा खगेश्वरम् ।
गत्वा स्तोतुं समारभे सर्वलोकहिताय शौ ॥२३
देवत्व सर्वलोकस्य चक्षुर्भूतो निरामयः ।
ब्रह्मरूपधरः साक्षाद्दुष्प्रक्ष्यः प्रलयानलः ॥२४
सर्वं देवास्थितस्त्व हि सदा वायुसखस्तनौ ।
अन्नादिपाचनत्वत्तो जीवनं च भवेद्ध्रुवम् ॥२५
उत्पत्तिप्रलयौ देव त्वमेको भुवनेश्वरः ।
त्वदृत सर्वलोकानां दिनेकं नास्ति जीवनम् ॥२६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभुस्त्वं सर्वलोकानाँ त्राता गोप्ता पिता प्रसूः ।
चराचराणां सर्वेषां त्वत्प्रसादाद्धृतं जगत् ।।२७
देवेषु त्वत्समो नास्ति भगवस्त्वखिलेषच ।
अन्तर्हेदेषु वाह्येषु सर्वेषु भुवनेर्वे च ।।२८
सर्वत्र तेऽस्ति सद्भावस्त्वयेतद्धारितं जगत् ।
रूपगन्धादिकारी त्व रसानां स्व दुता त्वया ।।२९

महर्षि व्यासजी ने कहा—देवों की इस प्राथना का श्रवण कर ब्रह्माजी खगेश्वर के समीपमें गयेथे और वहां जाकर उन्होंने सब प्राणियों के हित-सम्पादन करने के लिये उनका स्तवन करना प्रारम्भ कर दिया था ।२३। ब्रह्माजी ने कहा—हे देव ! आप तो समस्त लोगोंके चक्षु स्वरूप एवं निरामय हैं । आप साक्षात् ब्रह्म के ही रूप को धारण करने वाले हैं, किन्तु आपका दर्शन प्राप्त करना महान् कठिन हैं । आपको कोई भी जीव देख ही नहीं सकता है क्योंकि आपकी किरणोंमें ऐसा प्रखर तेज विद्यमान है जो साक्षात् प्रलयकाल की अग्नि के समान ही है।२४।समस्त देवगण में आपकी स्थिति रहती है और आप अपने शरीर में वायुदेव को एक सखा की भाँति सर्वदा रखते हैं। आपसे अन्न आदि का पाचन भी होता है और निश्चित रूप से आपसे ही सबका जीवन होता है ।२५। इस त्रैलोक्य की उत्पत्ति और अन्तमें इसका संहार भी आपसे ही हाता है । हे देव ! आप ही एक इस भुवन के ईश्वर हैं । आपके बिना तो सभी लोकों का जीवन एक भी दिन तक नहीं हो सकता है ।२६। हे देव ! आप ही सब लोकोंके प्रभु हैं,सबकी रक्षा करने वाले हैं, सबका पोषण-रक्षण करने वाले हैं और सबको प्रसव देने वाले पिता भी आप ही हैं । यह सम्पूर्ण चर और अचर जीवोंका जगत् केवल आपकेही प्रसाद से धारण किया हुआ स्थित है।२७। समस्त देवों में आप ही सबसे बड़े हैं और आपके समान अन्य कोई भी देव नहीं है । हे देव ! आप सबके अन्तर्देहों में,बाह्य भागों में औरसमस्त भुवनों में स्थित हैं।२८।ऐसा कोई भी स्थल नहीं है जहाँ पर आप विद्यमान न हों, सर्वत्र आपकी सता है । आपने हो इस जगत को धारण कर रक्खा है । रूप गन्ध आदि के करने वाले भी आप हो हैं और रसों में जो स्वादुता है वह भी आप ही के कारण होती है ।।२९।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवंविश्वेश्वरः सूरो निखिलस्थितिकारकः ।
तीर्थानां पुण्यक्षेत्राणां मखानां जगतः प्रभोः ॥३०
त्वमेकः प्रयतो हेतुस्सर्व साक्षी गुणाकरः ।
सर्वज्ञः सर्वकर्ता च हर्ता पाता सदोत्सुकः ॥३१
ध्वान्तपङ्कामयघ्नश्च दारिद्र्य दुखनाशनः ।
प्रेत्येह च परो बन्धुः सर्वज्ञः सर्वलोचनः ॥३२
त्वदृते सर्वलोकानामुपकारी न विद्यते ॥३३
पितामह महाप्राज्ञ विश्वेन्द्र विश्वभारक ।
ब्रूहि शीघ्र पर यत्ते करिष्यामि मत विधे ॥३४
मयूखस्तेऽतिचण्डश्च लोकानामतिदुःसहः ।
यथैव मृदुतामेति तथा कुरु सुरेश्वरः ॥३५

इस प्रकार से यह विश्व का ईश्वर सूर्यदेव इम समस्त स्थिति के करने वाले हैं । हे प्रभो ! आप ही सब तीर्थों के—मखों के और इस जगत् के स्वामी हैं।३०।आप ही एक प्रयत इन सबके हेतु हैं और सबके साक्षी तथा गुणों की खान हैं । आप सब कुछ के ज्ञाता हैं, आप ही सबके करने वाले हैं आप ही संपूर्ण विश्व के सहार करने वाले हैं और आप ही इमके रक्षक एवं पालकभी हैं । आपही सदा उत्सुक-रहा करते हैं।३१।आप घोर अंधकार-पङ्क और आमय रोग) के नाश करने वाले हैं । आप मानवों की दरिद्रता के दुःख को मिटा देने वाले हैं । और यहाँ पर मरकर आने वाले के परम बन्धु हैं, आप सवज्ञ हैं तथा सबके नेत्र हैं ।३२। हे भगवन् आपके बिना समस्त लोकों का उपचार करने वाला अन्य कोई भी नहीं है ।३३।भगवान् आदित्य देव ने कहा-हे पितामह ! आप तो महान् विद्वान् एवं मनीषी हैं, आप इस विश्व के इन्द्र हैं और आप विश्व पर पूर्ण कृपा करने वाले हैं । हे विधे ! आप मुझे अति शीघ्र आदेश प्रदान कीजिये जिससे कि मैं आपके वचनों का पालन करूँ आप जो भी कुछ बोलेंगे उसको मैं पूर्ण करूँगा।३४।सूर्यदेव के इस प्रकार से कहने पर ब्रह्माजी ने कहा—हे सुरेश्वर ! आपकी किरणों का समुदाय बहुत ही अधिक तेज है जिसको कि लोग सहन करने में असमर्थ हैं । जिस रीति से भी यह मृदुलता को प्राप्त हो जावे वही उपाय या विधान आप करें ॥३५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किरणाः कोटिकोटिमें लोक नाशकराः परा: ।
न चाभीष्टकरा लोके प्रयोगा च्छिन्धि तान्प्रभो ।।३६
ततोविरिञ्चिना सूर्णं रविवाक्यवशाद्ध्रुवम् ।
आहूयविश्वकर्माणंकृत्वा वज्रमयींभ्रमिम् ।।३७
चिच्छेद च रवेर्भानून्प्रलयानलसन्निभाम् ।
तैरेव रचित तत्र विष्णोश्चक्रं सुदर्शनम् ।।३८
अमोघं यमदण्डं च शूलं पशुपतेस्तथा ।
कालस्य च परः खड्गश्शक्तिर्गुरुप्रमोदिनी ।।३९
चण्डिकायाः परं शस्त्रं विचित्रं शूलकं तथा ।
चक्रे ब्रह्माऽऽज्ञयाशीघ्रं विश्वकर्मा तु तेन वै ।।४०
सह[illegible] शिष्टमन्यच्चैव प्रशातितम् ।
अजनोपाय भावेन पुनश्च कश्यपान्मुने ।।४१
अदितेर्गर्भसम्भात आदित्य इति वै स्मृतः ।
अयं च रतिविश्वान्ते मेरुश्रृङ्गं भ्रमत्यपि ।।४२
सदोर्ध्वं दिनरात्रं च धरण्या लक्षयोजने ।
ग्रहाश्चन्द्रादयस्तत्र चरन्ति विधिनोदिताः ।।४३

आदित्य देव ने कहा—मेरी करोड़ों-करोड़ों किरणें हैं और ये लोकों के नाश करने में तत्पर हैं । लोक में ये प्रयुक्त होने वाली एवम् अभीष्ट के करने वाली नहीं है । अतः हे प्रभो ! आप उनका छेदन कर दीजिए । ।।३६।। व्यास देव ने कहा—इस प्रकार सूर्य के कहने पर ब्रह्माजी ने रतिदेव के वाक्यके वश हो तुरन्तही विश्वकर्माको बुलाकर निश्चित रूप से एक वज्रमयी भ्रमि तैयार कर ली थी ।३७। उस भ्रमि से सूर्य की जो प्रलयाग्नि के समान किरणें थीं उनका छेदन कर दिया था और जो किरणें सूर्य को छिन्न करके पृथक कर दी गयी थी उन्हीं किरणों के द्वारा एक सुदर्शन नाम वाला भगवान् विष्णु का आयुध निर्मित किया गया था।३८। यही एक चक्रमात्र नहीं उन किरणों से अन्य आयुध भी प्रस्तुत किये गये थे । यमराज का अमोघ जो दण्ड है जिससे वह पापियों को ताड़ना दिया करता है, वह बनाया गया—भगवान् पशुपति का त्रिशूल जो कि महान्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीषण एवं शत्रु संहार करने वाला है उसकी रचना कीगई थी। कालदेव के परम उग्र खंग का निर्माण भी इन्हीं कटी हुई किरणों से हुआ था जिसका प्रहार वह समस्त चराचर प्राणियों पर अहर्निश किया करता है और गुरु प्रमोदिनी शक्ति बनाई गयी थी।३६।चण्डिका देवी का जो परम प्रधान अस्त्र है जिसका नाम भी शूल है और जिसमें सहारिणीएक अद्भुत शक्ति विद्यमान है इन्हीं किरणोंसे बनाया गया था। ब्रह्मा की आज्ञा से ये सब अति शीघ्र किया गया था। विश्वकर्मा ने इनके अतिरिक्त अन्य एक सहस्र किरणें भी काटी थीं। 'अजनोपाय भाद'से फिर कश्यप मुनि से वह अदिति के गर्भ से समुत्पन्न हुआ जो कि आदित्य इस नाम से कहा गया है। यह रति विश्वान्त में मेरु पर्वत के शिखर पर भ्रमण किया करता हे।४०-४२। सर्वदा ऊपर दिन-रात इस धरणी से एक लाख योजन ऊँचा है जो कि विधि के गारा प्रेरित हुए समस्त ग्रह चन्द्र प्रभृतिसे घिरा रहता है अर्थात् उसमें स्थित ये सभी पहते हैं ।।४३।।

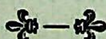
सूरः सञ्चरते मासान्द्वादश द्वादशात्मकः।
सङ्क्रमादस्य सङ्क्रान्तिः सर्वैरेव प्रतीयते ।।४४
तासु यद्धा फल ब्रूमो लोकानां निखिल मुने।
धनुर्मिथनमीनेषु कन्यायां षडशी यः ।।४५
वृष वृश्चिक कुम्भेषु सिंहे विष्णुपदी स्मृता।
तर्पणं चाक्षय विद्धि दानं देवार्चनं तथा ।।४६
षडशीतिसहस्राणि षडशीतौ फलं भवेत्।
विष्णुपद्यां तु लक्षं तु अयने कोटिकोठिकम् ।।४७
विष्णुपद्यां तु यद्दानमक्षयं परिकीर्तितम्।
दातुर्वदामि सान्नि यं सदा जन्मनि जन्मनि ।।४८
शीते तूलपटीदानान्न दुःखं जायते तनौ।
तुलादाने तल्पदाने द्वयोरेवाक्षयं फलम् । ४९
सर्वोपकरणां शय्यां यो ददाति विमत्सरः।
वर्णमुख्याय विप्राय स राजपदवीं लभेत् ।।५०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सूर्य द्वादशात्मक है और बारह मास तक सञ्चरण किया करता है। इसी के सङ्क्रमण होने से संक्रान्ति कही जाती हैं जो कि सभी के द्वारा प्रतीयमान हुआ करते हैं।४४।हे मुने! उन संक्रान्तियों में भिन्न-भिन्न फल होते हैं उनको अब हम बतलाते हैं। धनु—मिथुन–मीन और कन्या इनमें षड़शीतियां हैं।४५।वृष वृश्चिक-कुम्भ तथा सिंह की जो संक्राति होती है ये विष्णुपदी कही गई हैं। इनमें जो तर्पण किया जाता हैं वह अक्षय होता है तथा दान और देवों का अर्चनभी किया हुआ अक्षय होता है।४६। शडशीति सहस्र हैं और षडशीति में फल होता है। विष्णुपदी लक्ष गुना होता है और अयन में तो करोड़ों-करोड़ गुना फल होता है।४६।विष्णुपदी में जो भी दान दिया जाता है वह अक्षय अर्थात् कभी भी क्षीण न होने वाला कहा गया हैं। दाता का जन्म-जन्म में सदा सान्निध्य मैं बतलाता हूँ।४८।शीतकाल में तूल-पटी के दान से शरीर में कभी भी कोई दुःखनहीं होता है। तुलादान में जो कि तुला में अपने ही भार के समान तोलकर किया जाता है तथा तल्प (शय्या) का दान जिसमें सभी शय्याके वस्त्रादि उपकरण विद्यमान रहते हैं,इन दोनों दानों का अक्षय फल हुआ करता हैं।४९।इस प्रकार से भिन्न-भिन्न संक्रान्तियां के विभिन्न महाफलों का वर्णन कर दिया है। समस्त उपकरणो से समन्वित शैय्या के दान से जो कि मत्सरता से रहित होकर किसी उत्तम विप्रको दिया जावे दानदाता राजा की पदवी को प्राप्त किया करता हे ॥५०॥

॥ सृष्टि खण्ड समाप्त ॥



CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) भूमि—खण्ड

—:*:—

।। पंच महाभूत शरीर कथन ।।

अभिमानेन दुःखेन मानभङ्गेन सत्तम ।
महादुःखेन सन्तप्ता करिष्ये प्राणमोचनम् ।।१
श्रूयतामभिधास्याभि यथाशान्तिर्भविष्यति ।
न कः कस्य भवेत्पुत्रो न माता न पिता शुभे ।।२
न भ्राता बान्धवःकस्य न च स्वजनबान्धवाः ।
एवं संसारसम्बन्धो मायामोहसमन्वितः ।।३
स्वयमेव पिता देवि स्वयं माताऽथ बान्धवाः ।
स्वयं स्वजनवर्गश्च स्वयंधर्मः सनातनः ।।४
आचरेण नरोदेवि सुखित्वमुपजायते ।
अनाचरेण पापेन नाशं याति तथा ध्रुवम् ।।५
क्रूरयोनि प्रयात्येव नरो देवि न संशयः ।
कर्मणा सत्यहीनेन महापापेन मोहितः ।।६

दिति ने कहा—हे श्रेष्ठतम ! अभिमान के दुःख से और मान के भंग होने के महान् दुख से मैं परम संतप्त होगई हूँ और अब अपने प्राणों का त्याग करूँगी । कश्यप मुनि ने कहा—हे देवि ! आप इतनी अधीर क्यों हो गई हैं । आप अब मेरे वचनोंका श्रवणकरें जिन्हें मैं अभी कहता हूँ जिनके सुनने से आपके हृदय में शान्ति हो जायगी । हे शुभे ! इस लोकमें न तो कोई किसी का पुत्र है न कोई भी किसी के माता-पिता ही हैं ।१-२। न यहां पर कोई भाई है, न बान्धव हैं और किसी के कोई भी अपने स्वजन-बान्धव ही होते हैं । इसी प्रकारका यह संसारका बनावटी सम्बन्ध चलता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहता है इसमें लेशमात्र भी वास्तविकता नहीं है । यह जोभीपिता-पुत्रादि का सम्बन्ध संसार में होता है वह माया और मोह मे युक्तही होता है। ः। हे देवि ! यह प्राणी स्वयंही अपने आपका पिता है,स्वयं माता तथा बान्धव है, यह स्वयं ही अपना स्वजन वर्ग है और स्वयं ही सनातन (सदा-सर्वदा चले आने वाला) धर्म है । हे देवि ! यहां पर लोक में आचार की बहुत बड़ी महिमा है । उस सदाचार के पूर्णतया पालन करने से नर को सुख उत्पन्न होता है । जो आचार का पालन न कर अनाचरण किया करते हैं उससे महान् पाप होता है और फिर इसका परिणाम यह होता है कि निश्चय हीं उसका नाश हो जाया करता है।५।हे देवि ! दूषित दुराचरणके करने से मनुष्य महान् क्रूर योनि में जन्म ग्रहण किया करता हैं—इसमें तनिक भी संशय नहीं है । सत्यसे हीन कर्म से और महान् पापसे मोहित होकर ही मनुष्य दुराचारी हो जाया करता है ॥६॥

रिपुत्त्वे वर्त्तते मर्त्यः प्राणिनां नित्यसंस्थितः ।
रिपवस्तस्य वर्त्तन्ते यत्र तत्र न संशयः ॥७
मैत्रेण वर्तंते मर्त्यों यदा लोके प्रिये शुभे ।
तदातस्य भवेन्त्येव मित्राः सर्वत्रः भामिनी ॥८
कृषिकारो यदा देविच्जन्नं वीजं सुसंस्थितम् ।
यादृशं तु भवत्येवतादृशं फलमश्नुत ॥९
तणा तव च पुत्रैश्च साधुभिः स्पाधतमह ।
कर्मणस्तस्यतत्प्राप्तंफलभुङ्क्षसुसस्थितम् ॥१०
तव पुत्रा महा भागे तपःशान्तिविवर्जितः ।
तेन पापेन ते सर्वे पतिता व महत्पदात् ॥११
एवं ज्ञात्वा शुभं गच्छ मुञ्चदुःख सुख तथा ।
कस्यपुत्राश्चमित्राणि कस्यस्वजनबान्धवाः ॥१२
आत्मकर्मानुसारेण सुखजीवन्ति जन्तवः ।
परार्थं चिन्तन देवि तत्वज्ञानेन पण्डिताः ॥१३
न कुर्वन्ति महात्मानो व्यर्थमेत्र न संशयः ।
पञ्चभूतात्मकं काय केवलं सन्विजर्जरम् ॥१४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो इस प्रकार से नित्य ही अन.चरण में संस्थित पहता है उसके सभी प्राणी प्राय: शत्रु हो जाया करते हैं। ऐसे मनुष्य के जहाँ-तहां रिपु विद्यमान रहते हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है। क्योंकि दुराचरणशील मनुष्य बिना शत्रुओं वाला होता ही नहीं है।७।हे शुभे ! हे प्रिये !जब इस लोक में मित्रता की भावना से सबके साथ व्यवहार करता है तब तो हे भामिनी ! उस मनुष्य के सभी जगह सभी प्राणी मित्र हो जाया करते हैं।८ कृषि करने वाला जिस समय में हे देवि ! बीज को संछन्न करके भली-भांति स्थित करता है तो जैसा ही वह होता है वैसा ही उनका फल भी होता है अर्थात् किसान जैसाभी बीज भूमिमें वपन किया करता है वैसाही उसकी फसल उगकर उसे लाभ देती है।९ उसी प्रकार से तुम्हारे पुत्रों ने साधुओं के साथ स्पर्धा की थी, उस कर्म का वह फल प्राप्त हुआ है। उस फल का जो सुसंस्थित होगया है भोगना चाहिए।१०।हे महाभागे ! आपके जो पुत्र हैं वे तप और शान्ति से रहित हैं। इसी पापके प्रभाव से वे सब महान् पद से च्युत होकर पतित हो गये हैं।११। इस प्रकार से किये हुए कर्मों पर विचार करके शान्ति का समाश्रय ग्रहण करो और जो तुम्हारे हृदय में महान् दु:ख हो रहा है उसका त्याग कर दो और अपने आप में सुख का अनुभव करो। इस संसार में किसके कोई पुत्र,मित्र तथा स्वजन बान्धव होते हैं ? अर्थात् कोई भी किसी का कुछ नहीं होता है।१२।अपने ही किये हुए कर्मों के अनुसार जन्तुगण सुख पूर्वक जीवित रहा करते हैं। हे देवि ! पण्डित लोग परार्थका तत्त्व ज्ञान से चिन्तन किया करते हैं।१३। जिनकी महान् आत्मा होती है वे व्यर्थ का कर्म कभी नहीं करते—इसमें संशय नहीं है। यह मानव का शरीर पांच भूतों से निर्मित हुआ है और केवल सन्धियोंमें यह शरीर जर्जरीभूत होता है। इस शरीर के आस्तित्व में कुछ भी आस्था नहीं है ॥१४॥

आत्मा मित्रं कृतं ते सर्वं देवि सुखाशया।
आत्मा नाम महापुण्यः सर्वग सर्वदर्शकः ॥१५
सर्वसिद्धिस्तु सर्वात्मा सात्विकः सर्वसिद्धिदः।
एवंसर्वमयो देवि भ्रमत्येको विरञ्जनः ॥१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रमता निर्जने येन मूर्तिमन्तो द्विजोत्तमाः ।
चत्वारो दर्शिताः पुण्यामूर्तिमन्तोमहौजसः ।।१७
पञ्चमः श्वसनश्चैव पूर्वाणांमित्रमेव च
अथो आत्मा समायातो ज्ञानसाह्यमेव वा ।।१८
स तान्दृष्टवा महात्मा वैज्ञानमात्मा समब्रवीत् ।
ज्ञान पश्य अमीपञ्चमन्त्रयन्तः परस्परम् ।।१९
एतान्गत्वा ब्रबोहित्वं यूयं क इति पृच्छह ।
ज्ञानं वाक्यं परं श्रुत्वा सार्थं तस्यमहात्मनः ।।२०
तदाऽऽहात्मानमाराध्यमेतः किंते प्रयोजनम् ।
तत्वता ब्रूहि मे देव सदाशुद्धोऽसिसर्वदा ।।२१

हे देवि ! जिसने अपने ही आत्मा को मित्र बनाया है अर्थात् अपना हित के सम्पादन करने वाला समझ लिया उसने सुख की आशा से सभी कुछ कर लिया है। यह आत्मा जिसका नाम है वह महान् पुण्य है। यह सर्वत्र गमन करने वाला और सभी कुछ को देखने वाला है ।।१५।। यह सम्पूर्ण सिद्धियों वाला है, यह सर्वात्मा, सात्विक और सब सिद्धियों के प्रदान करने वाला है अर्थात् इसी के उत्थान चिन्तन और उत्कषसे सारी सिद्धियाँ हस्तगत हो जाया करती है। हे देवि ! इस प्रकार ने यह आत्मा ऐसी हैं जिसमें सभी देवता निवास किया करते हैं। वह एक ही अकेला निरञ्जन स्वरूप वाला भ्रमण किया करता हैं ।।१६।। जिसने निर्जन में भ्रमण करते हुए मूर्तिमान चार श्रेष्ठ द्विज जोकि परमपुण्य स्वरूप मूर्ति मान् महान् ओज वाले थे, देखे थे।१७। पांचवाँ श्वसन है जो पूर्वों काही मित्र है। इसके अनन्तर आत्मा आया जो ज्ञान साहाय्य वाला है ।।१८।। वह वैज्ञानात्मा महान् आत्मा वाला जव आया तो उसने उसको देखा था और उनसे वह बोला—हे ज्ञान ! इन पाचों को परस्पर में मन्त्रणा करते हुये देखो।१९।इनको पहिचानकर तुम इनसे बोलो और इनसे पूछो कि आप लोग कोन है। उन महात्मा के साथी ज्ञान ने परम वाक्य का श्रवण किया था ।।२०।। उस समय में बोला कि आत्मा का ही समाराधन करो इनसे तुम्हारा क्या प्रयोजन है। हे देव ! आप मुझे तत्व स्वरूप से बतलाइये। आप तो सर्वदा ही सदा शुद्ध है ।।२१।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतेपञ्च महाभागारूपवन्तो मनस्विनः ।
गत्वासन्दशयाम्येनानाभाष्ये ज्ञान श्रूयताम् ॥२२
भव्यानेतान्प्रवक्ष्यामि पञ्चमीं गतिमागतान् ।
दूतत्वं गच्छ भो ज्ञान कुशलो दूतकर्मणि ॥२३
त्वमात्मञ्छृणु मे वाक्यं सत्वं सत्यंवदाम्यहम् ।
एतेषांसङ्गतिस्तात कार्यानैव त्वयाकदा ॥२४
पञ्चानामपि शुद्धात्मन्न कार्यं शुभमिच्छता ।
भवतः सङ्गतिमोह इच्छत्येष महामते ॥२५
एतेषां सङ्गतिज्ञान कस्माद्धारयते भवान् ।
तन्मेत्वं कारणं ब्रूहि यतथ्यन पण्डित ॥२६
एतेषां सङ्गमात्रात्तु महद्दुःख भविष्यति ।
दुःखमूलाहि पञ्चैव शोकसन्तापकारकः ॥२७
एवमस्तु महाप्राज्ञ करिष्ये वचनं तव ।
ज्ञानमाभाष्य सह्यात्मा ध्यानेन सह सङ्गतः ॥२८

आत्मा ने यह श्रवण कर कहा—हे ज्ञान ! आप अब श्रवण करो, पाँच महान भाग्य वाले रूपधारी मनस्वी हैं। मैं चलकर इनको भली-भाँति दिखलाता हूं और बोलता हूँ।२२।ये पाँचों महान भव्य हैं जो कि पाँचवीं गति को समग्रात हुए हैं, मैं इनसे बातें करता हूँ। हे ज्ञान।आप दूत के कर्म करने के बहुत ही अधिक निपुण हैं अतएव आप दूत बन जाइए।२३। ज्ञान ने कहा- हे आत्मन ! आप मेरे वचनों को श्रवण करो। मैं इस समय मैं बिल्कुल सच-सच बोल रहा हूँ।हे तात ! मैं यह आपको अपना परामर्श देता हूँ कि आप इसकी कभी भी सङ्गति न करें।२४। हे शुद्धात्मन् ! यदि आप शुभ कार्य करने की इच्छा रखते हैं तो इन पाँचोंकी सोहवत आपको कदापि नहीं करनी चाहिए हे महामति वाले यह मोह आपकी सङ्गति करने की बराबर इच्छा करता रहता है।२५। आत्मा ने कहा–हे ज्ञान! आप मुझसे विरोध करते हैं किन्तु आर स्वयं इनकी संगति क्यों किया करते हैं ? हे पण्डित ! इसका क्या कारण है वह आप मुझे यथार्थ रूप से सही–सही बतला दीजिए।२६। ज्ञान ने कहा—इनके सङ्ग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्र से ही महान दु:ख के मूलभूत हैं और शोक तथा सन्ताप के करने वाले होते हैं। हे महाप्राज्ञ! आपने जो कहा है वह वैसा होगा। मैं आपके वचनों का पूर्ण पालन करूँगा। इस तरह से वह आत्मा ज्ञान से कहकर स्वयं ध्यान के साथ सङ्गत हो गया था।२७-२८।

ततः पञ्चैव ते तत्राद्राक्षुरात्मानमेव तम्।
बुद्धिमूचुः समाहूय संगाच्छात्मानमेवहि ॥२६
दूतत्वं कुरुकल्याणि अस्माकमात्मना सह।
पञ्चतत्त्वामहात्मानो विश्वस्धयारकाः शुभाः।३०
भवत्या मैत्रमिच्छन्ति इत्याभाष्य महामति।
गत्वाबुद्धे त्वया कार्यं कर्तव्यं नइतोव्रज।३१
एवमस्तु महाभागा करिष्ये कार्यमुत्तमम्।
एवमाभाषितं तेषां गत्वाऽऽहात्मानमेवतम्।३२
अहं बुद्धि महाभाग भवन्तं समुपागता।
दूतत्वे महतां पार्श्वात्तेषां त्वं वचन शृणु।३३
भवन्मैत्रीं समिच्छन्ति अक्षयां पञ्चआत्मकाः।
कुरुमैत्रीं महाप्राज्ञ जहि ध्यानं सुदूरतः।३४

कश्यप मुनि ने कहा—इसके अनन्तर उन पाँचों ने वहाँ पर उस आत्मा को ही देखा था। फिर उन्होंने बुद्धि को बुलाकर उससे कहा कि आत्मा के ही साथ रहो।२६। उन्होंने बुद्धि से कहा था कि हे कल्याणि! आप आत्मा के साथ सम्वाद सम्प्रेषण के कार्य में हमारे दूत बन जाने का कार्य करो। ये महान् आत्मा वाले पाँचों तत्व इस विश्व के धारक एवम् परम शुभ हैं।३०। पाँचों ने बुद्धि से 'हम आपके साथ मैत्री चाहते हैं' कहा। वहाँ महान् मति वाले आत्मा के समीप में जाकर तुमको कार्य करना चाहिए और यहाँ से चली जाओ।३१। ऐसा ही होगा—यह कहकर बुद्धि ने उनसे कहा—हे महाभागो! मैं आपका यह उत्तम कार्य करूँगी इस प्रकार से उनका जो आभाषित था उनसे उस आत्मा से जाकर कह दिया था।३२। बुद्धि ने आत्मा से कहा कि हे महाभाग!

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मेरा नाम बुद्धि है और मैं आपके समीप उपस्थित हुई हूँ। मैं महान् लोगों की दूत बनकर ही यहाँ पर आई हूं आज आप उनके जो वचन (सन्देश) हैं उनका श्रवण की जए।:३। ये पाँचों आत्मक आपके साथ अक्षय मैत्री चाहती हैं। हे महान् पण्डित आप उन सबके साथ मित्रता करलो और इस ध्यान को दूर से ही त्याग दो।३३।

न कर्त्तव्यस्त्वया चात्मन्नेतेषां वै समागमः।
एषां संसर्गमात्रेण महद्दुःखं भविष्यति।३५
मयाज्ञानेन हीनस्त्वं कथं कर्म करिष्यसि।
एवमेव न कर्त्तव्यस्तेषां चैव समागमः।३६
गर्भवास नयिष्यन्ति भवन्तं नान्यथा विभो।
ज्ञानेनैव मयाहीनो अज्ञानं यास्यसि ध्रुवम्।३७
एवमुक्त्वा तमात्मानं विरराम महामतिम्।
ततस्तामगतां बुद्धिमात्मा प्रोवाचनिश्चितः।३८
ज्ञानध्यानौ महात्मानौ मन्त्रिणौ मम शोभनौ।
तत्र यानं ममेयुक्तं तत्बुद्धे किंकरोम्यहम्॥ ९
एवश्रुत्वा ततोबुद्धिस्तेषां पार्श्वे यशस्विनी।
समाचष्ट समग्रं तत्कथन ज्ञानध्यानयोः।४०
ततस्त पञ्चकाः सर्वे आत्मानं प्रतिजग्मिरे।
मैत्रीमेव प्रतीच्छामो भवतो नित्यमेव हि।४१

ज्ञान ने कहा-हे आत्मन्! आपको उन सबका समागमन नहीं करना चाहिए। इनके केवल संसर्ग से ही आपको महान् दुःख होगा।३३।मुझ ज्ञान से हीन होकर आप फिर किस प्रकार से कर्म करेंगे। किसी प्रकार से उनका समागम नहीं करना चाहिए।३६। हे विभो ये सब साथ में रहकर आपको गर्भ के आवास को ले जायेंगे और इनके सम्पर्क में रहकर आप मुझसे हीन हो जायेंगे तथा फिर अज्ञान को निश्चय ही प्राप्त हो जायेंगे।३७। इस प्रकार से महान् मति वाले आत्मा से इस तरह से कहकर वह विरत हो गई थी। इसके अनन्तर आई हुई उस बुद्धि से निश्चित होकर आत्मा ने कहा था।३८। हे बुद्धे! महान् आत्मा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले ज्ञान और ध्यान मेरे बहुत ही अच्छे दोनों मन्त्री हैं। यहाँ पर मेरा यान युक्त नहीं है। अब मैं क्या करूँ ? ३९। इस प्रकार से सुनकर फिर वह यशस्विनी बुद्धि वापिस उनके पास पहुँच कर ज्ञान और ध्यान का जो कथन था वह उनसे कह दिया था।४०। इसके पश्चात वे सब पाँचों आत्मा के पास गये थे। उन्होंने कहा था कि हम सब आपके साथ नित्य ही मैत्री चाहते हैं।४१।

एवमस्तु महाभागा भवतां प्रियमेव च।
करिष्ये नात्र सन्देहो मैत्रं हि प्रीतिकारणात् ।।४२
वार्यमाणो महाभागो ज्ञानेनापिमहात्मना।
ध्यानेन च महात्माऽसौ तेषां सङ्गतिमागतः ।।४३
सतैः प्रमोहिस्तत्र रागद्वेषादिभिस्तदा।
पञ्चतत्वसमायुक्तः कायित्वङ्गतत्रान्प्रभुः ।।४४
यदागर्भसमायातो विष्टामूत्रसमाकुले।
दुर्गन्धे पिच्छिलावर्ते पतितस्तैः स सयुतः ।।४५
अङ्गेन व्याकुलीभूतः पञ्चात्मकानुवाच सः।
भोभोः पञ्चात्मकाः सर्वे श्रृणुध्व वचन मम ।।४६
भवतांसप्रसङ्गेन महादुःखेनमोहितः।
नत्वस्मिन्पिच्छले घोरे पतितो हि महाभये। ४७
तावत्संस्थीयतां राजन्यावद्गर्भः प्रपूरयेत्।
पश्चान्निर्गमनं ते वै भविष्यति न संशयः ।।४८
अस्माकं हि भवान्स्वामी कायदेशे व्यवस्थितः।
राज्यमेव प्रकर्त्तयं सुखभोक्ता भविष्यति ।।४९
तेषां तद्वचनं श्रुत्वा आत्मा दुःखेनपीडितः।
गन्तूमिच्छन्नसौतस्मात्पलायनपरोऽभवत् ।५०।

आत्मा ने कहा-हे महान् भागों वाली ! ऐसा ही होगा मैं आपकाजो भी प्रिय होगा वही करूँगा—इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं है। मैत्री तो प्रिय होने के कारण से ही हुआ करती है।४२। महात्मा ज्ञान के द्वारा और ध्यान के भी द्वारा निवारण किया गया था, किन्तु वह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभाग महान आत्मा (स्वरूप) वाला उनकी सङ्गति में आ गया था। ।४३। उन्होंने वहाँ पर उस समय में राग-द्वेष आदि से उसे प्रमोहितकर दिया था और पंचतत्वों से समायुक्त होकर प्रभु कायित्व को प्राप्त हो गया था अर्थात् शरीर को धारण करने वाला बन गया था ।४४। जिस समय में वह माता के गर्भ में आया तो मल-मूत्र से समाकुल दुर्गन्ध वाले पिच्छल आवर्त्त में उन पांचों से समन्वित होकर गिर गया था ।४५। अङ्गों से वह अत्यन्त व्याकुल होकर वह उन पंचात्मकों से बोला—हे पंचात्मकों आप सब मेरे इस वचन का श्रवण करो ।४६। मैं तो इस समय में आप सबके सप्रसङ्ग से महान दुःख से मोहित हो गया हूँ देखो मैं इस समय महान भय वाले घोर पिच्छल में पड़ा हुआ हूँ ।४७। वे पंचात्मक बोले—हे राजन ! आप उस वक्त तक इसमें संस्थित जब तक यह गर्भ प्रपूरित होता है। इसके पूर्ण हो जाने पर यहाँ से आपका निकास हो जाएगा। इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।४८। हमारे आप स्वामी हैं और शरीर के देश में आप विशेष रूप से अवस्थित रहा करते हैं। इसी भाँति यह राज्य का शासन भी करना चाहिए। ऐसे करने से आज सुखों के उपभोग करने वाले होंगे ।४९। उनके इस वचन का श्रवण करके वह आत्मा अत्यन्त दुःख से उत्पीड़ित हुआ था और यह उस स्थान से जाने की इच्छा करता हुआ पलायन (दौड़) करने में तत्पर हो गया था ।५०॥

॥ वैराग्य तथा आत्मा का संवाद ॥

स गर्भे व्याकुलो जातः खिद्यमानो दिने दिने ।
दुःखाक्रान्तो हि धर्मात्मा सर्वपीडाभिपीडितः ॥१
अधोमुखस्तु गर्भस्थो मोहजालेन बन्धितः ।
आधिव्याधिसमाक्रान्तो हाहाभूतोऽविचेतनः ॥२
दुःखेन महताविष्टो ज्ञानमोहप्रपीडितः ।
तव वाक्य महाप्राज्ञ न कृत तु मया तदा ।
ध्यानेन वार्यमाणोऽपि पतितो गर्भसङ्कटे ॥३
तस्माद्रक्ष महाप्राज्ञ गर्भवासात्सुदारुणात् ॥४

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मया त्वं वारितो ह्यात्मन्कृत वाक्यं च चैव मे ।
पञ्चात्मकैर्महाक्रूरैः पातितो गर्भसङ्कटे ।५
इदानीं गच्छ त्वं ध्यानं तस्मात्सम्प्राप्स्यसे सुखम् ।
गर्भवासाद्भविष्यस्ते मोक्ष एव न संशयः ।६

कश्यप महामुनि ने कहा-- वह आत्मा जिस समय में माता के गर्भ में आगया था तो अत्यन्त खेद का अनुभव करता हुआ वह प्रतिदिन बहुत ही व्याकुल हो रहा था । दुःखों के द्वारा अत्यन्त आक्रान्त होता हुआ वह धर्मात्मा सब प्रकार की प्रकृष्ट पीड़ाओं से सभी तरह उत्पीड़ित हो गया था ।१। गर्भ की स्थिति में रहते हुए उसका मुख तो नीचे की ओर हो रहा था और मोह के जाल में अच्छी तरह बंधा हुआ था मानसिक व्यथा और शारीरिक कष्टों मे एक दम घिरा हुआ होकर हाहाकार कर रहा था तथा बेहोश, ज्ञान शून्य-सा होगया था, क्योंकि वह महान् दुःख से आविष्ट था और ज्ञान एवं मोह से बहुत ही सताया हुआ था ।२। आत्मा ने कहा-हे महान् प्रज्ञा वाले परम विद्वान मैंने आपके वाक्य को उस समय में नहीं माना था । ध्यान के द्वारा मुझे वारित भी किया गया था किन्तु फिर भी मैं इस गर्भवास के सङ्कट में आकर पतित हो गया और वहाँ पर फंस ही गया, कितनी मेरी ही मूर्खता हुई हैं । इससे हे महाप्राज्ञ ! अब मेरी रक्षा करो यह गर्भ का निवास तो बहुत ही अधिक दारुण है इससे मेरा परित्राण किसी भी प्रकार से करो । ३-४। तब ज्ञान ने कहा-हे आत्मन् ! मैंने तो आपको उन दुष्टों के सम्पर्क एवं संगति में जाने से बहुत रोका था, किन्तु आपने मेरे वचनों को स्वीकार ही नहीं किया था । इन पञ्चात्मकों ने जो महान् क्रूर हैं आपको यहाँ लाकर गर्भवास के कष्टों आखिरकार डाल ही दिया है जिसके सङ्कट आप इस समय में भोग रहे हैं ।५। अब तो आपका यही कर्त्तव्य है कि आप ध्यान के समीप में चले जाइये अर्थात् ध्यान का समाश्रवण करें । इसी के करने से आपको सुख प्राप्त हो सकेगा । इस गर्भ के निवास से आपका यही करने से छुटकारा होगा इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।६।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा ज्ञात्वा ज्ञानस्य तत्वताम् ।
ध्यानमाहिय प्रोवाच श्रूयतां वचनं मम ।७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वामहं शरणं प्राप्तो ध्यान मां रक्ष नित्यशः ।
एवमस्तु महाप्राज्ञ ध्यानमाहमहामतिम् ॥८
एतद्वाक्यं ततः श्रुत्वा आत्मा वै ध्यानमागतः ।
ध्या नहिसमं गर्भेसंस्थितोमोह वर्जितः ॥९
यदा ध्यान गतो ह्यात्मा विस्मृतं गर्भजंभयम् ।
स द्वाभ्यां सहितस्तत्र आत्मामोह विनाकृतः ॥१०
चिन्तयन्नेववै नित्यमात्मकं सुखमेव हि ।
इतो निष्क्रान्तमात्रस्तु त्यजे १श्चात्मकं वपुः ॥११
एवं चिन्तवते नित्यं गर्भवासगतः प्रभुः ।
सूतिकाले तु सम्प्राप्ते प्राजापत्ये वरानने ॥१२
वायुना चलितो गर्भः प्राणेनाप वलीयसा ।
योनिर्विकासमयाति चतुर्विशाङ्गुल तदा ॥१३
पञ्चविंशाङ्गुलोगर्भस्तेन पीड़ा विजायते ।
एव सम्पीडयमानस्तु मच्छ्र्य मूच्छित प्रिये ॥१४

इने प्रकार के उस ज्ञान के वचनों का श्रवण करके और ज्ञान की तत्वता को खूब अच्छी तरह से समझकर उसने फिर ध्यान को बुलाकर कहा था कि मेरे वचन को सुनो ।७। आत्मा ने जो कि गर्भ में पड़ा हुआ था ध्यान का स्मरण कर उससे कहा—हे ध्यान ! मैं इस समय आपकी शरणागति में आ गया हूँ, अब आप मुझे नित्य ही सुरक्षित रखिए । आत्मा की इस प्रार्थना को सुनकर ध्यान ने कहा—ऐसा ही होगा' हे महाप्राज्ञ ! आप चिन्तित न हों, यह महामति वाले आत्मा से ध्यान बोला था ।८। इस ध्यान के वचन को सुनकर आत्मा फिर ध्यान-गत हो गया था । उस ध्यान के साथ रहकर वह आत्मा गर्भ के वास में भी मोह से वर्जित हो गया था ।९। जिस समय में वह आत्मा ध्यान में संलग्न हो गया था उस समय में उसने गर्भ से समुत्पन्न जो महानमय था उसे एकदम भुला ही दिया था । वह आत्मा जब ज्ञान और ध्यान से सहित हो गया था यो उसे किसी भी प्रकार का मोह नहीं रहा था ।१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ तो फिर नित्य ही आत्मीय सुख का चिन्तन करने लगा था और यही सोचता था कि यहां से निकलते ही इस पाँच भौतिक शरीर को मैं अवश्य ही त्याग दूंगा । ११। वह प्रभु गर्भ के घोर वास में रहता हुआ नित्य ही चिन्तन किया करता है । जब हे नरानने ! प्राजापत्य प्रसवहोने का समय सम्प्राप्त हुआ था ।१२। उस समय में प्राणों से भी अधिक बलवान वायु के द्वारा वह गर्भ सञ्चालित किया गया था । उस समय में स्त्री का जो योनि द्वार में वह विकसित (चौड़ा) हो जाया करता है और चौबीस अंगुल चौड़ा हो जाया करता है ।१३। किन्तु वह गर्भस्थ बालक पच्चीस अंगुल के प्रमाण वाला होता है । इसलिए उस समय में उसके सभी अङ्गों पर भिचाव की महान पीड़ा होती है । हे प्रिये ! सम्पीड़ित होकर वह मूर्च्छा से बेहोश सा हो जाता है ।१४।

पतितो भूमिभागे तु ज्ञानध्यानसमन्वितः ।
प्राजापत्येन दिव्येन वायुना स पृथक्कृतः ॥१५
भूमिसस्पर्शमात्रेण ज्ञानध्याने तु विस्मृते ।
ससारबन्धसन्दिग्ध आत्माप्रियतयास्थितः ॥१६
गुणदोषसमाक्रान्तो महामोह समन्वितः ।
स्नानपानादिकसर्वमिच्छत्येव दिनेदिने ॥१७
एवंसम्पुष्यमाणस्तुआत्भापञ्चात्मकैः सह ।
व्याप्यते होन्द्रियैः सर्वै र्विषयैःपापकारिभिः ॥१८
बान्धवानां समोहेन भार्या दीनां तथैव च ।
आकुलव्याकुलोदेवि जायते च दिने दिने ॥१९
महामोहेन सन्दिग्धो मोहजालगतः प्रभुः ।
कैवर्तेन यथा बद्धः शाकुलो जालबन्धनैः ॥२०
चलितुं नैव शक्तोऽस्ति तथात्मासीत्प्रबन्धितः ।
मोहजालैस्तुतैःसर्वैर्दृढबन्धैस्तुबन्धितः ।२१

गर्भ के घोर निवास स्थल से वह किसी प्रकार से महान कष्टों का अनुभव करते हुए ज्ञान तथा ध्यान से संयुत होकर यहाँ भूमि के ऊपर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरता है और प्राजापत्य दिव्यवायु के द्वारा वह पृथक् किया जाता है। ।१५। जैसे ही इस भूमि का स्पर्श उसके शरीर से होता है वैसे ही उसके वे ज्ञान और ध्यान दोनों पहिले गर्भवास के साथी भुला किए जाते हैं। इस संसार के बंधन से वह संदिग्ध हो जाया करता है और वह आत्मा इसे ही प्रिय समझकर स्थित हो जाता है।१६। जन्म ग्रहण करने के पश्चात् तो वह गुणों और दोषों में समाक्रान्त होकर महान मोह से घिर जाया करता है और स्नान तथा पान आदि की दिनों दिन इच्छा क्रिया करता है।१७। इस प्रकार से उन पञ्चात्मकों के सहित सम्पच्यमाण होता हुआ फिर वह आत्मा सभी इन्द्रियों के द्वारा तथा उनके पापकारी विभिन्न विषयों के द्वारा व्याप्त कर लिया जाता है।१८। धीरे-धीरे उसे अपने बाँधवों का मोह उत्पन्न हो जाता है और बड़ा हो जाने पर अपनी भार्या तथा सन्तति का मोह पूर्णतया उसे घेर लिया करता है। हे देवि! फिर वह आये दिन परम आकुल और विशेष रूप से बेचैन हो जाता है। ।१६। महान मोह से वह अच्छी तरह संदिग्ध हो जाया करता है और वह आत्मा प्रभु मोह के जाल में पूर्णतया फँस जाता है। जिस तरह कोई कैवर्त्त जाल के बन्धनों में मत्स्य को बद्ध कर लिता करता है वही दशा इस आत्मा की होती है।२०। वह आत्मा उस समय में ऐसा प्रबन्धित हो जाया करती है कि वहां से थोडा भी चलने की शक्ति उसमें नहीं रह जाती क्योंकि संसारिक पदार्थों के मोह का जाल ऐसा सुदृढ़ होता है कि उनमें वह खूब ही अच्छी तरह बद्ध हो जाया करता है।२१।

एवमादिप्रपञ्चेन व्याप्तोऽसौ यापकेनहि।
ज्ञानविज्ञानविभ्रष्टो रागद्वेषादिभिहतः ॥२२
कामेन पीढ्यमानस्तु क्रोधेनैव तथैव च।
प्रकृत्याकर्मणा बद्धो महामूढ़ो व्यजायत ॥ ३
एवं मूढ़ो यदात्माऽसौ कामक्रोधवशागतः।
लोभंरागादिभिः सर्वैर्व्यापृतस्तैर्दुरात्मभिः ॥२४
इयं भार्या ह्ययं पुत्र इदं मित्रमिदं गृहम्।
एवं संसारजालेन महामोहेन बन्धितः ॥२५

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रशोकादिभिर्दुःखैर्विविधराकुलस्तदा ।
जरया व्याधिश्भिचैव सङ्ग्रस्तश्चाधिभिस्तथा ।२६
एवमात्मा सम्प्रतप्तो दुःखमोहैः सुदारुणैः ।
अभिमानैर्मानभङ्गैर्नानादुःखैश्च खण्डितः ।।२७
वृद्धत्वेन तथा देवि शबलत्वेन पीड़ितः ।
दुःखं चिन्तयते नित्यं हाहाभूतो विचेतनः ।।२८

इस प्रकार के प्रपञ्च से यह आत्मा व्याप्त हो जाया करता है जो कि प्रपञ्च महान् व्यापक है। फिर वह ज्ञान और विज्ञान से भी भ्रष्ट होकर रोग-द्वेष आदि के द्वारा पूर्णतया हत बना दिया जाया करता है ।२। कामवासना उसे अच्छी तरह पीड़ित किया करती है। क्रोध-वेश भी आकर उसका पूर्ण हनन कर देता है। प्राकृतिक कार्य से बंधा हुआ वह महान् मूढ़ हो जाया करता है ।२२। इस तरह से यह आत्मा जिस समय में काम और क्रोध आदि के वश में आ जाता है तो फिर लोभ और राग आदि भी जो अत्यन्त ही दुरात्मा होते हैं सभी उस आत्मा को आकर चारों ओर से घेर लिया करते हैं।२४।उसे फिर ऐसा इस संसार का महान् मोह हो जाता है कि वह, यह मेरी भार्या है—यह मेरा पुत्र है:-यह मेरा मित्र है और यह मेरा घर है, इन सभी सांसारिक वस्तुओं में मिथ्या मोह के कारण अपनत्व की भावना किया करता है। ऐसा महान् भीषण मोह का जाल उसे घेर लेता है कि जिनसे अपना कुछ भी सम्बन्ध नहीं है उसे वह पूर्णतया अपना समझकर उनके घोर चक्र में फँसा रहता है ।२५। पुत्र के शोक आदि के दुःखों से जो कि विविध प्रकार के यहाँ हुआ करते हैं। उनमें रात-दिन उस दशा में वह व्याकुल रहता है। उसे बुढ़ापे के दुःख भोगने पड़ते हैं। अनेक व्याधियाँ आकर इस शरीर को ग्रस्त कर दुःख पहुँचाती हैं और मोह वश मानसिक आँधियाँ पीड़ित किया करती हैं ।२६। इस प्रकार से इस मोह के जाल से परिपूर्ण संसार में सदारुण दुःखों से अत्यन्त संतप्त यह आत्मा अनेक अभिमान— मान भंग और नाना भाँति के दुःखों से खण्डित होकर रहा करता है ।२७। हे देवि ! जब यह शरीर वृद्धता को प्राप्त होता है तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलहीनता और शिथिलता के कारण विचित्र दशा इसकी हो जाती है, महान् पीड़ित यह होता है। उस अवस्था में अहर्निश दुःखों का चिंतन किया करता है और हा-हाकार करता हुआ ज्ञान शून्य सा हो जाता है।२८।

रात्रौ स्वप्नान्प्रपश्येत दिवा चैतन्यवर्जितः ।
वैकल्येन तथाङ्गानां व्याप्तो देवि दिनेदिने ॥२९
ससारे भ्रममाणेन वैराग्यं तत्र दर्शितम् ।
निःशङ्कं बन्धुर्हीनं च प्रशान्तं तुष्टमेव च ॥३०
तमुवाच तदात्मा वै कालक्रोधविवर्जितम् ।
को भवान्नग्नरूपेण कथंमित्रैर्न लज्जसे ॥३१
यत्रलोकाः स्त्रियो वृद्धा युवत्योमातरस्तथा ।
एतासां हि गतोमध्ये न बिभेषिह्यनाव्रतः ।३२
को ह्यत्र नग्नो दृश्येत न नग्नोऽस्मीति व कदा ।
सुसम्बद्धस्त्वमेवापिपरिधानसमन्वितः । ३३
न नग्नोऽस्मि कदा दिव्य भवान्नग्नः प्रदृश्यते ।
इन्द्रियार्थवशो वर्ती मर्यादा परिवर्जितः ॥३४
पुरुषस्य का हि मर्यादातामाचक्ष्व च सुव्रत ।
विस्तरेणमहाप्रज्ञ यदि जानासिनिश्चितम् ॥३५

रात्रि में वृद्धता वश सुखपूर्वक निद्रा नहीं आती और सपने देखा करता है। दिन में इसे कोई भी ज्ञान नहीं रहता और एकदम चेतनता से रहित हो जाता है। हे देवि! विकलता के कारण अङ्गों में पीड़ा रहती है और दिन-प्रतिदिन इसकी दशा बिगड़ती ही चली जाया करती है।२९। इस तरह से इस संसार में भ्रमण करते हुए उसने वहाँ पर वैराग्य को देखा जो निशङ्क—बन्धुओं से रहित, परम प्रशान्त और सन्तुष्ट था।३०। उस, काम और क्रोध से रहित, से उस समय में इस आत्मा ने कहा—आप कौन हैं जो इस तरह नग्न रूप से विचरण किया करते हैं। आपको आपके मित्रगण लज्जित क्यों नहीं किया करते हैं? आपको मित्रों से शर्म क्यों नहीं आती है? ।३१। जहाँ पर सब लोग रहते हैं—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियाँ—वृद्धजन भी हैं। युवतियां भी हैं तथा माताएं हैं—इन सबके मध्य में आप नग्न रूप से बिना किसी वस्त्रावरण के भ्रमण करते रहते हैं और जरा भी भय नहीं किया करते हैं।३२। वीतराग ने कहा—यहाँ पर कौन नग्न नहीं दिखलाई देता है ? मैं कब नग्न हूँ ? आप भी परिधान से अच्छी तरह सुसम्बद्ध होते हुए भी नग्न हैं।३३।मैं तो कभी भी नग्न नहीं हूँ प्रत्युत मुझे तो आप ही नग्न दिखाई दे रहे हैं जो कि इन्द्रियों के वश में बरताव किया करते हैं और समुचित जो मानव की मर्यादा है उससे आप रहित जिसने मर्यादा को छोड़ दिया वही वास्तव में नग्न , वस्त्रों से रहित नग्न नहीं होता है।३४। वीतराग से इस कथन का श्रवण कर आत्मा ने कहा—हे महानुभाव ! हे सुव्रत ! आप यदि उस मर्यादा को जानते हैं तो मुझे निश्चित रूप से विस्तार के साथ बतला दीजिए।३५।

वीतरागो महाप्राज्ञस्तुमुवाच महामतिः ।।३६
सुस्थैर्यं भजते चित्तं सुखदुखेषु नित्यशः ।
क्लेशितं सर्वभावैश्च तेषु तेषु परित्यजेत् ।।३७
अथ लज्जां प्रवक्ष्यामि मनो याऽनिर्विशत्यलम् ।
मयाऽद्यैवं न कर्तव्यं नग्नः स्थानविवर्जितः ।।३८
पश्चात्तापे सुसलीनः सा लज्जापरिकथ्यते ।
कस्यलज्जा प्रकर्थव्या द्वितीयोनास्तिसर्वदा ।।३९
एकश्चपुरुषो दिव्य कस्यकिंचिन्ननाशयेत् ।
अथलोकान्प्रवक्ष्यामि ये त्वयापरिकीर्तिताः ।।४०
यथांकुलालकश्चक्रे मृत्पिण्डञ्च निधापयेत् ।
भ्रामयित्वा तु सूत्रेणनानाभेदान्प्रकाशयेत् ।
भाण्डानां तु सहस्राणि स्वेच्छया मतिसंस्थितः ।
तथायं सृजत धाता नानारूपाणि नान्यथा ।।४२

महामुनि कश्यपजी ने कहा—महती मति वाले और महान मनीषी वीतराग ने उस आत्मा से कहा—वीतराग बोला—नित्य ही सुख और दुःख में यह चित्त सुस्थों के द्वारा जिसका सेवन किया करता है और सर्वभावों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
से क्लेशित होता है उन—उनमें परित्याग कर देना चाहिए ।३६।३७। इसके अनन्तर में लज्जा के विषय में बतलाता हूँ जो कि मन में अच्छी तरह प्रवेश किया करती है । मुझे आज इस प्रकार से विवर्जित और नग्न होते हुए नहीं करना चाहिए । इस तरह पश्चात्ताप में सुसंलीन जो होता है-वही अवस्था लज्जा कही जाया करती है । यहाँ किसकी लज्जा करे क्योंकि यहां पर कोई दूसरा तो सर्वदा है ही नहीं ।३८-३९। एक ही दिव्य पुरुष है किसी का कुछ भी नाश नहीं करता है । इसके अनन्तर में लोकों के विषय में बतलाता हूँ जोकि आपने अभी कीर्तित किये थे ।४०। जिस तरह से कुम्हार अपने चक्र (चाक) में एक मिट्टी का लोथ रख देता है और फिर उसको घुमाकर सूत ने अनेक प्रकार के वर्तन बना दिया करता है ।४१। अपनी ही बुद्धि में स्थित होकर अपनी इच्छा से सहस्रों बरतनों का निर्माण किया करता है ठीक उसी भाँति धाता भी इन लोगों को सृजित किया करता है । इसीलिए इनके अनेक रूप दिखलाई देते हैं । अन्यथा कोई कारण नहीं है । मिट्टी एक ही प्रकार की है वैसे ही ये सब एक ही हैं ।४२।

पश्चाद्विनाशमायान्ति येन केनापि हेतुना ।
सर्वदेवस्थिता ये च ये लोकाश्च सनातनाः।।४३
तेषां लज्जा प्रकर्तव्या नावर्तन्ते हि ते भुवि ।
आकाशावायुतेजांसि पृथ्वी चापश्चपञ्जमः ४४
अमी लोकाः प्रकाशन्ते ये च सर्वत्रसंस्थिताः ।
सत्वानामङ्गदेशेषु पञ्चैतेषुसुसंस्थिताः ।।४५
सर्वत्रैवच वर्तन्ते कस्य लज्जा विधीयते ।
स्त्रीणां रूप प्रवक्ष्यामि श्रूयतां तातसाम्प्रतम् ।।४६
यथा घटसहस्रेषु सोदकेषु विराजते ।
एकश्चन्द्रो हि सर्वत्र भत्रांस्तद्वद्विराजते ।।४७
गते जन्तुसहस्रेषु मोह चक्रे महात्मवान् ।
स्थावरेषु स सर्वेषु जङ्गमेषु तथा भवान् ।।४८

पीछे जिस किसी हेतु से ये विनाश को प्राप्त हो जाते हैं । सर्वदेव में स्थित है और जो सनातन लोक हैं । उनकी लज्जा करनी चाहिए क्योंकि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस भू मण्डल में फिर आवर्तित नहीं होते हैं। आकाश —वायु—तेज—पृथ्वी और पाँचवा जल है ।४३-४४। ये लोक प्रकाशित होते हैं और ये सर्वत्र सस्थित होते हैं। जीवों के अंग — देशों में ये पाँच सुसस्थित रहते हैं ।४५। ये तो सर्वत्र ही रहा करते हैं फिर किसकी लज्जा की जाती है? अब मैं स्त्रियों के रूप के विषय में बतलाता हूँ हे तात! तुम इस समय में उसका श्रवण करो ।४६। जिस प्रकार से जल से भरे हुए सहस्रों घटों में एक ही चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब दिखलाई दिया करता है ठीक उसी की भाँति आप ही सर्वत्र विराजमान रहते हैं ।४७। स्थावर और जङ्गम सब सहस्रों जन्तुओं में महात्मवान् आपने मोह किया है ।४८।

भवान्कोहिसमायातो मम सन्तापनाशकः।
विस्तरेणसमन्ख्याहि स्वरूपमात्मनःस्वयम् ।।४९
यस्मात्कामा निवर्तन्ते निराशाः सव एव ते।
यं दुष्ट्वात्र पश्यन्ति कर्माण्येतानि नान्यथा ।।५०
यत्समीपं हि नायाति आशा चैव कदाचन।
क्र धोलाभस्तथा मोहो यद्भयात्प्रलयं गता ।।५१
वीतरागोऽस्मि भद्रं ते विवेको मम बान्धवः ।।५२
कीदृशोऽसौतव भ्राता विवेको नामनामतः।
तस्य त्वं लक्षणं ब्रूहि भ्रातुरात्मन एवच ।।५३
सुखेनस्थीयते देव भवता विश्वनायक।
आगतेत्वयि संसारे किं किं भुक्तं सुखस्वयम् ।।५४
गर्भवासो महद्दुःखमसह्यं दारुणं मया।
भुक्तमेव महाप्रज्ञ ज्ञानहोनेन वं सदा ।।५५
देहेऽपि ज्ञानविभ्रष्टः सोऽहं जातो ह्यनेकधा।
बाल्यावस्थां गतेनाथ कृत्याकृत्यं कृतं मया ।।५६

आत्मा ने कहा—आप कौन हैं जो यहाँ पर आये हुए हैं? आप तो मेरे इस वर्तमान सन्ताप के नाश करने वाल हैं। आप कृपा करके अपने स्वरूप को विस्तार पूर्वक स्वयं ही बतलाइये ।४९। आत्मा के प्रश्न को सुनकर वीतराग ने कहा—जिससे काम निवृत्त हो जाते हैं वे सब ही निराश

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होते हैं। जिसको दुष्टत्व होने से ये कर्म नहीं देखते हैं, अन्यथा नहीं है। ५०। जिसके समीप में आशा कभी भी नहीं आती है। क्रोध—लोभ और मोह जिसके भय से प्रलय को प्राप्त हो जाते हैं।५१। मैं तो वीतराग हूँ तुम्हारा कल्याण हो, मेरा बान्धव विवेक होता है।५२। आत्मा ने कहा—यह आपका भाई जिसका नाम विवेक है किस प्रकार का है ? आप उसका, अपने भाई का पूरा लक्षण बताइये और अपना भी लक्षण बताइये।५३। विवेक ने कहा—हे विश्वनायक ! हे देव ! आप सुख से स्थित होते हैं। आप अब यह बताइये आपके इस संसार में आ जाने पर आपने स्वयं क्या सुख भोगा है ? ।५४। आत्मा ने कहा—हे महाप्राज्ञ ! ज्ञान से हीन मैंने गर्भ का निवास किया था जिसमें असह्य और महान् दारुण दुःख मैंने सदा ही भोगा है ।५५। ज्ञान से विशेष रूप से भ्रष्ट मैं देह में भी अनेक प्रकार से समुत्पन्न हुआ हूँ। बाल्यावस्था को प्राप्त होने वाले मैंने कृत्य और अकृत्य सभी कुछ किये थे अर्थात् जो करने और न करने के योग्य कर्म थे वे भी मैंने किये थे।५६।

तारुण्येन कृता क्रीडा भुक्ता भार्या ह्यनेकशः।
वार्धकप्राप्यसंतप्त पुत्रशोकादिभिस्तथा।५७
भार्यादीनां वियोगैस्तु दग्धोऽस्म्यपमहर्निशम्।
दुखैरनेकसंवर्णैः संतप्तोऽस्मि दिनेदिने ।।५८
दिवारात्रौ महाप्राज्ञ न विन्दामि सुखं क्वचित्।
एवंदुःखैः सुसंतप्तः किं करोमिमहामते।५९
तमुपायं वदस्सैव सुखं विन्दामि येन वै।
अस्मात्ससारजालौघान्मोचयाद्य सुबन्धनात् ।।६०
भवाञ्छुद्धोऽसि निर्द्वन्द्वो ह्यपापोऽसिजगत्पते।
एनं गच्छ भवात्मानं वीतरागंसुखप्रदम् ।।६१
निःसंशयं त्वयादृष्टं नग्नमाचारवर्जितम्।
सुखप्रदर्शकोह्येय सर्वसन्तापनाशकः ।।६२
एवमकार्ण्य शुद्धात्मा वीतरागंगतः पुनः।
तमुवाच श्वसन्दीय। श्रूयतां वचन मम ।।६३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखंविन्दामि येनाहं तन्मार्गं मम दर्शय ।
एवमस्तु महाप्राज्ञ करिष्ये वचनं तव ।६४

जिस समय में मैं तरुण अवस्था में पहुँच गया तो मैंने अनेक प्रकार से भार्या के साथ क्रीड़ा की थी और खूब भोग किया था । जब में वृद्धता को प्राप्त हो गया तो मैं पुत्रादि के शोक से अत्यधिक संतप्त हो गया था बुढ़ापे में मुझे बहुत प्रकार का सन्ताप हुआ था ।५७। भार्या आदि का कभी-कभी वियोग भी हो जाता था तो मैं इस दुःख से अहर्निश दग्ध होता रहता हूँ । मैं दिन-प्रतिदिन इस तरह के अनेक स्वरूप वाले दुःखों से अत्यन्त सन्ताप वाला रहता हूँ ।५८। हे महाप्राज्ञ ! आप मेरे सुख भोगने के विषय में पूछते हैं, मुझे सुख तो है ही नहीं मैं तो दिन-रात में सुख कहीं भी प्राप्त नहीं करता हूँ । हे महान् मति वाले ! इस प्रकार से दुःखों से भली-भाँति संतप्त होने वाला मैं क्या करूँ ? ।५९। आप मुझे वही उपाय बताइये जिसके द्वारा मैं सुख की प्राप्ति कर सकूँ । आज अब आप अत्यन्त बन्धन से संवृत इस संसार के जाल के समूह से मेरा मोचन करा दीजिए ।६०। इस आत्मा के वचन को सुनकर विवेक ने कहा—हे जगत् के स्वामिन् ! आप तो परम शुद्ध स्वरूप वाले हैं, आप निर्द्वन्द हैं और आप पाप रहित हैं । अब आप यही करिये कि इस महान् आत्मा वाले, सुख के प्रदान करने वाले वीतराग के समीप में जाइये ।६१। इसमें कुछ भी संशय नहीं है आपने इसको बिल्कुल नग्न और आचार से रहित देखा है किन्तु यह सुखों को प्रदर्शित करने वाला है तथा समस्त प्रकार के सन्तापों के नाश करने वाला है ।६२। इस तरह के विवेक के कहे हुए वचन को सुनकर वह शुद्धात्मा पुनः वीतराग के समीप में गया था और वह अत्यन्त दीन होकर श्वासें छोड़ता हुआ उससे बोला था कि मेरे वचनों को आप श्रवण कीजिए । मैं जिस मार्ग के द्वारा सुख की प्राप्ति कर सकूँ वही मार्ग आप मुझे दिखला दीजिये ऐसा ही होगा—हे महाप्राज्ञ ! मैं आपका वचन करूँगा -यह उसने उसको उत्तर दिया था ।६४।

पुनर्गच्छ विवेकं हि सुखावार्ता कृतात्वया ।
सुखमार्गस्य वक्ता तवचैष भविष्यति ।।६५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीतरागेण पुण्येन प्रेषितो गतवान्प्रभुः ।
तमुवाच महात्मानं विवेक शुद्धसत्तमम् ॥६६

सुखं मेदर्शय त्वं हि वीतरागेण प्रेषिता ।
भवच्छरणमापन्नोरक्ष संसारदारुणात् ॥६७

ज्ञानं गच्छ महाप्राज्ञ स ते सर्वं वदिष्यति ।
आत्मा तथोक्तः सम्प्राग्नोयत्रज्ञानप्रतिष्ठितम् ॥६८
भोभोज्ञान महातेजः सर्वंभावप्रदर्शक ।
शरणं त्वामहं प्राप्तः सुखमार्गं प्रदर्शय: ॥६९

आप फिर विवेक के पास जाइये । आपने सुख की वार्त्ता की थी । आपको सुख की विधि का मार्ग बतलाने वाला यह ही होगा ।६५। परम पुण्यमय वीतराग के द्वारा प्रेषित वह प्रभु आत्मा विवेक के समीप में गया था और शुद्धोंमें परम श्रेष्ठ उस महात्मा विवेक से बोला।६६।मुझे आपके पास में वीतराग ने ही भेजा है अतएव आप ही मुझे सुख का मार्ग दिखलाइये । मैं आपको शरण गति में उपस्थित हो गया हूँ । अब आप मेरी इस दारुण संसारसे रक्षा कीजिए।६७।यह सुनकर विवेक ने कहा - हे महाभाग! आप ज्ञानके समीपमें जाइये । वह सभी कुछ आपको बतला देगा । इस तरह से कहे जाने पर वह आत्मा वहाँ पर जाकर पहुँचा था जहाँ पर ज्ञान प्रतिष्ठित था ।६८। आत्मा ने ज्ञान से निवेदन किया था—हे ज्ञान ! आप महान् तेजसे समन्वित हैं और सब भावोंका प्रदर्शन करने वाले हैं । मैं इस समय मैं आपकी शरणागति में आया हूँ मुझे आप सुख का मार्ग कृपाकर दिखला दीजिये ।६९।

भृत्योऽहंतवलोकेश त्वं मां वेत्सि न सुव्रत ।
मयाध्यायेन वै पूर्वं वारितस्त्वं पुनः पुनः ॥७०
पश्चात्मकानां तङ्गेन आपदं प्राप्तवान्भवान् ।
ध्यानं गच्छ महाप्राज्ञ सतेदातासुखस्यच ॥७१
ज्ञानेन प्रेषितो ह्यात्मा ध्यानमाश्रित्य संस्थितः ।
सुखमत्यन्तसिद्धं च ध्यानमेदर्शयस्यवह ॥७२
भवच्छरणमायात मामेव परिरक्षय ।
एवं सम्भाषित तस्य ध्यानमाकर्ण्य तद्वचः ॥७३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुवाच पुनश्चापि तमात्मानं प्रहृष्टवान् ।
नैव त्याज्योऽस्म्यहं तात सर्वकर्मसुनिश्चितः ॥७४
त्वयैव वीतरागेणं विवेकेन सदैव हि ।
ध्यानयुक्तो भवस्वत्वमात्मानमवलोकय ॥७५
आत्मवांस्त्वंस्थिरोभूत्वानिरातङ्कोविकल्पतः ।
यथादीपोनिवातस्थःकज्जलवमनेस्थिरः ॥७६
तथादोषान्प्रज्वलिता निर्वाणं हि प्रायास्यति ।
एकान्तस्थोनिराहारोमिताशीभवसर्वदा ॥७७
निर्द्वन्द्वः शब्दसहोनोनिश्चलोह्यासनेस्थितः ।
आत्मानमात्मनाध्यायत्ममवस्थिर बुद्धिना ।
प्राप्स्यसे परम स्थान तद्विष्णोः परम पदम् ॥७८

आत्मा के इस विनम्र आवेदन को श्रवण कर ज्ञान ने कहा-हे लोकों के ईश ! मैं तो आपका एक भृत्य हूँ। हे सुन्दर व्रतों वाले ! आप मुझको नहीं जानते हैं। मैंने और ध्यान ने आपको बारम्बार निवारित किया था ।७०। इन पञ्चात्मकों की सङ्गति से ही आप इस विपत्ति को प्राप्त हो गये हैं। हे महाप्राज्ञ ! आप ध्यानके समीप में जाइये। वही आपको सुख का देने वाला है ।७१। ज्ञान के द्वारा प्रेषित किया हुआ वह आत्मा ध्यान का आश्रय ग्रहण करके संस्थित होगया था और उसने ध्यान से कहा - हे ध्यान ! मुझे आप अत्यन्त सिद्ध सुख का दर्शन करा दीजिए ।७२। मैं आपकी शरण में आया हूं, अब आप ही मेरी रक्षा कीजिए। इस प्रकारके उस आत्मा के कथित वचन को ध्यान ने श्रवण किया था ।७३। फिर अत्यन्त हर्षसे युक्त होकर पुनः उस आत्मा से कहा था कि हे तात ! अब आप मुझको कभी भी न त्याग देवें क्योंकि मैं सर्व कर्मों से सुनिश्चित हूँ। ।७४। आप ही वीतराग और विवेक के द्वारा सदा ही ध्यान से युक्त होवें और स्वत्व अपने आपका अवलोकन करें।७५। आप आत्मवान् स्थिर होवें और विकल्प से निरातङ्क हो जावें जिस तरह निर्वात स्थानमें रखा हुआ दीपक स्थिर होकर कज्जल का वमन किया करता है ।७६। उसी प्रकारसे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप भी अपने समस्त दोषों को भस्मीभूत करके निर्वाण पद को प्राप्त करेंगे। सर्वदा आप एकान्त मे स्थित रहें—बिना कुछ आहार ग्रहण किये ही स्थिर रहें। यदि भोजन ही करें तो बहुत ही मित अशन ग्रहण करें, सर्वदा इसी रीतिसे ध्यान मग्न रहें।७७। द्वन्द्वों से रहित—बिना कुछ भी मुख से शब्दोच्चारण किये अर्थात् मौन व्रत धारण कर—निश्चल होकर आसन पर स्थित रहें। अपनी आत्मा से ही आत्मा का ध्यान करते हुए स्थिर बुद्धि से मेरा ही आश्रय लेवें। इसका यह परिणाम होगाकि अन्तमें भगवान् विष्णु के परम पद सर्वोत्तम स्थान को आप प्राप्त कर लेंगे।७८।

॥ आत्मा के स्वरूप का वर्णन ॥

एव संबोधितस्तत्र आत्मा ध्यानादिकैस्तदा।
त्यक्तुकामः स तत्कार्यं पश्चात्मकं स बुद्धिमान् ॥१
निमित्तान्येव पश्यन्वैप्राप्य तांस्तन्प्रयातिसः।
विहाय कायनिर्लक्ष्यं पतितंनैव पश्यति ॥२
सहवर्द्धितयोर्नास्ति सम्बन्धः प्राणदेहयोः।
धनपुत्रकलत्रैश्च सम्बन्धः केन हेतुना ॥३
एवं ज्ञात्वा शमं गच्छ क्लैब्य भज सुप्रिये।
अयमेव परं ब्रह्म अयमेव सनातनः ॥४
अयमात्मस्वरूपेण दैत्यदेवेषु संस्थितः।
अयं ब्रह्मा ह्ययं रुद्रोह्ययं विष्णुः सनातनः ॥५
अयं सृजतिविश्वानि अयं पालयते प्रजाः।
सहरत्येष धर्मात्मा धर्मरूपी जनार्दनः ॥६
अनेनोत्पादिता देवा दानवाश्चैव सुप्रिये।
देवाश्चाधर्मनिर्मुक्ता धर्महीनाः सुतास्तव ॥७

महर्षि कश्यप ने कहा—वहाँ पर इस प्रकार से ध्यान आदि के द्वारा भली-भाँति ज्ञान प्राप्त कराये जाने वाले उस आत्मा ने उस समय में परम बुद्धिमत्ता से उन पञ्चात्मकों का त्याग करने की इच्छा की थी और वही करना योग्य समझा था।१। वह निमित्तों को ही देखता हुआ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन-उनको प्राप्त कर त्याग करता है। कामा को लक्ष्य हीन छोड़कर पतित को नहीं देखता है।२। सहवर्द्धित प्राण और देह का सम्बन्ध नहीं है। जब प्राणों और देह का ही कोई सम्बन्ध नहीं है तो फिर धन-पुत्र और कलत्र आदि से किस हेतु से सम्बन्ध हो सकता है।३। हे सुप्रिये ! इस प्रकार से समझकर शम को प्राप्त होओ और क्लीवता को धारण मत करो। यह ही परम ब्रह्म है और यह ही सनातन है।४। यह ही आत्मा के स्वरूप से दैत्य और देवों में सस्थिति किया करता है। यह ही ब्रह्मा—रुद्र और सर्वदा से चले आने वाला सनातन विष्णु है।५। यह ही समस्त विश्वों तथा प्रजाओं का सृजन किया करता है और यह ही उन प्रजाजनोंका पालन-पोषण करती है। यह ही धर्मके रूप वाला परम धर्मात्मा भगवान् जनर्दन सबका संहार किया करता है।६। हे सुप्रिये ! इसने ही सब देवता और दानव उत्पादित किये हैं। देवताओं को और धर्म से निर्मुक्त धर्महीन तुम्हारे पुत्रों को भी इसी ने समुत्पन्न किया है।७

धर्मोऽयं माधवस्याङ्गं सर्वदेवैश्च पालितम् ।
धर्मं च चिन्तयेद्देवि धर्मं चैव तु पालयेत् ।।८
तस्य विष्णुः स धर्मात्मा सर्वदेव प्रसादवान् ।
धर्मेण वर्तिता देवाः सत्येनतपसाकिल ।।९
येषां विष्णु प्रसन्नो वै धर्मस्तैरिह पालितः ।
विष्णोः क यमिद धर्मं सत्य हृदयमेत्र च ।।१०
यस्तौ पालयते नित्य तस्य विष्णुः प्रसीदति ।
दूषयेद्यः सत्यधर्मौ पापमेव प्रपालयेत् ।।११
तस्य विष्णुः प्रकुप्येत नाशयेदति वीर्यवान् ।
वैष्णवैः पालितं धर्मं तपःसत्येनसंस्थितैः ।।१२
तेषां प्रसन्नो धर्मात्मा रक्षामेव करोति च ।
तव पुत्रा दनोः पुत्राः सैंहिकेयास्तथैव च ।।१३
अधर्मेणापि पापेन वर्त्तिताः पापचेतसः ।
सूदिता वासुदेवेन समरे चक्रपाणिना ।।१४

यह धर्म है और समस्त देवगण के द्वारा पालित माधव का अङ्ग है। हे देवि ! सर्वदा धर्म का ही चिन्तन करना चाहिए और धर्म का ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालन करना चाहिए।८। उसके लिए धर्मात्मा वह भगवान् विष्णु सर्वदा ही प्रसाद वाले होते हैं। धर्म से ही देवगण वर्त्तित होते हैं - सत्यसे और तप से वे वर्त्तित हुआ करते हैं।९। जिनके ऊपर भगवान् विष्णु परम प्रसन्न होते हैं उन्होंने पूर्ण रूप से धर्म का पालन कर लिया है। भगवान् विष्णु का यह धर्म काया है और सत्य ही हृदय है।१०। जो इन दोनों धर्म और सत्य का पालन किया करता है उसके ऊपर भगवान् विष्णु परम प्रसन्न हो जाते हैं। जो इन धर्म और सत्य को दूषित किया करते हैं वे केवल पाप ही को पालते हैं।११। इनको दूषित करने वाले पर भगवान् विष्णु प्रतुपित होते हैं और अति वीर्य वाले विष्णु उनका नाश कर देते हैं। तप और सत्य से संस्थित वैष्णवों के द्वारा धर्म पालित होता है।१२। उन वैष्णवों पर भगवान् परम प्रसन्न होते हैं क्योंकि उनका स्वरूप ही धर्म का है फिर वे उनकी पूर्ण रक्षा भी किया करते हैं तुम्हारे पुत्र—दनुके पुत्र और सैंहिकेय ये सब पाप के चित्त वाले अधर्म से और पाप से वर्त्तित होते हैं। और चक्रपाणि भगवान् वासुदेव ने समर में इनको सूदित किया था।१३-१४।

योऽसावात्मा मया प्रोक्तः पूर्वमेव तवाग्रतः।
सोऽयंविष्णुर्नसन्देहोभधर्मात्मासर्वपालकः ।।१५
दैत्यकायेषु यः स्वस्थः पापमेव समास्थितः।
जघ्निवान्दानवान्देवि सच क्रुद्धोमहामतिः ।।१६
सवाह्याभ्यन्तरे भूत्वा तव पुत्रा निपातिताः।
येन चोत्पादिता देवितेनैवत्रिनिपातिताः। १७
नेषां मोहस्तु कत्तव्यो भवत्या वचनं शृणु।
पापेन वर्तते योऽसौ स एव निधनं व्रजेत् ।।१८
तस्मान्मोहं परित्यज्य सदा धर्मं समाश्रय ।।१९
एवमस्तु महाभाग करिष्ये वचनं तव।
कश्यपं च मुनिश्रेष्ठमेवमाभाष्य दुःखिता ।।२०
बोधिता सा मुनिना दुःखं सन्त्यज्य संस्थिता ।।२१

जो यह आत्मा मैंने पहिले ही आपके सामने कहा था यह भगवान् विष्णु हैं जो परम धर्मात्मा और सबके पालक हैं - इसमें कुछ भी संदेह नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ।१५। दैत्योंके शरीरोंमें जो स्वस्थ रूपसे समास्थित है वह पाप ही है । हे देवि ! उस महान् मति वालेनें क्रुद्ध होकर दानवों को मारा था ।१६। उसने ही वाहर और भीतर होकर तुम्हारे पुत्रोंका निपातिन किया है। हे देवि ! जिसने उनका उत्पादन किया था उसी ने उनका विशेष रूप से निपातन भी किया है । अर्थात् उत्पन्न करने तथा वध करने वाला वह एक ही है दूसरा कोई भी नहीं है ।१७। अब आपको मेरा वचन श्रवण करना चाहिए और इनका अत्यधिक मोह नहीं करना ही उचित है । जो वहाँ पर पापसे वर्त्तित हुआ करता हैं वह ही निधन (मृत्यु)को प्राप्त होता है ।१८। इस कारण से अब मोह का बिल्कुल त्याग करके केवल धर्म का ही समाश्रवण करना चाहिए ।१९। दितिने जो कि महर्षि की एक पत्नी थी कहा था अब ऐसा ही होगा—अर्थात् मैं ऐसा ही करूँगी । हे महान् भाग्य वाले स्वामिन् ! मैं आपके वचनों का पूर्णतया पालन करूँगी । इस प्रकार से मुनियोंमें परम श्रेष्ठ कश्यपसे कहकर अत्यन्त मनमें दुःखित हुई थी ।२०। फिर मुनिवर ने उसे भली-भाँति समझाया था तो वह उस दुःख का त्याग करके संस्थित हुई थी ।२१।

॥ ब्रह्मचर्य लक्षण ॥

नित्यं सत्येरतिर्यस्य पुण्यात्मा तुष्टतां ब्रजेत् ॥१
ऋतौ प्राप्ते ब्रजेन्नारीं स्त्रीयां दोषविवर्जितः ॥२
स्वकुलस्य सदाचारं कदानैव विमुञ्चति ।
एतदेव समाख्यातं गृहस्थस्य द्विजोत्तम ॥३
ब्रह्मचर्यं मयाप्रोक्तं गृहिणामुत्तम किल ।
यतीनां तु प्रवक्ष्यामि तन्मया गदितं शृणु ॥४
दमसत्यसमायुक्त पापाद्भीतस्तु सर्वदा ।
भार्यासङ्गं वर्जयित्वा ध्यानज्ञानप्रतिष्ठितः ॥५
यतीनां ब्रह्मचर्यं च समाख्यातं तवाग्रतः ।
तप एन प्रवक्ष्यामि तन्मे निगदतः शृणु ॥६
आचारेण प्रवर्तंत कामक्रोधविवर्जितः ।
प्राणिनामुपकाराय संस्थित उद्यमावृतः ॥७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोम शर्मा ने कहा—ब्रह्मचर्य का क्या लक्षण होता है इसे मेरे सामने आप विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए। हे स्वामिन ! ब्रह्मचर्य कैसा होता है—यह यदि आप जानते हैं तो बतलाइये ।१। सुमना ने कहा—जिसकी नित्य ही सत्य में रति होती है वह परम पुण्यात्मा पुरुष होता है और पूर्ण तुष्टता को प्राप्त हुआ करता है। जिस समय में नारी ऋतुमती हो उसी समय में उसका अभिगमन करे और स्त्रीमें दोषसे विवर्जित होकर ही भोग करना चाहिए ।२। अपने कुल का जो सदा से परम्परागत सदाचार हो उसका कभी भी समयमें त्याग नहीं करना चाहिए। हे द्विजोत्तम! गार्हस्थ्य आश्रम में रहने वाले पुरुष का यही धम कहा गया है ।३। मैंने ब्रह्मचर्य को गृही पुरुषों का उत्तम धर्म बतलाया है। अब यती लोगों का जो धर्म है उसे बतलाया जाता है—उसका श्रवण करो ।४। दम और सत्य से समायुक्त होकर सर्वदा पापों से भयभीत रहे और भार्या के सङ्ग का त्याग करके ध्यान और ज्ञानमें प्रतिष्ठित रहे ।५। यतिगण का ब्रह्मचर्य तो मैंने तुम्हारे सामने बतला दिया है। अब मैं उनके तपका ही वर्णन करता हूँ उसे सुनो जिसको कि मैं कह रहा हूं ।६। सर्वदा आचारसे ही प्रवृत्त रहना चाहिए और काम तथा क्रोधसे सर्वदा दूर रहे। सदा समस्त प्राणियों के उपचार के लिए ही उद्यमशील होकर उसे संस्थित रहना चाहिए ।७।

तपएवं समाख्यात सत्यमेव वदाम्यहम् ।
परद्रव्येष्वलोलूप्त्वं परस्त्रीषु तथैव च ।।८
दृष्ट्वा मतिर्नयस्य स्यात्ससत्यः परिकीर्तितः ।
दानमेव प्रवक्ष्यामि येनजीवन्तिमानवाः ।।९
आत्मसौख्यं प्रतीच्छेद्यः स इहैव परत्र वा ।
अन्नस्यापि महादानं सुखस्यैव ध्रुवस्य वा ।।१०
ग्रासमात्रं तथादेय क्षुधार्ताय न संशयः ।
दत्ते सति महत्पुण्यममृतं सोऽश्नुते सदा ।।११
दिनेदिने प्रदातव्यं यथाविभव सम्भवम् ।
तृण शय्यां च वचनं गृहच्छायां सुशीतलाम् ।।१२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिमपस्तथा चान्नं प्रियवाक्यमनुत्तमम् ।
आसनं वचनालाप कौटिल्येन विवर्जितम् । १३
आत्मनो जीवनार्थाय नित्यमेव करोति यः ।
देवान्पितॄन्समभ्यर्च्य एवदानं ददाति यः ।। १४

इस रीति से तप कहा गया है । मैं इस प्रकार से बिल्कुल सत्य ही बतला रहा हूँ । पराये धन में लोलुपता न करे—और पराई स्त्रियोंमें कभी अपना मन न लगावे।८। पराया घन और पराई स्त्रीको देखकर भी जिसकी कभी बुद्धि उस ओर नहीं जाती है वह ही सत्य कहा गया है । मैं दानके विषय में बतलाता हूँ जिसके प्रभाव से मनुष्य जीवित रहा करतेहैं।९। जो पुरुष आत्मा का सुख प्रदान करता है वह इस लोक में भी होता है और परलोक मी हुआ करता है । ध्रुव (अटल) सुख का साधन और महादान अन्नका भी होता है।१०। जो भूखसे पीड़ित प्राणी है उसे चाहे केवल एक ही ग्रासके लिए अन्न का दान करे परन्तु करना अवश्य ही चाहिए । इसमें तनिक भी संशय नहीं है कि ऐसा अन्नका दान देने पर महान् पुण्य होता है और इस प्रकार के अन्नदान के प्रभाव से सदा अमृत का उपभोग किया करता है।११।जैसा भी अपने पास वैभव हो उसी के अनुसार ऐसा अन्न का दान जो कि भूखेकी प्रखर पीड़ाको शाँति दे दिन-प्रतिदिन अवश्य करना चाहिए जो भी सम्भव हो सके तृण-शय्या-वचन-गृहछाया जो कि सुशीतल हो-भूमि-जल तथा अन्न और परमोत्तम प्रिय वचन-आसन-वचनालाप जो कि कुटिलता से रहित हो इनका दान आत्मा के जीवन के लिये जो नित्य ही किया करता है । देवगण और पितृगणका समर्चन करके जो इस प्रकार का दान करता है उसको परम मुख होता है ।१२-१४।

इहैव मदितेऽसौ वै परत्र हि तथैव च ।
अवन्ध्य दिवसं यो वै दानाध्ययनकर्मभिः ।।१५
प्रकुर्यान्मानुषोभूत्वा सदेवो नात्रसंशयः ।
नियमं च प्रवक्ष्यामि धर्मसाधनमुत्तमम् ।।१६
देवानां ब्राह्मणानां च पूजास्वभिरतो हियः ।
नित्यं नियमसंयुक्तो दानव्रतेषु सुव्रत ।।१७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

उपकारेषु पुण्येषु नियमोऽयं प्रकीर्तितः ।
क्षमारूपं प्रवक्ष्यामि श्रूयतां द्विजसत्तमः ॥१८
पराक्रोशहिसंश्रुत्य नाडितेसतिकेनचित् ।
क्रोधं न चैव गच्छेत्तु ताडितो न हि ताडयेत् ॥ १९
सहिष्णुःस्यात्सधर्मात्मा न हि रागंप्रयातिच ।
समश्नाति परसौख्यमिह चामुत्रवापि च ॥२०
एवंक्षमा समाख्याता शौचमेव वदाम्यहम् ।
सबाह्याभ्यन्तरे यो वै शुद्धो रागविवर्जितः ॥२१

इस प्रकार के दानों के देने वाला दाता पुरुष यहाँ पर ही संसार में परम आनन्द की प्राप्ति किया करता है और फिर परलोक में भी वह अत्यन्त सुखानन्द से सुसम्पन्न होता है। जो पुरुष प्रत्येक दिन को दान—अध्ययन और सत्कर्म इनसे अवन्ध्य रखता है अर्थात् इसके किए बिना किसी भी दिन को नहीं जाने देता हैं वह देखनेमें तो अवश्य मनुष्य स्वरूप वाला होता है किन्तु वह साक्षात् देवता ही होता हैइसमें कुछ भी संशय नहीं है। अब हम निगम के विषय में बतलाते हैं जो धर्म का अत्युत्तम साधन होता है।१५-१६। हे सुन्दर व्रतों के करने वाले ! जो पुरुष सर्वदा देवगण और ब्राह्मणों की यजनार्चा में अभिरति रखता है और नित्य प्रति दान एवं व्रतोंमें नियम पूर्वक संयुक्त रहा करता है वह महान् पुण्यात्मा है।१७दूसरों की भलाई हर प्रकारसे करनेमें और पुण्योंमें यह ही नियम बतलाया गया है। हे द्विजों में परम श्रेष्ठ ! अब मैं क्षमा के स्वरूपको बतलाता हूँ उसे सुनो।१८। दूसरे के द्वारा बुराई को सुनकर भी अर्थात् जो कोई भी अन्य पुरुष बुरे-से भी बुरे शब्द कह देवे या निन्दा करे तो उसे सुनकर भी एवं कोई ताड़ना भी करदे तो दूसरेके द्वारा प्रताड़ित होने पर भी कभी क्रोध नहीं करना चाहिए और ताड़ित होकर अर्थात् पिटकर फिर स्वय भी उसे पीटना चाहिए।१९ वह पुरुष पूर्णरूपसे सहिष्णु है, वह परम धार्मिक है और वह कभी भी राग की प्राप्ति नहीं किया करता है। ऐसा महापुरुष अति क्षमाशील होतो है वह इस लोकमें और परलोक में भी दोनों जगह परम

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखोंके उपभोग करने वाला होता है ।२०। क्षमा इसी प्रकार की बतलाई गई है । अब हम शौचके विषयमें बतलाते हैं । जो राग से रहित होता है वही बाहर और भीतर दोनों प्रकार से परम शुद्ध होता है ।२१।

स्नानाचमनकैरेव व्यवहारेण वर्तते ।
शौचमेव समाख्यातमहिंसां तु वदाम्यहम् ।।२२
तृणमपि विनाकाय छेत्तव्यं न विजानता ।
अहिंसानिरतो भूयाद्यथात्मनि तथापरे ।।२३
शान्तिमेव प्रवक्ष्यामि शान्त्या सुखसमश्नुते ।
शान्तिरेव प्रकर्तव्या क्लेशान्नैव परित्यजेत् ।।२४
भूयवैरं विसृज्यंव मनएवं प्रकारयेत् ।
एवंशान्ति समाख्याता अस्तेयं तु वदाम्यहम् ।।२५
परस्वंनैव हर्तव्यं पराजाया तथैव च ।
मनोभिर्वचनैः कायैर्मन एवं प्रकारयेत् ।।२६
दममेव प्रक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम ।
दमनादिन्द्रियाणां वै मनसोऽपि विकारिणः ।।२७
औद्धत्यं नाशयेत्तेषां सचैतन्योवशी तदा ।
शुश्रूषां तु प्रवक्ष्यामि धर्मशास्त्रेषु यादृशी ।।२८

आंतरिक मनकी शुद्धि का अधिक महत्त्व है वस्तुतः यही शुद्धि प्रमुख है । ऊपर की शरीर-वस्त्र और आवास की शुद्धि को ही आमतौरसे लोग किया करते हैं और इसी को सब कुछ मान बैठते हैं असली आन्तरिक शुद्धि ऐसे लोगों में होती ही नहीं है जोकि परम प्रधान और अत्यावश्यक है । इस तरह शौच बतला दिया है । इसके उपरान्त हम अब अहिंसा के विषय में वर्णन करते हैं ।२२। एक तृण का भी जो कि तुच्छातितुच्छ है, छेदन बिना किसी कार्य के कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि तृण में भी सूक्ष्म वेदना अवश्य ही होती है और वही एक प्रकार की हिंसा ही है । मानव को सदा अहिंसा में निरत रहना ही चाहिए । जिस प्रकार से अपने मनमें पीड़ा होती है वैसे ही दूसरे को भी पीड़ा का अनुभव होता है-ऐसा विचार रखना चाहिए ।२३। अब शान्ति के विषय में बतलाया जाता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्ति भी एक परम अद्भुत सुख का साधन होता है। इससे सुख की प्राप्ति होती है।२४। प्राणियों में किसी से भी बैर की भावना न रक्खे— इसी प्रकारका अपना मन बना लेना चाहिए कि सर्वजन प्रियता उसमें स्थिर होकर बैठ जावे। इसी रीति से शान्ति का समाख्यान कर दिया है। अब अस्तेय (चोरी न करना)के विषय में बतलाया जाता है।२५। पराया धन कभी भी न हरण करना चाहिए। चाहे बलात् उसका हरण हो या छिपकर हो अथवा स्वतः भूल से पड़ा हुआ ही क्यों न हो, जो अपना नहीं है वह पराया है उसे कभी ग्रहण न करे। जिस तरह से पराया धन अस्वीकृत होनेकी वस्तु है वैसे ही पराई स्त्री भी एक प्रकार का धन है उसका भी ग्रहण किसी भाँति भी नहीं करना चाहिए। मन-वचन और शारीरिक कर्म से इस तरह पराये धनसे सदा दूर ही रहना चाहिए। यही अस्तेय है जिसकी बहुत बड़ी महिमा है और धर्म का एक अंग है।२६। हे द्विज श्रेष्ठ! अब हम दमकी व्याख्या करते हैं कि दम क्या होता है। दमनको ही दम कहा जाता है। इन्द्रियाँ जो अपने-अपने विषयोंके भोगने की ओर अहर्निश भागती रहा करती हैं उन पर पूरा काबू कर उन्हें दबाना ही दम है। यह मन भी बहुत विकारों से भरा रहता है। दुर्बल मन वाला कभी दमन नहीं कर सकता है। अतः मनको भी दबाकर अपने वश में करना चाहिए। इन्द्रियों और मन की जो उद्धतता है इसका चैतन्यात्मा को नाश कर देना चाहिए और सर्वदा इनसे सतर्क रहे और वश में रक्खे यही दमन होता है। अब हम शुश्रूषाको बताते हैं जिसको धर्मशास्त्रों में जिस तरह की बताया गया है।२७-२८।

पूर्वाचार्यैर्यथाप्रोक्ता तामेवं प्रवदाम्यहम्।
वाचा देहेन मनसा गुरुकार्यं प्रसाधयेत् ॥२९
जायतेऽनुग्रहो यत्र शुश्रूषा सानिगद्यते।
साङ्गोधर्मः समाख्यातस्तवाग्रे द्विजसत्तम ॥३०
अन्यच्च ते प्रवक्ष्यामि श्रोतुमिच्छसि यत्यने।
ईदृशे चापि धर्मेतु वर्तते यो नरः सदा ॥३१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसारे तस्य सम्भूतिः पुनरेव न जायते ।
स्वर्गं गच्छति धर्मेण सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।।३२
एवंज्ञात्वा महाप्राज्ञ धर्ममेव व्रजस्व हि ।
सर्वं हि प्राप्यते कान्त यदसाध्यं महीतले ।।३३

पूर्व में होने वाले आचार्यों ने इसको जिस रीति की वमलाई है वही हम बतलाते हैं । मन-वचन और शरीर से गुरुजनके कार्य का सम्पादन करना चाहिए । मन में भी सेवा की भावना अति सत्य एवं सुदृढ़ होनी चाहिए।२९।जिस शुश्रूषामें अनुग्रह हो जावे वही वास्तविक शुश्रूषा कही जाती है अर्थात् ऐसी शुश्रूषा हो कि गुरुजन का हृदय उसे पाकर कृपा करनेके लिये विवश हो जावें और अनुग्रह किये बिना रह ही न सकें। हे द्विज सत्तम ! मैंने समस्त अंगोंसे सुसम्पन्न धर्म आपको सक्षेपमें बतला दिया है ।३०। और अब कुछ और भी बतलाता हूँ जो भी कुछ आप मुझसे श्रवण करना चाहते हैं। इस प्रकार के धर्ममें जो मनुष्य सर्वदा वर्त्तमान रहता है उस पुरुषका इस संसारमें पुनः उत्पत्ति कभी नहीं होती है अर्थात् वह जन्म-मरण स्वरूप आवागमन से पूर्णतया छुटकारा पा जाता हैं । वह पुरुष तो सीधा स्वर्गलोक का निवास प्राप्त करता है—यह मैं पूरा सत्य-सत्य तुम्हें बतला रहा हूँ । अतएव सबका निष्कर्ष सारभूत यही है कि यह समझकर हे महाप्राज्ञ ! केवल एकमात्र धर्म का ही समाश्रय ग्रहण करो । यह एक उत्तम साधन है कि इससे जो भी कुछ भूमण्डलमें असाध्य है वह सभी इससे प्राप्त किया जाता है ।३१-३३।

।। पापियों के मरण लक्षण ।।

पापिनांमरणं भद्रे कीदृशैर्लक्षणैयुतम् ।
तन्मेत्व विस्तराद् ब्रूहि यदिजाना समामिनि ।।१
श्रूयतामभिधास्यामि तस्मात्सिद्धाच्छ्रुतं मया ।
पापिनां मरणे कान्त यादृशं लिङ्गमेवच ।।२
महापातकिनांचैव स्थानं चेष्टांवदाम्यहम् ।
विण्मूत्रामेध्यसंयुक्तां भूमिपापसमन्विताम् ।।३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सतां प्राप्य सुदुष्टात्मा प्राणान्दुखेन मुञ्चति ।
चाण्डालभूमिं सम्प्राप्य मरण याति दुःस्थितः ॥४
गर्दभाचरितां भूमि त्वेश्यागेह समाश्रितः ।
चर्मकारगृह गत्वा निधनायोपगच्छति ॥५
अस्थिचर्मनखै पूर्णमाश्रितंपापकिल्विषैः ।
तांप्राप्यच स दुष्टात्मामृत्यु यातिसुनिश्चितम् ॥६
अन्यांपापसमाचारांप्राप्य मृत्यु सगच्छति ।
अथचेष्टां प्रवक्ष्यामि दूतानांतुतमिच्छताम् ॥७

सोम शर्मा ने कहा—हे भद्रे ! पाप करने वाले मानवों का मरण किस प्रकार के लक्षणों से युक्त होता है। हे भामिनी ! यदि आप जानती है तो उन्हें हमको विस्तार पूर्वक बतलाइये ।१। सुमना ने कहा-आप लोग श्रवण करें मैंने सिद्ध से सुना है । हे कान्त ! पापियों की मृत्यु जिस तरह की होती है और जैसा भी उसमें लक्षण होता है ।२। मैं महान् पातकों के करने वालोंका जो स्थान और जैसी उनकी चेष्टा होती है उसे भी बतलाता हूँ । मल-मूत्र आदि अमेध्य (अपवित्र) पदार्थों से संयुत और पाप से युक्त भूमि हो उसका निवास स्थान होता है।३।वह दुष्ट आत्मा वाला ऐसी भूमि को प्राप्त कर बहुत ही अधिक दुःखसे अपने प्राणों का त्याग किया करता है। बुरी स्थिति में संस्थित होने वाला वह चाण्डाल भूमि को प्राप्त कर मरण को प्राप्त होता है।४।जिस भूमि पर गधे विचरण किया करते हैं उस भूमि में-वेश्या के घर में समाश्रित होता हुआ अथवा चमड़ेके काम करने वाले चमार के घरमें जाकर ही पापी पुरुष निधन (मृत्यु) को प्राप्त होता है ।५। हड्डी-चमड़ा-नाखूनोंसे परिपूर्ण पाप और किल्विषोंसे समाश्रित जो भूमि होती है उसीं का आश्रम ग्रहण करके वह दुष्ट आत्मा वाला पापी मनुष्य निश्चित रूपसे मृत्युको प्राप्त हुआ करता है।६।इसी तरह की दूसरीं भी जो पापोंसे और महान् दूषित पदार्थों से समाचरित भूमि होती है उसी में पहुँचकर पापी की मौत हुआ करती है । अब मैं उस महान् दुष्ट पापी पुरुष की चेष्टा के विषय में वर्णन करता हूं जबकि यम के दूत उसे लेनेके लिए इच्छा रखकर आया करते है ।७।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरवान्दारुणान्घोरानतिकृष्णान्महोदरान् ।
पिङ्गाक्षान्पीतनीलांश्च अतिश्वेतान्महोदरान् ॥८
अत्युच्चान्विकरालांश्चशुष्कमांसर्पवंसोपमान् ।
रौद्रदष्ट्रान्करालांश्चर्सिहास्थान्सर्पहस्तकान् । ९
स तान्दृष्ट्वा प्रकम्पेत खिद्यते च मुहुर्मुहुः ।
शिवासनादवद्घोरान्मद्वारावान्महामते ॥१०
मुर्च्छन्तिदूतकाः सर्वकर्णमूले तु तस्य हि ।
गलेपाशैः प्रवद्ध्वा ते कटिं बद्ध्वातथोदरे ॥११
समाघृष्य निपात्यत हाहेति वदते मुहुः ।
म्रियमाणस्य या चेष्टा तामेवं प्रवदाम्यहम् ॥१२
परद्रव्यापहरणं परभार्याविडम्बनम् ।
ऋणं परस्य सर्वस्व गृहीतं यत्तु पापिभिः ॥१३
पुनर्नैव प्रदत्तं हि लोभास्वादविमोहतः ।
अन्यदेव महापापं कुप्रतिग्रहमेत्र च ॥१४

यमराज के दूतों का स्वरूप महान् भीषण होता है । ये दूत बहुत ही भैरव रूप वाले हैं-महान् दारुण हैं-अत्यन्त घोर होते हैं-अधिक काले वर्ण से युक्त हैं और इनके उदर बहुत बड़े होते हैं । पीली इनकी आँखें होती हैं, पीत और नीले रङ्ग होते हैं, अति श्वेत और बड़ी तोंद होती है ।८। बहुत ही ऊँचे आकार वाले होते हैं तथा अत्यन्त विकराल इनका स्वरूप होता है । सूखे हुए मांस और वसा (चर्बी) के सदृश हुआ करते हैं । यम के दूतों की दाढ़ें महान् रौद्र रूप वाली बड़ी होती हैं और अत्यन्त ही कराल होते हैं । इन दूतों का मुख सिंह जैसा होता है और इनके हाथ सर्पों के समान हुआ करते हैं । ऐसे यम के दूतों को देखकर पापी पुरुष काँप जाता है और बारम्बार कंपकंपी से अत्यन्त खिन्न होजाता है जिस समयमें वह शिया के संवाद के तुल्य घोर ध्वनि करने वाले उसे दिखलाई दिया करते हैं ।९-१०। वे यम के दूत सब उस पापी के कर्णमूल में घोर ध्वनि किया करते हैं । दूत उसको पाशों से गले में बाँध देते है कमर को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कस देते हैं और उदर को बद्ध कर देते हैं । फिर उसको समार्घषित कर नीचे गिरा देते हैं । घोर 'हा-हा' ---ऐसा बार-बार बोलते हैं । मरते हुए पापीकी उस समयमें जो चेष्टा होती है उसे मैं अब बतलाता हूँ ।११-१२। पराये धन का अपहरण करना, पराई स्त्री को विडम्बित करना, दूसरे के ऋण को ले लेना तथा दूसरे का सर्वस्व ग्रहण कर लेना और फिर लौटा कर उनको वापिस न देना—ये सब कुत्सित कर्म लोभ के आस्वाद से मोहित होकर पापी मनुष्य जो किया करते हैं । इनके अतिरिक्त अन्य भी महान् पाप होते हैं और कुप्रतिग्रह भी होता है ।१३-१४।

कण्ठमायान्ति ते सर्वे म्रियमाणस्य तस्य च ।
यानि कानि च पापानि पूर्वमेवकृतानिच ।।१५
आयान्ति कण्ठमूल ते महापापस्य नान्यथा ।
दुःखमुत्पादयन्त्येते कफबन्धेन दारुणम् ।।१६
पीडाभिर्दारुणाभिस्तु कण्ठो घुरघुरायते ।
रोदते कम्यतेऽत्यर्थं मातर पितरं पुनः ।।१७
स्मरते भ्रातरं तत्र भार्यां पुत्रान्पुनः पुनः ।
पुनर्विस्मरणं याति महापापेन मोहितः ।।१८
तस्य प्राणा न गच्छन्ति बहुपीडासमाकुलाः ।
पतते कम्पते चैव मूर्च्छते च पुनः पुनः ।।१९
एवपीडासमायुक्तो दुःख भुङ्क्तेऽतिमोहितः ।
तस्यप्राणा सुदुःखेन महाकष्टं प्रचालिता ।।२०
अपानमार्गमाश्रित्य शृणु कान्त प्रयान्ति ते ।
एवं प्राणी महामुग्धो लोभमोहसमन्वितः ।।२१
नोयते यमदूतंस्तु तस्य दुःखं वदाम्यहम् ।।२२

जब ऐसा पापी मृत्यु के निकट होता है तो वे सब उसके कण्ठ में आ जाया करते हैं जो भी कुछ उसके पूर्व में किये हुए पाप कर्म होते है वे सब महान् पापी के कण्ठमूल में आ जाया करते हैं, अन्यथा नहीं आते हैं । ये सब उसके कफ का बन्धन करके उसे महान् दारुण दुःख समुत्पन्न किया करते हैं ।१५-१६। उस समय में होने वाली दारुण पीड़ाओं से

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस पापी पुरुष का कण्ठ घुर-घुर किया करता है। उस समय में अत्यन्त उत्पीडित होकर वह रुदन किया करता है काँपता रहता है और पुनः माता-पिता का स्मरण किया करता है। भाई की याद उस पीड़ित दशा में उसे होती हैं अपनी भार्या और पुत्रोंको याद किया करता है फिर इन सबको महापाप से मोहित होता हुआ भूल जाया करता है।१७-१८। उस समय ऐसी भयानक पीड़ा उसे होती है कि उससे समाकुल होकर उसके प्राण भी नहीं निकला करते हैं और बारम्बार गिरता है—काँपता है और वेहोश होजाया करता है इस प्रकारसे अति पीड़ासे युक्त होकर वह पापी पुरुष अत्यधिक मोहित होता हुआ दुखों को भोगा करता है। उसके प्राण उस दुख से और महान् कष्टों से प्रचालित हो जाते हैं। फिर वे प्राण अपान वायु के मार्ग का आश्रय ले लिया करते हैं हे कान्त ! आप सुनिये, वहाँ होकर पापीके प्राण प्रयाण किया करते हैं। इस रीति से वह पापात्मा प्राणी महान् मुग्ध और लोभ, मोह तथा मद से समन्वित होता है। उसे फिर यमराजके दूत यमपुरी में ले जाया करते हैं। उस समयमें दूतों द्वारा ले जाये जाने में भी उसे महान् मार्ग में दुख होता है। उसे भी हम अब वतायेंगे।१९-२२।

।। ब्राह्मणत्व प्राप्ति के कारण ।।

पूर्वजन्मकृतं पापं त्वयाख्यातं च मे मुने ।
शूद्रत्वेन तु विप्रेन्द्र मयैव परिवर्जितम् ।।१
विप्र त्वं हि मयाप्राप्तं तत्कथं द्विजसत्तम ।
तत्सर्वं कारणब्रूहि ज्ञानविज्ञानपण्डित ।।२
यत्त्वया चेष्टित पूर्वं कर्मधर्माश्रितं द्विज ।
तदहं सम्प्रवक्ष्यामि श्रूयतां यदिमन्यसे ।।३
ब्राह्मणः कश्चिदनघ सदाचारः सुपण्डितः ।
विष्णुभक्तस्तु धर्मात्मा नित्यंविष्णुपरायणः ।।४
यात्राव्याजेन तीर्थानां भ्रमत्येकः स मेदिनीम् ।
अटमानः समायातस्तवगेहं महामतिः ।।५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याचित स्थानमेकं वै वासार्थं द्विजसत्तम ।
तत्रैव भार्यया दत्तं त्वया च सहपुत्रकैः ॥६
एयत्तामेयतांब्रह्मन्सुखेन सुगृहे मम ।
वैष्णवं ब्राह्मणं पुण्यमित्युवाच पुनः पुनः ॥७

सोम शर्मा ने कहा-हे मुनिवर ! आपने मुझे पूर्व जन्म में किये हुए पापों का वर्णन करके सुना दिया है । हे विप्रेन्द्र ! मेरे द्वारा ही शूद्रत्व से परिवर्जित किया है।१।हे द्विज सत्तम! मैंने विप्रत्व को प्राप्ति किया था सो वह मुझे किस प्रकार से प्राप्त हुआ है । उस सबका कारण आप मुझे बतलाइये क्योंकि आप तो ज्ञान और विज्ञान के पूर्ण पण्डित हैं।२। वसिष्ठ मुनि ने कहा-हे द्विज ! आपने जो पूर्व में चेष्टा की थी और धर्म तथा कर्म का आश्रय ग्रहण किया था । मैं उस सबको इस समय में भली-भाँति बतलाता हूँ । आप इसे श्रवण करना ठीक मानते हैं तो उसे सुनिये ।३। कोई एक अघों से रहित, सदाचार से समन्वित और बहुत ही अच्छा विद्वान ब्राह्मण था । वह भगवान् विष्णु का परम भक्त था और अत्यन्त धर्मात्मा था । वह नित्य ही भगवान विष्णु के यजनार्चन में तत्पर रहा करता था ।४। यात्रा के प्रसङ्ग से वह एक ही अकेला तीर्थों का अटन करता हुआ भूमि पर भ्रमण किया करता था । वह महान् मति वाला इसी तरह से पर्यटन करता हुआ आपके घर पर आ गया था ।५।हे द्विजश्रेष्ठ ! उसने निवास करने के लिए एक स्थान की याचना की थी । आपकी ही भार्या ने तथा पुत्रों के साथ आपने वह स्थान दे दिया था ।६।हे ब्रह्मन् ! आइये, आइये, आप सुखपूर्वक मेरे ही घर में निवास कीजिये । उस परम वैष्णव ब्राह्मण से जो अत्यन्त पुण्यात्मा था बार-बार यह कहा था ।।७।-

सुखेन स्थीयतामत्र गृहोऽयं तव सुव्रत ।
अधधन्योऽस्यह तुण्यमद्यतीर्थमहगतः ॥८
अद्यतीर्थभललंप्राप्तं तवाङ्घ्रिद्वयदर्शनात् ।
गत्रांस्थानं वरपुण्यं निवासाय निवेदितम् ॥६
अङ्गसंवाहनं कृत्वा पादोचैव प्रमर्दितौ ।
क्षालितौ पुनस्तोयैःस्नातः पादोदकेन हि ॥१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सद्यो घृतं दधिक्षीरमन्नं तक्रं प्रदत्तवान् ।
तस्मै च ब्राह्मणायैव भवानित्थ महात्मने ।।११
एवं सन्तोषितो विप्रस्त्वया च सहभार्यया ।
पुत्रैः सार्धं महाभागो वैष्णवोज्ञानपण्डितः ।।१२
अथ प्रभाते सम्प्राप्ते दिनेपुण्ये सुभाग्यदे ।
आषाढ़स्य तु शुद्धस्यकादशी पापनाशिनी । १३
तस्मिन्दिनेसुसम्प्राप्ता पर्वंपातकनाशिनी ।
यस्यांदेवो हृषीकेशोयोगनिद्रां प्रगच्छति ।।१४
तां प्राप्य च ततो लोकास्तत्यजुर्बुद्धिपण्डिताः ।
गृहस्थ सर्वकर्माणि विष्णुध्यानरता द्विज ।।१५

हे सुन्दर व्रतों से समन्वित ! आप यहाँ पर ही सुख के साथ ठहरिये । यह तो आपका ही घर है । आज मैं परम धन्य हो गया हूँ । आज मैंने परम पुण्यमय तीर्थ को प्राप्त कर लिया है।८। आज मैंने समस्त महान् तीर्थों के फल को प्राप्त कर लिया है क्योंकि आज मुझे आपके दोनों चरणों का दर्शन प्राप्त हुआ है । यह गौओं के रहने का स्थान बहुत ही श्रेष्ठ और परम पवित्र है जिसे मैंने उन्हें निवेदित किया था ।९। फिर उनके अंगों का संवाहन करके अर्थात् अंगों को दबाकर इसके उपरान्त चरणों का प्रमर्दन किया था । इसके अनन्तर जल से उन चरणों को धोया था । और उनके चरणों के धुले चरणामृत जल से मैंने स्वयं स्नान किया था ।१०। इसके पश्चात् तुरन्त ही ताजा घृत-दधि-क्षीर अन्न और मट्ठा मैंने उनकी सेवा में समर्पित किये थे । उस महान आत्मा वाले ब्राह्मण के लिए आपने इस प्रकार से भोज्य पदार्थ दिये थे ।११। आपने अपनी भार्या के सहित उस विप्र को पूर्णतया सन्तुष्ट किया था । पुत्रों को भी साथ में लेकर उस महान् भाग्य वाले परम विष्णु के भक्त का जो ज्ञान में महान् पण्डित था आपने भली-भाँति सुत्कृत किया था ।१२।इसके अनन्तर प्रातः-काल में पुण्य दिन के समाप्त हो जाने पर जो कि सुभाग्य का प्रदान करने वाला था, शुद्ध आषाढ़ मास की पापों के नाश करने वाली एकादशी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिथि आई थी ।१३। उस दिन में सम्पूर्ण पातकों का नाश करने वाली वह पुण्य तिथि आई थी जिस तिथि में भगवान् हृषीकेश देव योग निद्रा को प्राप्त होते हैं । हे द्विज ! उस तिथि को पाकर बुद्धिमानों ने घर के सब कर्म त्यागकर विष्णु भगवान् के ध्यान में तत्पर होगये थे ।१४-१५।

उत्सवं परमंचक्रुर्गीतमङ्गलवादनैः ।
स्तुवन्ति ब्राह्मणाः सर्वे वेदैः स्तोत्रैः सुमङ्गलैः ॥१६
एवं महोत्सव प्राप्य स च ब्राह्मणसत्तम् ।
तस्मिन्दिनेस्थितस्तत्र सम्प्राप्तं समुपोषणम् ।१७
एकादश्यास्तु माहात्म्यं पठितं ब्राह्मणेन वै ।
भार्यापुत्रैस्त्वयासार्द्धं श्रुत धर्ममद्रुत्तमम् ॥१८
श्रुते तस्मिन्महापुण्ये भार्यापुत्रैस्तु प्रेरितः ।
संसर्गादस्य विप्रस्य व्रतमेतत्समाचर ॥१९
तदाकर्ण्य महद्वाक्यं सर्वपुण्यप्रदायकम् ।
व्रतेमेतत्करिष्यामि इतिनिश्चितमानसः ॥२०
भार्यापुत्रैः समं गत्वानद्यांस्नानं कृतं त्वया ।
हृष्टेनमनसा विप्र पूजितो मधुसूदनः ॥२१

उस देव शयनी एकादशी के दिन में सभी ने गीत और मगलमय-वादनों के द्वारा महान् उत्सव मनाया था । समस्त ब्राह्मण वेदोक्त स्तोत्रों के द्वारा और मंगल वचनों से भगवान् की स्तुति करने लगे थे ।१६। इस प्रकार का महान् उत्सव प्राप्त करके उस श्रेष्ठ ब्राह्मण ने भी उस दिन में वहीं पर अपनी स्थिति करली थी और वहां उसने उपवास भी किया था ।१७। ब्राह्मण ने एकादशी तिथि के माहात्म्य का पाठ किया था । भार्या और पुत्रों के सहित वह माहात्म्य तथा उत्तम धर्म आपने भी सुना था ।१८। उस महा पुण्यमय माहात्म्य के श्रवण करने पर भार्या और पुत्रों ने प्रेरणा दी थी कि इस विप्र के संसर्ग से आप भी इस व्रत का समाचरण करो ।१९। उस समय में उस महत्पूर्ण वचन का श्रवण करो जो कि सभी तरह के पुण्यों का प्रदान करने वाला था । मैंने भी ऐसा निश्चित मन से निर्णय किया था कि मैं भी इस व्रत को अवश्य ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूँगा ।२०। फिर तो मैंने अपनी भार्या और पुत्रों के साथ नदी पर गमन किया था और नदी में जाकर स्नान किया था । हे विप्र ! अपने परम प्रसन्न मन से फिर भगवान् मधुसूदन का पूजन किया था ।। २१।।

सर्वोपहारैः पुण्यैश्च गन्धूपादिभिस्तथा ।
रात्रौ जागरणंकृत्वा नृत्यगीतादिभिस्तथा ।।२२
ब्राह्मणस्य प्रसङ्गेन नद्यांस्नानं पुनःकृतम् ।
पूजितो देवदेवेश पुष्पधूपादिमङ्गलैः ।।२३
भक्त्या प्रणम्य गोविन्दं स्नापयित्वा पुनः पुनः ।
निर्वापं तादृशदत्तं ब्राह्मणाय महात्मने ।।२४
भक्त्या प्रणम्यं तं विप्रं दत्तातस्मैः सुदक्षिणा ।
कृतवात्पारणं विप्र पुत्रै भार्यादिभिः समम् ।।२५
प्रेषितो भक्तिपूर्वेण सद्भावेन त्वयैवः स ।
एवं व्रतं समाचोर्णं त्वया वै विजसत्तम् ।।२६
सद्भक्त्या ब्राह्मणस्येव विष्णोश्चैव प्रसादतः ।
भवान्ब्राह्मणतां प्राप्तःसत्यधर्मसमन्वितः ।।२७
तेन व्रतप्रभावेणत्वया प्राप्तं महत्कुलम् ।
भूसुरांणा महाप्राज्ञ सत्यधर्मं समाविलम् ।।२८

परम पुण्यमय समस्त उपहारों के द्वारा तथा गन्ध अक्षत धूपादि के द्वारा विष्णु भगवान् की पूजा की थी और रात्रि में जागरण किया था । रात्रि में नृत्य गीतादि से भगवान् का कीर्त्तन किया गया था ।२२। उस ब्राह्मण के सम्पर्क से पुनः नदी में स्नान किया था और देवों के भी देवेश भगवान् का पुष्प धूपादि मङ्गलमय उपचारों से पूजन किया था ।।२३।। भक्ति की भावना से भगवान् गोविन्द को प्रणाम करके और बारम्बार स्नान कराकर फिर उस प्रकार का निर्वाण महात्मा ब्राह्मण के लिए दिया था ।२४। भक्तिपूर्वक उस विप्र की प्रदक्षिणा करके तथा प्रणाम करके फिर उसको अच्छी दक्षिणा समर्पित की थी । हे विप्र ! इसके उपरान्त पुत्रों और भार्या के साथ स्वयं पारण किया था अर्थात् कुछ खाकर व्रत खोला

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था ।२५।आपके द्वारा वह बहुत ही सद्भावना से भक्ति-भाव पूर्वक प्रेषित किया गया था । इस प्रकार से हे द्विजों में परम श्रेष्ठ ! आपने व्रत को समाचीर्ण किया था ।२६। ब्राह्मण की सङ्गति से और भगवान् विष्णु के प्रसाद से सत्य एवं धर्म से संयुत रहते हुए आपको यह ब्राह्मणत्व की प्राप्ति हुई है ।२७। उस व्रत के महान् प्रभाव से ही यह ब्राह्मण का महान् कुल मिला है । हे महाप्राज्ञ ! ब्राह्मण भूमि के देवता होते हैं उनका कुल सत्य और धर्म से समाविल होता है ।।२८।।

तस्मैंतु ब्राह्मणायैव वैष्णवाथ महात्मने ।
श्रद्धया सत्यभावेन दत्तमन्नं सुसंस्कृतम् ।
तेन दानप्रभायैन मिष्टान्नमुपतिष्ठति ।
महामोहै प्रमुग्धो हि तृष्णया व्यापि..मनः ।।३०
पूर्वजन्मनि ते विप्र अर्थमेव प्रतंश्चितम् ।
न दत्तं ब्राह्मणेभ्यो ह दीनष्वन्येषु वै त्वया ।।३१
दारेषु पुत्रलाभेन भ्रियमाणेन वै तदा ।
यस्य पापस्येभावेन दारिद्रचं त्वामुपाविशत् ।।३२
पुत्रलोभं परित्यज्य स्नेहं त्यक्त्वा प्रदूरतः ।
अपुत्रवान्भवाञ्जातस्तस्य पापस्य व फलम् ।।३३
सुपत्रं च कुलं विप्र धनंधान्य धरास्त्रियः ।
सुजन्म स्वर्गश्च मोक्षरश्च यद्यद्दुलभमेव च ।
प्रसादात्तस्य देवस्य विष्णोश्चैव महात्मचः ।।३५
तस्मादाराध्यगोविन्द नारायणमसामयम् ।
प्राप्स्यसि त्वं परस्थान तद्विष्णोः परमषदम् ।।३६

उसी परम वैष्णव ब्राह्मण के लिये जिसकी आत्मा अत्यन्त महान् एवं उच्च थी, बड़ी श्रद्धा से एवम् अत्यन्त सत्य की भावना से भली-भाँति संस्कार किया हुआ अन्न दिया था ।।२६।। उसी अन्न के महादान के प्रभाव से यह मिष्ठान्न उपस्थित होता है । महान् मोह से विशेष रूप से मुग्ध होने वाले और तृष्णा के द्वारा व्याप्त मन वाले आपने हे विप्रदेव !

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले जन्म में केवल धन का ही सञ्चय किया था और कभी भी आपने ब्राह्मणों को तथा अन्य परमदीन-हीन दुःखितों को कुछ भी दान नहीं किया था। अपनी स्त्रियों में एवं पुत्रों में ही अहर्निश अपने मन को संलग्न करके मृत्यु को प्राप्त हुए थे। उस समय में भी नाशवान् मिथ्या सांसारिक मोह के जाल में उलझे रहने के महान् पाप के प्रभाव से ही यह दरिद्रता आपको प्राप्त हुई है।३०-३२। पुत्र के लालच का परित्याग करके और स्नेह को दूर से ही त्याग करके आप बिना पुत्र वाले समुत्पन्न हुए हैं--यह उसी पाप का फल है।३३। आपको यह ज्ञान होना चाहिए कि सुन्दर परमाज्ञापालक सदाचारी पुत्र उत्तम कुल, धन-धान्य, भूमि, अति प्रिया स्त्री, सुन्दर जन्म, अति सुमनोरम विविध भोग, सुख, राज्य, मृत्यु, स्वर्ग निवास और संसार के जन्म-मरण के सदा आवागमन से छुटकारा तथा जो-जो भी अत्यन्त दुर्लभ वस्तु हैं वे सभी महात्मा भगवान् विष्णुदेव की कृपा से ही प्राप्त हुआ करते हैं। इसीलिए आमय से रहित भगवान् गोविंद की समाराधना करो जो साक्षात् नारायण हैं। इस आराधना के ही प्रभाव से आपको परम प्राप्तव्य स्थान जो विष्णुदेव का पद है वह अवश्य ही प्राप्त हो जायगा।३४-३६।

सुपुत्रत्व धनधान्यं सुभोगान्सुखमेव च।
पूर्वजन्मकृतं सर्वं यत्त्वया परिचेष्टितम् ॥३७
तन्मया कथितं विप्र तवाग्रे परिनिष्ठतम्।
एवंज्ञात्वा महाभाग नारायणपरोभव ॥३८
व्रह्मात्मजेनापि महानुभावः सविप्रर्यः परिबोधितो हि।
हर्षेण युक्तः स महानुभावी भक्त्या वसिष्ट प्रणिपत्य तत्र ।३९

सुन्दर सपूत पुत्र-धनधान्य सुखों के उपभोग और परम सुख ये सभी पूर्व जन्म के कृत पुण्यों के प्रभाव से होते हैं जो हे विप्र ! आपने परचेष्टित किये हैं।३७। हे विप्र यह सब मैंने आपके आगे बतला दिया है जो कि वास्तव में परिनिष्ठित है। इस प्रकार से समझकर ही हे महाभाग ! अब आप नारायण में तत्पर हो जाइये। इससे आपका पूर्ण कल्याण होगा। वह महान् अनुभवों वाला विप्र श्रेष्ठ ब्रह्माजी के आत्मज (पुत्रों) के द्वारा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

भी अच्छी रीति से परिवोधित किया गया था। फिर परम हर्ष से समन्वित होकर वह महानुभाव वशिष्ठ के समीप में पहुँचे और भक्ति की भावना से वसिष्ठ महर्षि के चरणों में उन्होंने प्रणाम किया था।३८-३९।

।। वेन का छद्मलिंगधारी से सम्वाद ।।

एवंवेनस्य चैवासीत्सृष्टिरेव महात्मनः।
धर्माचारं परित्यज्य कथं पापमतिर्भवेत् ।।१
ज्ञानविज्ञानसपन्ना मुनयस्तत्ववेदिनः।
शुभाशुभं बदन्त्येवं तन्नस्यादिह चान्यथा ।।२
तप्यमानेन तेनापि सुशङ्खेन महात्मना।
ततःशापकथं विप्रा न यथावच्चजायते ।।३
वेनस्य पातकाचारं सर्वमेव वदाम्यहम्।
तस्मिञ्छासति धर्मज्ञे प्रजापाले महात्मनि ।४
पुरुषः कश्चिदायातश्छद्मलिङ्गधरस्तदा ।
नग्नरूपी महाकायः शिरोमण्डो महाप्रभुः ।।५
मार्जनी शिखिपत्राणां कक्षायां स हि धारयन्।
गृहीत पानपात्रं तु नालिकेरमयंकरे ।।६
पठमानोह्यसच्छात्रं वेदधर्मविदूषकम्।
यत्र वेनो महाराजस्तत्रायातस्त्वरान्वितः। ७
सभायां तस्य वेनस्य प्रतिवेश स पापवान्।
त दृष्ट्वा समनुप्राप्तं वेनः तदाऽकरोत् ।।८

ऋषियों ने कहा—महात्मा वेन की सृष्टि ही इस प्रकार की थी। वह वेन धर्म के आचार का परित्याग करके पापों में मति रखने वाला क्यों हो गया था ? सूतजी ने कहा--ज्ञान और विज्ञान से युक्त तत्व के ज्ञाता मुनि लोग शुभ तथा अशुभ के विषय में इस प्रकार से कह दिया करते हैं कि वह यहाँ पर फिर अन्यथा नहीं होता है।१-२। महान् आत्मा वाले सुशंख ने अत्यन्त तप्यमान होकर शाप देदिया था।हे विप्रगण!वह यथावत्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे नहीं होता ।३। अब मैं राजा वेन का सम्पूर्ण पातकाचार बतलाता हूँ । जिस समय धर्म का ज्ञान, प्रजा का पालक, महात्मा वह राज्य पर शासन कर रहा था उस समय में कोई एक पुरुष कपट का चिह्न धारण करके वहाँ आया था, जिसका नग्न स्वरूप था-अति विशाल शरीर था, फिर मुण्डित हो रहा था और वह महान् प्रभा से समन्वित था । ।४-५। वह कक्षा में शिखि पत्रों की मार्जनी धारण किये हुए थे । उसने हाथ में नारियल से परिपूर्ण एक पान पात्र ग्रहण कर रखा था ।६। वह असत् शास्त्र का पाठ कर रहा था जो कि वेदों में कहे हुए धर्म को दूषित करने वाला था जिस स्थान पर राजा वेन स्थित था वहीं पर वह तेजी के साथ आगया था।७।उस वेन राजा की सभा में वह पापी प्रविष्ट हुआ था । उसको वहाँ पर सम्प्राप्त हुआ देखकर वेन ने उससे प्रश्न किया था ।८।

भवान्को हि समायात ईदृग्रूपधरो मम ।
सभायां वर्तमानस्य पुरः कस्मात्समागतः ।।९
को वेषुः किन्तु ते नाम को धर्मः कर्म ते वद ।
को वे स्ते कः आचारः कितपः का प्रभावना ।।१०
कि ज्ञानं क प्रभवास्ते कि सत्यंधर्मलक्षणम् ।
तत्त्व सर्वं समाचक्ष्व ममाग्रे सत्यमेव च ।।११
श्रुत्वा वेनस्य यद्वाक्य पापी वाक्यमदासरत् ।
करोष्येवं वृथा राज्यंमहामूढो नसशयः ।।१२
अहं धर्मस्यसर्वस्वमहं पज्यतमस्सुरैः ।
अहं ज्ञानमहंसत्यमहं धाता सनातनः ।।१३
अहं धर्म अहं मोक्षः सर्वदेवमयो ह्यहम् ।
ब्रह्मदेहात्हमुद्भूतः सत्यसन्धोऽस्मिनान्यथा ।।१४
जिनरूपं विजानीहि सत्यधर्मकलेवरम् ।
मामेव हि प्रधावन्ति योगिनो ज्ञानतत्परा ।।१५

आप कौन हैं जो इस प्रकार का भीषण स्वरूप धारण करके यहाँ मेरी सभा में आये हैं । जिस समय मैं यहाँ पर विद्यमान हूँ तो आप मेरे सामने क्यों आगये हैं ! ।९। आपका यह क्या अद्भुत वेष है ? आप यह

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बतलाइये कि आपका नाम क्या है ? आप किस धर्म के मानने वाले हैं और आपका क्या कर्म है ? आपका कौन-सा वेद है तथा आचार हे ? आप क्या तपश्चर्या किया करते हैं और आपकी भावना किस प्रकार की है ॥१०॥ आपका ज्ञान क्या है ? प्रभाव क्या है और सत्य धर्म का लक्षण क्या है ? आप मेरे सामने विल्कुल सच-सच सब तथ्य बतलाइए ॥११॥ राजा वेन के इस वचन का श्रवण कर उस पाप ने उत्तर दिया था । उसने कहा—इस प्रकार से तो महामूढ़ राज्य को वृथा करते हैं—इसमें संशय नहीं है।१२ मैं धर्म का सर्वस्व हूँ और मैं सुरगण के द्वारा पूजित होता हूँ मैं ही ज्ञान का स्वरूप हूँ और मैं ही सत्य हूँ तथा सनातन धाता भी मैं हूँ ।१३। मैं ही धर्म हूँ और मैं ही मोक्ष का स्वरूप हूँ । मैं समस्त देवों से परिपूर्ण हूँ । मेरी उत्पत्ति ब्रह्मा के देह से हुई है और इस जगत् में सत्य प्रतिज्ञा करने वाला हूँ—इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं हैं ॥१४॥ सत्य और धर्म का कलेबर धारण करने वाला मुझे जिन रूप समझिये । ज्ञान में सदा परायण करने वाले योगीजन मेरी ओर ही ध्यान करते हुए अपनी दौड़ लगाया करते हैं ।१५।

तत्रैव कीदृशं कर्म किं ते दर्शनमेव च ।
किमाचारो वदस्वैहि इत्युक्त तेन भूभुजा ॥१६
अर्हन्तो देवता निग्रन्थो दृश्यते गुरुः ।
दयाचैव परोधर्मस्तत्र मोक्ष प्रदृश्यते ॥१७
दर्शनेऽस्मिन्नसन्देह आचारान्प्रवदाम्यहम् ।
यजन याजनं ना स्त वेदाध्ययनमव च ॥१८
नास्ति सन्ध्या तपो दानं स्वाधास्वाहाविवर्जितम् ।
हव्यकव्यादिकं नास्ति नैव यज्ञादिकाक्रिया ॥१९
पितृणां तर्पणं नास्ति नातिथिर्वैश्वदेविकम् ।
क्षपणस्य वरापूजा अर्हतो ध्यानमुत्ततम् ॥२०
अयं धर्मसमाचारो जैनमार्गे प्रदृश्यते ।
एतत्ते सर्वं माख्यातं निजधर्मस्य लक्षणम् ॥२१

जिनकी इस उक्ति को सुनकर राजा वेन ने कहा-हे भगवान् ! आपका

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किस प्रकार कर्म होता है और आपका दार्शनिक सिद्धान्त क्या है ? इस राजा ने कहा था कि आप यह बतलाइये कि आपका आचार क्या होता है ? ।१६। पातक ने कहा—जिस धर्म में अर्हन्त देवता होता है और निर्ग्रन्थ गुरु दिखलाई दिया करता है। इसमें दया का करना ही सबसे बड़ा प्रमुख धर्म है और इसी में मोक्षका दर्शन हुआ करता है ।१७। इस दर्शन में कुछ भी सन्देह का अवसर नहीं होता है। इस धर्म में क्या आचार होते हैं उन्हें मैं अब बतलाता हूँ। इस धर्म में यजन करना तथा यजन कराने का काम बिल्कुल भी नहीं है। वेदों का अध्ययन भी नहीं किया जाता है। इस धर्म में संध्योपासना-तपश्चर्या-दान और स्वधा (तर्पण) और स्वाहा अर्थात् हवन ये कुछ भी नहीं होते हैं। इसमें इन सबका निषेध होता है। इसमें हव्य कव्य प्रभृति कुछ भी नहीं है और यज्ञ आदि के कर्म भी कुछ नहीं किये जाते हैं ।।१८-१९।। इसमें पितरों के लिए श्राद्ध एवम् तर्पण कुछ नहीं किये जाते हैं। अतिथियों का स्वागत सत्कार भी इसमें कुछ नहीं है और न बलि वैश्वदेव ही किया जाता है। इस धर्म में तो कुवल लक्षण का पूजन करना ही परम-प्रधान अर्चना मानी जाती है और अर्हन्त का ध्यान करना ही सर्वोत्तम ध्यान माना गया है। यत्र धर्म का समाचार जैन मार्ग में दिखलाई देता है। यह सभी कुछ अपने धर्म का लक्षण मैंने आपके सामने भली भाँति बतला दिया है ।।२०-२१।।

वेदप्रोक्तो यथा धर्मो यत्र यज्ञादिकाः क्रियाः ।
पितृणां तर्पण श्राद्धं वैश्वदेवं नदृश्यते ।।२२
न दानं तप एवास्ति क्वास्ते धर्मस्यलक्षणत् ।
वद सत्यं ममाग्रे तु दयाधर्मश्च कीदृशः ।।२३
पञ्चतत्वप्रवृद्धोऽयं प्राणिनां काय एव च ।
आत्मावायुस्वरूपोऽयंतेषांनास्तिप्रसङ्गता ।।२४
यथा जलेषु भूतानामपि सङ्गमवेहि तत् ।
जायते बुद्बुदाकारं तद्वद्भूतसमागमः ।।२५
पृथ्वीभावो रजःस्थस्तु चापस्तत्रैव संस्थिताः ।
ज्योतिस्तत्र प्रदृश्नेतमुवायुर्वर्ततेत्रिषु ।।२६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकाशमावृणोत्पश्चाद्बद्बुद्दत्वं प्रजायते ।
अप्सु मध्ये प्रभात्येव सुतेजो वर्तुलंबरम् ॥२७
क्षणमात्रं प्रदृश्येत् क्षणांन्नैव च दृश्यते ।
तवद्भूतसमायोगः सर्वत्र पपिदृश्यन्ते ॥२८
अन्तकाले प्रयात्यात्मा पञ्चपञ्चसुयान्तिते ।
मोहमुग्धास्ततो मर्त्या वतन्ते चपरस्पसम् ॥२९

राजा वेन ने कहा—वेद ने जिस प्रकार का धर्म बतलाया है उसमें तो यज्ञ आदि की सम्पूर्ण क्रियाओं के करने का विधान होता है और उसमें तो पितरों का तर्पण-श्राद्ध और बलि वैश्वदेव के करने का भी विधान दिखलाई देता है ।२२।आपके धर्म में न तो दान है और न तपस्या ही है ऐसा धर्म कहाँ है?और यह क्या धर्म का लक्षण है?आप मेरे सामने सर्वथा सत्य वर्णन कीजिए कि आपका यह दया करने वाला धर्म किस तरह का होता है? ।२३। इस कथन को सुनकर पातक ने कहा—प्राणियों का यह शरीर पाँच तत्वों से प्रवृद्ध होता है अर्थात् शरीर की रचना और वृद्धि पृथ्वी-जल-तेज-आकाश और वायु, इन पाँच तत्वों से होती है यह पाँच भौतिक हैं । यह आत्मा वायु स्वरूप वाला है । अतः उन पाँच तत्वों से इसका कोई भी प्रसङ्ग ही नहीं होता है।२४।जिस प्रकार से जल में भूतों का सङ्ग होता है वैसे ही समझ लेना चाहिए । वह बुदबुदे के आकार वाला होता है ठीक उसी भाँति भूतों का समागम भी हुआ करता है।२५।रज में स्थित पृथ्वी भाव है, जल भी वहाँ पर ही स्थित होते हैं, ज्योति वहाँ दिखलाई देती है और वायु तीनों में वर्त्तमान है।२६। पीछे आकाश को आवृत करता है और बुद्बुद के स्वरूप में हो जाया करता है । जल के मध्य में सुतेज उत्तम वर्त्तलाकार वाला भासित होता है ।२७। क्षणमात्र के लिए दिखलाई दिया करता है और क्षणभर में ही अदृश्य हो जाता है। इस तरह का इन भूतों का समायोग होता है जो कि सर्वत्र दिखलाई दिया करता है ।२८। जब इस प्राणी का अन्तकाल उपस्थित होता है उस समय में यह आत्मा चला जाया करता है और ये पाँच तत्व भी अपने-अपने में जाकर मिल जाते हैं । फिर मनुष्य मोह से मुग्ध होकर ही आपस में बरताव किया करते हैं ॥२९॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्राद्ध कुर्वन्ति मोहेन क्षयाहे पितृतर्पणम् ।
क्वास्तमृत:समश्नातिकीदृशोऽसौनपोत्तमा ।।३०
किंज्ञानं कीदृशं कार्यं केनदृष्टं बदस्व न ।
मिष्टान्नं भोजयित्वा च तृप्तायान्ति च ब्राह्मणा: ।।३१
कस्य श्राद्धं प्रदीमते सा श्रद्धा तु निरर्थका ।
अन्यदेमं प्रवक्ष्यामि वेदानांकर्मदारुणम् ।।३२
यदाऽतिथिर्गृहे याति महोक्षं पचते द्विज: ।
अजं वा राजराजेन्द्र अतिर्थिपरिभोजयेत् ।।३३
अश्वमेधमखो अश्वगोमेधे वृषमेव च ।
नरमेधेनरं राजन्वाजपेये तथाह्यजान् ।।३४
राजसूये महाराज प्राणिनां घातनं बहु ।
पुण्डरीके गजंहन्याद्गजमेधेऽथ कुञ्जरम् ।।३५
यौत्रामण्यां पशुं मेध्यं मेषमेव प्रदृश्यते ।
नानारूपेषु सर्वेषु श्रूयतांनृपनन्दन: ।।३६

मनुष्य मोह के वश में आकर मृत पुरुषों का श्राद्ध किया करते हैं और जिस तिथि में उनका क्षय होता है उस दिन उनका तर्पण भी करते हैं। हे नृपोत्तम ! वह मरा हुआ मनुष्य फिर कहाँ पर रहता है ? अर्थात् कहीं पर भी वह नहीं रहता जो कि उस श्राद्ध में दिए हुए अन्न को खा सके। वह अगर है तो बताइये वह कैसा है ? ।३०। क्या ज्ञान है-कैसा उसका कार्य है किसने फिर उसे (मृत को) देखा है? आप ही बतलाइए। वह वास्तव में कुछ भी नहीं है केवल इस बहाने से ब्राह्मणों को मिष्ठान्न खिलाकर उन्हें तृप्त किया जाता है।३१। जब किसी का मृत्यु के पश्चात् अस्तित्व नहीं होता तो फिर किसको श्राद्ध दिया जाता है। यह श्रद्धा तो व्यर्थ की ही होती है। इसके अतिरिक्त मैं आपके वेदों में बताये हुए दारुण कर्म के विषय में बतलाता हूँ ।३२। जिस समय में कोई अतिथि घर में जाता है तो द्विज महोक्ष का पाचन किया करता है। हे राजराजेन्द्र ! अथवा अज का पाचन करता है और अतिथि का भोजन कराया जाता है ।३३। अश्वमेध यज्ञ में अश्व—गोमेध में वृष—नरमेध में मनुष्य और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे राजन् ! वाजपेय यज्ञ में बकरों का घात किया जाता है। हे महाराज! आपके वैदिक धर्मानुसार जो राजसूय नामक यज्ञ होता है उसमें बहुत प्राणियों का हनन होता है। पुण्डरीक में गज का और गजमेव में कुञ्जर का हनन किया जाता है ।३४-३५। सौत्रामणि में मेघ्य पशु मेघ ही प्रदर्शित किया जाता है। हे नृपनन्दन ! इस प्रकार से अनेक स्वरूपों वाले यज्ञ यागादि में विविध भाँति प्राणियों की हिंसा का विधान है तो फिर दानादि करने का क्या फल है।३६।

दयादीनं चापल स्यान्नास्ति धर्मस्तु तत्र हि।
एते वेदा न वेदास्युः दया यत्र न विद्यते ।।३७
दयादानपरो नित्यं जीवमेव प्ररक्षयेत्।
चाण्डालोऽप्यथशूद्रो वा स वै ब्राह्मणउच्यते ।।३७
यथा श्राद्धस्य वै चिह्नं यथा दानस्य लक्षणम्।
जिनस्यापि च तद्धर्नं भुक्तिमुंक्तिप्रदायकम् ।।३९
एते विप्राश्च आचार्या गङ्गाद्याः सरितस्तथा।
वदन्ति पुण्यतीर्थानि बहुपुण्यप्रदानिच।
तत्किं वदस्व सत्यं मे यदि मे यदि धर्ममिहेच्छसि।४०
आकाशाद्वै महाराज मेघा वर्षन्ति वै जलम्।
भूमौ हि पर्वतेष्वे सर्वत्र पतते जलम् ।।४१
सआप्लाव्य ततस्तिष्ठेदूदयां सर्वत्र श्रावयेत्।
नद्यः प्रापप्रवाहास्तुतासुतीर्थं श्रुतं कथम् ।।४२

दया की जहाँ कमी है वहाँ तो चपलता ही होती है और वहाँ धर्म नहीं है। ये वेद जो कहे जाते हैं वे वेद नहीं हैं जिनमें दया का विधान ही नहीं है।३७।जो दया और दान में परायण होता हुआ जीवों की रक्षा किया करता है चाहे वह शूद्र हो अथवा चाण्डाल भी क्यों न हो वही ब्राह्मण कहा जाता है।३८। जिस प्रकार से श्राद्ध का जो चिह्न होता है, वैसा ही दान का भी लक्षण होता है। जिनका जो धर्म होता है यह भक्ति और मुक्ति का प्रदान करने वाला होता है ।३९। राजा वेन ने कहा—ये

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विप्र आचार्य-जो गङ्गा आदि सरिता आदि को पुण्य तीर्थ और अत्यधिक पुण्य प्रदान करने वाली बताया करते हैं सो आप बतलाइये और सत्य-सत्य कहिये कि यह धर्म है क्या आप चाहते हैं ? । ४० । पातक ने कहा —हे महाराज ! आकाश से मेघ जल की वर्षा किया करते हैं। वह वृष्टि का जल सर्वत्र ही भूमि और पर्वतों पर गिरा करता है ।४१। वह आप्लावित कर फिर ठहर जाया करता है वैसे ही दया का भी सर्वत्र प्रभाव होता है और होना भी चाहिए । ये नदियाँ तो पापों का ही प्रभाव होता है । इनमें तीर्थ कैसे हो सकता है ।।४२।।

जलाशय महाराज तडागाः सागरास्तथा ।
पृथिव्या धारकाश्चैव गिरयो अश्मराशयः ।।४३
तास्त्येषु च वै तीर्थं जलैर्जलदमुत्तमम् ।
स्नाने यदा महत्पुण्यं कस्मान्मत्स्येषु वैनहि ।।४४
दृष्टास्नानेन वै सिद्धिर्मीना शुद्धयन्तिनान्यथा ।
यत्रजिनस्तत्र तीर्थं तत्र धर्मःसनातनः ।।४५
तपादानादिकं सर्वं पुण्य तत्र प्रतिष्ठितम् ।।४६
एको जिन सर्वमयो नृपेन्द्र नास्त्येव धर्मं परम हि तीर्थम् ।
अयतु लाभः परमस्तु तस्माद्धयायस्वनित्यं सुसु खोभविष्यसि।
विनिन्द्य धर्म सकलं सवेद दानं सपुण्यं परयज्ञरूपम् ।
पापस्वभावैर्बहुबोधितो नृपस्त्वङ्गस्यपुत्रो भुवि तेनापिना ।४८

हे महाराज ! ये जितने भी जलाशय हैं चाहे तड़ाग हों या सागर हों ये सभी और पाषाणों के ढेर स्वरूप पवत पृथ्वी के ही धारक होते हैं ।४३। इनमें तीर्थत्व मानना गलत है । ये तीर्थ होते हो नहीं । जलदों के द्वारा जो जल वर्षाया जाता है वही जल वास्तव में उत्तम जल होता यदि जलाशयों में स्नान करने में ही महान् पुण्य होता है तो फिर मत्स्यों में सबसे अधिक उसका पुण्य क्यों नहीं माना जाता है ? ।४४। स्नान से ही सिद्धि होती होती हो तो मीन ही शुद्ध होती है जो अहर्निश जल में ही स्नान किया करती है अन्यथा नहीं है . जहाँ पर जिन है वहाँ पर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीर्थ हैं और वही सनातन धर्म है।४५। वहाँ पर तो तप तथा दान आदि का सम्पूर्ण पुण्य प्रतिष्ठित होता है ।४६। हे नृपेन्द्र ! एकमात्र जिन ही ऐसा है जिसमें सभी कुछ होता है। उसके अतिरिक्त कोई भी धर्म नहीं है और न कोई तीर्थ ही है। यह ही परम लाभ है इसलिए आप उसी का ध्यान कीजिए फिर नित्य ही आपको बहुत ही अच्छा सुख प्राप्त हो जायगा।४७। यह जो वेदों का बताया हुआ धर्म है और वेद हैं—दान पुण्य और यज्ञ योगादिक सब हैं इनको छोड़िये केवल जिनका ही समाश्रय ग्रहण कीजिए। इस प्रकार से अग के पुत्र वेन को पापों के स्वभावों द्वारा उस पापी ने उस भू-मण्डल में खूब समझा दिया था और सुदृण बना दिया था।४८।

॥ वेन का वैदिक धर्म परित्याग ॥

एवं सम्बोधितो वेनः पापभापं गतः किल ।
पुरुषेण तेन जैनेन महापापेन मोहितः ॥१
दमस्कृत्य ततः पादौ तस्यैव च दुरात्मनः ।
वेदधर्मं परित्यज्य सत्यधर्मादिह्लांक्रियाम् ॥२
सुयज्ञानां निवृत्तिः स्याद्वेदानां हि तथैव च ।
पुण्यशास्त्रमयो धर्मस्तदा नैव प्रवर्तितः ॥३
सर्वपापमयो लोकः सञ्जातःतस्यशासनात् ।
नैवयागाश्ज वेदाश्च धर्मशास्त्रार्थमुत्तमम् ॥४
न दानाध्ययनं विप्रास्तस्मिञ्छासाति पार्थिवे ।
एवं धर्मप्रलोपोऽभून्महत्पाप प्रवर्तितम् ॥५
अङ्गेन वार्यमाणस्तु अन्यथा कुरुते भशम् ।
न नमाम पितुः पादौ मातुश्चैव दुरात्मवान ॥६

सूतजी ने कहा—इस रीति से उस पापी के द्वारा अच्छी तरह से समझाया राजा वेन पाप भाव को प्राप्त हो गया था। उस महान् पापी जैन पुरुष ने उसे मोहित कर दिया था ॥१॥ उस राजा वेन ने फिर तो मोहित होकर उसके चरणों की वन्दना की थी जो महान् दुरात्मा उसके पास आया था और फिर वैदिक धर्म का त्याग कर दिया था तथा सत्य

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मादि के जो समस्त कर्म थे उनको भी छोड़ दिया था ।२। राजा वेन के समय में सुन्दर और अच्छे यज्ञों की निवृत्ति होगई थी। वेदों का त्याग कर दिया गया था। परमपुण्य शास्त्रों से धर्म था उस समय में बिल्कुल ही प्रवृत्त नहीं हुआ था ।३। यह सम्पूर्ण लोक पूर्णतया पापमय हो गया था। क्योंकि फिर तो धर्म विहीन राजा वेन का शासन ही ऐसा हो गया था। न तो कोई कहीं भी यज्ञ होते थे और न वेदों का पाठन शेष रहा था और उत्तम धर्म शास्त्रों की ही चर्चा रह गई थी ।४। उस राजा वेन के शासन काल में विप्र लोग दान और अध्ययन नहीं करते-कराते थे। इस तरह ने उस समय में धर्म का एकदम लोप ही हो गया था और ससार में महान् पापों का उदय हो रहा था। जब राजा के पिता अङ्ग ने उस वेन को रोका था और अधिक विपरीत मार्ग का आश्रय लेने लगा था। फिर तो उस दुष्ट ने अपने पिता के चरणों में तथा माता के चरणों में भी प्रणाम करना बन्द कर दिया था ।५-६।

सप्त ते ऋषयस्तत्र वेनपार्श्वं गयास्तथा ।
समाहूय ततः प्रोचरङ्गस्य तनयं प्रति ।।७
मा वेनसाहसं कार्षीः प्रजापालोभवानिह ।
त्वयासर्वमिदं लोकं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।८
धर्मे चैव महाभाग सकलं हि प्रतिष्ठितम् ।
पापकर्म परित्यज्य पुण्य कर्म समाचर ।।९
एवमुक्तेषु तेष्वेव प्रहसन्वाक्यमब्रवीत् ।
अहमेवपरो धर्मोऽहमेवार्हः सनातनः ।१०
अहं धाता अहं गोप्ता अहं वेदार्थ एव च ।
अहं धर्मो महापुण्यो जैनधर्मः सनातनः ।।
मामेव कर्मणा विप्रा भजध्वं धर्मरूपिणम् ।।११
ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्यास्त्रयो वर्णा द्विजातय ।
सर्वेषामेव वर्णानां श्रुतिरेषासनातनी ।१२
वेदचारेण वर्तन्ते तेन जीवन्ति जन्तवः ।
ब्रह्मवशात्समुद्भूतो भवान्ब्राह्मण एव च ।।१३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चाद्राजा पृथिव्याश्च सञ्जातः कृतविक्रमः ।
राजपुण्येन राजेन्द्र सुखं जीवन्ति वै द्विजाः ।१४
राज्ञः पापेन नश्यन्ति तस्मात्पुण्यं समाचर ।
समाद्दतस्त्वया धर्मः कृतश्चापि नराधिपः ।।१५

इसके अनन्तर वहाँ पर वेन के समीप में सात ऋषिगण गये थे। उन्होंने वहाँ पहुँचकर अङ्ग के पुत्र को बुलाकर उससे कहा था।७।हे वेन ! तुम ऐसा वेदोक्त धर्मका त्यागकर अन्य धर्म ग्रहण करने का दुस्साहस मत करो। आपका कर्त्तव्य प्रजा का पालन करना है सो वहाँ आप करें। यह चराचर त्रैलोक्य और यह लोक सभी आपके द्वारा धर्म में हे महाभाग ! प्रतिष्ठित हैं। अतएव आप पापकर्म का त्याग करके परम पुण्य कर्म का आचरण करें।८-९।इस प्रकार से जब उन सात ऋषियों ने राजा वेन से कहा तो उनके कथन पर हँसता हुआ वह उनसे बोला मैं ही सबसे प्रधान परम धर्म हूँ और मैं ही सनातन धर्म हूँ।१०। मैं ही धाता हूँ, मैं ही गोप्ता हूँ और वेदों का अर्थ भी ही हूँ। मै महान् पुण्य वाला धर्म हूँ जो कि सनातन जैन धर्म है। हे विप्रगण ! आप सब लोग अपने कर्मों के द्वारा मेरा ही जो कि धर्म रूपी हूँ भजन करें।११।वेन के इस वचन को श्रवण कर ऋषियों नेकहा—ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य ये तीन वर्ण ही द्विजाति होते हैं। समस्त वर्णों का यह सनातनी श्रुति है ।१२। सभी वेदोक्त आचार से रहा करते हैं और उसी से जन्तु जीवित रहा करते हैं। ब्रह्म वंश से आप समुत्पन्न हुए है और ब्राह्मण ही हैं।१३। इसके पीछे विक्रम करके इस पृथ्वी के राजा हुए है ।।१४।। राजा यदि पाप करने वाला होता है तो उसके ही पाप मे सर्व नाशको प्राप्त हो जाया करते हैं। इसलिए हेराजा! आप अब पुण्य का आचरण करिये। हे नरों के स्वामिन् ! आपने तो धर्म का बहुत आदर किया था और केवल आदर ही नहीं उसका पूर्णतया पालन भी किया था ।।१५।।

अहं ज्ञानतां श्रेष्ठः सर्वं ज्ञातं मया इह ।
योऽन्यथा वर्तते चैव स दण्ड्यो भवतिध्रुवम् ।।१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्यर्थं भाषमाणं तं राजानं पापचेतनम् ।
कुपितास्ते महात्मानः सर्वे वै ब्रह्मणःसुताः ॥१७
कुपितेष्वेव विप्रेषु वेनो राजा महात्मसु ।
ब्रह्मशापभयात्तेषां वल्मीकं प्रविवेश ह ॥१८
अथ ते मुनयः क्रुद्धा वेनं पश्यन्तिसर्वतः ।
ज्ञात्वा प्रनष्टं भूपं तं वल्मीकस्थं सुसाम्प्रतम् ॥१९
बलादानिन्युस्त विप्राः क्रूरं तं पपा चेतनम् ।
दृष्ट्वा च पापाकर्माणं मुनयःसुसमाहिता ॥२०
सव्यं पाणिममन्थुस्ते भूपस्य जातमन्यवः ।
तस्माज्जातो महाह्रस्वो नीलवर्णो भयङ्करः । २१

राजा वेन ने उन सप्तर्षियों से कहा था—मैं सभी ज्ञान वालों में परम श्रेष्ठ हूँ और मैंने यहाँ सभी कुछ भली-भाँति जान भी लियाहै । जो मैं चाहता हूँ और आदेश देता हूँ उसके विपरीत कोई भी कुछ करेगा तो वह निश्चय ही दण्ड के योग्य होगा अर्थात् अवश्य ही दण्ड दिया जायगा ।१६।इस तरह जब अत्यधिक बढ़-चढ़कर ऋषियों से भाषण करने लगा तो उस पाप पूर्ण चित्त वाले राजा पर ऋषिगण अत्यन्त कुपित हो गये थे जो कि ब्रह्मा के पुत्र थे और सभी महान् आत्मा वाले थे । १७।। वेन राजा ने देखा कि ये सब विप्र अधिक क्रोधित होगये हैं और सभी माहात्मा भी हैं तो उनके ब्रह्म शाप के भय से अत्यन्त भीत होकर उसने वाल्मीक मेंप्रवेश कर लिया था ।।१८।। उन मुनियों ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर सभी ओर वेन को देखा था और फिर वाल्मीक मैं स्थित सुसाम्प्रत उस राजा को प्रनष्ठ समझकर उस महान् क्रुर पाप पूर्ण चित्त वाले वेन को बलपूर्वक वे वहाँ से ले आये थे और उन्होंने उसे पापपूर्ण कर्मों के करने वाला देखकर वे सब मुनिगण सावधान हो गये थे । १९-२० ।। फिर महान् क्रोध में भरे हुए उन मुनियों ने उस राजा के हाथ का मन्थन किया था । उससे एक बहुत ही छोटे आकर वाला नीले वर्ण से युक्त और अत्यन्त भयङ्कर जन्तु समुत्पन्न हुआ था ।।२१।।

बर्बरो रक्तनेत्रस्तु बाणपाणिर्धनुर्द्धरः ।
सर्वेषामेव पापानां निषाद नां बभवह ॥२२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धाता पालयिता राजा म्लेच्छानां तु विशेषत: ।
तद्दृष्ट्वा तापकर्माणमृषयस्तुमहामत ॥२३
ममन्थुर्दक्षिणपाणि वेनस्यापिमहात्मन: ।
तस्माज्जातोमहात्मा स येन दुग्धावसुन्धरा ॥२४
पृथुर्नाम महाप्राज्ञो राजराजोमहाबल: ।
तस्य पुण्यप्रसादाच्च वेनो धर्मार्थकोविद: ॥२५
चक्रवर्तिपद प्रसादात्तस्य चक्रिण: ।
जगाम वैष्णवं लोकं यद्विष्णो:परमपदम् ॥२६

वह महान् बर्बर, लाल नेत्रों वाला, धनुषधारी और हाथ में बाण ग्रहण किये हुए था । वह सभी पापों, निषादों का और विशेष रूप से म्लेच्छों का धाता - पालयिता और राजा हो गया था । हे महान् मति वाले ! उन सब ऋषियों ने उस पाप कर्म करने वाले को देखा था । फिर उन ऋषियों ने उस वेन के दाहिने हाथ का मन्थन किया था । उस दाहिने हाथ से एक महात्मा की समुत्पत्ति हुई थी जिसने इस वसुन्धरा भूमि का दोहन किया था ।२२-२४। उस राजाओं के राजा का नाम पृथु था जो महान् बलवान् और महान् प्राज्ञ (पण्डित) था उसके पुण्य के प्रसाद से राजा वेन धर्म तथा अर्थ का ज्ञाता हो गया था ।२५। उन वेन ने चक्रवर्ती राजा होने के पद का उपभोग करके चक्री भगवान् विष्णु की कृपा एवम् प्रसाद से ही विष्णु का जो सबसे श्रेष्ठ पद वैष्णव लोक है, उसी लोक की प्राप्ति की थी ।२६॥

॥ सुदेवा का चरित्र ॥

सुदेवा का त्वयाप्रोक्ता किमाचारा वदस्व न: ।
त्वयाप्रोक्तं महाभागेवद न: सत्यमेव च ॥१
अयोध्यायां महाराज:स असोद्धर्मकोविद: ।
मनुपुत्रो महाभाग:सर्वधर्मार्थतत्पर: ॥२
इक्ष्वाकुर्नाम सर्वज्ञो देवब्राह्मण पूजक: ।
तस्यभार्या सदापुण्या पतिव्रत परायणा ॥३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तयासार्द्धं यजेद्यज्ञ तीर्थानि विविधानि च ।
वेदराजस्य वारस्य काशीशस्य महात्मनः ॥४
सुदेवानाम वै कन्या सत्याचारपरायणा ।
उपयेमे महाराज इक्ष्वाकुस्तां महीपतिः ॥५
सुदेवां चारुसर्वाङ्गी सत्यव्रत परायणाम् ।
तयासार्द्धं यजेद्यज्ञान्सुपूण्यान्पुण्यनायकः ॥६
स रेमे नृपशार्दूलो नित्यं च प्रियवा तया ।
एकदा तु महाराजस्तयासार्द्धं वनं योयौ ।७
गङ्गारण्यं समासाद्य मृगयां क्रीडते सदा ।
सिंहान्हत्वा वराहाश्च गजांश्च महिषांस्तथा । ८

सखियों ने कहा—आपने जो सुदेवा कही थी वह सुदेवा कौन थी और उसका आचार कैसा था ? हे महान् भागवाली ! आपने ही हमसे कहा था । अब आप हमको सब बिल्कुल सच-सच वर्णन कर बतलाइये ॥१॥ सुकला ने कहा—अयोध्यापुरी मेंजो वहांके महाराज थेवे धर्म के महाम ीषो थे । वे महाराज मनु के पुत्र थे, महान् भाग वाले थे और समस्त धर्मों में तथा अर्थों में तत्पर थे।२।उन महाराज का नाम इक्ष्वाकु था । वे सब कुछ के ज्ञाता थे और देवगण तथा ब्राह्मणों की पूजा करने वाले थे । उनकी पत्नी सदा पुण्यमयी थी और पतिव्रत धर्म में सर्वदा परायण रहा करती थी ॥३॥ महाराजा इक्ष्वाकु उसी अपनी परम प्रिया भार्या के साथ ही यज्ञादि का यजन किया करते थे और अनेक तीर्थों की यात्रा भी करते थे । वह उनकी जो पत्नी थी अति वीर माहात्मा काशी के स्वामी वेदराज की कन्या सुदेवा नाम वाली थी जो कि सत्य आचार में परायण रहा करती थी । महाराजा इक्ष्वाकु ने जोकि उस समय में अयोध्यापुरी के राजा थे उसी सुदेवा के साथ विवाह किया था ।४-५। सुदेवा के सभी अंग-प्रत्यग परम मनोरम थे और वह सदा सत्य के व्रत का पालन करने में तत्पर रहा करती थी । वह पुण्य नायक महाराजा इक्ष्वाकु उसी अपनी प्रिय पत्नी सुदेवा के साथ ही परम पुण्यमय सुन्दर यज्ञों का यजन किया करते थे ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह नृपों में शार्दूल के सदृश महाराजा इक्ष्वाकु उस अपनी प्रिया सुदेवाके साथ नित्य ही रमण किया करते थे। एक समय ऐसा हुआ था कि वह महाराजा इक्ष्वाकु उसी अपनी प्रिया के साथ वन में गये थे।६-७।गंगारण्य नामक वन में जाकर सदा मृगया (शिकार) की क्रीड़ा किया करते थे और उस आखेट की क्रीड़ा में वे सिंह—वाराह—गज और महिषों का वध किया करते थे ॥८॥

क्रीडमानस्य तस्याग्रे वराहश्च समागतः।
बहुशूकरयूथेन पुत्रपौत्रैरलङ्कृतः ॥९
एका च शूकरी तस्य प्रियापार्श्वे प्रतिष्ठिता।
दृष्ट्वाच राजराजेन्द्रं दुर्जयं मृगयारतम् ॥१०
पर्वताधारमाश्रित्य भार्यया सहशूकरः।
तिष्ठत्येकःपरिवृत पुत्रपौत्रादिभिस्तु सः ॥११
महाराज कृत तेषां ज्ञात्वा तु कदन महत्।
तानुवाच सुतान्पौत्रान्भार्यां तां च सशूकरः ॥१२
कोशलाधिपतिर्वीरा मनुपुत्रो महाबलः।
क्रीडते मृगयां कान्ते मृगान्संहरते बहून् ॥१३
स मां दृष्ट्वामहाराज एष्यतेनात्रसंशयः।
अन्येषां लब्धकानां मे नास्तिप्राणभयंध्रुवम् ॥१४
ममरूप नृपोदृष्ट्वा क्षमांनैव करिष्यति।
हर्षेण महताविष्टो बाणपाणिर्धनुर्धरः ॥१५
श्वभिर्युक्तो महातेजा लुब्धकैः परिवारितः।
प्रिये कारष्यतेघातं ममाप्येवं न संशयः ॥१६

एक बार ऐसा हुआ था कि जिस समय में वे मृगया वन की क्रीड़ा कर रहे थे उस समय में उनके सामने एक वाराह आगया था जिसका साथ उसके बहुत-से पुत्र और पौत्र भी थे और अनेक सूअरों का झुण्ड भी था ।३।एक शूकरी भी थी जो उसकी प्यारी पत्नी थी और उसी के पार्श्व में प्रतिष्ठित हो रही थी। उसने राजाओं के भी राजा इक्ष्वाकु को देख लिया था जो कि बहुत दुर्जय थे और शिकार खेलने में रत हो रहे थे ॥; १०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस शूकर ने अपनी भार्या के साथ एक पर्वत के आधार का आश्रय ग्रहण कर लिया था और वहाँ पर वह अपने पुत्र पौत्र आदि से परिवृत्त होकर अकेला ही स्थित हो गया था। ११। महाराजा के द्वारा किये हुए महान् उनके कदन (संहार) को जानकर वह शूकर अपने पुत्रों से-पौत्रों से और अपनी भार्या से बोला था ।।१२।। कोशल देश के राजा बहुत बड़े वीर राजा हैं। इनमें महान् बल-विक्रम विद्यमान है। यह महाराज मनु के पुत्र हैं। हे कान्ते ! इस समय में ये शिकार खेल रहे हैं और बहुत से मृगों का संहार कर रहे हैं। वे महाराज मुझे देखकर यहाँ पर भी आयेंगे—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। दूसरे जो शिकारी होते हैं उनसे तो मुझे कभी भी अपने प्राणों का भय नहीं होता है—यह परम निश्चित बात है१३-१४। मेरा रूप देखकर राजा कभी भी क्षमा नहीं करेंगे। महान् हर्ष से समन्वित हाथ में बाण लेकर धनुषधारी यह राजा, कुत्तों से युक्त तथा अन्य शिकारियों से परिवृत होते हुए महान् तेजस्वी मेरा भी घात अवश्य ही करेंगे। हे प्रिये ! इसमें लेशमात्र भी संशय मत समझना ।। १५-१६।।

वीराणां त्वं न जानासि सुधर्मं शृणु साम्प्रतम् ।
युद्धार्थिना हि वीरेण वीरं गत्वा प्रयाचितम् ।।१७
देहि मेवोधनं सङ्ख्ये युद्धार्थमहं समागतः ।
परेणयाचितं युद्धं न ददाति यदानरः ।।१८
कामाल्लोभाद्भताद्वापि मोहाद्वा शृणुवल्लभे ।
कुम्भीपाके तु नरके वसेद्युगसहस्रकम् ।१९
क्षत्रियाणां परोधर्मो युद्धं देयं नःशंशयः ।
तद्युद्धं दीयतानेन रणभूमिं गतेन वै ।।२०
निर्जित तु परंतत्र यशः कीर्ति प्रभुञ्जते ।
सर्वाहतो युध्यमानः पौरुषेणाति निर्भयः ।।२१

वाराह ने कहा—वीरों का जो सुन्दर धर्म है उसे तुम नहीं जानती हैं। उसे तुम अब मुझसे श्रवण कर लो। जो वीर युद्ध करने का अर्थी होता है वह दूसरे वीर के समीप में जाकर याचना किया करता है। वह कहता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि मैं इस समय में युद्ध करने के लिए मन में इच्छा रखकर उपस्थित हुआ हूँ सो तुम युद्ध भूमि में चलकर मेरे साथ युद्ध करो। इस प्रकार से किसी भी वीर के द्वारा युद्ध करने कीं याचना की जावे और मनुष्य युद्ध उसकी याचना करने पर भी न करे तो उसे नरक का वास प्राप्त होता है ।।१७-१७।। युद्ध न करने का कारण कामवासना में लिप्त रहना हो-कोई लोभ ही—किसी प्रकार का भय हो या मोह हो किसी भी कारण से वशीभूत होकर यदि वह युद्ध करने का निषेध कर देता है तो हे प्रिये ! तुम सुन लो उसे कुम्भीपाक नाम वाले घोर नरक में एक सहस्र युग पर्यन्त निवास करना होता है ।१६।क्षत्रियों का तो यह परम धर्म है कि युद्धार्थी व्यक्ति के साथ अवश्य ही युद्ध करना चाहिए—इसमें संशय नहीं है। इस प्रकार से याचित युद्ध के किये जाने पर तथा रणभूमि में उपस्थित होजाने पर यदि उसने उस युद्ध में विजय याप्त करली तो फिर उसे परम यश और कीर्ति की प्राप्ति होती है। वह बाहु से युद्ध करता हुआ पौरुष के कारण अत्यन्त निर्भय होता है ।।२०-२१।।

वीरलोकमवाप्नोति दिव्यान्भोगान्प्रभुञ्जते ।
यावद्वर्षसहस्राणां विंशत्येकां प्रिये श्रृणु ।।२२
वीरलाके वसेत्तावद्ददवाचारैर्महीयते ।
मनुपुत्र समायात अयंवीपो न संशयः ।।२३
सङ्ग्राम याचमानस्तु युचं देयं मया ध्रुवम् ।
युद्धातिथिःसमायाता विष्णुरूपःसनातनः ।।२४
सत्कारो युद्धरूपेण कर्तव्यश्च मयाशुभे ।२५
यदायुद्धं त्वयादेयं राज्ञे चैव महात्मने ।
ततोऽयं पौरुषं कान्त पश्यामि तवकोदृशम् ।।२६
एवमुक्त्या प्रियान्पुत्रान्समाहूय त्वरान्विता ।
उवाच पुत्रकायूयं शृणुध्वं वचनं मम ।।२७
युद्धातिथिःसमायातो विष्णुरूपःसनातनः ।
मया तत्र प्रगन्तव्यं यत्रायं हि गमिष्यति ।।२८

यदि उस समय में युद्ध करते हुए उसकी वीरगति हो जाती है तो परलोक में पहुँचकर वह दिव्य भोगों का सुख प्राप्त किता करता है

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जब तक का एक सहस्र वर्षों की विंशति होती है जब तक उन भोगों का उप भोग करता है हे प्रिये! तम इसका श्रवण करो। वह मनुष्य वीर लोक में देवताओं के से आचारों से युक्त होकर तभी तक वहाँ निवास क्रिया करते हैं और प्रतिष्ठित होकर स्थिति रहते हैं यह मनु महाराज के पुत्र आ गये हैं और यह महान् वीर हैं—इसमें कुछ भी संशय नहीं है।२२-२३।यदि इसने मुझ से संग्राम करने की याचना की तो मुझे फिर अवश्य ही उसे युद्ध देना ही होगा अर्थात् उसके साथ युद्ध करना ही चाहिए यह युद्धातिथि है जो कि आ रहा है। यह साक्षात् सनातन विष्णु स्वरूप हैं। ऐसे इस अतिथि का सत्कार युद्ध के रूपसे मुझे हे शुभे! अवश्य करना चाहिए।२४-।२ । शूकरी ने अपने पति शूकर से कहा—हे कान्त! जिस समय में उस माहात्मा राजा को आप युद्ध देवें उस समय में मैं उस युद्ध को देखकर यह जानना चाहती हूँ कि आपका पौरुष कितना और किस तरह का है।२६। सुकला ने कहा—इस प्रकार से कहकर उसने अपने प्रिय पुत्रों को बुलाकर बहुतही शीघ्रतासे समन्वित होकर उसने कहा—हे पुत्रों! तुम सब लोग मेरे वचनों को सावधानी के साथ सुनो। मेरा यह युद्धातिथि यहाँ पर आगया है जो कि साक्षात् सनातन विष्णु के ही स्वरूप वाला है अब मुझे भी वहाँ पर ही चले जाना चाहिए जहाँ पर यह जायगा ॥२७-२८॥

यावत्तिष्ठति वै नाथो भवतां प्रतिपालकः ।
यूयं गच्छत वै दूर दुर्गं गिरिगुहामुखम् ॥२९
सखं जीवतमेवत्सा वर्जयित्वा सुलुब्धकान् ।
मया तत्रैव गन्तव्य यत्रैष हि गमिष्यति ॥३०
भवतां श्रेष्ठोऽयंभ्राता यथरक्षां करिष्यति ।
एते पितृव्यकाःसर्वे भवतां त्राणकारकाः ।
दूर प्रयात वै सर्वे मांविहाय सुपुत्रकाः ॥३१
अयं हि पर्वतश्रेष्ठो बहुमूल फलोदक ।
भयं तु कस्य वै नास्ति सुखं जीवनमस्ति वे ॥ २
युवाभ्यां हि अकस्माद्वै इदमुक्तं भयङ्करम् ।
तन्नोहि कारणं मातवद सत्यमिहैवहि ॥३३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयं राजामहारौद्रःकालरूपःसमागतः ।
क्रीडते मृगयालब्धा मृगान्हत्वा बहून्बने ॥३४
इक्ष्वाकुर्नामदुर्धर्षो मनुपुंत्रो महाबलः ।
संहरिष्यतिकालोऽयं दूयरांत सुपुत्रकाः ॥३५

जिस समय तक आपका प्रतिपालन करने वाला स्वामी यहाँ पर स्थित है तब तक तुम सब किसी पर्वत की गुफाके मुख में दूर दुर्ग में चले जाओ।२९।हे मेरे बच्चो ! तुम सब सुख पूर्वक जीवित रहो और लुब्धकोंसे बचकर रहना। मुझे तो अब वहीं पर जाना होगा जहाँ पर यह युद्धार्थी मेरा अतिथि जाएगा।३०।आपका परम श्रेष्ठ भाई है जो कि यूथ की रक्षा करेगा। येसब आप लोगोंके पितृव्य हैं (पिता के भाई) जो कि आप लोगों के त्राण करने वाले हैं। हे पुत्रो! इस समय में आप सभी लोग मुझे छोड़-कर बहुत दूर यहाँ से चले जाओ।३।पुत्रों ने अपने पिता शूकर से कहा— यह पर्वत परम श्रेष्ठ है। इसमें बहुत प्रकारके मूल हैं,फल हैं तथा जल भी है। इसमें किसी का भी भय नहीं है। यहां पर परम सुख के साथ जीवन होगा।२२।आप दोनों ने अचानक ही यह अत्यंत भयंकर क्या बात हमसे कह डाली है ? हे माता ! इसका क्या कारण है वह हमको सत्य-सत्य बतलादो और यहाँ पर अभी समझादो।२३।शूकरी ने अपने बच्चों की इस बात को सुनकर उनसे कहा—देखो यह राजा महान् रौद्र स्वरूप वाला है और काल के सदृश ही है जो यहाँ अभी आ गया है। इस वन में वह शिकार खेल रहा है और उसने बहुत से मृगों को शिकार के लालच में मार दिया है यह राजा महाराजा मनु का पुत्र है और इसका ऐसा विलक्षण तेजहै जिसे सहन नहीं किया जा सकता है। इक्ष्वाकु इसका नाम है और महान् बल-शाली राजा है। हे पुत्रो ! तुम सब यहाँ से बहुत दूर चले जाओ। यह साक्षात् काल स्वरूप है और सबका संहार कर देगा ॥३४-३५॥

मातरं पितरं त्यक्त्वा य प्रयाति स पापधीः ।
महारोद्र सुघोरं तु नरक प्रतिपद्यते ॥३६
मातु पुण्य पय पीत्वा पुष्टोभवति निर्घृणः ।
मातरंपितरं त्यक्त्वा यः प्रयाति सुदुबला ॥३७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूयंनरकमेतीह क्रमिदुर्गन्ध सङ्कुलम् ।
मातस्तस्मान्नयास्यामो गुरुं त्यक्त्वा इहैव च ।।३८
एवंविषादः सञ्जातस्तेषां धर्मार्थसंयुतः ।
व्यूहकृत्वा स्थिताःसर्वे बलतेजः समाकुलाः ।।३६

शूकर के पुत्रों ने कहा—जो अपने ताता पिता को छोड़कर कहीं अन्यत्र चला जाता है वह महान् पाप पूर्ण बुद्धि वाला होता है और ऐसा पुत्र निश्चय ही महान् रौद्र अत्यन्त घोर नरक में जाकर गिरा करता है ।३७। अपनी माता के परम पुण्यमय पय का पान करके पुत्र पुष्ट होता है । ऐसा पुत्र बहुत ही नीच है जो फिर अपने माता-पिता का त्याग करके कहीं अन्यत्र चला जाता है उस पुत्र से दुर्बल और कौन हो सकता है ।२७।ऐसा पुत्र पूय नरक में जाता है जो कृमियों से और दुर्गन्ध से संकुल होता है । हे माता ! इसलिये हम कहीं नहीं जायेंगे और अपने पिता को यही पर छोड़कर अपनी रक्षा करने के लिए पाप कर्म नहीं करेंगे।।३८।।इस प्रकार से उन सबमें धर्मार्थ से संयुत बड़ा भारी विषाद उत्पन्न हो गया था । फिर वे सभी बल और तेज से समाकुल होकर व्यूह की रचना करके वही पर स्थित हो गये थे ।।३६।।

।। मेरु पर्वत में इक्ष्वाकु के सैनिकों के साथ शूकर का युद्ध ।।

एवं ते शूकराःसर्वे युद्धाय समुपस्थिताः ।
पुरःस्थितस्य ते राज्ञो ह्यवतस्थश्चलुब्धकाः ।।१
महावराहो राजेन्द्र गिरिसानुं समाश्रितः ।
महता यूथभावेन व्यहंकृत्वा प्रतिष्ठति ।।२
पकिलःस्थूलपीनाङ्गो महादंष्ट्रो महामुखः ।
दुः सह शूकरो राजन्गर्जते चातिभैरवम् ।।३
तानपश्यन्महाराजःशालतालवनाश्रयान् ।
तेषां तद्वचनंश्रुत्वा मनुपुत्रःप्रतापवान् ।।४
गृह्यतां शूरवाराहो यिध्यतां बलदर्पितः ।
एवसाभाष्य तान्वीरो मनुपुत्रः प्रतापयान् ।।५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ ते लुब्धकाःसर्वे मृगया मदमोहिताः ।
सनद्धादर्शिताःसर्वे श्वभिःसार्द्धं प्रजग्मिरे ॥६
हर्षेण महताविष्टो राजराजो महाबलः ।
अश्वारूढ सुसैन्येन चतुरङ्गेण संयतः ॥७
गङ्गातीरं समायातो मेरौगिरिवरत्तमे ।
रत्नधातु समाकीर्णे नानावृक्षैरलङ्कृते । ८

सुकला ने कहा—इस प्रकार से वे समस्त शूकर सामने में स्थित आपके राजा से युद्ध करने के लिये समुपस्थित हो गये थे और राजा के साक्षी लुब्धक भी अवस्थित हो गये थे।१।हे राजेन्द्र ! यह महान् वाराह पर्वत की शिखर पर समाश्रित हो गया है । वहाँ पर महान् यूथ भाव से व्यूह की रचना करके प्रतिष्ठित हो रहा है।२ हे राजन् ! यह शूकर कपिल वर्ण का है, इसके समस्त अंग मोटे एवम् स्थूल हैं इसकी दाढ़ें बड़ी भीषण हैं और इसका मुख बहुत लम्बा-चौड़ा है । यह शूकर तो बहुत ही दुःसह है और यह अत्यन्त भैरव रूप से गर्जना करता है।३।महाराज ने उन सबको शाल और ताल के वृक्षों के वन में आश्रय ग्रहण करने वालों को देखाथा और प्रताप वाले मनु के पुत्र ने उनके सब वचन भी सुने थे। परम प्रतापी मनु पुत्र वीर इक्ष्वाकु ने अपने सनिकों से कहा इस अत्यन्त क्रूर वाराहको पकड़ लो । यह अपने बल का बहुत घमण्ड कर रहा है इसका वेधन कर दो।४-५।इसके अनन्तर वे सभी लुब्धक मृगया के मदसे मोहित होरहे थे । सभी ससद्ध और दशित होकर अपने कुत्तोके सहित वहाँ से रवाना होगये थे।६।महान् हर्ष से आविष्ट होकर महान् बलवान् राजाओं का भी राजा अपने अश्वपर समारूढ़ होकर चतुरंगिणी अपनी सेनाके साथ संयत होकर गंगा के तट पर आ गया था जोकि गिरियोंमें परम श्रेष्ठ मेरु में था। वह पर्वत विविध प्रकार के रत्न एवं धातुओं से समाकीर्ण था और वहाँ पर अनेक भाँति के वृक्ष उसे सुशोभित कर रहे थे ।७-८।।

बहुभिः शूकरैर्गुप्तो गुरुभिःशिशुभिस्ततः ।
मेरुभूमिंसमाश्रित्य गङ्गातीर समन्ततः ॥९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तामुवाच वराहस्तु सुप्रियां हर्षसंयुतः ।।
प्रिये पश्यस ..याताकोशलाधिपतिर्बली ।।१०
मामुद्दिश्य महाप्राज्ञो मृगयां क्रीडते नृपः ।
युद्धमेव करिष्यामि सुरासुरप्रहर्षकम् ।।११
अथभूपो महातेजा बाणपाणिर्धनुर्धरः ।
सुदेवां सत्यधर्माङ्गी तामुवाच प्रहर्षियः ।।१२
पश्यप्रिये महाक्रोल गजमानं महाबलम् ।
परिवारसमायुक्तं दुःसहं मृगघातिभिः ।।१३
अद्यैवाहं हनिष्यामि सुबाणैर्निशितैः प्रिये ।
मामेव हि महाशूरो युद्धाय समुपाश्रयेत् ।।१४

वह वाराह बहुत-से शूकरों से गुप्त था जो कि बहुत विशाल थे। उसके साथ शिशु भी थे। इस प्रकार से मेरु पर्वत की भूमि में जो गङ्गा-भागीरथी का तीर था उसकाही समाश्रयण उसने कर रक्खा था।९।सुकला ने कहा—उस समय में अत्यधिक हर्ष से संयुत होकर वह वाराह अपनी प्रिया से बोला—हे प्रिये ! बलवान् कोशल देश का राजा आ गया है,तुम अब इसको देख लो।१०।यह राजा इस समय मेरी ही उद्देश्य करके मृगया की क्रीड़ा कर रहा है। यह राजा बड़ा पण्डित है। अब मैंभी इसके साथ युद्ध ही करूँगा हमारा युद्ध भी ऐसा होगा जो सुर और असुर सबका प्रहर्षक होगा।११।इसके उपरान्त महान् तेजस्वी बाण हाथ में लेकर धनुष के धारण करने वाला राजा अत्यन्त प्रहर्षित होकर सत्य और धर्म के अङ्ग स्वरूपा उस अपनी पत्नी सुदेवा से बोला—।१२।हेप्रिये ! इस महान् वाराह को देखो जो महान् बलशाली है और घोर गर्जना कर रहा है। यह अपने समस्त परिवार से समायुक्त है और मृगों के वध करने वाले शिकारियों के लिये बहुत ही दुःसह है।१३।हे प्रिये ! मैं अपने तीक्ष्ण बाणों से,इसका आज ही वध कर दूँगा। यह महान् शूर है और मुझसे ही युद्ध करने के लिये प्रस्तुत हैं ।।१४।।

एवमुक्त्वा प्रियोभार्यां लुब्धकान्वाक्यमब्रवीत् ।
यथाशूरो महाशराःप्रेषयध्वं हि श करम् ।।१५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

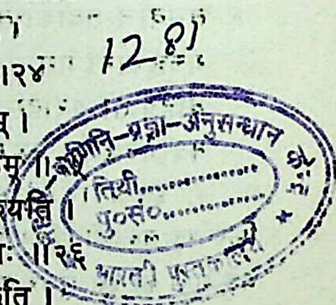
अथते प्रेषिता: शूरा बलतेज: पराक्रमा: ।
गर्जमाना:प्रधावन्ति बलतेज: पराक्रमा: ।।१६
कोलप्रति गता:सर्वं वायुवेगेन साम्प्रतम् ।
विध्यन्तिबाणजालैस्ते निशितैर्वनचारका ।
नानाशस्त्रै रथास्त्रैश्च वाराह वोररूपिणम् ।।१७
लुब्धकाश्च मृता केचिच्छिन्नादंष्ट्राग्रसूकरै: ।
प्राणांस्त्यक्त्वा गतास्वर्गं खण्डशोविदलीकृता: ।।१८
वागुरा पाशजालाश्च कुटका-पञ्चरास्तथा ।
नाढ्यश्च पतिताभूमौ यत्रतत्र समन्तत: ।।१९
प्रकोदयितयासार्धं वाराह परितिष्ठति ।
पौत्रकै:पञ्चसप्तभिर्युद्धार्थं बलदर्पित: ।।२०
तमुवाच तदाकान्तं शूकरं शूकरी पुन: ।
गच्छकान्त मयासार्द्धं मेभिस्तू बालकै सह ।।२१
वाहप्रीतो वराहस्तां विवस्तां सुप्रियामिति ।
क्व गच्छामि प्रभग्नोऽहं स्थानंनास्ति महीतले ।।२२

इस प्रकार से उस प्रिय राजा ने अपनी प्रिय भार्या से कहकर फिर वह लूब्धकों (शिकारियों) से बोला—जैसा यह शूर है वैसा ही बड़े बड़े शूरों को इस शूकर पर प्रकार करने के लिये भेज दो ।।१५।। इसके अनन्तर उन्होंने बल और तेज से पूर्ण पराक्रम वाले शूरों को वहां भेज दिया था। वे प्रबल तेज तथा बल एवं पराक्रम वाले शूर गर्जना करते हुए दौड़ उठे थे ।।१६।। वे सभी उस वाराह की ओर अब वायु के समान वेग से गये थे। वे वन में विचरण करने वाले महान् शूर थे। उन्होंने अपने अत्यन्त तीक्ष्ण बाणों से वेधन करना आरम्भ कर दिया था। उस वीर के स्वरूप वाले वाराह पर उन्होंने विविध प्रकार के शस्त्र तथा अस्त्रों से प्रहार किये थे ।।१७।। उनमें से कुछ लुब्धक शूकरों की दाढ़ के अग्र भाग से छिन्न होकर मर गये थे और वे प्राणों को त्याग कर सीधे स्वर्गलोक में चले गये थे। उसके शरीरों का खण्ड खण्ड करके विदलित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
कर दिया गया था।१८।उस युद्ध स्थलमें ऐसी दशा उस समय में लुब्धकों के शरीरों की हुई थी कि व गुरा-पाश जाल-कुटक और पञ्जर तथा नाड़ियां, ये सब जहाँ तहाँ भूमि में बिखरे हुई पड़े थे। वह एक वाराह अपनी दयिता के साथ परिस्थित था। उस बल के दर्प से सयुत शूकर ने पाँच-सात अपने पुत्र-पौत्रों कोही युद्धके लिए भेजा था।१९-२०।उस समय में वह शुकरी फिर अपने कान्त शूकर से बोली-हे कान्त! अब भी इन बालकों को साथ लेकर मेरे साथ कहीं अन्यत्र चले चलो और इस युद्ध के झगड़े को छोड़ दो।२१। तब परम प्रसन्न वह वाराह उस अपनी प्रिया से बोला-जो कि त्रस्त हो रही थी। उसने कहा-मैं अब कहाँ पर जाऊँ? अब तो प्रभग्न हो गया हूँ ॥२२॥

मयिनष्टे महाभागि कौलयूथं विनङ्क्ष्यति।
द्वयोश्च सिंहयोर्मध्ये जलं पिबति शूकरः ॥२३
द्व-ोः शूकरयोर्मध्ये सिंहोनैव पिबत्वप.।
एवं शूकरजातिषु दृश्यते बलमुत्तमम् ॥२४
तदहं नाशयाम्येव यदाभग्नोव्रजाम्यहम्।
जाने धर्मं महाभागे बहुश्रेयो विधायकम् ॥२५
कस्माल्लोभाद्भयाद्वापि युध्यमान प्रणश्यति।
रणतीर्थंपरित्यज्य सस्यात्पापी न संशयः ॥२६
निशितं शस्त्रसंव्यूहं दृष्ट्वा हर्षं प्रगच्छति।
अवगाह्यामरीसिन्धु तीर्थपारं प्रगच्छति ॥२७
स याति वैष्णवलोकं पुरुषांश्च समुद्धरेत्।
समायान्तं च तदहं कथं भग्नो व्रजामि वै ॥२८
योधनं शस्त्रसङ्कीर्णं प्रवीरानन्ददायकम्।
दृष्ट्वा प्रयाति सहृष्टस्तस्य पुण्यफलं शृणु ॥२९



शूकर ने अपनी प्यारी पत्नी शुकरी से कहा-हे महाभागे! मेरे नष्ट हो जाने पर यह शूकरों का यूथ विनष्ट हो जायेगा। दो सिंहों के मध्य में शूकरही स्थित होकर जल पिया करता है।२३।कभी कहीं भी दो शूकरों के मध्य में एक सिंह पानी नहीं पिया करता है। इस प्रकार के इस शूकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की जातियोंमें बड़ा उत्तम वल दिखलाई देता है।२४।जबकि मैं भग्न होकर यहाँ से चला जाऊँगा तो उस समय में उस ताकत और यश को नष्ट ही कर दूँगा। हे महाभाग्य वाली! क्षिधायक धर्म को तुम नहीं, मैं जानता हूँ इसमें वहुत श्रेय होता है।२५।किसी भी लोभसे अथवा प्राणों के भयके कारण युद्ध करना हुआ वीर प्रणष्ट हो जायगा परन्तु उस युद्ध के परम पवित्र तीर्थ का त्याग करके नहीं जायगा। अगर युद्ध स्थल से वह भाग जाता है तो महान् पाप का भागी वह हो जाया करता है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।२६।शूरवीर तो बड़े पैने तीक्ष्ण शस्त्रों के व्यूह को देखकर उल्टा बहुत प्रसन्न हुआ करता हैं। उसे भय का होना कैसा-अर्थात् उसे तेज शास्त्रों से कभी भी कोई डर नहीं हुआ करता है बल्कि विशेष हर्ष ही होता है। और अमरी सिन्धु का अवगाहन करके वह तीर्थ केगर ही चला जाया करता हैं। युद्ध स्थल में अपने प्राणों को शत्रु प्रति-पक्षीके साथ युद्ध करता हुआ यदि मृत होजाता है तो फिर सीधा भगवान् विष्णु के ही लोक को जाया करता है और अपने पूर्व पुरुषों (पुरखाओं) का भी उद्धार कर दिया करता है। अबमैं सामने समापात शत्रुको छोड़कर भग्न होकर कैसे कहीं पर अन्यत्र चला जाऊँ। शस्त्रों से संकीर्ण युद्ध जो होता है वह प्रकृष्ट कोटिके वीरों को आनन्द प्रदान करने वाला हुआ करता है। ऐसे युद्ध को देखकर वीर बहुत ही हर्षित होता है। उसका जो पुण्य-फल होता है उसे तुम मुझसे श्रवण करलो ॥२६-२९॥

अनेन समरेयुद्धं करिष्ये नात्र संशयः।
मनोःपुत्रण धीरेण राज्ञा इक्ष्वाकुणासह ॥३०
डिम्भान्गृहीत्वा याहि त्वं सुख जीवर्वरानने।
तस्य श्रुत्वा वचः प्राह बद्धाहं तवबन्धनैः ॥३१
स्नेह मानरसाख्यैश्च रतिक्रीडनकैःप्रिय।
पुरतस्ते सुतैःसार्द्धं प्राणांस्त्यक्ष्यामि मानद ॥३२
एवमेतौ सुसम्भाष्य परस्पर हितैषिणौ।
युद्धाय निश्चितौभूत्वा समालोकयतो रिपून ॥३३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तो अब इसके साथ युद्ध करूँगा—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। यह मेरा प्रतिपक्षी महाराज मनु का पुत्र है। यह बहुत ही धैर्यवान् राजा है और इसका शुभ नाम इक्ष्वाकु हैं।३९।है वरानने ! तुम अब अपने बच्चों को लेकर कहीं सुरक्षित स्थान में चली जाओ और सुखपूर्वक अपना जीवन बिताओ। उस अपने पतिदेव शूकर के इन वचरों को श्रवण कर वह शूकरी पति से कहने लगी कि मैं कहाँ और कैसे चली जाऊँ क्योंकि मैं तो आपके बन्धनों से बद्ध हो रही हूं। हे प्रिय ! स्नेह और मान रस नाम वाले रति क्रीड़नकोंके द्वारा अपने सुतों के सहित हे मानद!मैं आपके ही सामने अपने प्राणों को त्याग दूँगी। इन प्रकार से ये दोनों पति-पत्नी सुख पूर्वक सम्भाषण कर रहे थे और दोनों ही एक-दूसरे के परस्पर में हित के चाहने वाले थे। वे दोनों ही युद्ध के लिये निश्चय वाले हो गये थे और समक्ष में शत्रुओं को देख रहे थे ।।३१-३३।।

।। पद्म पुराण का पहला खण्ड समाप्त ।।


पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी 12.81
पु०सं०
भारती पुस्तकालय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराणों का वृहद् प्रकाशन

सरल हिन्दी अनुवाद सहित

१—शिव पुराण	२ खण्ड	...	२१)
२—विष्णु पुराण	२ खण्ड	...	२०)
३—मार्कण्डेय पुराण	२ खण्ड	...	२०)
४—अग्नि पुराण	२ खण्ड	...	२०)
५—गरुड़ पुराण	२ खण्ड	...	२०)
६—हरिवंश पुराण	२ खण्ड	—	२१)
७—देवी भागवत पुराण	२ खण्ड	...	२१)
८—भविष्य पुराण	२ खण्ड	...	२०)
९—लिंग पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१०—पद्म पुराण	२ खण्ड	...	२१)
११—वामन पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१२—कूर्म पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१३—ब्रह्मवैवर्त पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१४—मत्स्य पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१५—स्कन्द पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१६—ब्रह्म पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१७—नारद पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१८—कालिका पुराण	२ खण्ड	...	२०)
१९—वाराह पुराण	२ खण्ड	...	२०)
२०—कल्कि पुराण		...	५)७५
२१—सूर्य पुराण		...	१०)
२२—महाभारत (भाषा)		...	८)
२३—श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा		...	१४)

प्रकाशक : संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर
बरेली-२४३००१ (उ० प्र०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.